प्यार का चमत्कार

के बारे में कहानियाँ

नीम करोली बाबा

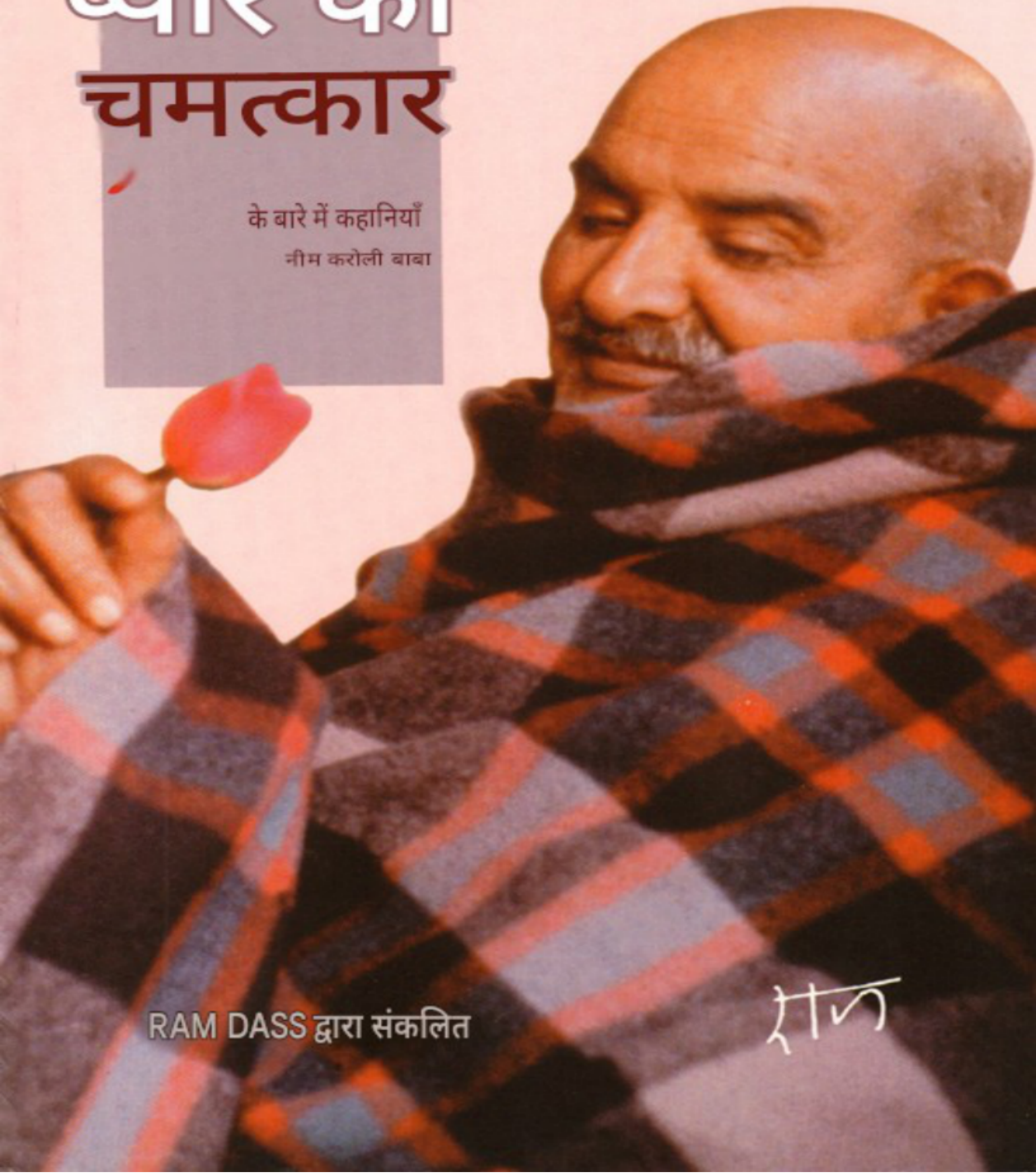

RAM DASS द्वारा संकलित

Table of Contents

शीर्षक पेज
कॉपीराइट
समर्पण
अंतर्वस्तु
परिचय
प्रस्तावना
स्वीकृतियाँ
"...मधुमक्खियाँ आती हैं"
दर्शन: आत्मा का मिलन
चाय लो
महाराजजी के कंबल के नीचे
विश्वास... कोई डर नहीं
मन की कुंजी
भगवान ही सब कुछ करता है
वह छड़ी जो ठीक करती है
साकार आत्मा
महाराजजी की शिक्षाएँ: आसक्ति के बारे में
सत्य के बारे में
पैसे के बारे में
दवाओं के बारे में
ध्यान और सेवा के बारे में
क्रोध और प्रेम के बारे में
हवा की तरह
पारिवारिक व्यक्ति
अनुग्रह का स्पर्श
कृष्ण नाटक
इसे दिल्ली ले जाओ
साधना
हनुमान
जाओ!
महान भगदड़
इसके बाद
शब्दकोष

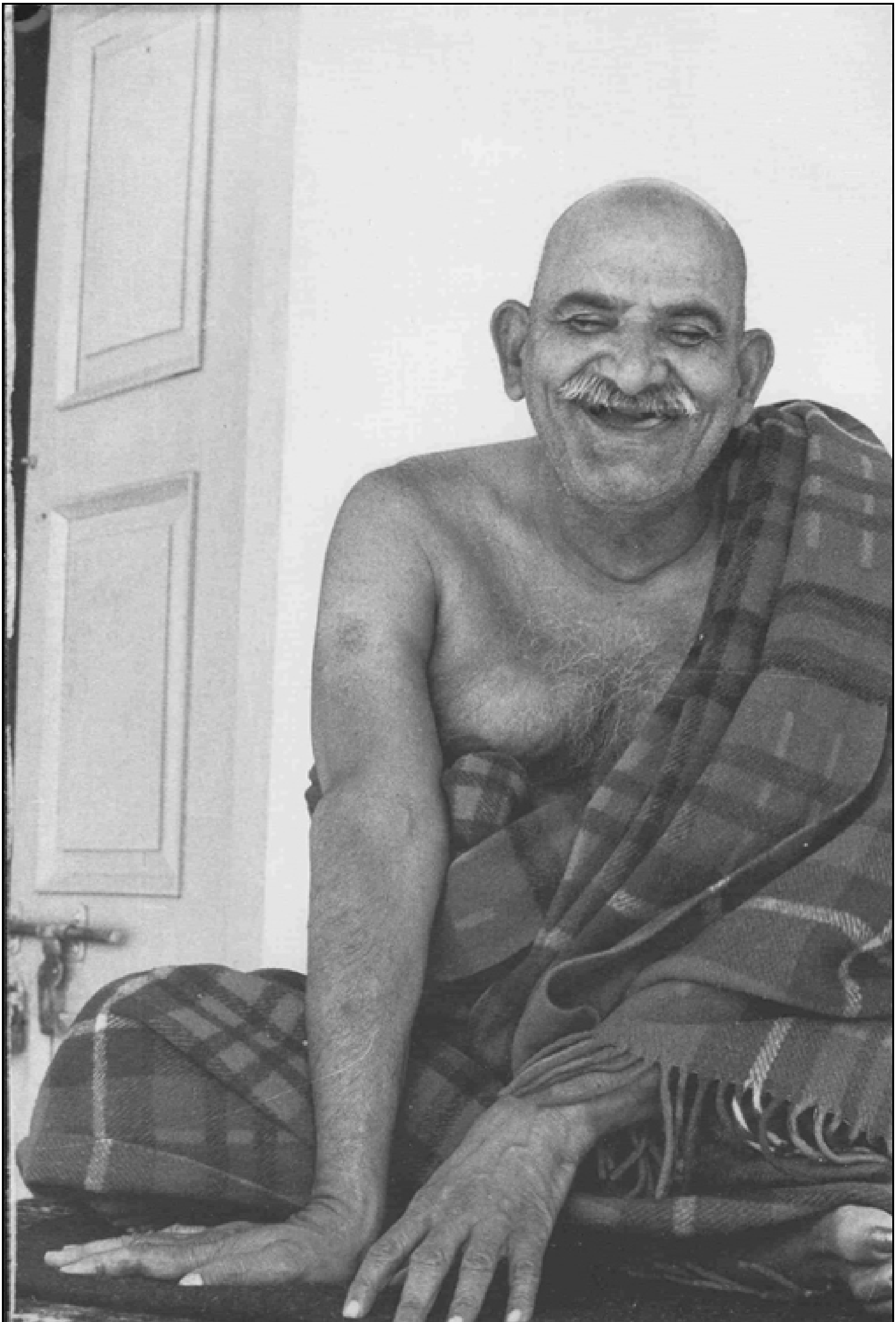

नीम करोली बाबा के बारे में भी:

किताबें

उनकी कृपा से: एक भक्त की कहानी, दादा मुखर्जी द्वारा

दादा मुखर्जी द्वारा रचित "द नियर एंड द डियर"

राम दास के बारे में अधिक जानने के लिए RamDass.org पर जाएं।

Miracle of Love

STORIES ABOUT NEEM KAROLI BABA

COMPILED BY Ram Dass

Ram Dass
love serve remember foundation

पाठ का कॉपीराइट (सी) 1979, 1995 राम दास के पास सुरक्षित है।
कहानियों का कॉपीराइट (सी) 1979, 1995 हनुमान फाउंडेशन के पास है।
तस्वीरों का कॉपीराइट (सी) 1979, 1995 रामेश्वर दास के पास है।
बलराम दास, कृष्णा दास (रॉय बोनी), चैतन्य और हनुमान फाउंडेशन
सभी अधिकार सुरक्षित। संयुक्त राज्य अमेरिका में मुद्रित।
इस प्रकाशन का कोई भी भाग प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से, इलेक्ट्रॉनिक या यांत्रिक रूप से, जिसमें फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग या कोई भी सूचना भंडारण और पुनर्प्राप्ति प्रणाली शामिल है, पुनरुत्पादित या प्रसारित नहीं किया जा सकता है, सिवाय उस समीक्षक के जो किसी पत्रिका, समाचार पत्र या प्रसारण में शामिल करने के लिए लिखी गई समीक्षा के संबंध में संक्षिप्त अंश उद्धृत करना चाहता है।
अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:
लव सर्व रिमेंबर फाउंडेशन
पीओ बॉक्स 1604
101 साउथ टोपांगा कैन्यन बुलेवार्ड।
टोपांगा, सीए 90290
info@ramdass.org
मूल रूप से ई.पी. द्वारा प्रकाशित। डटन, एनवाई, एनवाई (1979)
लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस कैटलॉगिंग इन पब्लिकेशन डेटा
राम दास।
प्यार का चमत्कार।
नीम करोली बाबा. 2. भारत में हिंदू-
जीवनी। 1. शीर्षक।
BL1175.N43R35 1979 294.5'6'10924 79-10745
ISBN-13: 978-0-9906314-7-7 (ईबुक)
निर्माण एवं डिजाइन: जय लक्ष्मण
रॉबर्ट एल. हटवोहल द्वारा टाइपसेटिंग
कवर डिज़ाइन: माइकल मोटली

महाराजजी के लिए

जिसकी उपस्थिति प्रेम के मार्ग की सूक्ष्मता को प्रकट करती है।

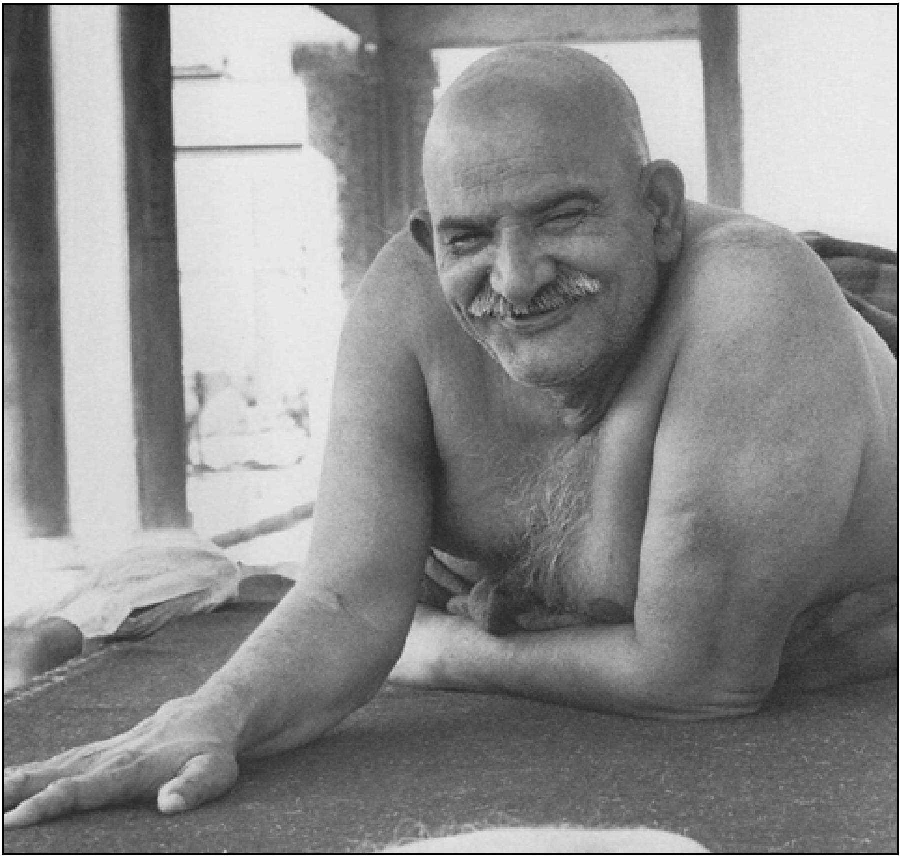

फोटो: रॉय बोनी

अंतर्वस्तु

परिचय

प्रस्तावना

स्वीकृतियाँ

"...मधुमक्खियाँ आती हैं"

दर्शन: आत्मा का मिलन

चाय लो

महाराजजी के कंबल के नीचे

विश्वास... कोई डर नहीं

मन की कुंजी

भगवान ही सब कुछ करता है

वह छड़ी जो ठीक करती है

साकार आत्मा

महाराजजी की शिक्षाएँ: आसक्ति के बारे में

सत्य के बारे में
पैसे के बारे में
दवाओं के बारे में
ध्यान और सेवा के बारे में
क्रोध और प्रेम के बारे में
हवा की तरह
पारिवारिक व्यक्ति
अनुग्रह का स्पर्श
कृष्ण नाटक
इसे दिल्ली ले जाओ
साधना
हनुमान
जाओ!
महान भगदड़
इसके बाद
शब्दकोष

परिचय

“जब फूल खिलता है…”

1967 में मेरी मुलाकात मेरे गुरु से हुई। उस मुलाकात ने मेरे जीवन की दिशा बदल दी, क्योंकि उनके माध्यम से ही मुझे अपने जीवन को आध्यात्मिक दृष्टि से देखने का अवसर मिला। उनमें मुझे करुणा, प्रेम, ज्ञान, हास्य और शक्ति की नई गहराइयाँ मिलीं, और उनके कार्यों ने मानवीय संभावनाओं के प्रति मेरी समझ को विस्तृत किया। मैंने उनमें मानवीय और दिव्य तत्वों का संगम देखा।

हमारी पहली मुलाकात के बाद, मैं पाँच महीने और भारत में ही रहा, जहाँ तक मुझे अनुमति थी, उनके करीब रहा, फिर अमेरिका लौट आया। भारत छोड़ने से पहले मुझे एक किताब के लिए उनका आशीर्वाद मिला था, जिसके बारे में मैंने उस समय तक लिखने का सोचा भी नहीं था। पश्चिम लौटने पर, मुझे कई ऐसे लोग मिले जो मेरे विचारों से सहमत थे और मेरे अनुभव को साझा करने के लिए तैयार थे; और उनके आशीर्वाद और उनकी जिज्ञासा ने 'बी हियर नाउ' को जन्म दिया।

1970 में मैं भारत लौट आया और फरवरी 1971 से मार्च 1972 तक, जब मेरा वीज़ा समाप्त हो गया और मुझे देश से निष्कासित कर दिया गया, तब तक मैं उनके साथ कभी-कभी रहता रहा। हालाँकि, उनके साथ रहूँ या उनसे दूर रहूँ, वे मेरी आध्यात्मिक जागृति के स्रोत और प्रेरणा बने रहे।

शुरू से ही मैं उन्हें दूसरों के साथ साझा करना चाहता था, लेकिन शुरुआत में उन्होंने मुझे लोगों को सीधे उनके पास लाने से मना किया। फिर भी, अपेक्षाकृत कुछ (लगभग सैकड़ों) पश्चिमी लोग उनके पास पहुँच गए और मेरी तरह ही उनके आभास से भर गए। 11 सितंबर 1973 को उनका देह त्याग गया, या यूँ कहें कि भारतीयों की भाषा में कहें तो, उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया।

बीते वर्षों में मैंने पाया कि उनके शरीर के न होने से मेरे जीवन पर उनका प्रभाव कम नहीं हुआ है। बल्कि, हर गुजरते वर्ष के साथ मैंने उनकी उपस्थिति, उनके मार्गदर्शन, उनके प्रेम और हर बार जब मैंने खुद को बहुत गंभीरता से लिया, तो उनकी दिव्य हंसी का अनुभव किया है। इससे यह संभावना उत्पन्न हुई कि जिन लोगों ने उन्हें शारीरिक रूप से कभी नहीं देखा, वे भी उनसे इसी तरह प्रभावित हो सकते हैं। इस संदेह की पुष्टि उन लोगों की आश्चर्यजनक रूप से बड़ी संख्या से हुई है जिन्होंने बताया है कि पुस्तकों, व्याख्यानों, टेपों और भक्तों के साथ व्यक्तिगत संपर्क के माध्यम से उन्होंने उन्हें इस तरह से अनुभव किया है जिससे उनका जीवन सुशोभित हुआ है।

मैं उन्हें "मेरे गुरु" कहकर संबोधित करता हूँ, लेकिन वास्तव में मैं उन्हें या हमारे रिश्ते को कभी भी इतने औपचारिक ढंग से नहीं देखता। मेरे लिए, वे बस महाराजजी हैं, एक उपनाम (जिसका अर्थ है "महान राजा") जो भारत में इतना आम है कि अक्सर चाय बेचने वाले को भी इसी नाम से पुकारा जाता है।

हम में से जो लोग महाराजजी के साथ रहे, वे भारत या पश्चिम में अक्सर मिलते रहते हैं।

बातचीत हमेशा उनकी यादों में ही सिमट जाती है। एक के बाद एक कहानियां सुनाई जाती हैं, और हर कहानी के बीच में मौन, हंसी या कुछ विचार आते हैं, क्योंकि हम उसकी गहराई और भव्यता का आनंद लेते हैं। उन पलों में पूरा वातावरण उनकी जीवंत आत्मा से भर उठता है और हम जानते हैं कि वे हमारे बीच ही हैं।

अपनी यात्राओं में मैं अब तक हजारों जागृत आत्माओं से मिल चुका हूँ, जिनकी खुले दिल से ग्रहणशीलता मुझे महाराजजी के साथ उस आत्मीयता को साझा करने के लिए प्रेरित करती है, जिसका जिक्र कहानियों में मिलता है। फिर भी, अब तक उनके बारे में बहुत कम कहानियाँ ही प्रकाशित हुई हैं, जिनमें से अधिकांश मेरे व्यक्तिगत अनुभवों से संबंधित हैं। इसी कमी को दूर करने के उद्देश्य से मैंने यह पुस्तक लिखी है।

उनकी मृत्यु के तुरंत बाद, मैंने कई पश्चिमी लोगों को भारत भर में यात्रा करके कहानियां एकत्र करने की उनकी योजना में प्रोत्साहित किया। वे लगभग चार सौ किस्से जुटाने में सफल रहे, लेकिन उस समय उन्होंने पाया कि कई भारतीय भक्त उनके बारे में बात करने में संकोच कर रहे थे। वे हमेशा उनके बारे में ज्यादा बात करने को नापसंद करते थे, और वे अब भी उस बंधन को महसूस कर रहे थे। 1976 में हम दो लोग फिर से भारत में थे और हमें यह देखकर बहुत खुशी हुई कि कई भारतीय भक्त, जो निश्चित रूप से उन्हें हमसे कहीं अधिक व्यापक रूप से और कई वर्षों से जानते थे, अब अपनी कहानियों का खजाना खुलकर साझा करने को तैयार थे। उस समय हमने बारह सौ कहानियां एकत्र कीं। तब से, एक अन्य पश्चिमी व्यक्ति की सहायता से, हमने पूर्व और पश्चिम से एकत्रित की गई अतिरिक्त चार सौ कहानियां जोड़ी हैं, जिससे कहानियों, किस्सों और उद्धरणों की कुल संख्या दो हजार से अधिक हो गई है, जो सभी सौ से अधिक भक्तों के साथ साक्षात्कार पर आधारित हैं।

बेशक, सौ भक्त भी उन हजारों लोगों का एक छोटा सा हिस्सा मात्र हैं जो महाराजजी के जीवनकाल में उनसे प्रभावित हुए थे, और हर किसी के पास कोई न कोई अनमोल स्मृति और उस पहेली का कोई न कोई अंश है। लेकिन कहीं हम स्मृतियों के ऐसे सागर में डूब न जाएं, इसलिए एक समय मैंने मनमाने ढंग से यह निर्णय लिया कि हम संग्रह करना बंद करें और जो हमारे पास पहले से है उसे व्यवस्थित करना शुरू करें।

जिन श्रद्धालुओं की कहानियाँ इसमें शामिल हैं, वे सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से विविध पृष्ठभूमि से आते हैं। साक्षात्कार महत्वपूर्ण अधिकारियों से उनके कार्यालयों में और सड़कों पर सफाईकर्मियों से लिए गए। हमने हिमालयी पहाड़ी गाँवों की महिलाओं की बातचीत रिकॉर्ड की, जो दोपहर ढलते समय कोयले की अंगीठी के पास बैठकर अपने हाथ सेंक रही थीं। हमने उनके संस्मरणों को घरों में, सड़कों पर, मंदिर परिसरों में, तारों भरी रात में आग के चारों ओर बैठे हुए, कारों में, हॉट टब में, हवाई जहाज़ों में और लंबी सैर के दौरान सुना। कहानियाँ हिंदू पुजारियों ने चिलम (हशीश के पाइप) पीते हुए सुनाईं, प्रोफेसरों, पुलिस अधिकारियों, किसानों, उद्योगपतियों ने, बच्चों और उनकी माताओं ने, जो लकड़ी और कोयले की आग पर उबलते हुए बर्तनों को हिलाते हुए बातें कर रहे थे। हमेशा एक ही तरह की शर्मीली खुशी का एहसास था, जो किसी दूसरे के साथ इतनी निजी, अनमोल याद साझा करने पर महसूस होती थी। उनके बारे में बात करने के लिए ये सभाएँ अवर्णनीय रूप से गरिमामय थीं।

इन कहानियों को इकट्ठा करने के बाद, हमारा अगला सवाल यह था कि इस विशाल सामग्री को कैसे प्रस्तुत किया जाए। मैं तीन साल से इस समस्या पर काम कर रहा था, लिखता और फिर से लिखता रहा। मेरा शुरुआती प्रयास एक व्यक्तिगत कालक्रम की तरह था, लेकिन मैंने पाया कि इस तरह की संरचना में सारी सामग्री आसानी से शामिल नहीं हो पाती थी, और इसके अलावा, इसमें बहुत सी ऐसी बातें भी शामिल करनी पड़ती थीं जो अप्रासंगिक लगती थीं। इसलिए मैंने फिर से शुरुआत की, इस बार अपने व्यक्तिगत अनुभवों को केवल अतिरिक्त कहानियों के रूप में शामिल किया और चुनिंदा कहानियों को विभिन्न विषयगत शीर्षकों के अंतर्गत समूहित किया। इसका परिणाम यह संकलन है।

ये कहानियां, किस्से और उद्धरण एक ऐसा चित्र बनाते हैं जिसके माध्यम से महाराजजी से मुलाकात की जा सकती है। इस चित्र के घटकों को आपस में जोड़ने के लिए मैंने बहुत कम संरचनात्मक तत्वों का उपयोग किया है, और यथासंभव अपनी व्यक्तिगत व्याख्याओं और दृष्टिकोण को अलग रखने को प्राथमिकता दी है।

लेकिन इस सामग्री को इसके शुद्धतम रूप में आपके साथ साझा करने की मेरी रणनीति आपकी पढ़ने की इच्छा को बहुत कम प्रभावित करती है, क्योंकि मैंने इसमें उन लुभावनी कहानियों को शामिल नहीं किया है जो आपको आगे पढ़ने के लिए प्रेरित करती हैं। मैं महाराजजी के बारे में पढ़ने की आपकी इच्छा को प्रभावित नहीं करना चाहता था; बल्कि, मैं केवल वही उपलब्ध कराना चाहता था जो मेरे पास था। जैसा कि आप देखेंगे, महाराजजी ने हम सभी से उनके दर्शन (उनकी उपस्थिति का अनुभव) प्राप्त करने के लिए पर्याप्त प्रयास करने की अपेक्षा की थी। मुझे लगता है कि यह उनकी शिक्षाओं की भावना के अनुरूप है कि जो पाठक इस पुस्तक के माध्यम से उनके दर्शन प्राप्त करना चाहते हैं, वे भी इसी प्रकार का "सही" या "वास्तविक" प्रयास करें (जिस अर्थ में बुद्ध ने अष्टांग मार्ग में और जॉर्ज गुरजिएफ ने इसका उल्लेख किया है)।

इसलिए, यदि आप इस पुस्तक को इस इच्छा से पढ़ते हैं कि आप उनसे मिलें और उनके दर्शन प्राप्त करें, जिससे आपका जीवन गहराई से बदल जाए, जैसा कि इसने हमारा बदला है, तो आप इस पुस्तक को धीरे-धीरे और गहराई से पढ़ना चाहेंगे। मैं आपको केवल इतना ही विश्वास दिला सकता हूँ कि मेरी राय में प्रत्येक कहानी में कुछ न कुछ शिक्षा छिपी है और वह चिंतन के योग्य है। आप इस पुस्तक को एक बार में या कुछ बार में भी पूरा नहीं पढ़ पाएंगे। उत्तम ब्रांडी की तरह, इन स्मृतियों को धीरे-धीरे घूंट-घूंट करके पीना चाहिए और इनके स्वाद और सुगंध को अपने मन और हृदय में गहराई से उतरने देना चाहिए। और उन कहानियों में निहित मौन को सुनना न भूलें, क्योंकि महाराजजी से सच्ची मुलाकात शब्दों के बीच छिपी है। इस प्रयास के फलस्वरूप, आपको इस पृथ्वी पर दुर्लभ आध्यात्मिक व्यक्तित्व से मिलने का भरपूर अवसर मिलेगा।

महाराजजी और उनकी शिक्षाओं को उस परिवेश से अलग करना कठिन है जिसमें मैंने उन्हें जाना। व्यापक अर्थ में, उनका स्वरूप मेरे लिए भारत, सुंदर कुमाऊं पहाड़ियाँ और गंगा नदी है; उनके भक्त, उनकी कोमलता और नोकझोंक, उनके मंदिर और उनकी तस्वीरें। उनकी शिक्षाएँ धरती माता के प्रति प्रेम थीं, जिसका अनुभव मैंने सबसे पहले भारतीय गाँवों में किया—और मेरी पेचिश, वीज़ा की परेशानियाँ, पवित्र गायें, रिक्शा की सवारी, भीड़भाड़ वाले बाज़ार और धुंध भरे

जंगल की सैर। फिर भी, उनके साथ बिताए पल भारत के समृद्ध मंच पर घटित हुए, लेकिन परिवेश का महत्व केवल अनुभवों के भंडार के रूप में प्रतीत हुआ, जिसके माध्यम से शिक्षाएँ प्राप्त हो सकीं। वे स्वयं विशेष रूप से भारतीय नहीं लगे, न ही पूर्वी और न ही पश्चिमी। यद्यपि हम उनसे हिंदू मंदिरों में मिले, वे हिंदू या बौद्ध या ईसाई से अधिक प्रतीत नहीं हुए।

उन्होंने हमारे जीवन की हर चीज़—कपड़े, भोजन, नींद; भय, शंकाएँ, आकांक्षाएँ; परिवार, विवाह; बीमारियाँ, जन्म और मृत्यु—का उपयोग हमें आध्यात्मिक जीवन जीने की शिक्षा देने के लिए किया। ऐसा करके, उन्होंने एक ऐसी प्रक्रिया शुरू की जिसके माध्यम से हम उनके साथ न होने पर भी अपने जीवन के अनुभवों से सीखते रह सकते हैं। यही कारण है कि उनकी शिक्षाओं में निरंतरता बनी हुई है, जिसका अनुभव हम सभी ने उनकी मृत्यु के बाद से किया है।

मुझे आशा है कि इन कहानियों के माध्यम से आप अपनी धारणाओं को इस प्रकार विकसित कर सकेंगे कि आप अपने दैनिक जीवन की घटनाओं के द्वारा महाराजजी से संवाद स्थापित कर सकें। हृदय में क्षण-दर-क्षण चलने वाला यह संवाद प्रेम के माध्यम से पदार्थ को आत्मा में रूपांतरित करने की एक अद्भुत विधि है।

मैं महाराजजी के साथ इसी तरह समय बिता रहा हूँ। और मैं आपको बता नहीं सकता...

सोकेल, कैलिफोर्निया
मार्च 1979

फोटो: के.के. साह

तीसरे संस्करण की प्रस्तावना

महाराजजी के देह त्याग को अब बाईस वर्ष हो चुके हैं। 1967 के उत्तरार्ध से लेकर 1972 के प्रारंभ तक मैं उनसे कभी-कभार ही मिल पाया, और उस दौरान भी बहुत कम ही। फिर भी, वर्तमान क्षण में वे मेरे लिए सबसे महत्वपूर्ण संबंध बने हुए हैं।

लेकिन वास्तव में इसे "रिश्ता" कहना एक बहुत ही सीमित वर्गीकरण है। शुरुआत में, मैं एक ऐसे व्यक्ति से मिला जो कंबल में लिपटा हुआ था और मेरे मन और हृदय को समझता था। उन कुछ वर्षों के दौरान मेरे उसके साथ कई अनुभव हुए, जिनमें से कुछ ही मुझे याद हैं।

एक समय मैंने अपने अनुभवों और महाराज जी के वचनों की एक सूची बनाने की कोशिश की। मेरे पास कई छोटे कागज़ों पर लगभग 450 वचन थे। फिर, मंदिर में रहते हुए, एक दिन मैं दोपहर के भोजन के बाद वापस आया और अपने कमरे में दाखिल हुआ, तभी एक बड़ा कौआ, जो बंदरों को बाहर रखने के लिए लगाई गई खिड़की की सलाखों से अंदर आ गया था, उन 450 वचनों में से शायद चालीस या पचास वचनों वाली एक शीट लेकर उड़ रहा था। वे सब गायब हो गए थे, और उनके साथ ही और वचन इकट्ठा करने की प्रेरणा भी। मैंने देखा कि मैं हमेशा अनुभवों की तात्कालिकता से खुद को दूर रखने के लिए उन्हें इकट्ठा करने का सहारा लेता था। मैं उन्हें बाद में सोचने के लिए लिख लेने का बहाना बनाता था। उस क्षण, मुझे विश्वास हुआ कि महाराज जी से मैं जो कुछ सीखूंगा, वह सतही बातें नहीं होंगी जिन्हें अवधारणाओं में लिखा जा सके, बल्कि मेरे अस्तित्व के सार में एक परिवर्तन होगा। और मुझे यह सीखना होगा कि अपने अस्तित्व को सारगर्भित ज्ञान के रूप में ग्रहण करने के लिए कैसे खुला रखूं, न कि उसे ज्ञान के रूप में एकत्रित करूं।

तो मैंने ऐसा किया है। पिछले बाईस वर्षों में, जब महाराजजी भौतिक रूप से हमारे बीच नहीं रहे, उनके साथ जो कुछ भी घटित हुआ है, वह एक प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का वर्णन करता है। पहले मेरे पास उनकी तस्वीरें और कहानियां थीं। मैंने सैकड़ों, बल्कि हजारों बार, उन्हें दूसरों के साथ साझा करने और खुद को याद दिलाने के लिए कहानियां सुनाईं, ताकि मैं हर कहानी में छिपे ज्ञान को आत्मसात कर सकूं। फिर 1979 में, 'मिरेकल ऑफ लव' अस्तित्व में आया, और मुझे पूर्णता का अहसास हुआ और मुझे लगा कि मैं कहानियों को पीछे छोड़कर महाराजजी को एक नए तरीके से जान सकती हूं।

ये कहानियाँ कुछ खास गुणों की ओर इशारा करती हैं: करुणा, शरारत, खालीपन, ज्ञान, दयालुता, हास्य, भक्ति, उग्रता, प्रेम आदि। अब ऐसा लग रहा था मानो कहानियाँ ही इन गुणों से प्रतिस्थापित हो रही हों। मैं महाराजजी के साथ किसी विशेष कहानी के माध्यम से नहीं, बल्कि स्वयं उस गुण को गहराई से अनुभव करके जुड़ पा रहा था। वे और उनका हास्य मेरे ठीक बाईं ओर खिलखिला रहे थे; उनकी उग्रता मेरी पीठ पीछे महसूस हो रही थी; उनका खालीपन मेरे कंधे पर बैठे किसी जीवित मृत के समान था। उस गुण का अनुभव सभी कहानियों और छवियों का एक सूक्ष्म मिश्रण था, चाहे वे याद हों या न हों, लेकिन अब उन सभी के सार के रूप में महसूस हो रहा था।

जब भी मैं महाराजजी के इन गुणों में से किसी एक के प्रभाव में रहकर उनकी उपस्थिति की

अंतरंगता का अनुभव करता, तो यह अनिवार्य रूप से मुझे उस सापेक्ष वास्तविकता को नए सिरे से समझने के लिए प्रेरित करता जिसमें मैं जी रहा था, मानो वह वास्तविकता स्वयं इसी गुण से छनकर आ रही हो। यह सिलसिला कम से कम पिछले आठ-दस वर्षों से जारी है, क्योंकि मैंने अपने दैनिक जीवन में इन अनेक गुणों को अधिकाधिक समाहित करना सीख लिया है।

पिछले कुछ वर्षों में महाराजजी और मेरे बीच एक नए प्रकार का जुड़ाव महसूस होने लगा है। ऐसा लगता है कि हम शून्यता में, मौन, अविभेदित चेतना में, अधिकाधिक मिलते हैं। यह एक ऐसी आत्मीयता है जो सभी भेदों को पार करने से उत्पन्न होती है, यहाँ तक कि स्वयं और दूसरे के बीच के भेद को भी। सभी गुण विद्यमान होते हैं, यद्यपि वे प्रकट नहीं होते। उन अनमोल क्षणों में, व्यक्ति उस विशालता और सरलता को देखकर स्तब्ध रह जाता है। ऐसा नहीं है कि मैं वही हूँ, या उन्होंने मुझे अपने वश में कर लिया है। बल्कि ऐसा लगता है मानो हम दोनों उस धरती में समा गए हों जो विद्यमान है... देवी में, प्रियतम में। यह एक ऐसा एकीकरण है जिसमें सृष्टिकर्ता और सृजित एक हो जाते हैं। यही प्रेम है।

मैं यह सब आपके साथ इसलिए साझा कर रहा हूँ ताकि यह समझा सकूँ कि इस पुस्तक में शामिल कहानियाँ और उद्धरण एक साधना प्रक्रिया का हिस्सा हैं। पूर्व में इसे गुरु-कृपा या गुरु की कृपा का मार्ग कहा जाता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि सच्चा गुरु आपके साथ कुछ करता है। बल्कि यह एक ऐसा मार्ग है जिसमें ऐसे अस्तित्व के प्रति खुलापन ही आपको अपने जीवन को कृपा के रूप में जानने की अनुमति देता है। गुरु एक द्वार के समान हैं जिसके पार जाने पर सत्य का ऐसा दर्शन होता है जो आपको उसकी ओर आकर्षित करता है; या गुरु एक दर्पण के समान हैं जिसमें आप वह देख पाते हैं जो आप नहीं हैं।

हालांकि अब तक मेरी सभी रचनाओं में से इस पुस्तक की बिक्री सबसे कम हुई है, फिर भी इसका प्रभाव सबसे गहरा रहा है। अनगिनत लोग, केवल इन कहानियों को ग्रहणशील हृदय से पढ़कर, गुरु के दर्शन की इस यात्रा पर अग्रसर हुए हैं। और फिर वे, मेरी ही तरह, इस हृदयीय जुड़ाव के माध्यम से अपने दैनिक जीवन में परिवर्तन पाते हैं।

मुझसे अक्सर पूछा जाता है कि क्या साक्षात गुरु का होना आवश्यक है। मेरा मानना है कि ऐसे व्यक्ति से साक्षात मिलना सबसे अधिक लाभकारी होता है, लेकिन इस पुस्तक के प्रभाव को देखकर मुझे यह स्पष्ट हो गया है कि यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि जिन लोगों ने महाराजजी को केवल टेप या लिखित रूप से जानना शुरू किया था, वे अब उन्हें उतना ही गहराई से जानते हैं जितना मैं जानता हूँ या जितना वे लोग जानते हैं जो भारत में उनके साथ बैठे थे।

उनके साथ हमारे जुड़ाव का वास्तविक प्रमाण हमारे अपने जीवन का अंतिम रूपांतरण है, जो उनके व्यक्तित्व में प्रकट हुए इन अनेक गुणों के मिश्रण की अभिव्यक्ति बन जाता है। ऐसा ही हो!

राम दास

सैन एन्सेल्मो, कैलिफोर्निया

मार्च 1995

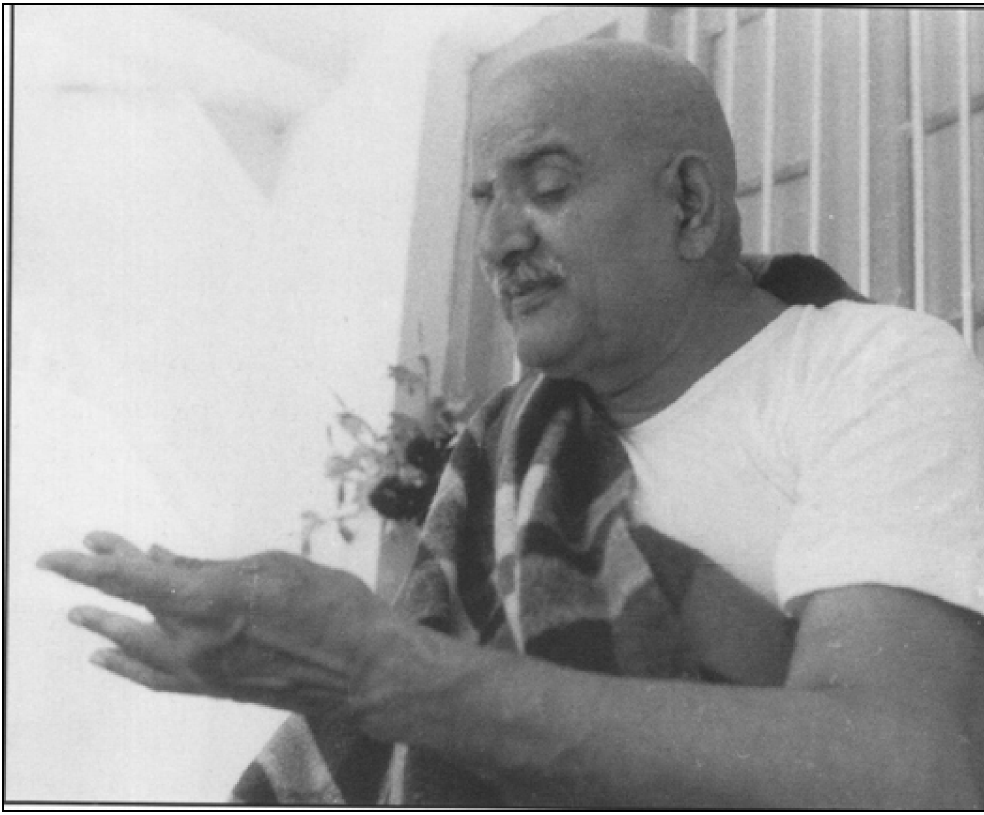

फोटो: चैतन्य

स्वीकृतियाँ

इस पुस्तक में संकलित सामग्री महाराजजी के बारे में दो हजार से अधिक कहानियों का संकलन है, जिन्हें पांच वर्षों में सौ से अधिक भक्तों से एकत्र किया गया है। इन भक्तों के प्रति, जिन्होंने अपनी अनमोल यादें साझा कीं, मैं अपना गहरा प्रेम और आभार व्यक्त करना चाहता हूँ। उनमें से कुछ का मानना था कि महाराजजी जैसे विशाल, निराकार और सूक्ष्म गुणों वाले व्यक्ति के बारे में कोई पुस्तक लिखी ही नहीं जा सकती, फिर भी उन्होंने अपनी कहानियाँ साझा कीं। मैं उनकी इस दयालुता का सम्मान करता हूँ और आशा करता हूँ कि महाराजजी के अनुभवों को उन लोगों के साथ साझा करने की अपनी उत्सुकता में, जिन्हें उनसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, मैंने उनके विश्वास का दुरुपयोग नहीं किया है।

कुछ भक्त मुझसे कहते हैं कि अन्य भक्तों द्वारा सुनाई गई कहानियाँ तथ्यात्मक रूप से सटीक नहीं हैं। मेरे पास किसी भी कहानी की प्रामाणिकता की पुष्टि करने का कोई तरीका नहीं है। मैं केवल इतना कह सकता हूँ कि जिन लोगों ने कहानियाँ एकत्र कीं, वे कहानी सुनाने वालों की विश्वसनीयता से प्रभावित हुए।

हालांकि इस पांडुलिपि की पूरी जिम्मेदारी मेरी है, फिर भी मैं अपने दोस्तों से मिली ढेर सारी स्नेहपूर्ण सहायता के लिए उनका आभार व्यक्त करना चाहता हूं:

> इनमें सबसे आगे अंजनी थीं, जिन्होंने चार महीने से अधिक का पूर्णकालिक योगदान दिया, उस समय जब इस परियोजना पर मेरा भरोसा काफी कम हो रहा था। महाराजजी के प्रति उनके प्रेम ने इस पांडुलिपि को कई तरह से प्रभावित किया। के. के. साह ने भारत से मुझे पृष्ठ-दर-पृष्ठ और कभी-कभी पंक्ति-दर-पंक्ति सुझाव वाले लंबे पत्र भेजे, जिनसे पांडुलिपि में सुधार करने और शर्मनाक सांस्कृतिक त्रुटियों से बचने में मदद मिली। उनके समर्पण और प्रेमपूर्ण प्रयासों से मुझे बहुत प्रेरणा मिली। चैतन्य ने 1973 में और फिर 1976 में भारत की एक यादगार यात्रा के दौरान मेरे साथ कहानियाँ एकत्र करने में मदद की। उन्होंने पांडुलिपि के एक पुराने रूप की समीक्षा की और मुझे अपनी कविता, "प्रेम का मार्ग सूक्ष्म है" को शामिल करने की अनुमति दी। सरस्वती (रोज़ाली रैनसम) ने टेप रिकॉर्डर लेकर भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका का दौरा किया और हमारी कहानी संग्रह को अमूल्य रूप से समृद्ध किया। बलराम दास, कृष्ण दास (रॉय बोनी), रामेश्वर दास, चैतन्य और प्यारे लाल साह ने अपने फ़ोटोग्राफ़ के खजाने से अनमोल तस्वीरें साझा करने पर सहमति जताई। लिलियन, सैंडी और ज्योति ने प्रेमपूर्वक पांडुलिपि को टाइप किया। राम देव, सुब्रह्मण्यम और गिरिजा, कृष्ण, मीरा और सोम कृष्ण ने कार्य के प्रारंभिक चरणों में उपयोगी आलोचनात्मक सुझाव दिए। बिल व्हाइटहेड ने इस पुस्तक (मूल डटन पेपरबैक) का संपादन महाराजजी के प्रति भक्तों के गहरे प्रेम और पाठकों की उनसे अपरिचितता दोनों को ध्यान में रखते हुए संवेदनशीलता से किया। उन्होंने तीन वर्षों तक धैर्य बनाए रखा, जबकि मुझे ऐसा लगा कि ये परिवर्तन ऊपर से अपेक्षित थे, लेकिन उन्हें शायद किसी अन्य विक्षिप्त लेखक की चालबाज़ी ही लगी होगी।

इस पुस्तक के पुनर्रचना और संपादन का कार्य जय लक्ष्मण ने अत्यंत लगन और प्रेम से

किया है। संपादन कार्य में पार्वती मार्कस ने उनकी सहायता की।

मुझे लगता है कि महाराजजी के कई भक्तों को इस पुस्तक में वह महाराजजी नहीं मिलेंगे जिन्हें वे अपने हृदय में जानते हैं। मैं उनसे केवल धैर्य रखने का अनुरोध कर सकता हूँ, क्योंकि यह पुस्तक उन लोगों के लिए है जो महाराजजी से कभी नहीं मिले हैं। जो लोग उनसे मिल चुके हैं, उनके लिए इस पुस्तक की कोई आवश्यकता नहीं है।

कई बार तो इस साहसिक कार्य को करने की हिम्मत देखकर मैं लगभग अभिभूत हो गया। लेकिन महाराजजी के काम करने के तरीके को जानते हुए, मैंने इस विश्वास के साथ आगे कदम बढ़ाया कि उनकी कृपा के बिना यह पुस्तक संभव ही नहीं थी।

प्रियतम के साथ एक पल बिताने पर नदी अपना मार्ग बदल लेती है।

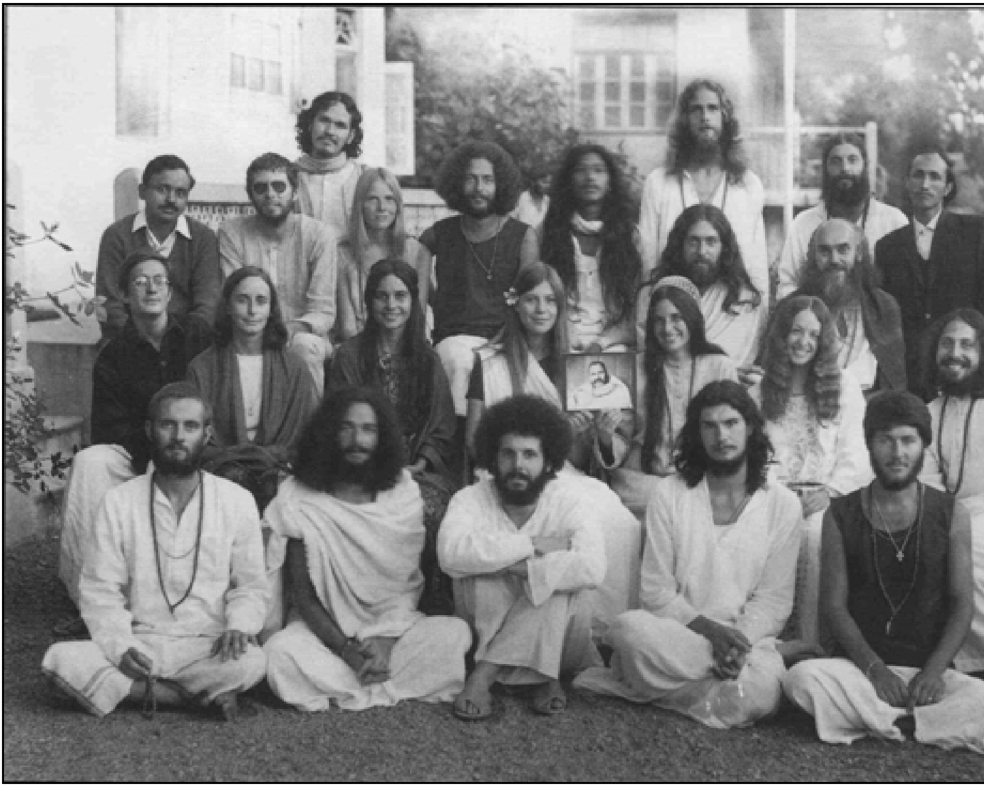

फोटो: कला मंदिर, नैनीताल, यू.पी., भारत

"...मधुमक्खियाँ आती हैं"

जब फूल खिलता है, तो मधुमक्खियाँ बिना बुलाए आ जाती हैं।
—रामकृष्ण

हम महाराजजी के चरणों में आए, जीवंत आत्मा के लिए हमारी तड़प और उनके प्रकाश से प्रेरित होकर। हम यूरोप और ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और दक्षिण अमेरिका से आए थे। जैसा कि हरमन हेस ने अपनी पुस्तक 'जर्नी टू द ईस्ट' में सहयात्रियों के बारे में कहा है, यात्रा करने का प्रत्येक व्यक्ति का अपना विशेष कारण था, लेकिन हम सभी का एक ही लक्ष्य था। हम अपने साथ संदेह और आस्था के विभिन्न रंग, खुले या बंद हृदय, कामुकता या वैराग्य, बौद्धिक अहंकार या विनम्रता लेकर आए थे। महाराजजी ने प्रत्येक के प्रति अद्वितीय प्रतिक्रिया दी: कभी उग्रता से, कभी कोमलता से; कभी हमें अनदेखा करके या दूर भेजकर, कभी हमें महत्व देकर; कभी मन और हृदय को पढ़कर; कभी मौन रहकर। उन्होंने मन को शांत करने और हृदय को खोलने के लिए वह सब किया जो आवश्यक था, ताकि वह प्यास बुझ सके जिसने हम सभी को उनकी ओर खींचा था।

मैं भारत में एक युवा पश्चिमी व्यक्ति के साथ यात्रा कर रहा था। हम पहाड़ों में एक लैंड रोवर में आए थे, जो मैंने एक दोस्त से उधार ली थी, ताकि उसके गुरु से मिलकर उसके वीज़ा की समस्या में मदद मिल सके। मेरा मूड खराब था, क्योंकि मैंने बहुत ज़्यादा हशीश पी ली थी, भारत में बहुत ज़्यादा समय बिता लिया था, और वैसे भी किसी "गुरु" से मिलने की मेरी कोई खास इच्छा नहीं थी।

[निम्नलिखित अंश 'बी हियर नाउ' नामक पुस्तक से रूपांतरित किया गया है।]

हम एक मंदिर पर रुके और उसने पूछा कि गुरु कहाँ हैं। गाड़ी के चारों ओर जमा हुए भारतीयों ने पास की एक पहाड़ी की ओर इशारा किया। पल भर में वह गाड़ी से उतरा और पहाड़ी की ओर दौड़ने लगा। वे उसके पीछे-पीछे चल रहे थे और गुरु को देखकर बेहद खुश लग रहे थे। मैं भी गाड़ी से उतर गया। अब मैं और भी परेशान हो गया था क्योंकि सब लोग मुझे नज़रअंदाज़ कर रहे थे। मैं नंगे पैर उनके पीछे उस पथरीले रास्ते पर दौड़ा, लड़खड़ाता हुआ। वैसे भी मुझे गुरु को देखना नहीं था और ये सब क्या बात थी?

रास्ते के मोड़ पर पहुँचकर मैं एक ऐसे खेत में पहुँचा जहाँ से घाटी का नज़ारा दिखता था, और उस खेत में एक पेड़ के नीचे साठ-सत्तर वर्ष का एक व्यक्ति कंबल ओढ़े बैठा था। उसके चारों ओर आठ-नौ भारतीय बैठे थे। मुझे वह खूबसूरत दृश्य दिखाई दिया—वह समूह, बादल, हरी-भरी घाटी, हिमालय की तलहटी की मनमोहक सुंदरता।

मेरे साथ यात्रा कर रहे मेरे साथी ने उस आदमी के पास दौड़कर खुद को जमीन पर गिरा दिया और पूरा प्रणाम किया। वह रो रहा था और वह आदमी उसके सिर पर थपथपा रहा था। मैं और भी ज्यादा असमंजस में पड़ गया।

मैं एक तरफ खड़ी होकर सोच रही थी, "मैं उसके पैर नहीं छूने वाली। मुझे ऐसा करने की ज़रूरत नहीं है। मुझसे ऐसा करने की अपेक्षा नहीं की जाती।" बीच-बीच में वह आदमी मेरी तरफ देखता और उसकी आँखों में हल्की सी चमक आ जाती। उसकी ये निगाहें मुझे और भी असहज

कर रही थीं।

फिर उन्होंने मेरी तरफ देखा और हिंदी में बोलना शुरू किया, जो मुझे बहुत कम समझ में आती थी। हालांकि, एक दूसरा आदमी अनुवाद कर रहा था। मैंने उसे अपने दोस्त से पूछते सुना, "क्या आपके पास महाराजजी की तस्वीर है?"

मेरे दोस्त ने सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

कंबल ओढ़े हुए आदमी ने मेरी ओर इशारा करते हुए कहा, "उसे दे दो।"

मैंने मन ही मन सोचा, “ये तो बहुत अच्छा है, अपनी तस्वीर भेज रहे हैं,” और मैंने मुस्कुराकर आभार व्यक्त करते हुए सिर हिलाया। लेकिन फिर भी मैं उनके पैर छूने वाली नहीं थी।

फिर उसने कहा, "आप एक बड़ी कार में आए हैं?"

“हां।” (वैसे तो मैं शुरू से ही कार उधार लेना नहीं चाहता था, क्योंकि मैं जिम्मेदारी नहीं लेना चाहता था, इसलिए कार मेरे लिए झुंझलाहट का कारण थी।)

उन्होंने मुस्कुराते हुए मेरी ओर देखा और कहा, "क्या तुम मुझे यह दोगे?"

मैंने कहना शुरू किया, “क्या...” लेकिन मेरा दोस्त जहाँ लेटा हुआ था, वहाँ से ऊपर देखकर बोला, “महाराज जी, अगर आप इसे चाहते हैं, तो आप इसे ले सकते हैं। यह आपका है।”

और मैंने कहा, “नहीं, ज़रा रुकिए। आप डेविड की कार ऐसे ही नहीं दे सकते।” बूढ़ा आदमी हंस रहा था।

दरअसल, मेरे अलावा सब लोग हंस रहे थे।

फिर उसने कहा, "क्या तुमने अमेरिका में खूब पैसा कमाया?"

मैंने प्रोफेसर और तस्कर के रूप में बिताए अपने सभी वर्षों की समीक्षा की और बड़े गर्व से कहा, "हाँ।"

आपने कितना कमाया?

“खैर,” मैंने कहा, “एक समय था”—और मैंने अपने अहंकार को बढ़ाने के लिए आंकड़े को थोड़ा और बढ़ा दिया—“पच्चीस हजार डॉलर।”

समूह ने उस रकम को रुपयों में बदला, और सब लोग इस आंकड़े को देखकर दंग रह गए। यह सब तो मेरी शेखी थी। मैंने कभी पच्चीस हज़ार डॉलर नहीं कमाए थे। फिर वह हँसा और बोला, "क्या तुम मेरे लिए ऐसी ही कार खरीदोगे?"

मुझे याद है उस पल मेरे मन में क्या चल रहा था। हालाँकि मैं यहूदी चंदा इकट्ठा करने वाले परिवार से आती थी, लेकिन मैंने इस तरह की हेराफेरी पहले कभी नहीं देखी थी। मैंने सोचा, "वह मेरा नाम तक नहीं जानता और अभी से सात हज़ार डॉलर की गाड़ी माँग रहा है।"

“ठीक है, शायद...” मैंने कहा। यह सारी बात अब मुझे बहुत परेशान कर रही थी।

और उन्होंने कहा, “इन्हें यहाँ से ले जाओ और इन्हें भोजन दो।” और हमें शानदार भोजन दिया गया, और फिर हमें आराम करने के लिए कहा गया। कुछ समय बाद हम महाराजजी के पास वापस आ गए और उन्होंने मुझसे कहा, “इधर आओ। बैठो।” तो मैं उनके सामने बैठ गया और उन्होंने मेरी ओर देखकर कहा, “कल रात तुम तारों के नीचे थे।” (यह उनके कहे का अंग्रेज़ी अनुवाद है।)

“उम-हम।”

आप अपनी मां के बारे में सोच रहे थे।

“हाँ।” (पिछली रात, कुछ सौ मील दूर, मैं रात में बाथरूम जाने के लिए बाहर गया था। तारे बहुत चमकीले थे और मैं बाहर ही रुका रहा, ब्रह्मांड के बहुत करीब महसूस कर रहा था। उसी समय मुझे अचानक अपनी माँ की उपस्थिति का अहसास हुआ, जिनकी नौ महीने पहले तिल्ली की बीमारी से मृत्यु हो गई थी। यह एक बहुत ही शक्तिशाली क्षण था, और मैंने इसके बारे में किसी को नहीं बताया था।)

उनकी मृत्यु पिछले साल हुई थी।

“उम-हम।”

"मरने से पहले उसका पेट बहुत फूल गया था।"

विराम… “हाँ।”

वह पीछे झुक गया, अपनी आँखें बंद कर लीं और (अंग्रेजी में) कहा, "स्प्लीन, वह स्प्लीन से मर गई।"

उस पल मेरे साथ जो हुआ, उसे मैं शब्दों में बयान नहीं कर सकती। उसने मुझे एक खास अंदाज़ में देखा और दो बातें घटीं। ये कारण और परिणाम नहीं लगते, बल्कि ऐसा लगा जैसे ये एक साथ घटी हों।

मेरा दिमाग तेज़ी से सोचने लगा कि मैं कैसे कुछ करूँ—उसने अभी-अभी क्या किया है, इसका पता लगाऊँ। मेरे मन में सीआईए से जुड़े जितने भी डर थे, सब घूमने लगे: “यह कौन है? यह किसका प्रतिनिधि है? फाइल को प्रकट करने के लिए यह कौन सा बटन दबाता है? मुझे यहाँ क्यों लाया गया है?” कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था।

यह सब इस तरह होना नामुमकिन सा लग रहा था। मेरे साथ यात्रा कर रहे व्यक्ति को महाराजजी की कही किसी भी बात का पता नहीं था, और मैं तो कार में बैठा एक पर्यटक था। यह सब कुछ समझ से परे था। मेरा दिमाग तेज़ी से सोचने लगा।

तब तक मेरे पास मानसिक अनुभवों के दो मॉडल थे। एक था: "यह किसी और के साथ हुआ है, और यह बहुत दिलचस्प है और हमें निश्चित रूप से इन चीजों के बारे में खुले दिमाग से सोचना चाहिए।" यह मेरा सामाजिक विज्ञान का दृष्टिकोण था। दूसरा था: "ठीक है, मैंने एलएसडी का नशा किया है। कौन जानता है कि असल में यह कैसा होता है?" आखिरकार, मैंने रसायनों के प्रभाव में ऐसे अनुभव किए थे जिनमें मैंने पूरे वातावरण का निर्माण किया था।

लेकिन इनमें से कोई भी श्रेणी इस स्थिति पर लागू नहीं होती थी, और जैसे-जैसे मेरा दिमाग तेज़ी से चलने लगा, मुझे ऐसा लगा जैसे किसी कंप्यूटर को कोई अनसुलझी समस्या दे दी गई हो—घंटी बजती है, लाल बत्ती जलती है और मशीन रुक जाती है। मेरा दिमाग बस हार मान गया। उसकी सारी ऊर्जा खत्म हो गई, स्पष्टीकरण देने की उसकी सारी उत्सुकता थम गई। मुझे तार्किक स्तर पर किसी चीज़ से संतुष्टि चाहिए थी, और वहाँ कुछ भी नहीं था।

उसी क्षण मुझे अपनी छाती में असहनीय दर्द और एक भयानक पीड़ा महसूस हुई, और मैं रोने लगी। मैं रोती रही, रोती रही, लेकिन न तो मैं खुश थी और न ही दुखी। यह एक ऐसा रोना था जिसका अनुभव मैंने पहले कभी नहीं किया था। मैं बस इतना ही कह सकती हूँ कि ऐसा लगा

जैसे मैंने कुछ पूरा कर लिया हो। यात्रा समाप्त हो गई थी। मैं घर आ गई थी। (आर.डी.)[1]

राम

दादा के शब्दों में, "हम सभी सोचते हैं कि हम गुरु का पीछा कर रहे हैं, लेकिन वास्तव में, आप देखिए, वह हमारा पीछा कर रहा है।"

भारत की कठिनाइयों के बारे में मुझे जो कुछ भी पता था, उससे मैं वहाँ जाना नहीं चाहता था, फिर भी अक्टूबर 1971 में मैं अपने दो दोस्तों के साथ जेएफके हवाई अड्डे पर बॉम्बे जाने वाले विमान में सवार होने का इंतजार कर रहा था। हमारे न्यूयॉर्क स्थित "आध्यात्मिक" समूह के बहुत से लोग हमें विदा करने आए थे, या जैसा कि मुझे संदेह था, यह सुनिश्चित करने आए थे कि हम वास्तव में विमान में चढ़ जाएँ। हम तीनों अलग-अलग तरह से घबराए हुए थे, यह सोच रहे थे कि हम क्या कर रहे हैं। भारत पहुँचने पर हमारी घबराहट और उलझन सौ गुना बढ़ गई।

हम तीनों, और महाराजजी के आसपास इकट्ठा हुए पश्चिमी लोगों के उस समूह के लगभग सभी लोग, ने उनके बारे में सबसे पहले राम दास से ही सुना था। हालाँकि, राम दास का पहला प्रवचन सुनने के बाद मेरी ज़िंदगी पूरी तरह बदल गई, फिर भी मुझे भारत जाने की कोई इच्छा नहीं हुई। कुछ हद तक, उन दिनों भारत जाने के रहस्य ने मुझे यात्रा के बारे में सोचने तक के लिए अनुचित बना दिया था। और यह भी स्पष्ट नहीं था कि मुझे जो ज्ञानोदय का अनुभव हुआ था, वह वास्तव में महाराजजी से जुड़ाव था—कि वे मेरे गुरु हो सकते हैं। हम सभी ने सुना था कि उनसे मिलना कितना मुश्किल था। और क्या पता वे मुझे भी दूसरों की तरह वापस भेज दें?

अब, तीन साल बाद, मैं भारत जा रहा था, लेकिन मुझमें अभी भी अस्वीकृति का जोखिम उठाने की हिम्मत नहीं थी - मैं कुछ दक्षिण भारतीय संतों से मिलने जा रहा था और शायद बाद में उत्तर भारत की यात्रा करने जा रहा था, अगर वहाँ मेरा स्वागत होने की कोई उम्मीद दिखती।

मुंबई में विमान से उतरते ही, एयरलाइन के एक प्रतिनिधि ने हमारा स्वागत किया (भारत में यह अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि थी), जिन्होंने हमें बताया कि हमारी नई दिल्ली जाने वाली दोपहर की उड़ान में बुकिंग है और टिकट काउंटर पर हमारा इंतज़ार कर रहे हैं। यह हमारे लिए एक बड़ा झटका था, लेकिन छब्बीस-अट्ठाईस घंटे की उड़ान के बाद हम इतने स्तब्ध थे कि हमें ज़्यादा आश्चर्य नहीं हुआ। आख़िरकार, हम भारत में थे—यहाँ कुछ भी हो सकता था। (दिल्ली के लिए टिकटों और बुकिंग का यह रहस्य कभी भी किसी "तर्कसंगत" तरीके से हल नहीं हुआ।) दिल्ली में, हमने सोचा कि हम अमेरिकन एक्सप्रेस कार्यालय जाकर संदेश मांगेंगे, जैसा कि हमने मुंबई में योजना बनाई थी। आख़िरकार, जब हम यहाँ हैं, तो कोई न कोई संदेश तो ज़रूर होगा। संदेश था: "वृंदावन में जयपुरिया भवन जाइए। महाराजजी जल्द ही आने वाले हैं।" इस पर "बलराम दास" के हस्ताक्षर थे। हम नहीं जानते थे कि वह कौन थे।

हमें पता चला कि वृंदावन दिल्ली से ज़्यादा दूर नहीं है और हम दोपहर की ट्रेन से वहाँ पहुँच सकते हैं। पता नहीं क्यों, हमने दिल्ली की अपेक्षाकृत पश्चिमी संस्कृति में कुछ देर रुकने का सोचा ही नहीं। संदेश में लिखा था कि जाओ और हम चल पड़े। इस तरह हमने भारत का पहला बड़ा सबक सीखा: कभी भी तीसरे दर्जे के अनारक्षित डिब्बे में सफ़र मत करो! यह न्यूयॉर्क शहर की मेट्रो में भीड़भाड़ वाले समय में तीन घंटे की यात्रा के बराबर था, जिसमें धूप, धूल और इंजन का धुआँ खुली खिड़कियों से अंदर आ रहा था।

आखिरकार, मथुरा में ट्रेन से उतरकर हम किसी तरह संघर्ष करते हुए भारतीय मैदान की सुनहरी शाम में पहुँचे, जिसकी सुंदरता का हम उस समय ठीक से आकलन नहीं कर पा रहे थे। वहाँ हमें पास के वृंदावन जाने वाली बस मिल गई। वहाँ हमें एक बड़े बाज़ार में उतारा गया, जो देखने में तेरहवीं सदी के गाँव जैसा लग रहा था, जिसमें घुमावदार गलियाँ लोगों, रिक्शा, कुत्तों, सूअरों और गायों से भरी हुई थीं। अब तक अंधेरा हो चुका था और ज़्यादातर रोशनी सड़कों के किनारे लगी दुकानों में लगी लालटेन से आ रही थी। हमने अपनी टूटी-फूटी हिंदी में "जयपुरिया भवन" का रास्ता पूछा, तो हमें पहले एक गली में ऊपर जाने को कहा गया और फिर दूसरी गली में नीचे आने को। अंधेरा बढ़ता जा रहा था और दुकानें बंद होने लगी थीं। हमारी थकान और भूख के साथ-साथ हमारी घबराहट भी बढ़ती जा रही थी, क्योंकि अगर हम हॉस्टल तक पहुँच भी जाते, तो उसे पहचान नहीं पाते, क्योंकि हर जगह हिंदी में ही बोर्ड लगे थे। हम सोचने लगे कि शायद हमें रात भर गायों के बीच किसी दरवाजे पर ही बितानी पड़ेगी।

फिर अचानक हमारी ओर एक पश्चिमी व्यक्ति प्रकट हुआ—जिससे मैं पिछले साल कैलिफोर्निया में मिली थी। खुशी से झूमते हुए मैंने उसे गले लगा लिया, लेकिन भारत में काफी समय बिता चुके उस व्यक्ति ने हमारी भावनाओं को बिल्कुल भी नहीं छिपाया। ओह, हाँ, जयपुरिया भवन बस यहीं था, अगले मोड़ पर।

अगले कुछ दिनों में, छोटा पश्चिमी सत्संग (आध्यात्मिक साधकों का समुदाय) जयपुरिया भवन में इकट्ठा होने लगा, महाराजजी के वृंदावन स्थित आश्रम में आने की प्रतीक्षा में। उनमें से कई लोगों को हम अमेरिका से जानते थे, जिनमें रहस्यमय "बलराम दास" भी शामिल थे, जिन्हें हम पीटर के नाम से जानते थे। हमने महाराजजी के बारे में उनकी कहानियाँ राहत और उत्सुकता के साथ सुनीं। वे उतने क्रूर और डरावने नहीं लग रहे थे जितना हमने सोचा था। फिर खबर आई कि वे आ गए हैं! अगली सुबह हम उनके दर्शन के लिए जा सकते थे।

मैं राधा के साथ आश्रम थोड़ी देर से पहुँची, घबराई हुई अपनी उधार ली हुई साड़ी और फूलों व फलों का प्रसाद पकड़े हुए। हमने मंदिर की परिक्रमा की और हनुमानजी को प्रणाम किया, फिर मंदिर के बगीचे और आश्रम के बीच की दीवार में बने द्वार की ओर बढ़े। मुझे वह हरा लकड़ी का दरवाजा आज भी कितना अच्छे से याद है! जब हमने दस्तक दी, तो बूढ़े चौकीदार ने उसे थोड़ा सा खोला और हमें देखा। फिर, भारत में रहने के दौरान हर बार की तरह, मुझे आश्चर्य होता था कि क्या वह हमें अंदर आने देंगे। लेकिन वह पीछे हट गए और हमारे लिए दरवाजा खोल दिया। मैंने अंदर देखा, आश्रम भवन के सामने बने लंबे बरामदे का नजारा। दूर छोर पर, महाराजजी अपने लकड़ी के पलंग पर अकेले बैठे थे। जब मैंने उनका विशाल रूप देखा, तो मेरा दिल इतना ज़ोर से धड़का कि मैं द्वार से टकरा गई। उनका वह पहला दृश्य आज भी मेरी स्मृति में स्पष्ट रूप से बसा हुआ है।

राधा पहले ही जल्दी से आगे बढ़ चुकी थी और मैं उसके पीछे दौड़ी, रास्ते में मेरी चप्पलें कहीं खो गईं। सब कुछ इतना सरल और जाना-पहचाना था—उनके चरणों में प्रणाम करना, फल और फूल अर्पित करना (जिन्हें उन्होंने तुरंत मेरी गोद में वापस फेंक दिया), रोना और हंसना। महाराजजी उछल रहे थे, मुस्कुरा रहे थे और अंग्रेजी में कह रहे थे, “अमेरिका से आई माँ! अमेरिका से आई माँ!” उस पहले दर्शन के दौरान, हालांकि महाराजजी मुख्य रूप से हिंदी में बोल

रहे थे, फिर भी पास खड़े दुभाषिए के बिना भी मैं सब कुछ समझ गई। और मैंने उस प्रेम को पहचान लिया जो राम दास के माध्यम से उमड़ रहा था, जिसने मुझे भारत की ओर अनवरत रूप से आकर्षित किया था: यही वह स्रोत था।

राम

बाकी सब तो बहुत उत्साहित थे, लेकिन मुझे इस सब पर शक था। फिर भी, मैं बस से सबसे पहले उतरा और सीधे मंदिर की ओर दौड़ पड़ा। हालाँकि मैं पहले कभी वहाँ नहीं गया था, लेकिन मुझे पता था कि महाराजजी तक पहुँचने के लिए कौन से मोड़ लेने हैं। जैसे ही मैं कोने से मुड़ा, वे उछलने-कूदने लगे और हिंदी में कुछ ऐसी बातें कहने लगे जिनसे मैं पूरी तरह से हैरान रह गया। मैं उनके पास गया और उनके चरणों में सिर झुकाया।

उसने मुझे बहुत ज़ोर से मारना शुरू कर दिया। मैं एक तरफ़ गहरी उलझन में थी, वहीं दूसरी तरफ़ मुझे अपने जीवन का सबसे अद्भुत जुड़ाव महसूस हुआ। वह मेरी उम्मीदों से बिलकुल अलग था, फिर भी साथ ही साथ बहुत जाना-पहचाना भी। उस पल मुझे लगा कि पिछले कई सालों का सारा दुख, सारा दर्द पूरी तरह से गायब हो गया। और हालाँकि वह दर्द भविष्य में फिर से लौटकर आएगा, लेकिन उस पल जो प्यार मैंने महसूस किया, उसने बाद में उस दर्द को काफ़ी हद तक कम कर दिया।

राम

भारत में घूमते हुए मैंने महाराजजी के बारे में सुना था, और आखिरकार मुझे वे इलाहाबाद में मिल गए। मेरी पहली मुलाकात सुबह-सुबह हुई। महाराजजी एक कमरे में पलंग पर लेटे थे, उनके सामने फर्श पर एक माँ (भारतीय महिला भक्त) बैठी थीं। पलंग पर फल रखे थे। तभी बड़े कंबल के नीचे से उनका हाथ निकला। उन्होंने कुछ बड़े सेब लिए और उन्हें माँ की छाती पर उछालने लगे, लेकिन वे पूरी तरह ध्यान में लीन थीं। मैं देखता रहा, फिर अचानक महाराजजी ने सीधे मेरी ओर देखा। वे एक पेड़ की तरह थे, इतने शांत, इतने सहज। उन्होंने मुझे एक केला उछाला और वह सीधे मेरे हाथ में आ गिरा। मैं सोचने लगा कि इस पवित्र वस्तु, केले का क्या करूँ। मुझे लगा कि इसे खा लेना ही सबसे अच्छा होगा।

राम

मैं संयुक्त राज्य अमेरिका से भारत आया था, एक अत्यंत गहन धार्मिक संप्रदाय के अनुयायी के रूप में—उनके गुरु ही गुरु थे, परम और महान उद्धारकर्ता। उनके साथ केवल दो सप्ताह बिताने के बाद ही, मेरा उनसे मोहभंग हो गया और मैं अकेले ही भारत में भटकने लगा, इस उम्मीद में कि कहीं न कहीं मुझे एकमात्र सच्चा और पवित्र गुरु मिल जाएगा। अपनी यात्रा के दौरान कई बार किसी ने मुझे महाराजजी के बारे में बताया और कहा कि वे आस-पास ही हैं। लेकिन मैं नहीं गया, क्योंकि मुझे कोई विशेष आकर्षण महसूस नहीं हुआ। अंततः मैं मुंबई के पास था, सच्चे गुरु की तलाश में, तभी एक पुराना मित्र प्रकट हुआ। वह इतने निर्मल और तेजस्वी दिख रहे थे कि हमारी बातचीत से पहले ही मैंने तय कर लिया कि मैं वहीं जाऊँगा जहाँ से वे अभी-अभी आए थे। वे अभी-अभी वृंदावन में महाराजजी को छोड़कर आए थे। मैंने अपना सामान पैक किया और उसी दोपहर निकल पड़ा। चौबीस घंटे बाद मैं महाराजजी के सामने था। वहाँ कई पश्चिमी लोग मौजूद थे। महाराजजी ने मुझसे कुछ नहीं कहा, लेकिन वे मेरी हृदय चक्र

(शरीर के हृदय क्षेत्र में स्थित मानसिक ऊर्जा केंद्र) को बहुत ध्यान से देखते रहे, और मुझे भीतर से एक आवाज़ सुनाई देती रही कि मेरी खोज पूरी हो गई है। मैं घर आ गया हूँ।

राम

मैं बोधगया में कई महीनों तक बौद्ध ध्यान में बैठा रहा। दूसरे महीने के लगभग दो-तिहाई समय में, एक अजीब सा दिखने वाला छोटा सा आदमी मेरी चेतना के ऊपरी दाहिने कोने में प्रकट होने लगा। वह अक्सर मुस्कुराता था। मैं सोचता रहा कि वह कौन है और बस उसे आते-जाते देखता रहा। बाद में मुझे शक होने लगा कि वह महाराजजी हैं, जिनके बारे में मैंने एक साल पहले सुना था।

साधना के अंत में मैंने मिलारेपा के एक लाख गीतों की पुस्तक खोली और उसमें से महाराजजी का चित्र गिर पड़ा। जब हम अंततः वृंदावन पहुँचे, जहाँ उन्हें होना चाहिए था, तो हमने मंदिर के द्वार बंद पाए। इतनी दूर आने के बाद द्वार बंद देखकर मुझे बहुत दुख हुआ, इसलिए मैं सड़क पार करके पुलिया पर बैठ गया।

अचानक मुझे ऐसा लगा जैसे महाराजजी दीवार फांदकर आ गए हों, क्योंकि मैं पूरी तरह से प्रेम से घिर गया था और उस असीम प्रेम से भर गया था जिसका मैंने कभी अनुभव किया था। मैं फूट-फूटकर रोने लगा। आस-पास से गुजर रहे लोगों ने इस पागल, लंबे बालों वाले पश्चिमी व्यक्ति को फूट-फूटकर रोते देखा। वे बस मुझे देखते, मुस्कुराते और आगे बढ़ जाते।

मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है, लेकिन मुझे घर जैसा महसूस हो रहा था। इसमें कोई शक नहीं था कि मैं बिल्कुल वहीं थी जहाँ मैं होना चाहती थी। एक महीने पहले मैं ऐसे अनुभव की कल्पना भी नहीं कर सकती थी, लेकिन अब मैं यहाँ थी, इतनी राहत महसूस कर रही थी, इतनी खुश थी। मेरा दिल मानो खुशी से फट पड़ा था।

कुछ देर बाद हमें मंदिर में प्रवेश करने की अनुमति मिल गई। महाराजजी ने मुझसे वही सामान्य प्रश्न पूछे, जैसे मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ और क्या करता हूँ। और फिर अचानक मैंने खुद को उनके चरणों में सिर झुकाए हुए पाया—और मुझे ऐसा करने में पूर्णतः न्यायसंगत महसूस हुआ। वे मेरे सिर पर थपथपाते हुए कुछ इस तरह कह रहे थे, "स्वागत है, आपको यहाँ देखकर प्रसन्नता हुई। आपका स्वागत है।" मेरा बस यही मन कर रहा था कि मैं उनके चरणों को थाम लूँ, और मुझे इस बात की बिल्कुल भी परवाह नहीं थी कि यह मेरी आत्म-छवि के अनुरूप नहीं था।

राम

मेरी पत्नी महाराजजी से मिली थी और मुझे लेने अमेरिका आई थी ताकि मुझे उनसे मिलवा सके। जब हम पहली बार महाराजजी से मिलने गए तो मैंने जो देखा उससे मुझे बहुत बुरा लगा। सफेद कपड़े पहने ये सारे अजीब से पश्चिमी लोग एक मोटे बूढ़े आदमी के चारों ओर कंबल ओढ़े घूम रहे थे! सबसे ज़्यादा मुझे ये देखकर बुरा लगा कि पश्चिमी लोग उनके पैर छू रहे थे। पहले दिन तो उन्होंने मुझे पूरी तरह से नज़रअंदाज़ कर दिया। लेकिन दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, छठे और सातवें दिन भी उन्होंने मुझे नज़रअंदाज़ किया, तो मैं बहुत परेशान होने लगा। मुझे उनके लिए कोई स्नेह नहीं रहा; बल्कि, मुझे कुछ भी महसूस नहीं हुआ। मैंने तय कर लिया कि मेरी पत्नी किसी पागल पंथ के चंगुल में आ गई है। हफ्ते के अंत तक मैं वहाँ से जाने के लिए तैयार था।

हम नैनीताल के एक होटल में ठहरे हुए थे, और आठवें दिन मैंने अपनी पत्नी से कहा कि मेरी तबीयत ठीक नहीं है। मैंने पूरा दिन झील के किनारे घूमते हुए बिताया और सोचता रहा कि अगर मेरी पत्नी ऐसी किसी चीज़ में इतनी मशगूल है जो मेरे लिए बिल्कुल भी नहीं है, तो इसका मतलब यही होगा कि हमारी शादी खत्म होने वाली है। मैंने फूलों, पहाड़ों और झील में पड़ रहे प्रतिबिंबों को देखा, लेकिन कुछ भी मेरे अवसाद को दूर नहीं कर सका। और फिर मैंने कुछ ऐसा किया जो मैंने अपनी वयस्क ज़िंदगी में कभी नहीं किया था। मैंने प्रार्थना की।

मैंने भगवान से पूछा, “मैं यहाँ क्या कर रहा हूँ? यह आदमी कौन है? ये सब लोग पागल हैं। मैं यहाँ का नहीं हूँ।”

तभी मुझे यह कहावत याद आई, "यदि तुममें विश्वास होता तो तुम्हें चमत्कारों की आवश्यकता नहीं होती।"

“ठीक है, भगवान, मुझे कोई विश्वास नहीं है। मुझे कोई चमत्कार भेजिए।”

मैं इंद्रधनुष की तलाश करता रहा लेकिन कुछ नहीं हुआ, इसलिए मैंने अगले दिन जाने का फैसला किया।

अगली सुबह हम टैक्सी से कैंची मंदिर गए, उन्हें अलविदा कहने के लिए। हालाँकि मुझे महाराजजी पसंद नहीं थे, मैंने सोचा कि मैं उनसे खुलकर बात कर लूँगा। हम कैंची पहुँच गए और वहाँ किसी के आने से पहले ही हम बरामदे में उनके लकड़ी के पलंग के सामने बैठ गए। महाराजजी अभी तक कमरे से बाहर नहीं आए थे। पलंग पर कुछ फल रखे थे और एक सेब ज़मीन पर गिर गया था, इसलिए मैं उसे उठाने के लिए झुका। तभी महाराजजी अपने कमरे से बाहर आए और मेरे हाथ पर पैर रख दिया, जिससे मैं ज़मीन पर गिर पड़ा। तो मैं घुटनों के बल उनके पैर को छूता हुआ, उस स्थिति में था जिससे मुझे नफ़रत थी। कितना हास्यास्पद!

उसने मेरी ओर देखा और पूछा, "कल तुम कहाँ थे?" फिर उसने पूछा, "क्या तुम झील पर थे?" (उसने "झील" शब्द का प्रयोग अंग्रेजी में किया।)

जब उसने मुझसे "झील" शब्द कहा, तो मुझे अपनी रीढ़ की हड्डी के निचले हिस्से में एक अजीब सी अनुभूति होने लगी और मेरा पूरा शरीर झनझना उठा। यह बहुत ही अजीब अनुभव था।

उसने मुझसे पूछा, "तुम झील पर क्या कर रहे थे?"

मुझे बहुत जकड़न महसूस होने लगी।

फिर उसने पूछा, "क्या तुम घुड़सवारी कर रहे थे?"

"नहीं।"

"क्या आप नौका विहार कर रहे थे?"

"नहीं।"

"क्या आपको तैराकी करने जाना था?"

"नहीं।"

फिर वह झुककर धीरे से बोला, “क्या तुम भगवान से बात कर रहे थे? क्या तुमने कुछ माँगा था?”

जब उसने ऐसा किया तो मैं टूट गया और बच्चे की तरह रोने लगा। उसने मुझे अपनी ओर

खींचा और मेरी दाढ़ी खींचते हुए बार-बार पूछा, "क्या तुमने कुछ माँगा था?"

मुझे सचमुच ऐसा लगा जैसे मेरा दीक्षा संस्कार हो रहा हो। तब तक दूसरे लोग भी आ चुके थे और मेरे आस-पास आकर मुझे सहला रहे थे, और तब मुझे एहसास हुआ कि वहाँ मौजूद लगभग हर किसी ने ऐसा ही कोई अनुभव किया था। एक मामूली सा सवाल, जैसे, "क्या तुम कल झील पर थे?" जिसका किसी और के लिए कोई मतलब नहीं था, ने मेरी वास्तविकता की धारणा को चकनाचूर कर दिया। मुझे स्पष्ट हो गया कि महाराजजी सभी भ्रमों को भली-भांति जानते थे; उन्हें सब कुछ पता था। वैसे, इसके बाद उन्होंने मुझसे पूछा, "क्या तुम एक किताब लिखोगे?"

यह मेरा स्वागत था। उसके बाद तो बस मेरा मन कर रहा था कि मैं उसके पैर सहलाऊँ।

राम

यह लंदन की बात है। मैं एक बस में था जिसमें कई खाली सीटें थीं। तभी एक बूढ़ा आदमी कंबल लिए बस में चढ़ा और मेरे बगल वाली खिड़की वाली सीट पर बैठ गया, इसलिए मुझे उसे अंदर आने देने के लिए खड़ा होना पड़ा। इससे मुझे थोड़ी झुंझलाहट हुई, लेकिन जैसे ही वह बैठा, उसने मुझे इतनी प्यारी और सौम्य मुस्कान दी कि मैं अपनी झुंझलाहट भूल गया और मन ही मन सोचने लगा, "कितना प्यारा बूढ़ा आदमी है!" बस के अगले पड़ाव पर पहुँचने से पहले ही मैंने मुड़कर उसे फिर देखा—लेकिन वह जा चुका था!

उसके चढ़ने के बाद से बस दोबारा नहीं रुकी थी। मेरे खड़े होकर उसे रास्ता दिए बिना वह कैसे उतर सकता था?

बाद में, भारत जा चुके एक मित्र की सलाह पर मैं वहाँ गया और मैंने महाराजजी की एक तस्वीर देखी—वह वही व्यक्ति थे! मैंने महाराजजी को ढूँढा और पता चला कि जिस दिन मैंने उन्हें लंदन में बस में एक विशेष चेकदार कंबल ले जाते हुए देखा था, उसी दिन भारत में एक महिला ने महाराजजी को ठीक वैसा ही कंबल दिया था, जिसे उन्होंने उसी दिन ओढ़ा हुआ था।

भारतीय भी अलग-अलग स्तर की इच्छा और तत्परता के साथ महाराजजी के पास आए। लेकिन उनके लिए यह अनुभव अलग था। वे एक ऐसी संस्कृति में पले-बढ़े थे जहाँ पवित्र आत्माओं की भरमार थी, और उनमें से अधिकांश के माता-पिता के गुरु थे। परिवार के लिए, गुरु दादा, सांसारिक और आध्यात्मिक मार्गदर्शक, और ईश्वर का प्रतिबिंब या अवतार थे। वे अक्सर महाराजजी को एक इंसान के रूप में अधिक और ईश्वर के रूप में कम मानते थे, फिर भी वे उनके प्रति अधिक सहजता से समर्पण कर पाते थे। उनके लिए, समर्पण हमारे जैसे अहंकार का व्यक्तिगत मामला नहीं था। महाराजजी के कुछ सबसे करीबी भारतीय भक्तों द्वारा वर्णित प्रारंभिक मुलाकातों की कहानियों में, संस्कृति की भिन्नता और खुलेपन और प्रेम की समानता दोनों स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।

मैं जन्म से ही महाराजजी को जानता हूँ। मेरे माता-पिता दोनों ही उनके भक्त थे—मेरे पिता 1940 से और मेरी माता 1947 से। क्योंकि हमारे माता-पिता भक्त थे और हमारे परिवार में हमेशा उनकी चर्चा होती रहती थी, इसलिए हम सब जन्म से ही उनके भक्त हैं।

राम

मेरी पहली मुलाकात महाराजजी से कई साल पहले भोवाली में हुई थी। महाराजजी अक्सर

वहाँ एक माँ के घर आते थे। मैंने उन्हें बताया कि मैंने उनके बारे में सुना तो है, लेकिन उनसे कभी मुलाकात नहीं हुई। मैंने उनसे कहा कि अगली बार जब वे आएँ तो मुझे बताएँ। लगभग एक हफ्ते बाद महाराजजी रात में आए। सुबह मुझे संदेश मिला और मैं तुरंत वहाँ पहुँच गया। मैंने उन्हें चारपाई पर लेटे हुए पाया। उन्होंने मेरी ओर देखा, फिर एक पल के लिए अपनी आँखें बंद कर लीं। वे तुरंत जान गए कि मैं कौन हूँ, मैं पहले क्या था और इस दुनिया में मैं क्या करने वाला हूँ। कुछ ही सेकंड में उन्होंने कहा, "तुम्हें देखकर मुझे बहुत खुशी हुई," और उन्होंने यह बात कई बार दोहराई। महाराजजी रात में नैनीताल से भोवाली तक पैदल आए थे। उन्होंने कहा, "तुम मुझे यहाँ लाए हो! हल्द्वानी में फिर मिलेंगे।" फिर महाराजजी अल्मोड़ा के लिए बस में सवार हो गए। (उन दिनों वह ज्यादातर बस से यात्रा करते थे, कार से नहीं।) लोगों ने मुझे चेतावनी दी कि मैं उनकी बातों को गंभीरता से न लूं: “नीम करोली बहुत बड़ा झूठा है। वह बहुत कम ही सच बोलता है। आप उस पर भरोसा नहीं कर सकते।”

खैर, मैं हल्द्वानी चला गया। कुछ दिनों बाद कोई मेरे कमरे में आया और मुझे बताया कि महाराजजी हल्द्वानी आए हैं और उनका पता भी दिया। तब मैंने उनसे मुलाकात की और तब से मैं उनके साथ ही हूँ।

मेरी पहली मुलाकात महाराजजी से 1950 में हुई थी, जब मैं अपने बॉस और महाराजजी के साथ नैनीताल से हल्द्वानी जा रहा था। मेरे बॉस, जो एक सरकारी मंत्री थे, महाराजजी के भक्त थे और उन्होंने ही उन्हें लिफ्ट दी थी। लेकिन मैं सिगरेट पी रहा था और ऐसा व्यवहार कर रहा था जैसे महाराजजी कोई आम इंसान हों। 1958 में, मेरी माताजी के देहांत के बाद, मैं अपने पिता के साथ छुट्टी पर भोवाली में था। हमने वहाँ के सरकारी विश्राम गृह में एक रात बिताई और रात में मेरे पिता की तबीयत बहुत खराब हो गई और उन्हें बहुत दर्द होने लगा। उन्होंने भोवाली के डॉक्टर को बुलाया, जिन्होंने उन्हें इंजेक्शन लगाया, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। अगले दिन, नैनीताल से डॉक्टर आए और कहा कि उन्हें पित्ताशय की थैली का आपातकालीन ऑपरेशन करवाना होगा। उसी दिन मैं पास के टीबी अस्पताल में डॉक्टरों से सलाह लेने गया। वहाँ महाराजजी के भक्त डॉक्टर द्वारा निर्मित एक छोटे हनुमान मंदिर के उद्घाटन के उपलक्ष्य में पूजा की तैयारियाँ चल रही थीं। मैं वहीं रुक गया। महाराजजी आए, लेकिन छिपे रहे। मुझे उनसे मिलने की उत्सुकता हुई। मैंने सुना था कि महाराजजी ने किसी को समाधि में डाल दिया था, इसलिए मैंने थोड़ी देर दूर से देखा और फिर वहां से चला गया।

उस शाम नैनीताल बस स्टेशन से एक संदेशवाहक मेरे पास आया और मुझे बाबा नीम करोली से मिलने के लिए कहा। चूंकि वहां बहुत सारे बाबा हैं, इसलिए मैंने उसकी बात अनसुनी कर दी। लेकिन रात को मैं बस स्टेशन गया और पता लगाया कि यह संदेश किसने भेजा है, पर किसी को कुछ पता नहीं था। इससे मेरी जिज्ञासा और बढ़ गई। मैंने पूछा कि बाबा नीम करोली कहां मिलेंगे और मैं वहां गया। महाराजजी ने मुझसे कहा, “तुम्हारा नाम फलां-फलां है और तुम्हारे पिता बहुत बीमार हैं।”

"हाँ।"

“आपको लगा था कि वह मर जाएगा, लेकिन भगवान ने उसे ठीक कर दिया है। डॉक्टरों ने

आपको बताया था कि उसका ऑपरेशन होना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए। वह बिल्कुल ठीक हो जाएगा।”

महाराजजी ने मेरे पिता के लिए मुझे दो-तीन आम दिए, जो मैंने उन्हें खिलाए और उनकी सेहत में सुधार होने लगा। कुछ दिनों बाद महाराजजी ने मुझे फिर बुलाया। मैं गया, लेकिन उनके चरण नहीं छुए। मैं दिल्ली लौटने की योजना बना रहा था, तभी महाराजजी ने कहा, “तुम दिल्ली जा रहे हो। तुम बहुत तेज़ गाड़ी चलाते हो। अपने पिता को ध्यान से ले जाओ, वे ठीक हो जाएंगे।” यह सुनकर मेरा ह्रदय आहत हुआ और मैंने महाराजजी के चरण छुए। मेरे पिता का ऑपरेशन नहीं हुआ और वे पूरी तरह स्वस्थ हो गए, बीमारी दोबारा नहीं हुई।

राम

चूंकि मेरी शादी नहीं हुई थी, इसलिए मैं अपने भाई और उसकी पत्नी के साथ रहता था। जब महाराजजी उनके पास आए, तो मैं सबसे दूर वाले कमरे में चला गया ताकि मुझे ऐसे लोगों से दूर रहना पड़े, क्योंकि मैं सोचता था, "साधु अच्छे नहीं होते।" कुछ समय बाद महाराजजी उस कमरे में आए जहां मैं था। वे अंदर आए, बैठ गए और बोले, "साधु अच्छे नहीं होते।" उसके बाद मैं पूरी तरह से भक्त बन गया।

महाराजजी के पिछले बीस वर्षों से सबसे करीबी भक्तों में से एक ने निम्नलिखित विवरण दिया है:

1935 में मैं स्कूल की छुट्टियों पर था और धार्मिक तीर्थयात्रा के लिए दक्षिणेश्वर गया था। जब मैं उस स्थान पर पहुँचा जहाँ कई शिव मंदिर थे, तो मेरे सामने एक व्यक्ति प्रकट हुआ जिसे मैंने पहले वहाँ नहीं देखा था।

“मेरे बेटे,” उस आदमी ने कहा, “तुम ब्राह्मण हो? मैं तुम्हें एक मंत्र दूंगा।”

मैंने कहा, "मैं इसे स्वीकार नहीं करूंगा, मुझे इस पर विश्वास नहीं है।"

उन्होंने जोर देकर कहा, "तुम्हें इसे लेना ही होगा," और इसलिए मैं मान गया।

उसके बाद, मैंने प्रतिदिन पूरी निष्ठा से उस मंत्र का जाप किया। कई साल बीत गए।

जून 1955 की बात है। मेरे कुछ करीबी दोस्त थे जो परिवार के सदस्यों जैसे थे। हर रविवार शाम को हम अपने घर पर बैठकर बातें करते थे। रात करीब 9 बजे मैंने अपनी पत्नी, चाची और माँ को बाहर जाते देखा। मैंने उनसे पूछा कि वे कहाँ जा रही हैं, तो उन्होंने कहा कि पास के ही एक घर में कोई बाबा मिलने आए हैं। मेरे साथ मौजूद एक व्यक्ति ने व्यंग्य से कहा, "क्या वह खाना खाते हैं? मैं उनके लिए खाने का इंतजाम कर सकता हूँ।" (यह व्यक्ति शिकारी था।)

मेरी पत्नी ने कहा, "तुम्हें ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए।"

दस मिनट में वे लौट आए। उन्होंने बताया कि वह एक मिट्टी की झोपड़ी में तेल का दीपक जलाकर बैठा था और उसने उन्हें जाने को कहा। जब वे नहीं गए, तो उसने कहा, “जाओ! तुम्हारे पति के बंगाली दोस्त आए हैं। जाओ और उन्हें चाय पिलाओ। मैं सुबह आऊंगा।”

सुबह मैं और मेरी पत्नी साथ-साथ वहाँ गए। महाराजजी एक छोटे से कमरे में एक छोटी सी चारपाई पर लेटे हुए थे। जैसे ही हम अंदर गए, वे उछल पड़े और मेरा हाथ पकड़कर बोले, “चलो चलें।” हम इतनी तेज़ी से निकले कि मेरी पत्नी को उनके साथ चलने के लिए अपनी चप्पलें उतारनी पड़ीं। वे हमें हमारे घर ले गए और बोले, “मैं तुम्हारे साथ रहूँगा।” जब दूसरे घर की औरतें

उन्हें वापस लेने आईं, तो वे नहीं गए।

बाद में उन्होंने मुझसे पूछा: "क्या आप शिव के भक्त हैं?"

"हाँ।"

“तुम्हारे पास पहले से ही एक मंत्र है।” उसी क्षण मुझे एहसास हुआ कि यह मंत्र मुझे बीस साल पहले महाराजजी ने ही दिया था।

राम

कानपुर में उनसे मेरी पहली मुलाकात संक्षिप्त और सुखद रही—शायद सिर्फ दो मिनट की। मैंने उन्हें प्रणाम किया। उन्होंने मुझसे मेरा परिचय पूछा, आशीर्वाद दिया और अचानक चले गए। वे कहाँ गए, यह कोई नहीं बता सका।

दस महीने या एक साल बाद मेरी उनसे लखनऊ में फिर मुलाकात हुई। उन्होंने अपने साथ बैठे कई लोगों को एक-एक करके विदा किया, यहाँ तक कि हम तीनों ही रह गए। फिर उन्होंने मेरी भाभी से पूछा, “आप क्या चाहती हैं?” उन्होंने कहा कि वह केवल श्रद्धांजलि अर्पित करने आई हैं।

फिर उन्होंने मुझसे पूछा, और मैंने जवाब दिया, "मुझे केवल आपके आशीर्वाद की आवश्यकता है, और कुछ नहीं।"

फिर उन्होंने मेरी पत्नी से कहा, "तुम सकारात्मक सवाल लेकर आई हो। तुम ही क्यों न उन्हें पूछ लो?"

दरअसल, वह कुछ सवाल लेकर आई थी, जो उसने हमसे कहे तक नहीं थे। लेकिन उसने पहले ही तय कर लिया था कि वह खुद सवाल नहीं पूछेगी। वह चाहती थी कि महाराजजी बिना पूछे ही उनके सवालों के जवाब दें, और वह चाहती थी कि यह सब अकेले में हो, इसलिए वह कुछ नहीं बोली। वह यह नहीं कह सकती थी कि उसके पास सवाल नहीं हैं, बल्कि अपने फैसले के कारण वह सवाल पूछ ही नहीं सकती थी। इसलिए महाराजजी ने उससे कहा, “तुम चाहती हो कि मैं तुम्हारे बिना पूछे ही तुम्हारे सवालों के जवाब दूं। और तुम चाहती हो कि मैं तुम्हें अकेले में बताऊं। तुम एक साधु की बहुत कठिन परीक्षा ले रही हो। कल मैं कानपुर में तुम्हारे घर आऊंगा और तुम्हारे सवालों के जवाब दूंगा।”

हम वहां कुछ मिनट और बैठे रहे और फिर उन्होंने कहा, "जाओ!" जब हम जाने लगे तो मेरे मन में एक शंका आई कि महाराजजी ने कल हमसे मिलने और सवालों के जवाब देने की बात कहकर हमें बस टाल दिया था।

उस शाम करीब दस बजे हमारे घर एक महाराजजी भक्त के लिए संदेश आया, जो हमसे मिलने आए थे। संदेश यह था कि बाबाजी (बाबा का परिचित रूप) भक्त के घर आ रहे हैं और उन्हें तुरंत घर लौट जाना चाहिए। हम उनके साथ गए। जैसे ही मैंने महाराजजी को प्रणाम किया, उन्होंने कहा, “तुमने मेरी सत्यनिष्ठा पर संदेह किया! किसी साधु पर कभी संदेह मत करो—जिम्मेदारी उनकी होती है, तुम्हारी नहीं। तुम्हें संदेह करने की आवश्यकता नहीं है।” मैंने उनसे क्षमा मांगी। मैंने वास्तव में संदेह किया था। तब उन्होंने कहा, “ठीक है, कल मैं तुम्हारे घर आऊंगा।”

अगली सुबह वह आ गया। चूंकि यह उसकी पहली मुलाकात थी, इसलिए मुझे सच में समझ

नहीं आ रहा था कि क्या करूं। दूसरों ने मुझे बताया कि कुछ करने की जरूरत नहीं है—बस उसे सहारा देने के लिए बिस्तर पर एक बड़ा तकिया रख दो और उसे कुछ खाने, फल या दूध दे दो। वह जो चाहेगा ले लेगा। यही उसकी मर्जी है।

जब वह आए तो मैं उन्हें बैठक कक्ष तक ले गया। उन्होंने कहा, “नहीं, मैं वहाँ नहीं बैठूँगा। बाकी लोग वहाँ बैठें; आप मुझे उस छोटे कमरे में ले चलें!” मैं आश्चर्यचकित और असमंजस में था, क्योंकि मुझे नहीं पता था कि वह किस छोटे कमरे की बात कर रहे थे। उन्होंने कमरे का वर्णन किया और घर में ऐसे चलने लगे जैसे उन्हें पता हो कि कमरा कहाँ है। मैं घर में उनका अनुसरण कर रहा था, उनका नेतृत्व नहीं कर रहा था। वह सीधे कमरे में गए और बोले, “मैं यहाँ बैठना चाहता हूँ।” उन्होंने कहा, “माँ को बुलाओ” (मेरी पत्नी)। वह आईं, और फिर उन्होंने उनके मन में उठ रहे सभी प्रश्नों के उत्तर दिए। उन्होंने पूछा, “क्या कोई ऐसा प्रश्न है जिसका मैंने उत्तर नहीं दिया?” उन्हें कहना पड़ा कि अब कोई प्रश्न नहीं है।

राम

लखनऊ के एक भारतीय सिविल सेवा आयुक्त बहुत ज़्यादा शराब पीते थे। पुलिस अधीक्षक ने महाराजजी से कहा कि उन्हें उनसे मिलने जाना चाहिए। महाराजजी मान गए, और जब वे वहाँ पहुँचे तो आयुक्त ने अपने पीछे एक बोतल छिपा रखी थी। महाराजजी ने गाड़ी से चिल्लाकर पूछा, "क्या बात है?"

कमिश्नर गुस्से से आग बबूला हो गया। उसने सुपरिटेंडेंट पर चिल्लाते हुए कहा, “तुम यहाँ किसे लाए हो? इसमें तमीज़ नहीं है! इसे यहाँ से बाहर निकालो।”

अधीक्षक ने अपनी पिस्तौल की पेटी खोली और महाराजजी से उस तरह बात करने के लिए आयुक्त पर गोली चलाने ही वाला था। लेकिन महाराजजी भड़क उठे: “तुम ये क्या कर रहे हो? ये तो एक महान संत हैं! तुम तो सिर्फ उनका बाहरी रूप देख रहे हो। मैं अब कभी तुम्हारे साथ नहीं चलूंगा।”

बाद में आयुक्त एक महान भक्त बन गए। वे दर्शन के लिए आते थे, लेकिन बाहर जूतों के पास बैठते थे क्योंकि वे मानते थे कि वही उनका स्थान है। अंततः वे इलाहाबाद में प्रशासनिक अधिकारी विद्यालय के प्रमुख बने।

उन्हें रक्त का थक्का जमने की बीमारी हो गई थी। अंत में उन्हें बहुत पीड़ा हुई, लेकिन वे राम मंत्र का जाप करते रहे और बेहद प्रसन्न थे। जब अधीक्षक उनसे मिलने गए, तो उनकी आँखों में आँसू थे और उन्होंने पूछा, "क्या मैं आपकी पत्नी और बेटे को बुला लूँ?"

आयुक्त ने कहा, “नहीं, यह आसक्ति का समय नहीं है। इस समय मुझे केवल राम और महाराजजी को याद करना है। अलविदा। फिर मिलेंगे।” और उनका निधन हो गया।

राम

मैं लंबे समय से महाराजजी से मिलना चाहता था, लेकिन कभी उनसे मिल नहीं पाया। आखिरकार एक दोस्त आया और मुझे अपनी कंपनी की गाड़ी में बिठाकर उस जगह ले गया जहाँ महाराजजी के होने की उम्मीद थी। वहाँ चार कमरे थे और महाराजजी सबसे दूर वाले कमरे में थे। मैं अंदर गया। मेरे अंदर आते ही महाराजजी ने कहा, "निकल जाओ!"

तो मैं बाहर जाकर बैठ गया, लेकिन उठा नहीं। मैं कई घंटों तक बैठा रहा। आखिरकार मेरे

दोस्त को गाड़ी वापस करनी पड़ी क्योंकि बंद होने का समय हो गया था। हालाँकि मेरा घर काफी दूर था, फिर भी मैं वहीं रुककर महाराजजी के पूर्ण दर्शन करने के लिए दृढ़ था। आखिरकार किसी को मुझ पर दया आई और उसने कहा, “तुम ठीक से नहीं कर रहे हो। जब कुछ लोग अंदर जाने लगें, तो तुम भी उनके साथ अंदर चले जाओ, और अगर वो तुम्हें बाहर निकाल दें, तो रुककर अगले लोगों के साथ फिर कोशिश करो।” मैंने ऐसा ही किया और दो बार मुझे बाहर निकाल दिया गया। आखिरकार, तीसरी बार, महाराजजी ने कहा, “आओ यहाँ बैठो। तुम्हारा नाम क्या है और तुम क्या करते हो?” फिर उन्होंने कहा, “ठीक है, अब जाओ।”

लेकिन मैंने कहा, “मैं नहीं जा रहा हूँ। मुझे अभी तक दर्शन नहीं हुए हैं। मुझे अभी तक आपसे अपनी समस्याओं पर चर्चा करने का मौका नहीं मिला है।”

महाराजजी ने कहा, “अभी जाओ और सुबह 6:00 बजे वापस आना।” तो मैं घर चला गया, लेकिन मुझे नींद नहीं आई और रात 2:00 बजे उठकर मैंने पूजा की। मुझे डर था कि मेरे पहुँचने से पहले ही महाराजजी चले जाएँगे। जब मैं सुबह 6:00 बजे घर पहुँचा, तब तक महाराजजी जा चुके थे, लेकिन उन्होंने कहा कि वे लौट आएँगे। कुछ समय बाद वे वापस आ गए और फिर महाराजजी और मैंने कई घंटे साथ बिताए। वास्तव में, मेरा शेष जीवन महाराजजी के साथ ही बीता है।

---

[1] (आर.डी.) राम दास से संबंधित कहानी को दर्शाता है।

संस्कृत और हिंदी शब्दों की परिभाषाएँ शब्दावली में दी गई हैं।

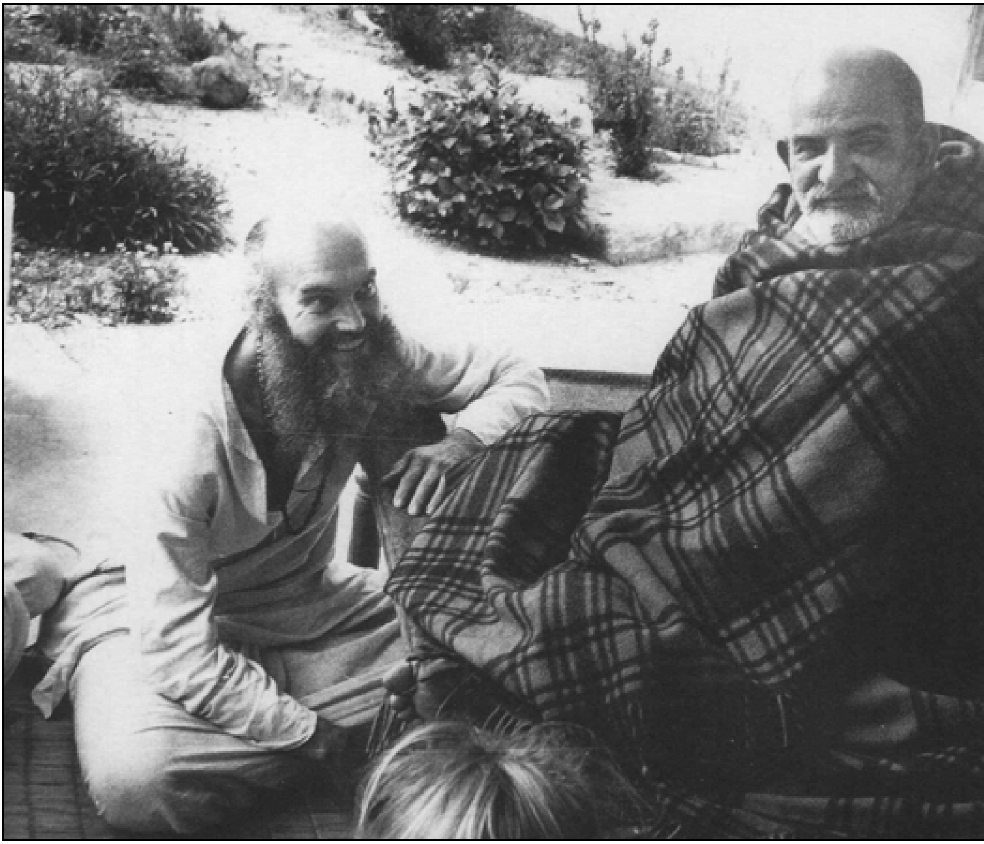

फोटो: रामेश्वर दास

दर्शन

आत्माओं का मिलन

महाराजजी से मिलने वाले सभी लोग पहली मुलाकात में ही "स्वरूप जागृत" या "अंतर्ज्ञानी" नहीं हो गए। कई लोग आए, सुखद मुलाकात का आनंद लिया और अप्रभावित ही चले गए। ऐसा प्रतीत हुआ कि महाराजजी से उनका कोई लेना-देना नहीं था, यानी या तो वे इतने गहरे स्पर्श के लिए तैयार नहीं थे, या गुरु का मार्ग या यह विशेष गुरु उनके लिए उपयुक्त नहीं था।

बलराम (वृंदावन के बरामदे में आए एक नए व्यक्ति से): "क्या आपने महाराजजी के दर्शन कर लिए हैं?"

मुझे नहीं पता। क्या वो मोटा आदमी है जो वहाँ बैठा है?

फिर कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने किसी नाटकीय "झटके" का अनुभव तो नहीं किया, लेकिन फिर भी किसी सूक्ष्म सूत्र ने उन्हें बार-बार महाराजजी के पास वापस खींच लिया।

महाराजजी के आसपास रहने पर कठोर स्वभाव के लोग भी जिस तरह से नरम पड़ जाते थे, उसे देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया।

हममें से कई लोगों के लिए, जो या तो शुरुआत में अचानक खुल कर खुल गए या धीरे-धीरे उनकी ओर आकर्षित हुए, जीवन की सबसे बड़ी इच्छा महाराजजी के साथ रहने की थी। हम उनके भक्त बन चुके थे, क्योंकि उनके साथ रहकर हम ईश्वर के हृदय में "घर जैसा" अनुभव कर रहे थे। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी उपस्थिति इतनी मोहक हो गई कि हम घर छोड़कर भी उस आध्यात्मिक मार्गदर्शक के साथ रहने के लिए हर संभव प्रयास करते थे, जो हमें प्रभु के खेतों में नाचने-गाने की कला सिखा रहे थे।

लेकिन यह मान लेना कि महाराजजी के साथ रहने की इच्छा मात्र से ही आप उनके साथ रह सकते हैं, इस व्यक्ति के व्यवहार की प्रकृति को नज़रअंदाज़ करना था। उनका व्यवहार अप्रत्याशित था। और जब भी वे किसी एक स्थान पर कुछ दिनों के लिए भी ठहरते थे, तो सुबह से शाम तक लोगों का तांता लगा रहता था। कुछ लोग पास के खेतों से नंगे पैर, नग्न शिशुओं के साथ आते थे; अन्य लोग जेट और टैक्सी से आते थे।

मैं पहाड़ियों के एक छोटे से गाँव में एक साधारण से घर के सामने वाले आँगन में खड़ा था, तभी महाराजजी अचानक आ गए। मुझे बाहर ही रहने को कहा गया, इसलिए मुझे लोगों को आते देखने का मौका मिला। वे मानो कहीं से अचानक प्रकट हो गए हों, हर दिशा से आ रहे थे। वे दौड़ रहे थे, कुछ औरतें अपने हाथों से आटा पोंछकर अपने एप्रन पर लगा रही थीं, कुछ अपने अधनंगे बच्चों को गोद में लिए हुए थीं। पुरुषों ने अपनी दुकानें खाली छोड़ दी थीं। कुछ लोग पेड़ों से फूल तोड़ रहे थे, क्योंकि वे कुछ भेंट चढ़ाने आए थे... लेकिन वे एक ऐसी उम्मीद, एक ऐसी खुशी, एक ऐसी श्रद्धा के साथ आए थे, जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता था। (आर.डी.)

राम

यह सच है कि कई लोग "चमत्कारी बाबा" से कुछ सांसारिक चीजें चाहते थे, लेकिन उससे भी बढ़कर वे एक बार फिर उनके साथ रहने के अमृत का स्वाद चखना चाहते थे।

महाराजजी पर लगातार पड़ रही इस मांग पर हममें से कई लोगों की प्रतिक्रियाएँ दुविधा में थीं।

कभी हमें और अन्य भक्तों एवं साधकों को ऐसा लगता था मानो हम कच्चे मांस के टुकड़े के चारों ओर मंडराते गिद्ध हों या चीनी के टुकड़े पर रेंगती मक्खियाँ। ऐसे समय में हम उनकी रक्षा करने का प्रयास करते थे, और अक्सर हम खुद को रोक लेते थे ताकि इस दृश्य में अपना योगदान न दें।

लेकिन कई बार हमें एहसास होता था कि महाराजजी का स्थिति पर कितना पूर्ण नियंत्रण था। जब उन्हें लगता कि लोग, जैसा कि वे खुद कहते थे, "उनका सिर खा रहे हैं," तो वे बस एक पिछले कमरे में जाकर दरवाजा बंद कर लेते, या सबको भगा देते, या कार में बैठकर बिना पीछे मुड़े चले जाते। एक बार, महाराजजी से मिलने के लिए कई महीनों की यात्रा के बाद, आखिरकार हमें वे दिल्ली में एक भक्त के घर पर मिले। हमें कुछ मिनटों के लिए उनके साथ पिछले कमरे में जाने की अनुमति मिली और फिर हमें कई अन्य लोगों के साथ चाय पीने के लिए बाहर भेज दिया गया। लगभग पंद्रह मिनट बाद महाराजजी अंदर के कमरे से बाहर आए और हमारे ठीक सामने से गुजरे, हमारे चेहरों से दो फीट से भी कम दूरी पर, बिना सिर घुमाए या पहचान का कोई संकेत दिए। वे एक कार की ओर गए जिसमें एक ड्राइवर इंतजार कर रहा था, वे उसमें बैठ गए और कार एक अज्ञात गंतव्य के लिए रवाना हो गई। ऐसा व्यक्ति स्पष्ट रूप से हमारी दया पर निर्भर नहीं था!

इसलिए महाराजजी लगातार एक बिल्कुल अप्रत्याशित तरीके से घूमते रहते थे। मंदिर परिसर के भीतर भी वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते थे, एक पल वे सबके लिए उपलब्ध होते थे, तो अगले ही पल किसी कमरे में बंद, जिसका दरवाजा मजबूती से बंद होता था।

यदि उनका एकमात्र आवागमन यही होता, तो भक्त मंदिर के पास ही बस जाते और प्रतिदिन दर्शन करके उनके प्रकट होने की प्रतीक्षा करते। परन्तु उनका आवागमन किसी एक परिसर तक सीमित नहीं था। वे गाँव-गाँव, पहाड़ों से मैदानों तक, भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक, मंदिरों से निजी घरों और वन आश्रमों तक विचरण करते थे। आधी रात को वे बिना सूचना दिए किसी अज्ञात गंतव्य के लिए निकल जाते थे। या वे किसी ट्रेन में सवार होकर किसी शहर के लिए रवाना होते, और फिर किसी दूसरे स्टेशन पर ट्रेन से उतर जाते, कभी-कभी तो इतनी जल्दी कि चलती ट्रेन में ही वे पीछे छूट जाते थे।

महाराजजी के साथ रहने की भक्तों की तीव्र इच्छा, उनके मायावी और अप्रत्याशित व्यवहार के साथ मिलकर, लुका-छिपी के सबसे जटिल नाटकों को जन्म देती थी, जिसे एक मजाकिया भक्त ने "महान कृपा दौड़" का नाम दिया था।

महाराजजी का भक्त होना एक निरंतर और कभी न खत्म होने वाली खजाने की खोज में भाग लेने जैसा था, जिसकी सीमा केवल आर्थिक संसाधनों या पारिवारिक जिम्मेदारियों तक ही सीमित थी। सोने का घड़ा, ज़ाहिर है, महाराजजी के दर्शन थे। और यह सचमुच सोना था! एक भारतीय भक्त ने इसे संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त किया, "मेरी पत्नी के साथ यौन संबंध भी महाराजजी के दर्शन के बराबर नहीं हो सकता।"

भारतीय भक्तों के पास एक जटिल संचार प्रणाली थी, जिसकी मदद से वे कम से कम तीस प्रतिशत मामलों में महाराजजी का पता लगा लेते थे और किसी भी कस्बे या गाँव में उनके आगमन के एक दिन के भीतर ही उनके ठिकाने की जानकारी प्राप्त कर लेते थे। हम पश्चिमी लोग

इतने भाग्यशाली नहीं थे, इसलिए हमें उनके चरणों तक पहुँचने के लिए अपनी बुद्धि, अंतर्ज्ञान, चतुराई और अदम्य साहस का इस्तेमाल करना पड़ा। हमारी सफलता का प्रतिशत शायद भारतीय भक्तों जितना प्रभावशाली नहीं था, लेकिन हमारी शैली और नाटकीय प्रवेश और निकास निश्चित रूप से प्रभावशाली थे।

मैं महाराजजी के दर्शन कर रहा था और अचानक तुकाराम आ गया। मैंने तुकाराम से पूछा कि वह अंदर कैसे आया, तो उसने कहा, "मैं दीवार फांदकर आया।" और मैंने सोचा, "हे भगवान! अब तो मैं यहाँ ज्यादा देर नहीं रुक पाऊँगा।" तभी कृष्णा प्रिया अंदर चढ़ गई। चौकीदार ने उसे दीवार फांदते हुए देख लिया और क्योंकि वह उन्हें अंदर आने देने का दोष अपने ऊपर नहीं लेना चाहता था, इसलिए वह महाराजजी को बताने चला गया। द्वारपाल ने कहा, "बाबा, ये लोग दीवार फांदकर आए हैं। मुझे खेद है। मैंने उन्हें बाहर रखने की पूरी कोशिश की।" चौकीदार की बात सुनकर महाराजजी की पहली प्रतिक्रिया क्रोध से भरी थी: "इन्हें बाहर निकालो! सबको बाहर निकालो!" मुझे भी बाहर निकाल दिया गया। हम पश्चिमी लोगों ने आपस में दोष बाँट लिया। हम अगले दिन दर्शन के लिए वापस आए और पाया कि रातोंरात दीवार की ऊँचाई दोगुनी कर दी गई थी।

कई स्तर—कई बदलाव

जब आप अंततः सही समय पर सही जगह पर पहुँचे और आपको बताया गया, "जी हाँ, वे यहाँ हैं," और आपने खुद को उनके सामने बैठा पाया, तो वह अनुभव कैसा था? वाणी, संगीत और कविता के देवी-देवताओं की ज़ुबानें और हाथ भी उन अवसरों का सही वर्णन नहीं कर सकते। तो मैं कैसे कर सकता हूँ? हाथी के साथ अंधे लोगों की तरह, प्रत्येक भक्त को एक अलग महाराजजी से मिलने का अवसर मिला।

जब महाराज जी बाहर आते थे, तो आपको कभी पता नहीं चलता था कि क्या होगा। वे एक हफ्ते तक एक ही काम करते रहते थे, और फिर आप सोचते, "चलो, वे 8:00 बजे बाहर आ जाएँगे।" फिर हो सकता है कि वे पूरे दिन बाहर न आएँ, या फिर वे किसी दूसरे कमरे में जाकर दरवाज़ा बंद कर लें और दो दिन तक वहीं रहें। आपको अप्रत्याशित की उम्मीद करना सीखना पड़ता था। एक दिन वे बाहर आए और पूरे दिन बस "थुल-थुल, नान-नान" दोहराते रहे, जैसे कोई मंत्र हो। दिन ऐसे ही बीतते गए और आखिरकार किसी ने पूछा, "महाराज जी, आप क्या कह रहे हैं?" और पता चला कि यह बिहार की एक पुरानी बोली थी, जिसका मतलब था "बहुत बड़ा, बहुत बड़ा, बहुत छोटा, बहुत छोटा।" जब उनसे पूछा गया कि वे ऐसा क्यों कह रहे हैं, तो उन्होंने कहा, "अरे, तुम सब लोग, तुम सब थुल-थुल, नान-नान में जीते हो; तुम फैसले की दुनिया में जीते हो। यहाँ हमेशा या तो बहुत बड़ा होता है या बहुत छोटा।"

राम

महाराजजी के सामने बैठे हुए आप कभी नहीं जान सकते कि दर्शन के दौरान वे किसके साथ हैं। हो सकता है कि वे किसी एक व्यक्ति से बात कर रहे हों और कोई दूसरा व्यक्ति किसी विशेष प्रकार से भावविभोर हो रहा हो। आप स्वयं भी नहीं जान सकते कि आपको उनसे क्या प्राप्त हो रहा है।

राम

महाराजजी के साथ रहने का एक पहलू जिसने मुझे और कई लोगों को प्रभावित किया, वह था इस अनुभव का बहुआयामी स्वरूप। हम बस उनके साथ बैठे रहते और ऐसा लगता जैसे कुछ खास हो ही नहीं रहा हो। हम चाय पी रहे होते, कभी-कभी वे कुछ फल इधर-उधर फेंक देते, या कोई आकर कुछ शब्द कह देता। सब कुछ बहुत शांत होता, लेकिन हम उनकी हर हरकत को ध्यान से देखते, उनके सिर के झुकाव या हाथों की हरकत में असीम आनंद लेते। एक ओर जहाँ हमें एक अद्भुत हल्का आनंद मिलता, वहीं दूसरी ओर ऐसा महसूस होता जैसे हम किसी भयंकर आग के बीच में हों।

राम

महाराजजी के चारों ओर लोग शांति से बैठे ध्यानमग्न हैं। जब किसी के मन में कोई विचार आता है, तो महाराजजी उसकी ओर मुँह करके दूसरी दिशा में मुड़ जाते हैं। नाराज़गी और प्रेम भरे भाव से वे एक उंगली उठाते हैं या मुट्ठी हिलाते हैं। यदि कोई ध्यान कर रहा होता है, तो वे उसकी नाक खींचते हैं या दाढ़ी सहलाते हैं। वे किसी एक व्यक्ति की ओर मुड़कर कहते हैं कि वह बहुत अच्छी है। दूसरे की वे बुराई करते हैं और उसके बारे में तरह-तरह की बुरी बातें सुनाते हैं। फिर वे किसी दूसरे की ओर मुड़कर कहते हैं, “जाओ। दुष्ट!”

और वे शब्द, सेब, चाय, मौन और हंसी, सब महाराजजी से बहने वाली प्रेम की एक निरंतर नदी में समाहित थे। जो भक्त उन्हें "जानते" थे, वे महाराजजी की प्रशंसा के साथ-साथ उनके अपमान से भी उतने ही प्रसन्न होते थे, क्योंकि यह सब प्रत्यक्ष प्रेम और आत्मा के लिए पोषण था।

इस संदर्भ में हमने महाराजजी के एक दीर्घकालिक, विश्वसनीय भक्त, जिन्हें "दादा" कहा जाता था, से प्रेरणा ली। वे महाराजजी की सेवा में इतने समर्पित थे कि हम सब दंग रह गए। जब महाराजजी उनकी प्रशंसा करते, तो दादा कहते, "हा, बाबा," जिसका अर्थ होता था, "जी बाबा," और जब महाराजजी उन पर चिल्लाते, कभी-कभी सुबह से शाम तक उन्हें डांटते रहते, तो वे ठीक उसी स्वर में उत्तर देते, "हा, बाबा!" स्पष्टतः, उनके लिए यश और अपमान एक ही थे, कम से कम जब महाराजजी उनकी प्रशंसा करते थे। महाराजजी अब दादा को न तो क्रोधित कर सकते थे और न ही उन्हें अपराधबोध करा सकते थे; वर्षों से यह सब उनके मन से निकल चुका था। दादा के लिए तो यह सब ईश्वर की कृपा थी।

कभी-कभी महाराजजी किसी एक व्यक्ति से बात करते थे और बाकी सभी लोग केवल उपस्थित रहकर ही संतुष्ट होकर सुनते रहते थे।

नए आने वालों को झिझकते और सवाल पूछते देखना एक अलग ही आनंद था, और फिर देखते थे कि कैसे उनके हृदय धीरे-धीरे खुलते हैं और एक कुशल माली की कोमल देखरेख में उनका कोमल, फूल जैसा गुण उभर आता है। हम उन समूहों में बैठे रहते थे, जब महाराजजी इधर-उधर मुड़ते, कभी अपने बगल में बैठे किसी व्यक्ति पर ध्यान देते तो कभी दूर खड़े किसी भक्त पर जो अभी-अभी मंदिर में प्रवेश कर रहा होता था; और पल भर में समूह का माहौल हंसी-मजाक से गंभीर और फिर शांत हो जाता था। ऐसे समय में ऐसा लगता था मानो महाराजजी कठपुतली नचाने वाले हों और हम कठपुतलियाँ।

महाराजजी की संगति अत्यंत विशिष्ट थी। वे हमेशा सहज और एक बच्चे की तरह, पारंपरिक रूप से एक संत थे। वे अपने भक्तों पर कोई शर्त नहीं रखते थे और न ही उनसे किसी विशेष

व्यवहार की अपेक्षा रखते थे। वे बाहरी दिखावे से शायद ही कभी प्रभावित होते थे। वे अपने चेहरे से एक फुट की दूरी पर कैमरा रखकर भी एक साथ आधा दर्जन लोगों से बात कर सकते थे। उनका कोई विशिष्ट रूप नहीं था। वे कोई अनुष्ठान या पूजा नहीं करते थे। वे स्नान जैसी किसी भी रूढ़िवादी प्रथा का पालन नहीं करते थे। फिर भी उनकी उपस्थिति प्रेरणा से कहीं अधिक थी; यह ज्ञानवर्धक थी। उनकी उपस्थिति में या उनके निकट ध्यान करते समय, भले ही वे जोर-जोर से बातें और मजाक कर रहे हों, व्यक्ति शीघ्र ही उस निर्मल प्रकाश की अवस्था में पहुँच जाता था, जहाँ उनकी कृपा और शक्ति के बिना पहुँचना कठिन था।

कालातीत दर्शन

महाराजजी अक्सर भारतीय भक्तों को मौन बैठने की सलाह देते थे; बस बैठने, सुनने और आत्मसात करने की। लेकिन महाराजजी के आसपास ऐसा करना मुश्किल था, क्योंकि उनके चारों ओर लगातार एक दिलचस्प घटनाक्रम चलता रहता था: कौन आया, कौन गया; उन्होंने क्या कहा; कौन सा भोजन बांटा जा रहा था; किसे उनके सबसे करीब बैठने का मौका मिला; वे हर व्यक्ति के साथ कैसे व्यवहार कर रहे थे; वे किसे प्यार से सहला रहे थे और किसे डांट रहे थे; वे अपनी कुर्सी पर कैसे घूम रहे थे। एक भारतीय ने हमें बताया कि हममें से जो लोग हिंदी नहीं बोलते थे, वे भाग्यशाली थे, क्योंकि इससे हम ज्यादा शामिल नहीं हो पाए। जब थोड़ी शांति होती या जब आप खुद को इस नाटकीय घटनाक्रम से अलग कर पाते, तो आप उनकी उपस्थिति की शाश्वत गरिमा में डूब सकते थे।

उससे मिलते ही, अगर आप तैयार हैं, तो वह आपके भीतर स्वयं को बो देगा—वह बीज बन जाएगा। और समय का कोई महत्व नहीं है।

राम

उनके साथ रहते हुए आप सब कुछ भूल जाएंगे। वहाँ केवल महाराजजी ही होंगे—पूर्ण, सहज उपासना। यही सच्ची पूजा है।

राम

कभी-कभी हम कैंची में महाराजजी के साथ बातें करते हुए इतनी देर रात तक जागते रहते थे कि हमें समय का बिल्कुल भी एहसास नहीं होता था, जब तक कि हम किसी को सुबह स्नान करते हुए नहीं सुनते थे, और तब हमें एहसास होता था कि पूरी रात बीत चुकी है।

राम

यह उन दर्शनों में से एक था, जिसे देखकर लगता है कि किसी ने चाय में एलएसडी मिला दिया होगा।

राम

हम उनकी चमक में डूबे रहते।

राम

वास्तव में, जब आप महाराजजी के स्वरूप से दूर होते हैं, तब आप उनसे अधिक वास्तविक रूप से जुड़ सकते हैं। दूरी से आप बिना किसी बाधा के उन पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।

अंतरंगता के दर्शन

दूसरों के लिए जो बात सबसे अलग दिखती है, वह है किसी दूसरे व्यक्ति को उसी स्थान पर

अनुभव करने से मिलने वाली अनमोल आत्मीयता, एक ऐसे प्रेमी की फुसफुसाहट जो आपके दिल की गहराई को जानता है।

महाराजजी कभी उपदेश नहीं देते थे, कभी प्रवचन नहीं देते थे; वे सीधे आपके हृदय में बात करते थे। उनके साथ रहने पर व्यक्ति को सब कुछ स्वतः ही पता चल जाता था। यह ज्ञान हृदय से आता था, किताबों को पढ़कर नहीं।

राम

कैंची स्थित आश्रम के पीछे हम दस-बीस लोग बैठकर महाराजजी से बातें करते थे। हममें से कोई एक कहता, "लेकिन महाराजजी, फलां व्यक्ति के बारे में क्या?" और ईश्वर या जीवन से संबंधित कोई प्रश्न पूछता। महाराजजी बोलना शुरू करते और देखते ही देखते सबकी आँखों में आँसू आ जाते। कभी-कभी वे ईसा मसीह के बारे में बोलते-बोलते खुद भी रोने लगते।

राम

हम दोनों के बीच मौखिक रूप से कभी कोई खास बातचीत नहीं हुई। लेकिन अंदर से मुझे उनसे इतना प्यार था कि मैं उनके आसपास ही रहती थी; जब मैं जाती तो ज्यादा दूर नहीं जाती थी और हमेशा वापस आ जाती थी। बहुत से लोगों के साथ ऐसा ही होता था।

राम

महाराजजी ने हर व्यक्ति के दिल को अपने अनोखे अंदाज में छुआ। उनके साथ हर किसी का अनुभव अलग था। उनके साथ रहने का अनुभव शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता। यह एक ऐसा अनुभव है जिसे दिल से महसूस किया जा सकता है।

राम

वह इतना सौम्य था कि उससे ज़रा भी डर नहीं लगता था। लेकिन कभी-कभी आपको लगता था कि उसके अंदर कहीं शेर तो छिपा हुआ है।

राम

कृष्ण के जन्मदिन पर तीन-चार पश्चिमी युवतियाँ उपस्थित थीं। जब सभी लोग लक्ष्मी-नारायण के सामने मंदिर में कीर्तन गा रहे थे, तभी वे महाराजजी की खिड़की के पास गईं, जो अंदर से बंद थी, और धीरे-धीरे बाल कृष्ण (विष्णु के अवतार) देवकीनंदन गोपाल का गीत गाने लगीं। कुछ देर बाद, महाराजजी ने खिड़की खोली और गुस्से से उन्हें वहाँ से चले जाने को कहा और फिर से बंद कर दिया। यह सिलसिला कई बार दोहराया गया, जबकि युवतियाँ धीरे-धीरे गाती रहीं। अंत में महाराजजी ने फिर से खिड़की खोली, लेकिन इस बार उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे और वे काफी देर तक भावमग्न होकर सुनते रहे।

राम

याद है कास्टेनेडा ने दुनिया को रोक देने की बात कही थी? कभी-कभी महाराजजी कुछ ऐसा करते थे कि आपको लगता था मानो उन्होंने दुनिया को ही रोक दिया हो। कभी आप सुन रहे होते थे, कभी नहीं, और फिर अचानक महाराजजी कुछ करते और आप स्तब्ध रह जाते। मेरे जीवन में एक ऐसा दौर था जब मैं घोड़ों के बारे में पूरी-पूरी स्क्रैपबुक बनाकर रखती थी। किसी और को उनके बारे में पता नहीं था। और एक बार जब मेरा ध्यान कहीं और था, महाराजजी मेरी तरफ मुड़े और मुझसे घोड़ों के बारे में पूछा। मेरा ध्यान एकदम थम गया।

राम

जब भी मेरा मन कहीं भटकता, महाराजजी मुझे पकड़ लेते। उनका ध्यान कभी नहीं भटकता था। जब भी मेरा ध्यान जरा सा भी भटकता, वे मुझे पकड़कर वापस सही रास्ते पर ले आते थे।

राम

महाराजजी टके पर बैठे थे और उन्होंने झुककर कबीर के सिर पर चुंबन किया। उस चुंबन ने वहां मौजूद सभी लोगों को भावुक कर दिया। इससे सभी को भीतर से बहुत खुशी का अनुभव हुआ।

जब भी महाराजजी किसी को गले लगाते थे, कमरे में मौजूद हर कोई "आह्ह्ह्ह..." की आवाज निकालता था।

प्रेम के दर्शन

महाराजजी से मिलने वाला सारा प्रेम, स्नेह और दया-भाव मनुष्य से प्राप्त नहीं किया जा सकता।

राम

महाराजजी के साथ रहने का अनुभव आप कैसे बयान कर सकते हैं? यह किसी फल की मिठास या गुलाब की खुशबू का वर्णन करने जैसा है।

राम

आपने कभी इतना प्यारा, इतना दयालु, इतना मधुर इंसान नहीं देखा होगा। भला आप उससे प्यार कैसे नहीं कर सकते?

राम

अगर संभव हो तो आप लगभग अपनी सांसें भी उसे सौंप देना चाहते थे।

राम

एक भक्त ने मुझसे पूछा कि क्या कभी महाराजजी की दृष्टि मुझ पर इस तरह पड़ी है कि जब उन्होंने कुछ पल के लिए मुझे देखा, तो मैं सब कुछ भूल गया और केवल महाराजजी के प्रेम को ही महसूस किया। भक्त ने कहा कि जब वे इस तरह से देखते हैं तो यह एक अद्भुत और दुर्लभ घटना होती है, और यदि आप उस अवस्था में उनकी दृष्टि को थाम सकें तो आप बहुत भाग्यशाली हैं।

राम

वह महज एक नजर या एक हरकत से आपके दिल में उतर सकता था। छोटी से छोटी बात भी आपको भेदने जैसी महसूस हो सकती थी।

राम

मैं अगले दिन नेपाल के लिए रवाना होने वाला था। शाम का समय था और हम आश्रम के पिछले हिस्से में बैठे थे। महाराजजी ने मेरे अगले दिन जाने का ज़िक्र तक नहीं किया क्योंकि मुझे भारत छोड़ने का नोटिस मिल चुका था, लेकिन दर्शन के अंत में उन्होंने मेरी आँखों में आँखें डालकर देखा। वह गुरु की दृष्टि थी, पूर्ण, सार्वभौमिक, संपूर्ण करुणा से भरी दृष्टि; वह शब्दों से परे प्रेम था। क्षण भर के लिए नहीं, बस—उनके अस्तित्व में मेरा होना। और इसने मुझे एक ऐसे भाव से भर दिया—उस भावना के लिए क्या शब्द है?—दुःख या तड़प या… मैंने उस दृष्टि में

असीम करुणा महसूस की, और भले ही वह दृष्टि बहुत देर तक नहीं टिकी, उसकी शक्ति आज भी मुझ तक पहुँचती है, खासकर बहुत कठिन समय में।

राम

जब मेरी पहली मुलाकात महाराजा जी से हुई, तब मेरी उम्र लगभग सोलह वर्ष थी। वह एक भंडारा (भोज) था और वहाँ बहुत से लोग मौजूद थे। उनसे मिलते ही मैं भाव-भंगिमा से भर गया, मानो दिव्य प्रेम ने मुझे एक अलग ही दुनिया में पहुँचा दिया हो। महाराजा जी ने मुझे भंडारे में भक्तों की सेवा करने का निर्देश दिया। बहुत से लोगों को भोजन कराना था और हमने घंटों काम किया, लेकिन वह भाव आज भी मेरे मन में बसा हुआ है।

राम

जब एक व्यक्ति से पूछा गया कि महाराजजी से मिलने पर उसे कैसा अनुभव हुआ, तो उसने उत्तर दिया, “यह ऐसी चीज नहीं है जिसे शब्दों में व्यक्त किया जा सके। इसे अनुभव करना ही होगा। उनसे मिलने वाला प्रेम, स्नेह, करुणा और कृपा...।”

दर्शनों में बातचीत

वह लगातार बोलता रहता था, बिना किसी सीमा या तर्क के। अगर वह किसी को गाली दे रहा होता, तो वह लगातार चिल्लाता रहता। लेकिन उसे सब कुछ सुनाई दे रहा था। कैसा नशा था! वह एक बिल्कुल ही असामान्य व्यक्ति की तरह व्यवहार करता, तरह-तरह की बकवास करता, चिल्लाता और गाली देता।

लेकिन तुम वहाँ क्यों रुकी रहीं? तुम्हें समय और स्थान का कोई एहसास नहीं होता था। तुमने कभी यह सवाल नहीं किया कि तुम कहाँ हो या वहाँ क्यों हो। उसके साथ दिन और महीने बीत जाते थे, और वे पल भर के लगते थे। कभी-कभी मुझे पता ही नहीं चलता था कि मैंने कई दिनों से कुछ खाया-पिया नहीं है, और वह मुझसे ऐसे काम करवाता था जो मैं आम तौर पर नहीं करती। अगर मैं उसे छोड़कर जाना चाहती, तो वह मुझे रोक लेता; अगर मैं एक और रात रुकना चाहती, तो वह मुझे जाने के लिए मजबूर कर देता।

राम

वह हमेशा एक बच्चे की तरह बड़बड़ाता रहता था, इधर-उधर की बातें करता रहता था, जिनमें से अधिकतर का अनुवाद नहीं किया गया था। ऐसा लग रहा था जैसे कोई बढ़िया विदेशी फिल्म देख रहे हों जिसमें आपको उपशीर्षकों की ज़रूरत ही न हो!

राम

कुछ मौकों पर वह कोई बात सिर्फ एक बार कहता था। अगर आप उसे नहीं सुन पाते, तो वह बात भुला दी जाती थी।

राम

एक पश्चिमी महिला वृंदावन में हनुमान मूर्ति के सामने बैठी थी। वह महाराजजी के दर्शन के लिए बहुत उत्सुक थी, लेकिन उन दिनों महाराजजी पश्चिमी लोगों को दर्शन की अनुमति नहीं दे रहे थे। वह सिर झुकाए बैठी कीर्तन गा रही थी। तभी अचानक कुछ हलचल हुई। उसने ऊपर देखा और ठीक उसके सामने, बड़े ही मधुर भाव से मुस्कुराते हुए, महाराजजी खड़े थे। फिर उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा जब महाराजजी ने अपना सिर थोड़ा झुकाया और अंग्रेजी में कहा,

"बहुत बढ़िया!"

राम

कई पश्चिमी लोग महाराजजी के अंग्रेज़ी मुहावरों की मशहूर श्रृंखला को याद कर रहे थे। उनमें से कुछ ये थे: कोकोनट; राइट फेस, क्विक, मार्च!; लेफ्ट, राइट, गो!; सिट डाउन; बस आ गई है; समटाइम्स; डैम फूल; कमांडर-इन-चीफ; थैंक यू; स्टैंड अप; वॉटर।

राम

जब आप महाराजजी के साथ होते थे, तो आप वही बातें करते थे जो वे करना चाहते थे। अगर आप अपना विषय शुरू करते, तो महाराजजी उसे नज़रअंदाज़ कर देते या बदल देते।

राम

महाराजजी के अलावा उनके साथ किसी और से कोई बातचीत नहीं होती थी।

राम

महाराजजी अप्रासंगिक बातों के बारे में ऐसे बात करते थे मानो वे बहुत महत्वपूर्ण हों।

राम

महाराजजी एक से बात करते और दूसरे को पीटते, और केवल वही व्यक्ति समझ पाता था जिसे समझना होता था।

राम

महाराजजी हर चीज में आम आदमी की तरह गहरी रुचि रखते थे। उनमें कोई दिखावा नहीं था, फिर भी कोई उन्हें धोखा नहीं दे सकता था।

पश्चिमी लोगों के साथ बातचीत में आमतौर पर कुछ नियमित अभ्यास शामिल होते थे। महाराजजी ने उनमें से कई लोगों के लिए विशेष अभ्यास विकसित किए थे, और उस विशेष व्यक्ति को प्रतिदिन आगे बुलाया जाता था ताकि वह वही संवाद दोहरा सके। एक युवती से वह प्रतिदिन एक ही प्रश्न पूछते थे: “भारतीय स्त्रियाँ कैसी होती हैं? वे अच्छी क्यों होती हैं?”

वह हर दिन एक ही जवाब देती थी: "क्योंकि वे अपने पतियों के प्रति समर्पित हैं।"

वह एक अन्य भक्त से बार-बार पूछता था, "क्या तुम शादी करोगे?"

भक्त हमेशा जवाब देता था, "महाराज जी, मैं शादी कैसे कर सकता हूँ? मैं तो बिल्कुल निकम्मा हूँ।"

दूसरे से, "आपका नाम क्या है?"

“चैतन्य महा प्रभु” (एक महान भारतीय संत का नाम), जिसे महाराजजी दोहराते और प्रशंसापूर्वक अपना सिर झुकाते थे।

उन्होंने हमें अभिनय करने वाले मनुष्यों के रूप में अच्छी तरह से प्रशिक्षित किया था। एक भक्त ने इस सब पर टिप्पणी करते हुए कहा: "महाराज जी का अपना चिड़ियाघर था और हम सब उसमें कैदी थे।"

फिर आरती हुई, प्रकाश का अनुष्ठान। यह गुरु को सम्मान देने का एक अनुष्ठान है। गुरु के सामने एक लौ लहराई जाती है, और इसके साथ एक मंत्र का जाप किया जाता है जो गुरु के अनेक गुणों का वर्णन करता है। के.के. साह (जो लंबे समय से हमारे भारतीय भक्त थे) के मार्गदर्शन में, हमने महाराजजी को "आश्चर्यचकित" करने के लिए संपूर्ण संस्कृत मंत्र और अनुष्ठान

करने का तरीका सीखा था। जब हमने अंततः आरती की, तो महाराजजी इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने हमें बार-बार आरती करने को कहा, जबकि आरती करते समय वे अपने आस-पास उपस्थित लोगों में से किसी न किसी से लगातार बातें करते रहे। और तब से, जब भी भारतीय भक्तों का कोई नया समूह श्रद्धा अर्पित करने आता, तो हमें आश्रम के पीछे से आरती (प्रकाश का अनुष्ठानिक अर्पण) करने के लिए लाया जाता था, ताकि हम दिखा सकें कि पश्चिमी लोग वास्तव में कितने आध्यात्मिक हैं। इन बार-बार अभ्यास से हमने बहुत कुछ सीखा। शुरुआत में हम महाराजजी को प्रसन्न और प्रभावित करना चाहते थे। बाद में प्रार्थना केवल आध्यात्मिक भौतिकवाद बनकर रह गई। लेकिन उस निरंतर दोहराव के माध्यम से, हम यह समझने लगे कि कैसे एक अनुष्ठान अपने आप में एक जीवन प्राप्त कर सकता है और उस विशिष्ट कारण से स्वतंत्र एक आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न कर सकता है जिसके लिए इसे किसी भी समय किया जा रहा है।

दर्शनों में डांट-फटकार और चंचलता

महाराजजी के एक भक्त अस्सी वर्ष के थे और पहाड़ी बकरी की तरह बहुत फुर्तीले थे। एक दिन वे महाराजजी के दर्शन के लिए आए, तभी उनका एक युवा, दूर का रिश्तेदार भी वहाँ मौजूद था। रिश्तेदार ने बुजुर्ग भक्त को प्रणाम किया, लेकिन उठे नहीं। महाराजजी ने बुजुर्ग की ओर मुड़कर कहा, "अगर तुम्हारे पास धन होता, तो वह उठकर तुम्हारे पैर छू लेता।"

राम

एक बार एक श्रद्धालु नई और महंगी साड़ी पहनकर दर्शन के लिए आई। महाराजजी ने कहा, “माँ, मैं एक धनी परिवार के यहाँ दर्शन के लिए गया था, लेकिन उन्होंने इतने साधारण कपड़े पहने थे कि अमीर और गरीब में फर्क करना नामुमकिन था। इतने सादे और साफ-सुथरे।”

राम

एक शाम, महाराजजी एक गंदी गली में बैठे हुए थे, तभी कुछ "महत्वपूर्ण" लोग—कवि, न्यायाधीश और अधिकारी—वहाँ आ गए। जब वे महाराजजी के चारों ओर खड़े हुए, तो उन्होंने उनसे पूछा, "आप क्यों नहीं बैठते?" कुछ हिचकिचाहट के साथ वे गली में बैठ गए। तुरंत ही महाराजजी उठ खड़े हुए और बोले, "ठीक है, चलिए चलते हैं।"

राम

मैंने महाराजजी को प्रसाद के रूप में चढ़ाने के लिए मथुरा से कुछ सेब खरीदे थे। वे महंगे थे और मैंने उन्हें खुद चुना था। जब मैंने उन्हें अर्पित किया, तो महाराजजी ने कहा, “इन्हें रख दो। मैं इन्हें बाद में खाऊंगा।” मैंने अपने स्वाभिमान के कारण ऐसा नहीं किया, इसलिए मैंने पहला सेब छीला और वह सड़ा हुआ निकला, और यही हाल दूसरे, तीसरे और चौथे सेब का भी था। महाराजजी ने मेरी ओर देखा और कहा, “मैंने तुमसे कहा था कि इन्हें रख दो।” बाद में मुझे पता चला कि बाकी पांच सेब ठीक थे।

राम

मैं आगरा में काम करता था और जब भी महाराजजी वृंदावन आते थे, मैं उनके लिए दस-पंद्रह रुपये का प्रसाद लेकर जाता था। मैं देखता था कि दूसरे लोग मुझसे कहीं ज़्यादा प्रसाद लेकर आते थे। एक रविवार को मुझे बहुत बुरा लगा क्योंकि मैं बहुत कम प्रसाद ही ला पाया था।

सोमवार की सुबह काम पर जाने से पहले मैं उनके चरण स्पर्श करने का इंतज़ार कर रहा था और मन ही मन सोच रहा था, “मेरी सीमित क्षमता के हिसाब से तो मेरे दस रुपये किसी और के दस हज़ार रुपये के बराबर हैं।” तभी महाराजजी अपने कमरे से बाहर आए और बोले, “अजीब लोग मेरे पास आते हैं और दस रुपये चढ़ाते हुए कहते हैं कि उन्होंने दस हज़ार रुपये चढ़ाए हैं।”

राम

एक ऐसा भाव था जिसे वो मुझे कभी कैमरे में कैद नहीं करने देते थे। वो आराम से बैठे होते और फिर अचानक सीधे बैठ जाते और आँखें चौड़ी करके, गहरी नज़रों से मेरी तरफ देखते। मैंने महीनों तक उस भाव को कैमरे में कैद करने की कोशिश की। मैं तस्वीर खींचती, लेकिन रील आगे बढ़ाने में जितना समय लगता, उतने में वो फिर से सामान्य हो जाते, खिलखिलाते और हँसते। वो मेरी तरफ देखते और मेरी झुंझलाहट पर खुशी से मुस्कुराते। (काश, मेरे पास मोटर-ड्राइव होती!)

राम

एक बार वो मेरे पास आया और मेरी बाँस की छड़ी लेकर उससे चैपलिन की तरह नाचने लगा। वो उसे ऐसे आगे-पीछे हिला रहा था मानो उसने पहले कभी छड़ी देखी ही न हो, जैसे कोई बड़ा बंदर हो। वो उससे खेलने लगा और उसे इधर-उधर घुमाने लगा; फिर उसने उसे फेंक दिया और सड़क पर चला गया! बस यहीं पर मेरा दर्शन समाप्त हो गया! यह सब मैंने ही देखा था।

राम

एक सुबह महाराजजी के सामने अंगीठी में कोयले बहुत कम हो गए थे, इसलिए उन्होंने उस पर कुछ लकड़ी डाल दी। लकड़ी से धुआँ निकलने लगा और वह जली नहीं। तब महाराजजी ने कहा कि उस पर थोड़ा केरोसिन डाल दें, जो उन्होंने डाला भी, लेकिन फिर भी वह नहीं जली। धुएँ के बड़े-बड़े बादल उठने लगे।

महाराजजी आगे झुककर देख रहे थे, और तभी अचानक ज़ोरदार धमाका हुआ! आग की लपटें छत तक पहुँच गईं। महाराजजी खुशी से उछल पड़े, मानो कोई बच्चा खिलखिला रहा हो और ताली बजा रहा हो। वे बेहद रोमांचित थे।

राम

एक दिन मैं आश्रम बहुत जल्दी पहुँच गया और बरामदे में बैठा था। तभी एक आदमी बंदूक लेकर आया। महाराजजी ने तुरंत कहा, “इसे इधर लाओ। मुझे राइफल देखने दो।” उस आदमी ने बंदूक की नली खोली और चैंबर में देखा कि कहीं वह भरी तो नहीं है। हालाँकि वह बीच से टूटी हुई शॉटगन थी, फिर भी वह यह सुनिश्चित करना चाहता था कि वह भरी हुई तो नहीं है। महाराजजी ने बंदूक ली, उसे खोला, फिर बंद किया और कंधे पर रखकर गोली चलाने की तरह पकड़ लिया। थोड़ी देर तक उसे खोलते और बंद करते रहे, फिर उसे वापस उस आदमी को दे दिया और उसे भेज दिया। आदमी के जाने के बाद उन्होंने पूछा, “वह बंदूक क्यों रखते हैं?”

मैंने कहा, "मुझे नहीं पता।" यह मेरा हमेशा का जवाब है।

और महाराजजी ने कहा, "वह इसे इसलिए साथ रखता है क्योंकि उसे चीजों से डर लगता है।"

दर्शनों की शुद्धता

1971 की सर्दियों में वहाँ बहुत भीड़ होने लगी और महाराजजी लोगों को अलग-अलग जगहों पर जाने के लिए कहने लगे। मुझे पुरी जाने के लिए कहा गया। उन्होंने यह भी कहा कि लौटते समय मैं गोयनका (एक प्रसिद्ध बौद्ध ध्यान शिक्षक) से मिल सकता हूँ। मुझे लग रहा था कि मुझे ध्यान के बारे में कुछ सीखना बहुत ज़रूरी है, इसलिए मैं बोधगया गया और वहाँ चालीस दिन रहा। उस दौरान मेरा मन अत्यंत शांत था, जैसा मैंने पहले कभी अनुभव नहीं किया था।

जब मैं दादा के घर लौटी तो महाराजजी वहाँ थे। मुझे नहीं पता कि मैं उनके प्रति अपने प्रेम को एक नए रूप में महसूस कर रही थी या मेरा हृदय बंद हो गया था। शायद दोनों ही बातें थीं। लेकिन मैं बस एक ऐसे व्यक्ति को देख रही थी जो तरह-तरह के काम कर रहा था, और मुझे वह प्रेम का जुड़ाव बिल्कुल भी महसूस नहीं हुआ जो पहले होता था। एक स्पष्टता और खुलापन तो था, लेकिन वह भावनात्मकता और गर्माहट नहीं थी। मैं वहाँ दो-तीन दिन रही और उस भावना के लौटने का इंतज़ार करती रही जो मुझे पहले महसूस होती थी। और मैंने देखा कि ये सभी लोग उस तरह से खुल रहे थे जैसा मैं पहले नहीं चाहती थी। मैंने महाराजजी से प्रार्थना की, लेकिन फिर भी कुछ नहीं बदला।

मैंने संगम (तीन पवित्र नदियों के संगम पर स्थित पवित्र स्थान) जाने का निश्चय किया। वहाँ पहुँचकर मैंने प्रार्थना की कि स्नान करने के बाद मेरा हृदय फिर से खुल जाए। स्नान करते समय मैंने महसूस किया कि मेरा हृदय पूरी तरह खुल गया है। स्नान से बाहर निकलते ही मुझे हर ओर चमक दिखाई दी। दादाजी के घर वापस जाने के लिए मैं एक रिक्शा में बैठा और तभी मुझे एहसास हुआ कि मेरे पास प्रसाद नहीं है। संगम से दादाजी के घर जाने का रास्ता किसी बाज़ार से होकर नहीं गुज़रता। रास्ते में हमें भक्ति कैलेंडर बेचने वाला मिला। मैंने सारे चित्र देखे, लेकिन वे सब भद्दे थे। जब मैं हार मानने ही वाला था, तभी मैंने अपने पैरों की ओर देखा और धूल में ज़मीन पर राम हनुमान को गले लगाते हुए एक चित्र पड़ा था, जो अत्यंत सुंदर था। मैंने वह चित्र खरीद लिया और दादाजी के घर की ओर चल पड़ा। मुझे देर हो रही थी, इसलिए मुझे नहीं लगा कि महाराजजी तक पहुँचकर प्रसाद चढ़ाने का समय होगा। लेकिन जैसे ही मैं दरवाज़े से अंदर आया, महाराजजी तक जाने का रास्ता खुल गया। ध्यान पाठ्यक्रम और संगम से मेरा इतना आध्यात्मिक विकास हुआ कि मैंने बिना अहंकार के प्रसाद वितरित किया। महाराजजी के समक्ष यह मेरा अब तक का सबसे पवित्र कार्य था। कुछ तो घट रहा था, पर मैं उसमें शामिल नहीं था। मैंने तस्वीर को तकिये पर रखा और बैठ गया। महाराजजी ने उसे उठाया और देखा। उनकी आँखों से आँसू बहने लगे और मैं भी रोने लगा। फिर वे उठे और दादा को तस्वीर देकर कमरे से बाहर चले गए। कुछ सप्ताह बाद यह तस्वीर वृंदावन मंदिर में मूर्ति के ठीक बगल में स्थापित थी।

इस कहानी का सार यह है कि क्योंकि मैंने यह निस्वार्थ भाव से किया, इसलिए उन्होंने इसे पूरी तरह से स्वीकार कर लिया। कई बार मैं तरह-तरह के प्रसाद लेकर आती थी और चाहती थी कि वे उसे एक खास तरीके से ग्रहण करें—लेकिन वे मुश्किल से ही उसकी तरफ देखते थे। मैं घंटों सेबों को चमकाती, बस में उन्हें पकड़े रहती, उन पर मंत्र पढ़ती; मैं पवित्रता दिखाने की कोशिश कर रही थी। लेकिन इस बार मैं पवित्रता दिखाने की कोशिश नहीं कर रही थी; पवित्रता तो बस स्वाभाविक रूप से मौजूद थी।

“मैं गुरु के चरण कमलों की धूल लेकर अपने मन के दर्पण को शुद्ध करता हूँ।” हनुमान जी की इस पवित्र स्तुति का आरंभ होता है। हिंदू परंपरा में गुरु के चरणों को स्पर्श करना, थामना और मलना अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। क्योंकि गुरु के चरणों से आध्यात्मिक अमृत, सोमा, पवित्र गंगा नदी का सार—सूक्ष्म प्राण, या वह ऊर्जा निकलती है जो उपचार करती है और जागृत करती है। ऐसे व्यक्ति के चरणों को स्पर्श करना न केवल इस कृपा को प्राप्त करना है, बल्कि यह ईश्वर के प्रति समर्पण का कार्य है, क्योंकि पृथ्वी पर गुरु ईश्वर का प्रतिनिधित्व करते हैं।

लेकिन महाराजजी के आसपास रहने वाले हम लोगों के लिए, गुरु के चरणों को छूने के आध्यात्मिक महत्व से जुड़े सिद्धांतों का इस मामले से कोई लेना-देना नहीं था। बल्कि यह दिल की एक अजीब सी पुकार थी। एक माँ, जो अपने पति के साथ अमेरिका से भारत आई थी, अपने बेटे की भलाई के लिए चिंतित थी, जो महाराजजी के प्रति गहरी श्रद्धा रखता था। वह कुछ समय के लिए यहीं रुक गई। अपनी यात्रा के अंत में उसने निम्नलिखित बातें बताईं:

फिर जब अमेरिका लौटने का समय आया, तो मैं अपने अंतिम दर्शन के बारे में सोचने लगी। मुझे एहसास हुआ कि मैं सचमुच महाराजजी के चरण स्पर्श करना चाहती थी। मुझे नहीं पता था कि मैं ऐसा क्यों चाहती थी, लेकिन चाहती थी। मैंने सोचा कि अगर मैंने ऐसा किया तो मेरे पति नाराज हो जाएंगे, लेकिन मैंने सोचा, "जो भी हो, उन्हें नाराज होने दो। आखिर फैसला तो मेरा ही है!" अपने अंतिम दर्शन में मैंने महाराजजी के चरण स्पर्श किए।

मुझे आश्चर्य हुआ कि मेरे पति ने भी ऐसा ही किया!

राम

मुझे आज भी अच्छी तरह याद है, महाराजजी से मेरी पहली मुलाकात के बाद, कैसे मेरा सारा तिरस्कार और अहंकार गायब हो गया और उनके चरणों में गिरने की प्रबल इच्छा जागृत हुई। शायद महाराजजी से मेरी दूसरी या तीसरी मुलाकात में मुझे यह अवसर मिला। मैं अपने बगल में बैठे व्यक्ति को देख रहा था। उनके चेहरे के भाव से लग रहा था मानो वे परमानंद की लहरों का अनुभव कर रहे हों, और उन्हें देखते हुए मुझे ईर्ष्या हुई। हम एक बड़ी, भारी, छाती तक ऊंची लकड़ी की मेज के सामने पालथी मारकर बैठे थे। वह व्यक्ति पास के ही एक स्कूल का प्रधानाचार्य था, जिसकी उम्र शायद पचास के आसपास थी। उसने ऊन का भारी सूट, मोजे (उसके जूते मंदिर के दरवाजे के बाहर छूट गए थे), टाई, मफलर और नवंबर के इस आखिरी महीने में पहाड़ी इलाकों के पुरुषों की तरह ऊनी टोपी पहन रखी थी। हमारे सामने, मेज पर पालथी मारकर महाराजजी बैठे थे, जो चमकीले चेकदार कंबल में लिपटे हुए थे, केवल उनका सिर कंबल के ऊपर से दिख रहा था और एक नंगा पैर कंबल के नीचे से बाहर निकला हुआ था। ये वही पैर था जो आनंद और ईर्ष्या दोनों का स्रोत था, क्योंकि वो आदमी बड़े प्यार और कोमलता से मेरे पैर की मालिश कर रहा था, और मैं उसकी जगह होने के लिए तरस रहा था। दुनिया के दूसरी तरफ एक छोटे से हिंदू मंदिर में बैठे हुए, एक बूढ़े आदमी के पैर की मालिश न कर पाने की वजह से ईर्ष्या महसूस करना कितना अजीब था!

जब मैं इन विचित्र घटनाओं पर विचार कर रहा था, तभी महाराजजी मंदिर परिसर के पीछे बने छोटे से कमरे में जमा हुए लगभग बीस लोगों में से कभी एक से तो कभी दूसरे से बात करने लगे। वे हिंदी में बोल रहे थे, जो मुझे समझ नहीं आ रही थी, लेकिन ऐसा लग रहा था मानो वे

किसी से प्रश्न पूछ रहे हों, किसी को डांट रहे हों, किसी से मज़ाक कर रहे हों और किसी को निर्देश दे रहे हों। इन बातचीत के बीच मैंने उन्हें थोड़ा सा हिलते हुए देखा और उनका दूसरा पैर मेरे ठीक बगल में कंबल के नीचे दिखाई दिया।

मुझे शक था कि सिर्फ़ उन्हीं लोगों को उनके पैरों की मालिश करने की इजाज़त थी जो उनके आस-पास लंबे समय से रहे हों—और मैं तो अभी-अभी आई थी—लेकिन मैंने सोचा कि कोशिश करने में कोई बुराई नहीं है। तो धीरे-धीरे मेरे हाथ ऊपर उठे और पैर को छूकर मालिश करने लगे। लेकिन आनंद की लहरों के बजाय, मेरा मन इस बात को लेकर संदेह और उलझन से भर गया कि मुझे उंगलियों का इस्तेमाल करना चाहिए या हथेलियों का। जितनी अचानक से पैर दिखाई दिया था, उतनी ही अचानक से वह कंबल के नीचे वापस चला गया। मेरा मन अपनी ही अशुद्धता को लेकर आत्म-निंदा से भर गया।

जैसे-जैसे मुलाकात आगे बढ़ी, महाराजजी मुझे मेरी आत्म-चेतना से और भी दूर ले जाकर एक ऐसे स्थान पर ले गए जिसकी कोई जानी-पहचानी सीमाएँ नहीं थीं। मैं भ्रम की लहरों का अनुभव कर रहा था, जो उन्माद की सीमा तक पहुँच रही थीं। और तभी वह पैर मेरे सामने फिर से प्रकट हुआ। और मैंने फिर से उसे पकड़ने की कोशिश की। लेकिन इस बार मेरा मन प्रक्रिया का विश्लेषण करने के लिए बहुत अधिक अभिभूत था। मैं बस उस पैर से ऐसे लिपट गया जैसे कोई डूबता हुआ व्यक्ति जीवनरक्षक कवच को पकड़ता है। (आर.डी.)

राम

कैंची में मुझे एक खास पल याद है। मैं महाराजजी के सामने बैठा था, काफी देर तक उनके पैर मल रहा था और सोच रहा था कि क्या मैं यह करने के लिए पर्याप्त पवित्र हूँ। फिर मैं विचारों से परे चला गया, उस प्रेम में और भी गहरा उतरता चला गया, यहाँ तक कि महाराजजी के पैर मलने या उनके प्रति अपने प्रेम की चिंता भी खत्म हो गई। मैं बस उनके चरणों में "डूब" रहा था।

राम

सीता हमेशा मेरे दाहिनी ओर बैठती थी, और एक लालची, बदतमीज़ सिंह राशि वाले होने के नाते, मैं धक्का-मुक्की करते हुए आगे बढ़ जाता और महाराजजी का पैर पकड़ लेता। सीता हमेशा वही पैर चाहती थी, इसलिए मेरी उससे धक्का-मुक्की होने लगती। वह कहती, "यहाँ से दूर हटो। तुम्हारा यहाँ कोई स्थान नहीं है।" और वह मुझे रोकने के लिए अपना कंधा नीचे कर देती। कभी महाराजजी अपना पैर मुझे दे देते, कभी सीता को।

राम

मैंने बहुत कम ही उनके पैर छुए, क्योंकि मुझे लगता था कि वे बहुत पवित्र थे।

दर्शनों में ऐसी क्या बात थी जिसने हमें मोहित कर लिया? क्या यह अनेक स्तर और परिवर्तन थे, या कालजयी क्षण, या शायद आत्मीयता और प्रेम? या फिर बातचीत, डांट-फटकार और हास्य, या शायद पवित्रता? फिर, निश्चित रूप से, शायद यह चरणों का स्पर्श था। या क्या यह सब कुछ था... या इनमें से कुछ भी नहीं? क्या यह जुड़ाव शायद व्यक्तिपरक था, हमारे द्वैतवादी अनुभव से परे? महाराज जी, आप कौन हैं? क्या आप हमारे स्वयं के अलावा कुछ और हैं?

इसका कोई उत्तर नहीं है। वास्तव में कोई प्रश्न ही नहीं है। केवल दर्शन है, जो कृपा है।

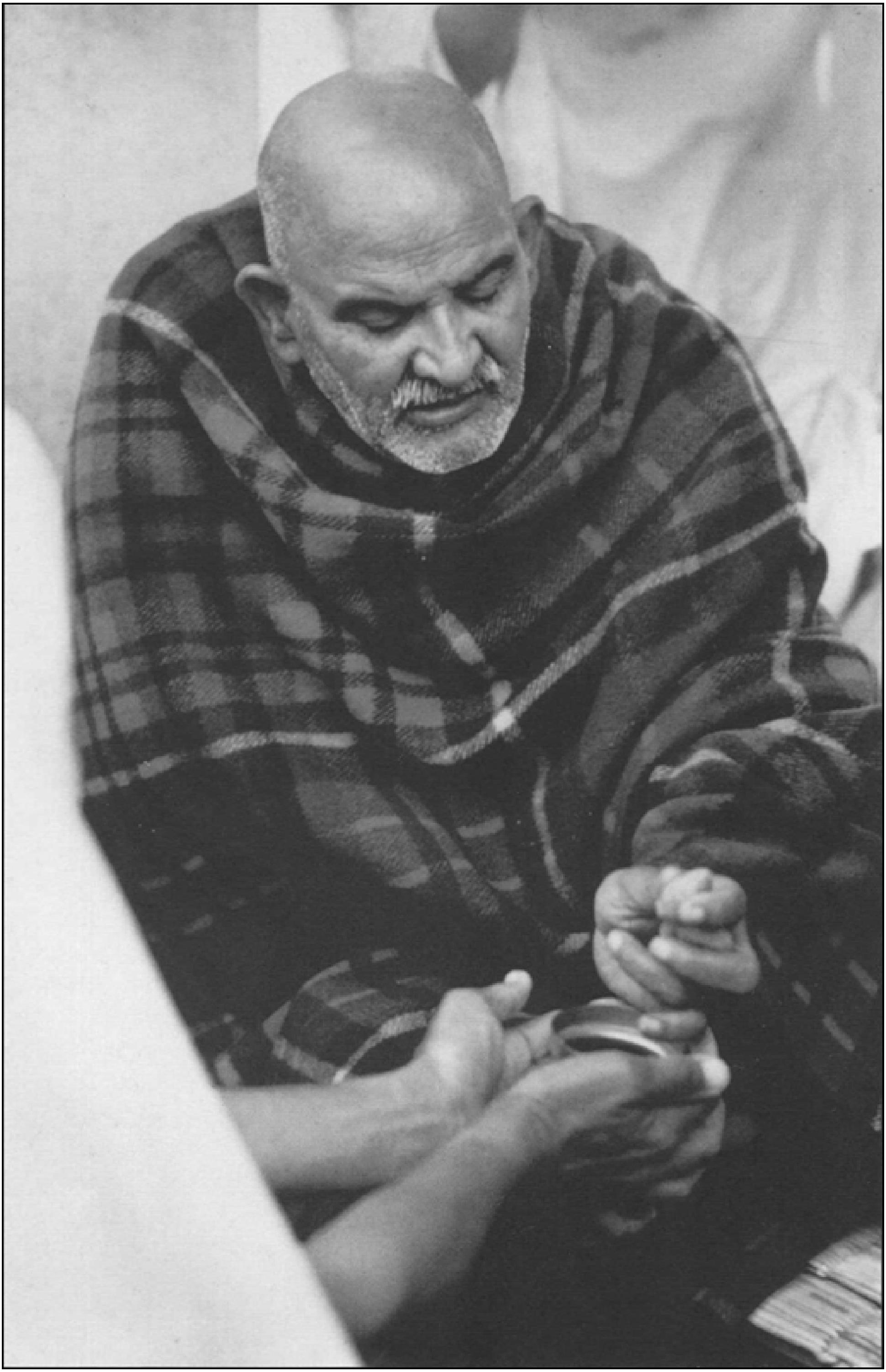

फोटो: बलराम दास

चाय लो

"चाय पी लो।"

“लेकिन महाराज जी, मैं पहले ही चाय पी चुका हूँ।”

"चाय ले लो।"

"ठीक है।"

“जाओ कन्ना (भोजन) ले आओ।”

“महाराज जी, मैंने अभी एक घंटा पहले ही खाना खाया है।”

“महाराज जी चाहते हैं कि आप अभी कन्ना लें।”

"ठीक है।"

“महाराज जी ने आपके लिए ये मिठाई भेजी हैं।”

लेकिन मैं और कुछ नहीं खा सका।

“महाराज जी की इच्छा है कि आप ये मिठाई खाएं।”

"ठीक है।"

“महाराज जी ने मुझे आपको चाय देने के लिए भेजा है।”

“अरे नहीं! फिर से नहीं!”

“मैं तो बस अपना कर्तव्य निभा रहा हूँ। यह महाराजजी की इच्छा है।”

"ठीक है।"

“दिल्ली से एक श्रद्धालु मिठाई से भरी एक बड़ी बाल्टी लेकर आया है। महाराजजी उसे बांट रहे हैं। वे चाहते हैं कि आप भी आएं।”

हे भगवान, मैं तो फट ही जाऊंगी।

“यह प्रसाद है।”

“धन्यवाद, महाराजजी। (अरे नहीं, सेब भी नहीं!) आह, धन्यवाद, महाराजजी।”

दर्शन के दौरान कई लोगों ने महाराजजी के शाश्वत और प्रेममय गुणों का अनुभव किया, वहीं उनके सामने आने वाले हर व्यक्ति ने उनके भोजन की चिंता को महसूस किया। अक्सर बैठने से पहले ही वे प्रसाद ग्रहण करने के लिए कहते थे। लोग कभी भी भूखे नहीं लौटते थे।

मैं कैलिफोर्निया के बर्कले में एक पेट्रोल पंप पर रुका, जिसे एक सिख व्यक्ति चला रहा था। मैंने सोचा कि मैं उसके साथ अपनी हिंदी का अभ्यास कर लूँ। जब उसे पता चला कि मैं कैंची के मंदिर में रुका था, तो उसने सबसे पहले कहा, "अरे, आप उस बाबा के हैं। मैं उनके यहाँ गया था। उन्होंने मुझे पूरियां खिलाईं। कोई और मुफ्त में खाना नहीं देता।"

मंदिर के आसपास के क्षेत्रों में या तीर्थयात्रा पर आए कई गरीब लोग अपने जीवनयापन के लिए मुफ्त में दिए जाने वाले भोजन पर निर्भर हो गए थे; लेकिन हममें से बाकी लोगों के लिए, इस तरह का अत्यधिक भोजन और भोजन के प्रति निरंतर चिंता यह संकेत देती थी कि भोजन किसी और चीज का प्रतीक है।

मेरी पहली प्रतिक्रिया वहाँ मौजूद सभी खाने-पीने की चीजों पर केंद्रित थी। मैं अभी-अभी नेपाल से लौटा था, जहाँ मैं लंबे समय तक एक गहन बौद्ध ध्यान साधना में था, और मैंने देखा

कि ये सभी लोग बैठकर पेट भर-भरकर खा रहे थे! मैंने सोचा, "अरे, इन्हें तो पता ही नहीं कि असली मज़ा क्या होता है। देखो तो ज़रा, ये कितने पेटू हैं!" फिर मैं खाने बैठ गया... और कुछ ही दिनों में मैं भी पेट भर-भरकर खाने लगा। मैंने पहले कभी ऐसा अनुभव नहीं किया था। सचमुच, मुझे खाने से कभी संतुष्टि नहीं मिलती थी। ऐसा लग रहा था मानो मैं अपनी आत्मा को तृप्त कर रहा हूँ।

राम

उन्होंने मुझे पेरा (एक मिठाई) खाने के लिए वापस दी, और हैरानी की बात है कि मैंने मना कर दिया। मेरे मन में यही था कि मेरा पेट पूरी तरह भर चुका था और इसे किसी और को खाना चाहिए था। इसलिए उन्होंने इसे किसी और को दे दिया।

एक और दर्शन में उन्होंने मेरे हाथों में ढेर सारे पेड़े भर दिए, जिन्हें मैंने तुरंत खा लिया। थोड़ी देर बाद उन्होंने मुझे एक और मुट्ठी भर पेड़े देने शुरू किए, जिसे मैंने यह सोचकर मना कर दिया कि मुझे काफी कुछ मिल चुका है। मेरे पीछे बैठे एक भारतीय को गुस्सा आ गया और उसने मुझसे कहा कि मुझे महाराजजी का प्रसाद कभी नहीं ठुकराना चाहिए, मुझे हमेशा वही ग्रहण करना चाहिए जो वे मुझे दें। तब, ज़ाहिर है, मुझे बुरा लगा। फिर महाराजजी ने मुझे एक और मुट्ठी भर पेड़े दिए, जिन्हें मैंने खुशी-खुशी ग्रहण कर लिया।

राम

मैं नवंबर में मंदिर पहुँचा और मार्च के अंत तक लगातार वहीं रहा। उस पूरे समय मुझे प्रतिदिन भरपेट भोजन मिलता रहा, फिर भी मुझसे कभी एक पैसा भी नहीं माँगा गया। यह बात मेरी समझ से परे थी। मैं एक अपेक्षाकृत धनी पश्चिमी नागरिक था, और भारतीय आर्थिक रूप से इतनी कठिन परिस्थितियों से गुजर रहे थे, फिर भी वे मुझसे कोई भुगतान नहीं लेते थे। इसलिए मैं चुपके से मंदिर में रखे दान पेटी में पैसे डालता रहा। (आर.डी.)

राम

मैं मंदिर के आसपास कहीं छिपने की कोशिश कर रही थी, उस आंगन के उस पार जहाँ से वे निकले थे। और जब वे निकले, तो लोगों ने मुझे धक्का देकर बिल्कुल दरवाजे तक धकेल दिया। मैं हमेशा दूर रहने और खुद को छिपाने की कोशिश करती थी, इसलिए जब मुझे उनके पास धकेला गया तो मैंने खंभे के पीछे छिपने की कोशिश की, लेकिन लोग मुझे धक्का देते रहे। और महाराजजी बाहर आए। मैं डरी हुई थी और रो रही थी। और महाराजजी ने मुझे एक नाशपाती दी। जब मैंने नाशपाती खाई तो मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे अंदर पानी भर आया हो। ऐसा लगा जैसे मैं जीवित प्रेम खा रही हूँ। उस दिन से यह नाशपाती हमेशा मेरे मन में बसी हुई है, और उस एहसास की बराबरी किसी और चीज ने नहीं की। उस दिन के बाद से मैंने कभी दूसरी नाशपाती नहीं खाई।

राम

एक बार, जब मेरी बेटी छोटी थी और हमारे साथ रहती थी, हम कैंची दर्शन के लिए जाते समय भोवाली में रुके। उसे जलेबी खानी थी, लेकिन वहाँ नहीं थी। मैंने कहा, "कैंची पहुँचकर वहाँ मिल जाएगी।" लेकिन जब हम वहाँ पहुँचे, तो पता चला कि वह हिंदू व्रत का दिन था—एकादशी (चंद्रमा के महीने का ग्यारहवाँ दिन)—और इसलिए केवल उबले हुए आलू ही परोसे जा

रहे थे। जैसे ही हम महाराजजी के कमरे में दाखिल हुए, हमें आश्चर्य हुआ कि एक आदमी जलेबी से भरी एक बड़ी टोकरी लेकर आया। महाराजजी ने मेरी बेटी की ओर इशारा करते हुए कहा, "पहले उस लड़की को थोड़ी दे दो।" उन्हें सब कुछ पता है!

राम

एक बार एक साधु मंदिर में आया और महाराजजी को फटकार लगाते हुए बोला, “आप लोगों के लिए कुछ नहीं करते। आप न तो लोगों को भोजन कराते हैं और न ही उनकी मदद करते हैं।”

महाराजजी ने कहा, “उसे एक कमरा, खाना और पैसा दो,” लेकिन सभी भक्तों का मन साधु को पीटने का कर रहा था। वे उसे एक कोने में ले गए ताकि उसे पीट सकें, लेकिन महाराजजी उन पर चिल्लाए। साधु के खाना खाने के बाद वह एकदम शांत हो गया। महाराजजी ने कहा, “तुम लोग यह नहीं समझते कि वह भूखा है। उसने तीन दिन से कुछ नहीं खाया है। वह इसके अलावा और क्या कर सकता था?”

राम

एक बार मैंने कहा, "आप इतने सारे लोगों को और इतनी अधिक मात्रा में भोजन क्यों कराते हैं? मैं चार चपातियाँ खाकर भी जीवित रह सकता हूँ।"

महाराजजी ने उत्तर दिया, “हमारे भीतर भोजन की प्यास है, जिसका हमें पता नहीं चलता। भले ही आपको लगे कि आप खा नहीं सकते, आपकी आत्मा को भोजन की प्यास है। प्रसाद ग्रहण करें!”

महाराजजी के आस-पास परोसे जाने वाले भोजन का स्वरूप ध्यान देने योग्य है, क्योंकि यद्यपि इससे हमारी आत्मा तृप्त होती थी, हमारा मन अक्सर भयभीत हो जाता था। मंदिर में सामान्य आहार में सफेद चावल, पूरियां और आलू (दोनों तले हुए) तथा लगभग शुद्ध सफेद चीनी से बनी मिठाइयाँ शामिल थीं। आहार में स्टार्च, वसा और चीनी के साथ-साथ बहुत सी काली चाय होती थी। आहार को लेकर पश्चिमी देशों की अत्यधिक चिंता ने हमारे भीतर जो संवेदनशीलता जगाई थी, वह इस आहार को देखकर दंग रह गई। और फिर भी, यही "प्रसाद" था। क्या आपने प्रसाद को अस्वीकार किया, या आपने अपने आहार संबंधी आदर्शों को त्याग दिया? जब प्रेम स्टार्च, वसा, चीनी और चाय के रूप में आया, तो आपने क्या किया? तैलीय आलू एक बात थी; लेकिन गुरु का आशीर्वाद बिल्कुल अलग बात थी।

पहले मेरा मानना था कि संत को खान-पान के मामले में कुछ पाबंदियों का पालन करना चाहिए। मैं कभी चाय-कॉफी नहीं पीता था और बहुत ही सादा, कम भोजन करता था। मैं कभी दवाइयां नहीं लेता था। मुझे आश्चर्य होता था कि लोग इतनी सारी गोलियां कैसे खा लेते हैं। महाराजजी के जाने के बाद मुझे सर्दी लग गई। पहले तो डॉक्टरों ने सोचा कि यह फ्लू है, फिर उन्होंने कहा कि यह एक गंभीर बीमारी है। इसलिए मुझे ठीक होने के लिए दिन में पंद्रह गोलियां खानी पड़ीं। यह सब महाराजजी की ही देन थी। डॉक्टरों ने मुझे वजन बढ़ाने के लिए भी कहा, इसलिए मैं सुबह 6:00 बजे से रात 10:00 बजे तक खाता रहा। मुझे आश्चर्य हुआ कि मैं इतना कैसे खा सकता हूं, जबकि पहले मैं एक बार के भोजन में सिर्फ दो चपातियां ही खाता था। मेरे सारे पुराने विचार बदल गए।

यह कुछ वैसा ही था जैसा कैंची आने पर हुआ था, इससे पहले मैं कभी चाय नहीं पीता था। कैंची में पहले दिन मैंने चाय नहीं पी, और दूसरे दिन जब महाराजजी ने मुझसे पूछा कि क्या मैं चाय पीना चाहूँगा, तो मैंने कोई जवाब नहीं दिया। तीसरे दिन सुबह उन्होंने मुझसे पूछा, “क्या तुम चाय पीना चाहते हो? तुम नहीं पीना चाहते। यहाँ तुम्हें चाय पीनी चाहिए। यह बहुत ठंडी जगह है!” तो इस बार मैंने चाय पी ली, और उस दिन से मैं कुछ भी पी लेता हूँ—चाय, कॉफ़ी, कुछ भी।

महाराजजी जब आहार के बारे में बात करते थे, तो वे आम तौर पर उन पोषण संबंधी मुद्दों को नज़रअंदाज़ कर देते थे जिनसे हममें से कुछ लोग चिंतित थे, लेकिन उन्होंने हमें "सादा भोजन" करने का सुझाव ज़रूर दिया। उन्होंने हमें उस क्षेत्र का स्थानीय भोजन खाने की भी सलाह दी जहाँ हम रह रहे थे। फिर उन्होंने विभिन्न भक्तों को आहार के बारे में विशेष निर्देश दिए, जैसे कि एक को शराब, मांस, अंडे और तीखे मसाले छोड़ने की सलाह दी, "क्योंकि ये हृदय को अशुद्ध करते हैं।" वहीं दूसरे से उन्होंने कहा, "मांस क्या है और क्या नहीं, इस बात की चिंता क्यों? जब आप मांस के बिना रह सकते हैं, तो अच्छी बात है। जब आप इसके बिना नहीं रह सकते, तो आपको इसे खाना चाहिए।" कुछ को उन्होंने "अकेले, चुपचाप, सादगी से या कुछ लोगों के साथ भोजन करने" की सलाह दी; दूसरों को उन्होंने महीने में तीन बार उपवास के महत्व के बारे में निर्देश दिए, हालाँकि जब आप उनके आसपास होते थे तो वे आपके किसी भी उपवास को भंग कर देते थे। निर्देशों की इस उलझन से हममें से अधिकांश को यही लगा कि वे हमें नियमों में बहुत अधिक उलझने के बजाय अपनी अंतरात्मा पर भरोसा करने की सलाह दे रहे थे। कम से कम, हम यही सुनना चाहते थे।

क्योंकि उन्होंने हम सभी को प्रेम और ध्यान से भरपूर भोजन दिया, इसलिए हमने भी उनका आभार व्यक्त करने के तरीके खोजे। फिर भी उनका जीवन इतना सरल था कि देने के लिए कुछ भी नहीं था, इसलिए अधिकांश लोग फूल या भोजन, विशेषकर फल और मिठाई लाते थे। वे स्वयं अपने हाथों से भोजन बाँटते थे या भोजन को स्पर्श करके बाँटते थे। महाराजजी जैसे व्यक्ति द्वारा इस प्रकार स्पर्श या आशीर्वाद देने से भोजन कंपन के माध्यम से भौतिक पदार्थ से प्रसाद में परिवर्तित हो जाता था। महाराजजी जैसे व्यक्ति के भौतिक स्वरूप के अभाव में, भोजन ग्रहण करने से पहले भक्त के हृदय और मन में भोजन अर्पित किया जाता है। यदि भोजन शुद्ध रूप से अर्पित किया जाता है, तो जिन प्राणियों को यह अर्पित किया जाता है, वे भोजन से सार ग्रहण करते हैं। फिर हम बचा हुआ भोजन खाते हैं, जो प्रसाद बन जाता है। पश्चिम में, यह भोजन से पहले प्रार्थना करने के समान होगा।

महाराजजी मंदिर की रसोई से परोसे जाने वाले भोजन की गुणवत्ता को लेकर भी निरंतर चिंतित रहते थे। वे रसोइयों को बुलाकर भोजन की जाँच करते थे। यदि भोजन खराब होता, तो वे चिल्लाते; यदि भोजन अनावश्यक रूप से भव्य होता, तो वे चिल्लाते।

जब मैं पहाड़ी पर उस छोटी सी कुटिया में रहता था, तब महाराजजी हर शाम मुझे खाने का एक डिब्बा देकर भेजते थे। लेकिन जब वे मुझे वह डिब्बा देते थे, तो हमेशा उसे अच्छे से जांचते थे, हर जगह हाथ डालकर देखते थे।

राम

महाराजजी माताओं से कहते थे कि भोजन पकाने की प्रक्रिया में उत्पन्न होने वाली ऊर्जा का आपके मन पर निश्चित रूप से प्रभाव पड़ता है। वे कहते थे कि यदि आप सचमुच भोजन को प्रसाद मानकर पकाएँ, तो यह आपको शुद्ध करेगा। लेकिन एक अत्यंत पवित्र व्यक्ति भी, यदि उचित चेतना के बिना तैयार किया गया भोजन खा ले, तो वह भोजन उसके मन में भ्रम उत्पन्न कर देगा। उन्होंने कहा कि शुद्ध रूप से तैयार किया गया भोजन खाने से योगी महान बनता है।

राम

बाज़ार से मैंने महाराजजी को देने के लिए हरे बेरों के कुछ गुच्छे खरीदे। वे थोड़े गंदे थे, इसलिए मैंने उन्हें बहुत सावधानी से धोया। फिर मैंने उन्हें थैले में वापस रख दिया। लेकिन आप जानते ही हैं कि भारतीय थैलों का क्या हाल होता है। थैला फट गया और बेर ज़मीन पर बिखर गए, इसलिए मैंने उन्हें फिर से एक-एक करके सावधानी से धोया। इसमें बहुत समय लग गया। आखिरकार मैं उन्हें महाराजजी के पास ले गई; ज़ाहिर है, बाकी सब लोग भी फल लाए थे। लेकिन जैसे ही मैंने उन्हें रखा, महाराजजी बहुत उत्साहित हो गए। उन्होंने उन्हें बड़े ध्यान से फैलाया, गौर से देखा, उनमें से कई खुद खा लिए और बाकी को खास तौर पर कीमती समझकर बाँट दिया। मुझे लगा कि उन्होंने बेरों को तैयार करने में मेरे प्यार और देखभाल को महसूस कर लिया था।

राम

कुछ समय तक महाराजजी केवल एक खास माँ के हाथ का बना खाना ही खाते थे। उन्होंने मुझे बताया कि अगर कभी वो बहुत व्यस्त होतीं और किसी और ने खाना बनाने में उनकी मदद की होती, तो महाराजजी उसे खाने से मना कर देते थे। उन्होंने बताया कि कभी-कभी वो उनसे झूठ बोल देती थीं ताकि वो खाना खा लें—वो कहती थीं कि खाना उन्होंने खुद बिना किसी की मदद के बनाया है। फिर भी वो उसे ठुकरा देते थे। लगता था उन्हें फर्क महसूस हो जाता था।

राम

मेरे ब्राह्मण दादाजी ने परंपरा के अनुसार अकेले ही भोजन किया। यह भोजन विशेष रूप से मेरी पत्नी ने उनके लिए तैयार किया था। उन्होंने खाना शुरू ही किया था कि महाराजजी आ गए, इसलिए पिताजी ने और भोजन तैयार करने का आदेश दिया। मेरी पत्नी महाराजजी को एक विशेष व्यंजन देना चाहती थी जो उसने दादाजी के लिए बनाया था, इसलिए उसने थोड़ा सा व्यंजन महाराजजी को दे दिया। पिताजी क्रोधित हो गए।

"आप महाराजजी को ताजा बने भोजन के अलावा और क्या दे सकते हैं?" उन्होंने मेरी पत्नी से पूछा।

तब महाराजजी ने उन्हें बुलाया और कहा, "साधु ने ताजा बना हुआ भोजन ग्रहण किया। इतने शुद्ध प्रेम से अर्पित किया गया विशेष भोजन भगवान ने ग्रहण किया।"

अधिकांश समय महाराजजी अकेले ही भोजन करते थे और हम भक्तों द्वारा लाए गए सभी प्रसाद को बाँट देते थे। लेकिन जब हम फल या अन्य भोजन लाते थे, तो हम सबकी दिली इच्छा होती थी कि महाराजजी स्वयं भी उसमें से कुछ खा लें। और जब वे ऐसा करते थे, तो वह एक अनमोल क्षण जैसा लगता था, मानो महाराजजी ने आपके प्रेम का प्रतीक स्वीकार कर लिया हो।

एक बार जब मैं एक नरम सेब लेकर आया, उसे छीलकर काटा और उसके सामने वैसे ही

दिखाया जैसे मैंने आदिवासियों को करते देखा था, तो उसने नीचे झुककर मेरे हाथ से कुछ टुकड़े ले लिए... और मुझे वह आनंद महसूस हुआ जो तब होता है जब कोई जंगली पक्षी या हिरण आकर आपके हाथ से सेब खा ले। (आर.डी.)

राम

कैंची के आश्रम में रहते हुए मुझे महाराजजी को भेंट करने के लिए कुछ खरीदने का अवसर बहुत कम मिलता था। एक दिन किसी तरह मुझे एक अनार मिल गया। मैंने दोपहर बाद तक इंतज़ार किया जब महाराजजी पीछे की ओर चलकर आते और स्नानघर के सामने खुले में दर्शन देते। आखिरी बस के जाने के बाद, कुछ ही आश्रमवासी, कभी-कभार कोई वीआईपी या व्यापार के सिलसिले में आया कोई ग्रामीण ही दर्शन के लिए उपस्थित होते थे। वह एक अंतरंग क्षण था जो मेरी यादों में घाटी के उस पार पहाड़ियों पर डूबते सूरज की तरह चमकता है।

मैं अनार से बीज निकाल कर उन्हें दे रही थी। वे कुछ बीज खाते और कुछ दूसरों को देते, और जब बीज छिल जाते तो मैं उन्हें कुछ और दे देती। जब मेरे बीज खत्म होने वाले थे, तो एक भारतीय महिला ने अपने मुट्ठी भर रत्न जैसे बीज मेरे पास रख दिए ताकि मैं उन्हें और दे सकूँ। जब तक वे बीज खत्म हुए, तब तक उन्होंने मुझे कुछ और दे दिए। यह सिलसिला बड़े सहज तरीके से चलता रहा। हम सब, महाराजजी समेत, ऐसे व्यवहार कर रहे थे मानो कुछ भी असामान्य न हो रहा हो। जाहिर है, उन्हें भी मेरी तरह महाराजजी को हमारी भेंट स्वीकार करते और खाते देखकर और उनके साथ यह आनंददायक खेल खेलकर बहुत खुशी हो रही थी।

राम

मैंने महाराजजी के लिए एक दर्जन संतरे खरीदे। हम उस छोटे से मंदिर में पहुँचे जहाँ महाराजजी दर्शन के लिए आए हुए थे और जहाँ पहले से ही कई भारतीय श्रद्धालु जमा थे और उनके कमरे में भीड़ लगी हुई थी। जैसे ही हमारी मौजूदगी का पता चला, हमें उस लकड़ी की मेज के ठीक सामने धकेल दिया गया जिस पर महाराजजी बैठे थे। मैंने उन्हें संतरे भेंट किए। मेज पर पहले से ही बहुत सारे फल और कुछ मिठाइयाँ रखी थीं। लेकिन तभी कुछ ऐसा हुआ जिसने मुझे चौंका दिया। महाराजजी मेरे संतरों पर ऐसे टूट पड़े मानो उन्होंने पहले कभी खाना देखा ही न हो। जैसे ही एक संतरा खुलता, वे उसे झटपट खा जाते। और मेरी आँखों के सामने ही उन्होंने आठ संतरे खा लिए। महाराजजी के आग्रह पर स्कूल के प्रधानाचार्य मुझे बाकी चार संतरे खिला रहे थे।

बाद में मैंने अपने एक करीबी भारतीय मित्र के.के. से इस विचित्र व्यवहार के बारे में पूछा। के.के. ने समझाया कि महाराजजी मुझसे "कर्म का फल भुगत रहे थे" और यह एक ऐसी तकनीक थी जिसका वे अक्सर इस्तेमाल करते थे। (आर.डी.)

कर्मों को अपने ऊपर लेने का अर्थ यह है कि महाराजजी जैसे कोई परम उच्च सत्ता सूक्ष्म कंपन पैटर्न के साथ कार्य कर सकती है और भक्तों से उन पैटर्न को दूर कर सकती है जिनमें वे इस जन्म या कई जन्मों से फंसे हुए हैं। उदाहरण के लिए, ऐसी सत्ता आपका दुख या दुर्भाग्य दूर कर सकती है।

यह प्रक्रिया, जो भारतीय संतों के साथ-साथ दुनिया के कई हिस्सों के जादूगरों और वैद्यों के बीच भी प्रचलित है, कई तरीकों से की जा सकती है। अक्सर वैद्य किसी नकारात्मक शक्ति के प्रभाव से पीड़ित व्यक्ति के बालों के गुच्छे, मल या मूत्र का उपयोग करते हैं, चाहे वह शक्ति

उनके भीतर हो या बाहर। भारत में, ऐसे कर्मिक उपचारक अक्सर भक्तों द्वारा दी गई वस्तुओं का उपयोग करते हैं। भारत के एक महान संत, शिरडी साई बाबा, अपने भक्तों से अन्न मांगते थे, जो एक पैसे से भी कम मूल्य के छोटे सिक्के होते हैं। वे इन्हें तब तक लगातार स्पर्श करते रहते थे जब तक कि वे भक्त से नकारात्मक स्थिति को स्वयं में समाहित नहीं कर लेते। फिर वे अन्य योगिक प्रक्रियाओं द्वारा इस नकारात्मक पदार्थ को स्वयं से मुक्त कर देते थे। भारत के एक अन्य प्रसिद्ध गुरु अपने भक्तों से सिगरेट मांगते हैं और साल दर साल सुबह से रात तक, अक्सर एक बार में तीन या चार सिगरेट पीते हैं। महाराजजी का तरीका कर्म को भस्म करना था, और ऐसा लगता था कि उनकी क्षमता की कोई सीमा नहीं थी। एक महिला, जो उनकी लंबे समय से भक्त थीं, ने निम्नलिखित कहानी सुनाई:

भूमिधर पहुँचकर, जहाँ महाराजजी रात ठहरे थे, हम सबने रात का भोजन कर लिया था और रात 10:30 बजे सो गए थे। लगभग 1:00 बजे महाराजजी ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगे कि उन्हें बहुत भूख लगी है और उन्हें दाल-चपाती चाहिए। मैं जाग गया और उन्हें याद दिलाया कि वे पहले ही खाना खा चुके हैं। लेकिन वे दाल-चपाती खाने पर अड़े रहे। भला ऐसे व्यक्ति के व्यवहार को कौन समझ सकता है? इसलिए मैंने ब्रह्मचारी बाबा (पुजारी) को जगाया और उन्होंने आग जलाकर खाना तैयार किया। लगभग 2:00 बजे खाना तैयार हो गया और हमने देखा कि महाराजजी बड़ी भूख से खाना खा रहे थे। फिर हम सब दोबारा सो गए। अगली सुबह लगभग 11:00 बजे एक टेलीग्राम आया जिसमें लिखा था कि महाराजजी के एक पुराने भक्त का पिछली रात 2:00 बजे मैदानों में (लगभग 150 मील दूर) निधन हो गया है। जब महाराजजी को टेलीग्राम पढ़कर सुनाया गया तो उन्होंने कहा, "देखिए, इसीलिए मुझे चपाती और दाल की ज़रूरत थी।" यह सुनकर हमारी जिज्ञासा बढ़ गई, क्योंकि हमें कुछ भी समझ नहीं आया था। हमने उनसे बार-बार पूछा, लेकिन उन्होंने कुछ नहीं कहा। आखिरकार दो-तीन दिन तक लगातार पूछने के बाद उन्होंने कहा, "क्या आपको समझ नहीं आ रहा? वह (जिस व्यक्ति की मृत्यु हुई थी) चपाती और दाल की कामना कर रहा था, और मैं नहीं चाहता था कि उसकी यह इच्छा मृत्यु के बाद भी बनी रहे, क्योंकि इससे उसके अगले जन्म पर असर पड़ेगा।"

कभी-कभी घरों में जाते समय वह दरवाजे पर आकर कहता कि उसे बहुत भूख लगी है और पूछता कि क्या वह खाना खा सकता है। बहुत गरीब घरों में, जहाँ शायद खाने की कोई व्यवस्था न हो, वह बस इतना कहता कि उसे बहुत प्यास लगी है और पानी माँगता।

लखनऊ में, महाराजजी कुछ लोक निर्माण अधिकारियों को कार में बिठाकर शहर के सबसे गरीब इलाके में ले गए, जहाँ ये अधिकारी सड़कों और स्वच्छता का ठीक से ध्यान नहीं रखते थे। एक झोपड़ी से उन्होंने एक मुसलमान को (जिसे महाराजजी ने "मुसलमान" कहा) बुलाया और वे गले मिले, फिर महाराजजी ने कहा,

"मुझे बहुत भूख लगी है।"

"लेकिन महाराज जी, मेरे पास खाना नहीं है।"

"अरे! दुष्ट! तुमने छत में दो रोटियाँ छिपा रखी हैं!"

वह आदमी यह जानकर हैरान रह गया कि महाराजजी को पता था, और उसने प्रसाद ले लिया। हालाँकि महाराजजी और अधिकारियों ने अभी-अभी भोजन किया था, उसने एक प्रसाद

बड़े चाव से खाया और दूसरा अधिकारियों को दे दिया, जिनमें हिंदू ब्राह्मण भी शामिल थे, जो कभी किसी मुसलमान के हाथ का बना खाना नहीं खाते थे, और कहा, "प्रसाद ग्रहण करो!"

राम

जब महाराजजी आखिरी बार लखनऊ के मंदिर में आए, तो वे आने वाले हर व्यक्ति से (यदि वे मिठाई ला सकते थे) कहते थे, “जाओ! मिठाई ले आओ,” और जब वे मिठाई लेकर लौटते, तो वे उसे बाँट देते थे, उस दिन लगभग पंद्रह सौ रुपये की मिठाई बाँटी गई थी। एक डॉक्टर ने एक हजार रुपये की मिठाई खरीदी, और उनकी निजी समस्या हल हो गई।

सन् 1939 से 1949 के बीच, जब महाराजजी नैनीताल जैसे किसी कस्बे में आते थे, तो सभी महिलाएं इस उम्मीद में भोजन तैयार करती थीं कि वे उनके घर आएंगे। वे ऐसा प्रेम और सेवा भाव से करती थीं, साथ ही इस भावना से भी कि ऐसे संत को भोजन कराना एक आशीर्वाद है। के.के., जो सुबह से लेकर देर रात तक उनके साथ रहते थे, ने एक बार उन्हें एक ही दिन में बीस बार भरपेट भोजन करते देखा था। एक अन्य ने बताया कि उन्होंने लगातार दस बार भोजन किया था। और यदि आप भारत गए हैं और भारतीय घरों की मेहमाननवाजी को समझते हैं, जहां अतिथि को भगवान के समान माना जाता है, तो आप भोजन की विशाल मात्रा और खिलाने के प्रति निरंतर लगन की सराहना करेंगे। एक भारतीय भोजन एक सामान्य मनुष्य के लिए पर्याप्त से भी अधिक होता है।

लेकिन शायद महाराजजी की अपार क्षमता आहार संबंधी आवश्यकताओं के अलावा किसी और चीज का प्रतिनिधित्व करती थी।

एक सुबह महाराजजी ने आश्रम में मौजूद लोगों से कहा, “तुम लोग मुझे खाना नहीं खिला सकते और न ही मेरी देखभाल कर सकते हो। मैं माँ के पास जा रहा हूँ। वो मुझे खाना खिलाएँगी।” और वे उत्तर भारत की महान संत आनंदमयी माँ के आश्रम के लिए निकल पड़े। पूरी यात्रा के दौरान वे यही कहते रहे, “वो मुझे खाना खिलाएँगी। मैं माँ के दर्शन करने जा रहा हूँ। वो मुझे खाना खिलाएँगी।” फिर वे पाँच साल के बच्चे की तरह दर्शन कक्ष में पहुँचे, उनका कंबल चारों ओर उड़ रहा था। माँ वहाँ बैठी थीं और वे कह रहे थे, “माँ! मुझे खाना खिलाओ। मुझे खाना खिलाओ, माँ!” माँ ज़ोर से हँस पड़ीं। उनके लिए एक बड़ा भोजन लाया गया और उन दोनों ने मिलकर उसे सभी भक्तों में बाँट दिया।

महाराजजी बार-बार हमें लोगों को भोजन कराने का आदेश देते थे। उनकी चिंता केवल अपने भक्तों के लिए ही नहीं, बल्कि सभी भूखे लोगों के लिए थी। वे कहते थे, “भगवान भूखों को भोजन के रूप में भोजन देते हैं।” और रसोइयों से वे कहते थे, “भोजन बनाना भगवान की सेवा है। लोगों को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है।”

वे अक्सर कहते थे कि तुम्हें हर चीज़ की, हर प्राणी की सेवा करनी चाहिए। “यह सब ईश्वर की रचना है। हर किसी की सेवा करो, चाहे वह डाकू हो या कोई और। अगर कोई भूखा तुम्हारे पास आए, तो उसे भोजन दो।” वे अक्सर कहते थे, “हर किसी को भोजन पाने का अधिकार है।”

महाराजजी के स्वयं के व्यवहार ने हमारे लिए एक शानदार उदाहरण प्रस्तुत किया।

अपने दर्शन के लिए आने वाले सभी लोगों को भोजन कराने के अलावा, वे लगातार बड़े

भंडारों (सामूहिक रूप से सभी के लिए मुफ्त भोजन के आयोजन, जिनमें धनी, गरीब, भिखारी और कुष्ठ रोगी भी शामिल होते थे) का आयोजन करते रहते थे। लोगों को उनके आते ही भोजन कराया जाता था, क्योंकि महाराजजी ने निर्देश दिया था, "भूखे व्यक्ति को प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। ऐसे व्यक्ति को भूख लगने पर ही भोजन कराया जाना चाहिए।"

इन विशाल भंडारों में, जहाँ अक्सर एक हज़ार या उससे अधिक लोगों को भोजन परोसा जाता था, कई भक्त भोजन तैयार करने और परोसने में मदद करने के लिए होड़ लगाते थे। यहाँ न्यायाधीश और व्यापारी, शिक्षक और राजनेता, सभी आलू छीलते, बड़े-बड़े बर्तनों में खाना पकाते या बड़े चम्मचों से हलवा या चावल परोसते नज़र आते थे। कुंभ मेले तो और भी अधिक उत्सवपूर्ण होते थे। ये भारत भर से लाखों साधुओं, संतों और साधकों का जमावड़ा होता था, जो शुभ ज्योतिषीय मुहूर्त में तीन नदियों - गंगा, यमुना और सरस्वती (एक भूमिगत आध्यात्मिक नदी) के संगम में स्नान करने आते थे। यह एक विशाल आध्यात्मिक मेले की तरह होता था जो एक महीने या उससे अधिक समय तक चलता था। मेलों में महाराजजी के तम्बू में आमतौर पर कम से कम एक महीने तक प्रतिदिन 250 से 500 लोगों को भोजन परोसा जाता था। इतने सारे आलू छीलने पड़ते थे!

इन समारोहों के दौरान महाराजजी ने भक्तों से कड़ी मेहनत की मांग की, और कई भक्तों ने इन अनुभवों को अनुशासन के प्रशिक्षण के रूप में देखा। एक भक्त ने इस अनुभव का वर्णन इस प्रकार किया:

मेले में खिचड़ी (चावल और दाल का मिश्रण) तैयार की गई, लेकिन परोसने का चम्मच बहुत भारी था और जल्द ही परोसने वाले थककर कम मात्रा में ही भोजन परोसने लगे। परिणामस्वरूप, भिखारी पेट भरने के लिए बार-बार कतार में खड़े होते रहे। अंत में महाराजजी के एक भक्त को बहुत गुस्सा आया और तभी महाराजजी चित्रकूट (राम भक्तों का पवित्र स्थान) से वहाँ पहुँचे। उन्होंने सभी को फटकारा और कहा कि वे क्रोध से भोजन नहीं परोस सकते और सभी को भरपेट भोजन दें।

एक अन्य व्यक्ति ने बताया कि भक्तों को उनकी कड़ी मेहनत के लिए प्रशंसा तक नहीं मिली:

लोग मेलों और भंडारों में चाहे कितनी भी मेहनत करें, महाराजजी कहते थे, "तुम लोग खेल रहे हो और कुछ नहीं कर रहे हो। तुम लोग हमेशा सोते रहते हो।"

हालांकि लोग लगातार महाराजजी के लिए भोजन लाते रहते थे, जिसे वे बांटते थे, फिर भी कभी-कभी देने वालों की तुलना में लेने वालों की संख्या अधिक हो जाती थी। ऐसे समय में ही पारखी दृष्टि ने महाराजजी को अन्नपूर्णा की सिद्धि के रूप में प्रकट होते देखा। अन्नपूर्णा अन्न की देवी हैं, जो दिव्य माँ का वह रूप हैं जो ब्रह्मांड को पोषण प्रदान करती हैं। अन्नपूर्णा की सिद्धि प्राप्त व्यक्ति अपने भंडार से लगातार भोजन बांटता रह सकता है, फिर भी वह भंडार भरा रहेगा।

राम

जब मैं छोटा था, मंदिर में एक पर्व के दिन विशेष मिठाइयाँ बाँटी जा रही थीं। महाराजजी ने मुझे एक छोटे से पत्ते के प्याले में ये मिठाइयाँ दीं, जो उन्होंने खास मेरे लिए रखी थीं। फिर उन्होंने कहा, "ये मिठाइयाँ मुझे वापस दे दो।" तो मैंने उन्हें मिठाइयाँ दे दीं, क्योंकि मुझे उन पर बहुत विश्वास था। उन्होंने प्याला अपने कंबल के नीचे रख दिया और वहीं से मिठाइयाँ बाँटने लगे। मुझे

नहीं पता उन्होंने ये कैसे किया, लेकिन उन्होंने कम से कम हज़ार लोगों की उस विशाल भीड़ में हर किसी को मुट्ठी भर मिठाइयाँ दीं। मैं बहुत हैरान था। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि वो मुझसे ज़्यादा मिठाइयाँ कैसे बाँट रहे हैं, इसलिए एक बच्चे की तरह मैंने अपना हाथ उनके कंबल के नीचे डाला और प्याला निकालकर देखा। महाराजजी मेरी तरफ मुड़े और बोले, “अब जादू खत्म हो गया।”

राम

एक व्यक्ति महाराजजी के पास कुछ संतरे लेकर आया और उन्हें उनके बगल में रखी एक खाली टोकरी में रख दिया। महाराजजी ने कमरे में मौजूद लोगों को और फिर मंदिर में मौजूद अन्य लोगों को संतरे बांटने शुरू कर दिए। वह व्यक्ति आठ संतरे लाया था, और महाराजजी ने कुल अड़तालीस संतरे बांट दिए।

राम

मेले में बहुत से लोग तम्बू में आए और महाराजजी ने हमें उन सभी लोगों के लिए चाय बनाने को कहा। कोई भी महाराजजी को यह बताना नहीं चाहता था कि उनके पास दूध खत्म हो गया है। आखिरकार किसी ने बता ही दिया, और महाराजजी ने कहा, “जाओ गंगा से पानी का एक बर्तन ले आओ और उसे कपड़े से ढक कर रखो।” उस दिन और उस रात आधी रात तक, भरपूर मात्रा में दूध वाली चाय मिलती रही।

राम

महाराजजी ने प्रसाद बाँटते हुए मुझे अपने पास बैठने के लिए बुलाया। वे एक छोटी सी थाली में रखे कुछ बिस्कुट खा रहे थे। महाराजजी ने मुझे बिस्कुट देने शुरू किए, वे अपने हाथ से बिस्कुट की थाली से बिस्कुट निकाल रहे थे। वे लगातार बिस्कुट निकालते रहे, यहाँ तक कि मेरे दोनों हाथ भर गए और प्रसाद की मात्रा इतनी अधिक हो गई कि मैं उन्हें अलग नहीं कर पा रहा था। इससे पहले मैं महाराजजी को देखकर परेशान था, सोच रहा था, "प्रसाद बाँटा जाना चाहिए, फेंका नहीं जाना चाहिए।" वे यह बात जानते थे, और इसीलिए उन्होंने मुझे वापस बुलाया और मेरे हाथों में प्रसाद देना शुरू किया।

राम

एक बार महाराजजी ने मुझे इलाहाबाद में फोन करके बताया कि वे वृंदावन आए हैं। जब मैं वृंदावन आश्रम पहुँचा, तो वहाँ कुछ ही लोग थे। एक महिला दर्शन के लिए आई और अपने साथ सेबों से भरा एक थैला लाई। आप कल्पना भी नहीं कर सकते कि वे कितने बड़े और रसीले दिख रहे थे। महाराजजी ने उन्हें बाँटना शुरू किया और मुझे लगा कि वे मुझे भी एक सेब देंगे। लेकिन उन्होंने नहीं दिया। उन्होंने कुछ सेब दूसरे भक्तों को दिए और बाकी उस महिला को वापस दे दिए। उसने मुझे भी एक सेब नहीं दिया। अरे, उसने उन्हें अपने थैले में कितनी मजबूती से बाँध रखा था!

कुछ देर बाद महाराजजी आंगन पार करके अकेले एक कमरे में गए और वहाँ रखे तंबू पर बैठ गए। फिर उन्होंने मुझे अकेले बुलाया। पता नहीं कहाँ से आया, लेकिन उन्होंने अपना हाथ तंबू पर रखा और मुझे एक सेब दिया—जो उस औरत द्वारा दिए गए सेबों से भी बड़ा और रसीला था। फिर उन्होंने मुझे एक और सेब दिया। मुझे नहीं पता कि वे सेब कहाँ से आए थे क्योंकि मैंने खुद

देखा था कि उन्होंने उस औरत से कोई सेब नहीं छिपाया था!

राम

मैं महाराजजी के साथ इलाहाबाद से वृंदावन तक ट्रेन से जा रहा था। स्टेशन पर, ट्रेन में चढ़ने से पहले, मेरी नज़र बड़े-बड़े रसीले संतरों पर पड़ी। एक पल के लिए मेरा मन हुआ कि रुककर कुछ खरीद लूँ, लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। ट्रेन में चढ़ने के बाद, मेरा ध्यान कुछ पल के लिए भटका और जब मैंने दोबारा महाराजजी की ओर देखा, तो उनके पास संतरों से भरी एक बहुत बड़ी टोकरी थी! मुझे नहीं पता कि वे कहाँ से आए थे, लेकिन वे स्टेशन पर देखे गए संतरों से कहीं बेहतर थे।

जब महाराजजी ने मुझे एक संतरा दिया, तो मैंने उसे अपनी दाहिनी जेब में रख लिया। दूसरा संतरा मैंने बाईं जेब में रख लिया। उनसे मेरी जेबें इतनी फूल गईं कि मैं औरत जैसा दिखने लगा! फिर उन्होंने मुझे तीसरा संतरा दिया, जिसे मैंने अपनी एक जेब में रख लिया, और चौथा दूसरी जेब में। और वे मुझे इतने संतरे देते रहे कि मुझे उन्हें अपनी कमीज के आगे-पीछे के हिस्से में पकड़ना पड़ा। उन्होंने मुझे इतने संतरे दिए कि मैं मुश्किल से हिल पा रहा था! मैंने ये मीठे संतरे दूसरों को देना शुरू कर दिया और कहने लगा, “आज मेरे पास जो सबसे अच्छा प्रसाद है, वह यही है।” आज तक मुझे नहीं पता कि उन्हें वे संतरे कहाँ से मिले।

राम

1966 में कुंभ मेले में महाराजजी गंगा के किनारे दो या दो से अधिक साधुओं के साथ बैठे थे। उन्होंने हमें गंगाजल का एक लोटा लाने को कहा। उन्होंने उसे कुछ मिनटों तक पकड़े रखा और फिर हमें उसे बांटने को कहा। वह दूध था।

अपने सबसे करीबी भक्तों को छोड़कर, महाराजजी इन शक्तियों को छुपाने की प्रवृत्ति रखते थे और अक्सर एक झूठी कहानी का सहारा लेते थे ताकि ऐसा लगे कि अतिरिक्त भोजन से उनका कोई लेना-देना नहीं है।

जब महाराजजी ने एक ऐसे स्थान पर हनुमान मंदिर की स्थापना की जो पहले एक कब्रिस्तान हुआ करता था, तो भटकती आत्माओं को मुक्त करने के लिए एक बड़ा भंडारा आयोजित किया गया। देर रात पता चला कि घी खत्म हो गया है। भंडारगृह का प्रभारी महाराजजी के पास गया और उन्हें बताया कि घी की कमी है, हालांकि बहुत से लोग अभी भी भोजन करने आ रहे हैं। वे कैसे व्यवस्था करें? महाराजजी ने उत्तर दिया, "वहाँ जाओ और खाली डिब्बों में देखो! तुम्हें कहीं न कहीं एक भरा हुआ डिब्बा मिल जाएगा।" हालांकि उस व्यक्ति को पता था कि सभी डिब्बे खाली थे, क्योंकि उसने स्वयं जाँच और गिनती की थी, फिर भी वह गया। और वास्तव में, उसे खाली डिब्बों के बीच एक भरा हुआ डिब्बा मिल गया।

राम

एक व्यक्ति कई वर्षों तक महाराजजी के साथ एक तरह के सेवक के रूप में रहा। वह महाराजजी के कपड़े रखता, उन्हें स्नान कराता, पानी लाता आदि। उसने बहुत सेवा की और हमेशा पास रहने के लिए महाराजजी के चरणों में सोता था। उसकी आदत थी कि वह मंगलवार को उपवास रखता था और केवल दूध पीता था। एक मंगलवार को महाराजजी ने उसे भोजन दिया, लेकिन उसने यह कहकर मना कर दिया कि वह दूध पी लेगा। पूरा दिन बीत गया और उसे

दूध नहीं दिया गया।

देर रात महाराजजी ने उससे पूछा कि क्या उसने कुछ खाया या दूध पिया है। उसने कहा नहीं, वह उपवास कर रहा था, लेकिन दूध पिया था। महाराजजी ने कहा, "तुम झूठ बोल रहे हो! सच बताओ! किसी ने तुम्हें दूध नहीं दिया।" महाराजजी के चिल्लाने से आश्रम के सभी लोग जाग गए। महाराजजी ने रसोइए से पूछताछ की और पता चला कि किसी को भी उन्हें दूध देना याद नहीं रहा था, और अब आश्रम में कोई भी नहीं था। महाराजजी उठे और अपने कमरे में गए। उन्होंने उस आदमी को अंदर बुलाया और उसे दरवाजा बंद करने को कहा।

महाराजजी ने समय पूछा; आधी रात हो चुकी थी। महाराजजी ने कहा, "तुमने दिन भर कुछ नहीं खाया। आधी रात हो चुकी है। क्या अब खा सकते हो? आज बुधवार है।" उस व्यक्ति ने कहा कि वह खा सकता है। महाराजजी ने अपनी धोती (शरीर के निचले हिस्से को ढकने वाला कपड़ा) में हाथ डाला और पाँच पराठे और दो तरह की सब्जियाँ निकालीं। महाराजजी ने कहा, "यह भगवान का प्रसाद है, राम का प्रसाद है।" वह व्यक्ति बाहर जाकर खाने के लिए जाने लगा, लेकिन महाराजजी ने उसे रोककर यहीं खाने को कहा। जब वह खा चुका, तो महाराजजी ने थोड़ी सी खीर (मीठी चावल की खीर) निकाली। वह व्यक्ति इसे भी खाकर पानी लेने के लिए कमरे से बाहर जाने लगा। महाराजजी ने उसे फिर रोका: "कहाँ जा रहे हो? यह लो पानी।" रात में उपयोग के लिए महाराजजी के बिस्तर के पास पानी रखा था, लेकिन वह व्यक्ति महाराजजी के बर्तनों का उपयोग नहीं करना चाहता था। महाराजजी ने पानी उसके मुँह में डाला। फिर महाराजजी ने उसे शाम के बारे में किसी को न बताने को कहा।

अक्सर, भेष बदलने की इस प्रक्रिया में भक्तों को बेहद गाली देना और उन पर चिल्लाना शामिल होता था (ध्यान भटकाने के लिए, जैसा कि कोई भी कुशल जादूगर करता है), जिससे उनमें गहरा अपराधबोध पैदा होता था, मानो भोजन के खो जाने का कारण उनकी अपनी ही लापरवाही हो। बाद में वह उनके साथ बहुत ही कोमल व्यवहार करता था, और उन्हें यह आभास होता था कि उसने उनका उपयोग तो किया है, लेकिन उनके साथ दुर्व्यवहार नहीं किया है।

एक बार हनुमान घर में घी खत्म हो गया, तो महाराजजी ने एक भक्त से चुपके से कहा कि वह बाल्टी में थोड़ा पानी भरकर जंगल में रख दे। फिर उन्होंने अपने सीधे-सादे अंदाज़ में कहा, "मुझे पेशाब करना है," और वे चले गए। जब वे लौटे तो चिल्ला रहे थे। वे एक साधु के पास गए और घी की निगरानी न करने के लिए उन्हें खूब खरी-खोटी सुनाई। उन्होंने कहा कि चोर घी चुरा लेंगे। महाराजजी ने कहा, "देखो, उन्होंने जंगल में घी का एक डिब्बा रखा है।" और वे घी से भरी बाल्टी ले आए।

राम

कैंची में एक भंडारे में एक भक्त सेवा कर रहा था। दस दिनों से चल रहे भोज के कारण मालपुआ (मीठी पूरियां) कम पड़ने लगी थीं। जब लोग आते, तो उन्हें चपाती और दाल तो दी जाती, लेकिन मालपुआ नहीं। तभी दूर-दूर के गांवों से साठ-सत्तर स्त्रियां आईं, न केवल महाराजजी के दर्शन के लिए, बल्कि मालपुआ खाने की इच्छा से भी। महाराजजी ने कहा, "इन्हें मालपुआ दो।" एक भक्त ने महाराजजी को बताया कि अब मालपुआ नहीं हैं। इस पर महाराजजी ने उसे डांटते हुए कहा, "तुम चोर हो। मालपुआ तो बहुत थे। तुमने चुराए हैं। इससे

चाबियां ले लो। मैं इसे अब मंदिर में नहीं देखना चाहता। इसके पास भंडारगृह की चाबियां नहीं होनी चाहिए। इसने शायद मालपुआ कहीं छिपा दिए हैं।” जब किसी ने भंडारगृह की जाँच की, तो वहाँ बहुत सारे मालपुआ मिले। बाद में महाराजजी उस आरोपी भक्त के प्रति बहुत स्नेहपूर्ण और दयालु हो गए।

राम

मेले के समय मैं महाराजजी के साथ इलाहाबाद में था। महाराजजी ने बताया कि नैनीताल से कुछ माताएँ आई हैं और कहा, “चलिए मेले के मैदान में चलते हैं और उन्हें ढूँढते हैं।” हमने एक टैक्सी ली, लेकिन पहुँचते ही महाराजजी ने उसे वापस बुला लिया। अँधेरा हो चुका था और वहाँ हज़ारों लोग जमा थे। महाराजजी ने मुझे और मेरे एक दोस्त को ढूँढने भेजा, लेकिन हमें उनके खो जाने का डर था, इसलिए हमने बस सरसरी नज़र डाली और यह कहते हुए वापस आ गए कि हमें माताएँ नहीं मिलीं। अंत में महाराजजी ने कहा कि वे खुद जाएँगे। जिस तीसरे तंबू में उन्होंने जाँच की, वहाँ उन्होंने उन्हें महाराजजी की पूजा समाप्त करते हुए पाया। वे तीस दिनों से प्रतिदिन यह पूजा कर रही थीं, महाराजजी के दर्शन की आशा में। यह अंतिम दिन था। उन्होंने महाराजजी की एक मूर्ति भी बनाई थी।

महाराजजी अंदर आए और तम्बू के पीछे खड़े हो गए। फिर वे माँ को एक अन्य भक्त के घर ले गए और हमें दूध और मिठाई लाने के लिए बाहर भेज दिया। हम विद्यार्थी थे और अपने सारे पैसे खर्च नहीं करना चाहते थे, इसलिए हमने आपस में कहा, "आखिर एक माँ कितना पी सकती है?" हम थोड़ी-थोड़ी मिठाई और दूध लाए, जिसके लिए महाराजजी ने हमें डांटा और बाहर निकाल दिया। हम पश्चाताप करते हुए बरामदे में बैठ गए। बाद में उन्होंने हमें अपने कमरे में बुलाया और पूछा, "क्या तुम्हें लगता है कि मुझे मिठाई लाने के लिए तुम्हारी ज़रूरत थी?" और वहाँ कमरे में बाल्टियों के ढेरों मिठाई रखी थी, और महाराजजी ने हमें खूब खिलाया।

लखनऊ के सेवानिवृत्त कारागार अधीक्षक, जो एक बहुत ही वृद्ध और सम्मानित भक्त हैं, महाराजजी के साथ अपने अनुभव के बारे में बताते हैं। यह कहानी इसलिए विशेष है क्योंकि यह उनकी पत्नी की आस्था को दर्शाती है, जो इतनी प्रबल थी कि उन्होंने महाराजजी की अन्नपूर्णा सिद्धि को अपने माध्यम से कार्य करने दिया।

वो आपको गलत साबित कर देते, आपको अचानक मुश्किल में डाल देते, फिर आपकी मदद करते। नैनीताल में एक रात हम दिन भर महाराजजी के साथ रहने के बाद शाम के खाने के लिए घर लौटे थे। हम चार लोग थे और मेरी पत्नी ने परिवार के लिए पर्याप्त खाना बनाया था। तभी मेरी छोटी बेटी ने महाराजजी को सरकारी घर से आते हुए सुना और बाहर जाकर बोली, “महाराजजी, हम यहाँ रहते हैं। हमारे घर आइए।”

मैंने उसे फोन किया और कहा, “महाराज जी को परेशान मत कीजिए। आज हम उनके साथ काफी समय बिता चुके हैं।” साथ ही मुझे यह भी एहसास हुआ कि हमारे पास खाना बहुत कम था।

लेकिन महाराजजी ने कहा, “नहीं, मुझे तुम्हारे घर जाना ही होगा,” और वे लगभग बीस लोगों को लेकर अंदर आ गए। कुछ ही मिनटों बाद उन्होंने मुझसे कहा, “ये लोग भूखे हैं। इन्हें खाना खिलाओ।” मैं मना नहीं कर सका क्योंकि मैं उनकी ताकत जानता था, इसलिए मैं रसोई

की ओर चल पड़ा। महाराजजी चिल्लाए, “जल्दी करो!” रसोई में मैंने अपनी पत्नी को धीरे से अपनी दुविधा बताई। हमारे छोटे से बर्तन में केवल हम चार लोगों के लिए ही सब्जियां थीं, और बाजार बहुत नीचे था और पहले ही बंद हो चुका था।

मेरी पत्नी, जिसे मुझसे ज़्यादा आस्था थी, बोली, “चिंता मत करो। महाराज जी सब संभाल लेंगे। ये लो, ये छोटा बर्तन (जिसे उसने ढक रखा था) ले लो और ढक्कन हटाकर अंदर मत देखना। ये रहा एक बड़ा चम्मच। बस लोगों को परोस दो, मैं पूरियां बना देती हूँ।” मैंने उसकी बात मान ली, अंदर नहीं देखा। मुझे पता था कि ये बहुत अजीब होने वाला है।

मैंने हर व्यक्ति को एक या दो बड़े चम्मच दिए, फिर हर किसी से पूछा, "क्या आपको और चाहिए?" कुछ ने हाँ कहा और मैंने उन्हें दे दिया। हर किसी को अपनी इच्छानुसार सब्जी और पूरी मिली।

महाराजजी मुस्कुरा रहे थे। फिर उन्होंने कहा, “सबने ले लिया है। सबका पेट भर गया है। यह बहुत बड़ा भोज है।”

महाराजजी के शुरुआती दिनों से जुड़ी कई कहानियां प्रचलित हैं। इनमें से कितनी सच हैं और कितनी झूठ, यह कहना मुश्किल है। यहाँ एक रोचक उदाहरण दिया गया है:

उस इलाके के गाँव के बच्चे अक्सर अपनी गाय-बकरियों को चराते हुए झील पर आते थे। एक दिन, जब उन्होंने आसपास किसी को नहीं देखा, तो उन्होंने अपने खाने के पैकेट पेड़ों की नीची डालियों पर टांग दिए और खेलने चले गए। जब वे लौटे तो देखा कि उनका खाना गायब है और महाराजजी पेड़ के नीचे आराम से बैठे हैं। उन्होंने बच्चों को देखकर मुस्कुराया और उनके खाने के बदले में अपने वस्त्र के नीचे से पूरियां और लड्डू (हनुमान को विशेष रूप से प्रिय मिठाई) निकाले। बच्चों ने जी भर कर खाया।

फोटो: बलराम दास

महाराजजी के कंबल के नीचे

गुरु और भक्त का आपसी संबंध प्रत्येक भक्त के लिए अत्यंत भिन्न होता है। पवित्र ग्रंथों में कहा गया है कि एक भक्त गुरु को पिता, माता, पुत्र, मित्र, स्वामी, प्रेमी या ईश्वर के रूप में देख सकता है। और ऐसे भक्त भी थे जिन्होंने महाराजजी को इन सभी रूपों में देखा। लेकिन महाराजजी के भारतीय भक्तों का उनके प्रति जो भाव था, उसे गुरु शब्द की तुलना में बाबा शब्द से बेहतर ढंग से व्यक्त किया जा सकता है। बाबा का अर्थ "दादा" या "वृद्ध" हो सकता है। यह एक सम्मानजनक शब्द है जिसका प्रयोग वृद्ध या आध्यात्मिक व्यक्ति के लिए किया जाता है। भारत के साधुओं या घुमंतू संन्यासियों को आमतौर पर बाबा कहा जाता है, और सड़क साफ करने वाले बूढ़े व्यक्ति को भी। इसकी कोमलता और आत्मीयता महाराजजी और उनके भक्तों के बीच के संबंध की गुणवत्ता को बेहतर ढंग से दर्शाती है।

उनमें से कुछ लोगों के लिए, उन्हें मुख्य रूप से परिवार के दादा के रूप में देखा जाता था:

उनके द्वारा दिया जाने वाला पिता तुल्य स्नेह किसी और से नहीं मिल सकता।

कुछ अन्य लोगों के लिए उनका "बाबा" उनका प्रिय मित्र था:

जब आप किसी से प्यार करते हैं, तो आप उनके साथ कुछ भी खेल सकते हैं। मैंने भी यही किया। मैंने कभी कुछ और सोचा ही नहीं।

राम

हम अक्सर साथ में यात्रा करते थे और इधर-उधर की बातें करते थे।

कई लोगों के लिए वह एक बुद्धिमान सलाहकार थे:

मैं बस आता, उनसे अपने सवाल पूछता और चला जाता।

कुछ लोगों के लिए वह महज एक और संत साधु थे:

वह एक साधारण सा बच्चा था। वह अक्सर आता था, और हम उसे थोड़ी सी मिठाई या एक गिलास पानी देते थे। वह एक खाली पलंग पर बैठता था। और हमें बहुत गर्व महसूस होता था क्योंकि "हमने आज एक बच्चे को खाना खिलाया।"

राम

मेरे परिवार का हमेशा से महाराजजी जैसे संतों से संबंध रहा है।

लेकिन कई लोगों के लिए वह एक संरक्षक देवदूत थे, मानो किसी दूसरी दुनिया से आए हों:

उनके साथ रहते हुए मुझे हमेशा हर तरह की सुरक्षा का अहसास होता था, हर जगह से, हर चीज से।

राम

महाराजजी हमें एक जगह से उठाते हैं और दूसरी जगह पर छोड़ देते हैं।

राम

जब भी हमें जीवन में किसी भी प्रकार की कठिनाई का सामना करना पड़ता है, तो हम हमेशा उन्हें याद करते हैं। तब वे हमेशा हमारी सहायता करते हैं, या तो सीधे तौर पर या दूसरों को शक्ति प्रदान करके ताकि वे हमारी सहायता कर सकें।

और कुछ लोगों के लिए, ईश्वर:

जिसने भी उनके दर्शन किए, चाहे पीछे से ही सही, वह बच गया।

राम

महाराजजी वह हवन (यिर्मयाह अग्नि) हैं जो मेरे कर्मों को स्वीकार करके जला देते हैं।

राम

वह उन सभी बातों से परे है जो आप उसके बारे में कह सकते हैं।

राम

देखिए, वह ईश्वर है। बेशक, वह ईश्वर ही है।

ये सभी श्रेणियाँ बहुत ही विशिष्ट हैं। वास्तव में, अधिकांश भक्तों के लिए वे कभी इनमें से एक थे, कभी दूसरे, या फिर वे सभी थे। सरल शब्दों में कहें तो, वे उनके "बाबा" थे।

मुझे उनके चमत्कारों की परवाह नहीं थी। मैं बस इतना जानती थी कि वे मेरे बाबा थे।

राम

एक महिला ने महाराजजी को कभी भी शक्तियों से संपन्न महान संत नहीं समझा। उन्होंने कहा था कि उनके पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है, इसलिए महिला ने उनकी बात मान ली। वह उन्हें एक संत समान, नेक और दयालु व्यक्ति मानती थी, जो उसे प्रेम, स्नेह और मन की शांति प्रदान करते थे। उनके पति महाराजजी को साक्षात भगवान मानते थे। महाराजजी की उपस्थिति में दोनों अपनी सारी परेशानियां भूल जाते थे।

राम

मुझे उससे कभी डर नहीं लगा। कभी नहीं। मैं उसके आस-पास जो तनाव और सतर्कता बरतती थी, वह उससे डरने की वजह से नहीं, बल्कि उसके लिए डरने की वजह से थी। उदाहरण के लिए, अगर आपके पास फूलों का बगीचा है और आप उसकी देखभाल कर रहे हैं, तो आपको फूलों से डर नहीं लगता, बल्कि घोड़े और गाय से डर लगता है जो उन्हें रौंद सकते हैं या खा सकते हैं, या माली से डर लगता है जो उन्हें पानी देना भूल सकता है। आप समझ रहे हैं, मुझे डर लगता था कि किसी की लापरवाही से उसे असुविधा या तकलीफ हो सकती है; जैसे आपकी माँ को लगेगा अगर आप स्कूल से घर आएँ और वह वहाँ न हो—वह इस बात की चिंता करेगी कि आपको कौन खिलाएगा और आपकी देखभाल कौन करेगा। यह ठीक वैसा ही था।

पश्चिमी लोगों के बीच भी महाराजजी को देखने और उनके साथ समय बिताने के तरीकों में काफी विविधता थी। हालांकि हममें से कई लोगों के महाराजजी के साथ बेहद घनिष्ठ संबंध थे, फिर भी आध्यात्मिक मुक्ति के साधन के रूप में जोर देने वाला अधिक औपचारिक शब्द "गुरु" "बाबा" की तुलना में अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। चूंकि जिस संस्कृति से हम आए थे, उसमें गुरु आम बात नहीं थे, इसलिए हम गुरु की मिथक में अधिक विश्वास रखते थे। हम विशेष रूप से दादा या किसी अन्य मित्र को नहीं चाहते थे। हम ईश्वर या कम से कम एक दिव्य मध्यस्थ चाहते थे। और हममें से अधिकांश लोग महाराजजी को इसी रूप में देखते थे। इन उद्धरणों में हमारे बीच कुछ अंतर स्पष्ट हो जाते हैं:

(एक पश्चिमी भक्त दूसरे से बात करता है।) मुझे उनके आसपास ज़्यादा रहने की ज़रूरत नहीं थी। बाकी सभी के लिए, जिन्हें लगातार उनके आसपास रहना पड़ता था, यह ठीक था। मुझे लगता है कि आपके साथ मेरी यात्रा अच्छी रही क्योंकि आप मेरे लिए एकदम सही साथी थे।

आपको महाराजजी के पास रहना था, उनके चरणों में बैठना था; हर छोटी से छोटी बात जाननी थी, हर छोटी कहानी सुननी थी। और मुझे यह बहुत अच्छा लगा; यह सचमुच खूबसूरत था—लेकिन मेरे लिए यह सब रुकावट बन गया; मुझे इसकी ज़रूरत नहीं थी। मुझे बस सार, मूल तत्व, भावना चाहिए थी।

राम

मुझे याद है एक दिन हमने हमेशा की तरह बहुत अच्छा खाना खाया और उसके बाद हम सब सो गए। लेकिन हमें एक ऐसी अनुभूति हुई जिसे सूफी बरका (आशीर्वाद या आध्यात्मिक शक्ति) कहते हैं। जब हम उठे तो थोड़ा भ्रमित थे, लेकिन यह बहुत सुखद अनुभव था। मेरे लिए असली मेहनत उस अनुभूति में थी जो प्रसाद ग्रहण करने और आराम करने के बाद मुझे मिलती थी। इसी तरह मैंने वास्तविक बरका, या आशीर्वाद, का अनुभव किया।

राम

मैं हर समय रोती रहती थी क्योंकि महाराजजी मुझे अपने पास नहीं ले जाते थे, अपनी बाहों में नहीं उठाते थे, मंदिर में नहीं ले जाते थे और मुझे आकाश में नहीं उड़ाते थे। उनसे पहली बार मिलने के बाद मैं उनकी गोद में रहने के लिए बेहद उत्सुक, लगभग पागल सी हो गई थी।

इसलिए मैंने हमेशा सौदेबाजी करने की कोशिश की, कोई ऐसा तरीका ढूंढने की कोशिश की जिससे मैं उसे मुझे ले जाने के लिए मना सकूं। और मुझे बहुत जल्दी एहसास हो गया कि ऐसा कोई तरीका नहीं था जिससे मैं उसे मुझे ले जाने के लिए मजबूर कर सकूं।

राम

मुझे कभी ऐसा नहीं लगा कि शब्द वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। सच्चा गुरु तो भीतर ही होता है। और महाराजजी एक ऐसा साक्षात रूप थे जिन्हें मुझे उस सत्य को समझने के लिए देखना आवश्यक था।

राम

उनके प्रति गहरी तड़प और अपनी दिव्य पवित्र माता की उपस्थिति का अहसास होने के कारण, मैं हमेशा महाराजजी को अपनी माँ के समान मानती थी; महाराजजी मेरे लिए माँ के समान थे। भगवान के साथ महाराजजी का संबंध पूर्णतः आंतरिक और सूक्ष्म था।

खुद जैसा होना, अपने आप को अभिव्यक्त करना कितना अच्छा था। चंचलता असीम थी, हृदय का खुलापन असीम था।

दो श्रद्धालुओं के व्यवहारों की निम्नलिखित तुलना में, अंतर का एक और आयाम स्पष्ट हो जाता है।

जब भक्त ए मंदिर में होता था, तो यह अनुमान लगाना स्वाभाविक था कि यदि किसी पश्चिमी व्यक्ति को महाराजजी के पास जाने की अनुमति दी जाती, तो वह वही होता। महाराजजी की उपस्थिति में हर संभव क्षण बिताने के लिए वह हर संभव तरकीब आजमाता था। यदि महाराजजी लोगों को जाने के लिए कहते, तो ए सबसे अंत में निकलता और फिर तुरंत भवन के पीछे जाकर, पेड़ से एक फूल तोड़कर, दूसरी तरफ से ऐसे आता जैसे वह पहली बार आया हो। जब दूसरों को जाने के लिए कहा जाता, तो वह अक्सर खुद को निष्कासन के आदेश में शामिल होने से बचाने के लिए छिप जाता था। यह एक जटिल खेल में तब्दील हो गया था, जिसमें

महाराजजी भी भागीदार होते थे।

ए अपने खेल का उस्ताद था। मानो उसके पास एक विशेष समझ थी जो उसे बता देती थी कि महाराजजी किसी भी क्षण कहाँ होंगे, और वह वहाँ पहुँचकर उनका इंतज़ार करता था। दूसरों ने इस खेल में प्रतिस्पर्धा करने की कोशिश की, लेकिन कोई भी ए के पूर्णतया एकाग्र (या, आप इसे जिस भी नज़रिए से देखें, पूर्णतया स्वार्थी) व्यवहार की बराबरी नहीं कर पाया। अन्य लोग अपराधबोध या दूसरों के प्रति करुणा से ग्रस्त थे—ऐसी भावनाएँ जिनका ज़िक्र करने पर ए केवल अनसमझी भरी नज़रें ही देखता था।

भक्त बी की कहानी बिलकुल अलग थी। अगर महाराजजी हमें रसोई में मदद करने भेजते, तो बी तब तक आलू छीलते रहते जब तक बाकी लोग हार मानकर महाराजजी के पास वापस नहीं चले जाते। वे आखिरी आलू छिलने तक काम करते रहते और फिर दूसरा काम ढूंढते। हालाँकि उन्होंने अमेरिका में वकील की पढ़ाई की थी, लेकिन मंदिर में उनकी सेवा और विनम्रता इतनी असाधारण थी कि जल्द ही उन्हें रसोई और भंडारगृहों का ज़िम्मा सौंप दिया गया। वे पाँच साल तक मंदिर में रहकर पवित्रतम सेवा करते रहे, जब तक कि सरकार ने उन्हें वहाँ से निकाल नहीं दिया। कोई भी काम उनके लिए छोटा नहीं था और उनकी विनम्रता पर उन्हें ज़रा भी गर्व नहीं था, न ही उन्होंने कभी अपने काम के लिए ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की। ऐसा लगता था मानो वे अपनी सेवा के ज़रिए ही ईश्वर के सबसे करीब पहुँचे हों। वे महाराजजी के पास बहुत कम आते थे, और जब आते भी थे तो बस उनके पैर छूकर अपने काम पर लौट जाते थे।

ए जैसे भक्त अक्सर दूसरे भक्तों को नाराज़ कर देते थे क्योंकि ऐसा लगता था कि वे महाराजजी पर अपना एकाधिकार जमा रहे हैं, जबकि बी जैसे भक्त दूसरों में सम्मान और कभी-कभी अपराधबोध भी जगाते थे। फिर भी, हमें सहज रूप से यह एहसास था कि दोनों ही अपने-अपने तरीके से सच्चे भक्त थे, और महाराजजी स्पष्ट रूप से दोनों से प्रेम करते थे।

महाराजजी को देखने और उनके साथ रहने के तरीके जितने विविध थे, उनकी प्रतिक्रियाएँ भी उतनी ही विविध थीं। वे प्रत्येक व्यक्ति को उसकी ग्रहण करने की क्षमता के अनुसार प्रतिक्रिया देते थे। महाराजजी के व्यवहार की असीम परिवर्तनशील प्रकृति में, प्रत्येक व्यक्ति को वह मिल जाता था जिसकी उसे आवश्यकता होती थी। क्योंकि वे कहीं स्थिर नहीं रहते थे, वे एक दर्पण के समान थे, जो प्रत्येक भक्त को वह बाबा या गुरु दिखाते थे जो वे स्वयं में देखते थे। अक्सर एक ही कार्य से वे एक दर्जन भक्तों की भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं को एक साथ पूरा कर देते थे।

इन संतों के बारे में कौन कह सकता है? वे आकाश के समान हैं। महाराजजी का मन एकदम निर्मल था। ऐसा लगता था मानो उनके मन में कोई विचार ही न हों; केवल वही विचार उनके मन में आता जो भगवान की इच्छा होती थी। बादल की तरह वह विचार आता और फिर—अचानक—उस विचार से ऐसा कर्म उत्पन्न होता! और फिर, बादल की तरह वह विचार गुजर जाता। उनका मन सदा निर्मल रहता था।

राम

वह भक्त से उसकी स्वयं की भक्ति की गहराई के अनुसार, और वह जिस प्रकार की भक्ति का अनुसरण कर रहा था, उसके अनुसार बात करता था।

राम

यदि आप चतुर या धोखेबाज होते तो महाराजजी आपको नजरअंदाज कर देते, लेकिन यदि आप सरल और खुले दिल के होते तो वे आपकी मदद करते।

राम

महाराजजी जब किसी व्यक्ति को पसंद करते थे, तो उसे दिल से व्यक्त करते थे। जब वे किसी व्यक्ति का चेहरा नहीं देखना चाहते थे, तो वे अपना चेहरा कंबल से ढक लेते थे।

राम

महाराजजी हर किसी के सामने अपना स्वरूप प्रकट नहीं करते थे। वे व्यक्ति की आत्मा को भांप लेते थे; जहाँ हम उन्हें एक सौम्य और विनम्र व्यक्ति के रूप में देखते थे, वहीं वे उस व्यक्ति की आंतरिक भावनाओं को देख लेते थे। कुछ लोगों को वे केवल प्रसाद देकर विदा कर देते थे।

चाहे कोई व्यक्ति पच्चीस वर्षों से महाराजजी के साथ रहा हो या बिल्कुल नया हो, सभी को समान सम्मान दिया जाता था। किसी को तरजीह नहीं दी जाती थी और कोई भी अपरिहार्य नहीं था।

राम

एक बार सेना के ट्रकों का काफिला द्वार पर रुका, और सैकड़ों सैनिक आकर कतार में खड़े हो गए। महाराजजी अपने बगल में बैठे एक किसान से बात कर रहे थे। एक-एक करके सैनिक और अधिकारी आगे आए, झुककर महाराजजी के पैर छुए, एक पल के लिए उन्हें देखा और फिर मुँह फेर लिया। ऐसा लगता था कि उनमें से अधिकांश की यही इच्छा थी। लेकिन कभी-कभी कोई ऐसा व्यक्ति आगे आता जो अलग प्रतीत होता था—शायद उसमें कुछ अधिक प्रकाश था या शायद वह अधिक पीड़ा झेल रहा था। कई बार मैंने ऐसे व्यक्ति को आगे झुकते हुए देखा। महाराजजी उसके सिर पर थपथपाते, उसे फूल देते, या उसकी बातचीत रोककर उससे कुछ कहते, जैसे, "तुम्हारी माँ ठीक हो जाएगी," या "तुम्हें अपने वरिष्ठों से झगड़ा नहीं करना चाहिए," या "तुम ईश्वर से बहुत प्रेम करते हो।" हम महाराजजी के अनुभव का एक बहुत छोटा सा अंश ही देख पाए।

सैनिकों को हनुमान जी (भारतीय सेना के रक्षक देवता) और महाराज जी की तस्वीरें चाहिए थीं, ताकि वे युद्ध में सुरक्षा के लिए उन्हें अपने साथ ले जा सकें। महाराज जी ने कहा, “सेना में अच्छे, सरल और आध्यात्मिक पुरुष हैं।” ऐसा नहीं था कि महाराज जी “निर्णय” ले रहे थे; बल्कि, जिज्ञासु के स्वभाव के अनुसार, जैसे दर्पण में कोई प्रतिक्रिया होती है, महाराज जी अपनी इच्छा से यह या वह प्रतिक्रिया देते थे। (आर.डी.)

राम

मैंने महाराजजी को पहली बार एक मेले में देखा था, और मुझे चित्रकूट आने का निमंत्रण मिला। सबसे पहली बात जिसने मुझे प्रभावित किया, वह यह थी कि वे एक दर्पण के समान थे। चित्रकूट में बहुत सारे लोग थे और वे उनके कार्यों के बारे में बातें कर रहे थे, और मुझे इसमें कोई दिलचस्पी नहीं थी, लेकिन मैंने कहा कि मुझे लगता है कि वे एक दर्पण के समान हैं। जब उन्होंने महाराजजी को यह बताया, तो वे यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए कि मैं ऐसा सोचता हूँ।

राम

मैं महाराजजी से विज्ञान या मानव के चंद्रमा पर जाने जैसे विषयों पर भी चर्चा करता था। वे एक दर्पण की तरह थे; उनका इन विषयों से कोई लेना-देना नहीं था। फिर भी वे रुचि दिखाते थे, और अगली बार जब आप उस विषय पर बात करते, तो वे आपकी बात को ध्यान से सुनते थे। वे अक्सर कहते थे, "मुझे सब कुछ याद रहता है।"

महाराजजी किसी भी भक्त के प्रति प्रतिक्रिया देने के बारे में "निर्णय" नहीं ले रहे थे और वास्तव में दूसरों को सलाह दे रहे थे कि वे

हर व्यक्ति में ईश्वर को देखो। व्यक्तिगत भिन्नताओं और कर्म के आधार पर शिक्षा देना छल है।

फिर भी, दबाव पड़ने पर वह अपने व्यवहार को "स्पष्ट" कर सकता था:

एक बार मैं महाराजजी को उन लोगों को तस्वीरें देने के लिए फटकार रहा था जो सांसारिक थे और उनकी परवाह नहीं करते थे। उन्होंने कहा, “तुम मुझे नहीं समझते। अगर मैं किसी को कहता हूँ कि वह महान भक्त है, तो मैं एक बीज बो रहा हूँ। अगर किसी व्यक्ति के पास पहले से ही बीज बोया हुआ है और बढ़ रहा है, तो मुझे दूसरा बीज क्यों बोना चाहिए?”

मैंने कहा, “तुम इन शराबी, झूठे और डाकुओं को बता रहे हो कि वे असली भक्त हैं। वे बस घर जाकर अपना पुराना व्यवहार दोहराते रहेंगे।”

महाराजजी ने कहा, “उनमें से कुछ को मेरी कही बातें याद रहेंगी और इससे उनमें यह गुण विकसित करने की प्रेरणा मिलेगी। यदि सौ में से दस इस तरह प्रेरित होते हैं, तो यह बहुत अच्छी बात है।”

राम

एक बार एक भक्त ने महाराजजी से कहा, "महाराजजी, आप लोगों को कुछ करने के लिए कहते हैं और फिर उसी के लिए उन्हें दोषी क्यों ठहराते हैं?"

"अगर मैं उनसे कहूँ कि वे किसी चट्टान से कूद जाएँ, तो क्या उन्हें ऐसा करना चाहिए? मैं बस उन्हें वही बताता हूँ जो उनके दिमाग में चल रहा होता है।"

यह सब एक ऐसी प्रक्रिया प्रतीत होती थी जिसके द्वारा महाराजजी भक्तों को एक-दूसरे के जागरण की सेवा में उपयोग कर रहे थे।

जब भारतीय पश्चिमी लोगों से नाराज़ होते थे, तो महाराजजी कहते थे, “वे बहुत ईमानदार और पवित्र हैं, और इसीलिए मैं उनसे प्रेम करता हूँ। पश्चिमी लोग तो मेरी परीक्षा लेते हैं। तुम (भारतीय) सब अंधविश्वास में डूबे हो।”

राम

महाराजजी ने एक बार पश्चिमी लोगों के बारे में कहा था, “पश्चिमी लोगों के लिए, भारत में होना ही एक प्रकार का त्याग है। यहाँ आने के लिए उन्होंने बहुत कुछ त्याग दिया है। एक बार जब वे विश्वास कर लेते हैं, तो वे पूरी तरह से, अपने पूरे दिल और आत्मा से, बच्चों की तरह विश्वास करते हैं।”

उनका जवाब न केवल हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग होता था, बल्कि समय के साथ हर व्यक्ति के लिए बदलता भी रहता था। ऐसा लगता था मानो महाराजजी के सामने हर बार आना पहली बार हो। और अगर वही बातचीत बार-बार होती थी, जो अक्सर होता था, तो इसका कारण

यह था कि भक्त हर बार आने पर उसी जगह अटका रहता था। लेकिन हर बार जब भक्त अपने विचार और व्यवहार के उस पहलू को छोड़ देता था जिसमें वह फंसा हुआ था, तो उसे एक बिल्कुल नया महाराजजी मिलता था।

महाराजजी अपने भक्तों, विशेषकर भारतीयों से, व्यवहार करने के लिए अक्सर अपशब्दों का प्रयोग करते थे। और वे इसमें माहिर थे। अधिकांश पश्चिमी लोग हिंदी इतनी अच्छी तरह नहीं समझते थे कि महाराजजी के तीखे शब्दों का अर्थ समझ सकें, और इसलिए अधिकांश अनुवादकों ने उनके शब्दों को सरल बनाने का दायित्व स्वयं पर ले लिया। भारतीय उनके बोलने के इस तरीके के आदी हो चुके थे और वास्तव में इसे स्नेह का एक रूप मानते थे।

महाराजजी हमेशा उन्हीं लोगों को मारते थे जिन्हें वे पसंद करते थे।

राम

अगर वह आपको अपशब्द कहता था, जैसे कि आपको दुष्ट या भ्रष्ट कहता था, तो आप समझ जाते थे कि वह आपको पसंद करता है।

राम

वह लोगों को गाली देता था, उन्हें उपद्रवी कहता था, उन्हें बताता था कि वे नग्न होकर नाचते हैं, बहुत ज्यादा शराब पीते हैं, उपद्रवी हैं या शराबी हैं।

राम

एक रिश्तेदार मुझे हमेशा परेशान करता रहता था, लेकिन मैं कुछ नहीं कहता था। परेशान होकर मैं महाराजजी के पास गया और उन्होंने तुरंत समझ लिया कि यह आदमी मुझे तंग कर रहा है। उन्होंने कहा, “अगर कोई तुम्हें गाली दे तो यह अच्छी बात है, आध्यात्मिक दृष्टि से भी अच्छी बात है। गाली सुनने से इंसान का विकास होता है। चिंता मत करो। एक दिन आएगा जब यह आदमी तुम्हारे सामने सिर झुकाएगा।”

एक दिन ऐसा हुआ। वह मेरे पास आया और बोला, “मैंने ये सारी गलतियाँ कीं; मैंने आपको बेवजह परेशानियाँ दीं...।”

दुर्व्यवहार के अलावा, खूब चिढ़ाने और ताने मारने का भी सिलसिला जारी था।

“आज दादा को उनका भगवान मिल गया! चाय और सिगरेट,” महाराजजी ने दादा से कहा, जिस पर दादा केवल हंस पड़े।

राम

दादा ने अपनी धोती के एक कोने से महाराजजी का मुँह पोंछा। किसी ने दादा की आलोचना करते हुए कहा कि उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। तभी एक महिला दूध लेकर आई और महाराजजी के पीने के बाद उनके मुँह के आसपास कुछ बूँदें गिर गईं। महाराजजी ने दादा की ओर मुड़कर पूछा, “तुम इसे क्यों छोड़ रहे हो?” और सबके सामने दादा की धोती पकड़कर अपना मुँह पोंछा।

राम

एक महिला हंसते हुए महाराजजी के साथ अपनी घनिष्ठ मित्रता को याद कर रही थी। उसने बताया कि महाराजजी को लोगों को चिढ़ाने और उनकी टांग खींचने में कितना आनंद आता था। उसने बताया कि वे पश्चिमी लोगों के साथ इसी तरह खेलते थे। भारतीयों के एक बड़े समूह के

सामने वे उनसे कुछ प्रश्न पूछते और वे कुछ उत्तर देते। फिर महाराजजी उस महिला की ओर मुड़कर आँख मारते हुए कहते, "देखो ये लोग कितने भोले हैं; इन्हें कुछ नहीं पता।" और पश्चिमी लोग उनकी हर बात को गहन रहस्य और सत्य समझ लेते, जबकि महाराजजी उनकी सरल मासूमियत पर हंसते।

राम

एक परिवार महाराजजी के दर्शन के लिए आया था। उन्होंने नैनीताल से उनके लिए मिठाई का एक डिब्बा खरीदा था, और कैंची जाते समय रास्ते में वे आपस में कहने लगे कि उन्हें एक-दो मिठाई चखने का कितना मन कर रहा है। आखिरकार उन्होंने मिठाई चख ली और फिर बची हुई मिठाई को इस तरह से सजा दिया कि महाराजजी को डिब्बा भेंट करने से पहले ऐसा न लगे कि एक मिठाई गायब है। देखते ही देखते महाराजजी पीछे हट गए और डिब्बे को छूने से भी इनकार कर दिया। “इसे ले जाओ, इसे ले जाओ, यह दूषित है! इसे फेंक दो! कुत्तों को खाने दो! नहीं, कुत्ते भी इसे नहीं छूते—यह दूषित है। इसे फेंक दो!”

राम

एक मिठाई बनाने वाला था जो महाराजजी के पास श्रद्धापूर्वक आता था और जब भी वे आते थे, सबके लिए ढेर सारी मिठाइयाँ लाता था। महाराजजी उसकी प्रशंसा करते थे और उसे इनाम देते थे। कुछ समय बाद वह घमंड और अहंकार से भर गया। एक दिन, कुछ दिनों के अंतराल के बाद, वह प्रसाद लेकर आया—मिठाइयों का एक छोटा डिब्बा, जो आम तौर पर लोग जितना लाते हैं उससे आधा—और वह भी मिठाई बनाने वाले से। महाराजजी ने उसे तिरछी नज़र से देखा, मिठाई खाली की और वह छोटा डिब्बा पास खड़े एक भक्त को देते हुए कहा, “इसे पूरियों का बड़ा डिब्बा मत देना। लो, इसमें कुछ पूरियाँ रख लो।”

राम

“क्या आप यह पानी पीना चाहेंगे?” महाराजजी ने मुझसे पूछा। यह अशुद्ध था और मुस्लिम स्रोत से आया था। वे जानते थे कि मैं ब्राह्मण हूँ और इसे नहीं पीऊँगा, और उन्होंने कभी भी मुझे मेरी प्रकृति के विरुद्ध मजबूर नहीं किया। अक्सर वे लोगों से कहते थे, “इसे एस को अर्पित करो,” यह जानते हुए कि मैं इसे नहीं लूँगा। तब महाराजजी कहते,

"नहीं, उसे मत दो, वह इसे नहीं लेगा।"

राम

मैं धार्मिक तीर्थयात्रा पर बंबई गया था, जहाँ मैं एक परिवार के घर में ठहरा था। परिवार के मुखिया को हृदय रोग के कारण हर शाम शराब पीनी पड़ती थी। उन्होंने मुझे भी थोड़ी सी दी, और मैं स्कॉच पीकर काफी नशे में हो गया। बाद में, जब मैं महाराजजी के पास लौटा, तो वे मुझसे एक साधु के बारे में बात कर रहे थे जो अमेरिका गया था। महाराजजी ने पूछा, "अमेरिका में उसे क्या खिलाते हैं?"

“मुझे नहीं पता, महाराजजी, लेकिन मुझे यकीन है कि यह बहुत ही शुद्ध भोजन है।”

“वे उसे दूध पिलाते हैं,” महाराजजी ने कहा।

"अच्छी बात है।"

क्या आपको पता है कि वे दूध में क्या मिलाते हैं?

"नहीं।"

वह आगे झुककर मुझसे बनावटी रहस्यमयी स्वर में बोला, "शराब!"

"नहीं!"

"हाँ!"

"अरे नहीं!" मैंने ऐसे कहा जैसे उसने अभी-अभी व्यवहार के सबसे भयानक उल्लंघन का वर्णन किया हो।

इस पर महाराजजी ने जवाब दिया, "ओह, जी हाँ," और मेरी ओर अर्थपूर्ण ढंग से देखा।

मैंने उससे रिश्ता तोड़ दिया। उसने मुझे बुरी तरह से तोड़ दिया था। (आर.डी.)
कठोर और फटकार लगाने वाले महाराजजी और उनके भक्तों के बीच के संबंधों की एक खूबी यह थी कि उनमें से कई भक्त पलटवार करने से डरते नहीं थे। और ऐसा लगता था कि महाराजजी को विशेष रूप से उन लोगों से प्रेम होता था जो उनका विरोध करते थे।

मैं इस तरह बेबाकी से बोल पाता था क्योंकि छह साल की उम्र से उन्हें जानने के कारण मैंने कभी उनके साथ सभ्य तरीके से बात करने के बारे में नहीं सोचा था; हमारे बीच कोई बड़प्पन या बड़ों जैसा व्यवहार नहीं था। उदाहरण के लिए, एक बार वो मेरी नाक खींच रहे थे और मैंने उनसे कहा, "ऐसा मत करो! अगर तुम इसे और लंबा कर सकते हो, तो कर लो; वरना मेरी नाक को मत छुओ।"

महाराजजी ने कहा, “ठीक है, मैं इसे नहीं छूऊंगा। लेकिन मैं आपके सिर के ऊपर आशीर्वाद दे सकता हूं।”

मैंने उनसे कहा कि वे मेरे साथ जो भी करें, सही तरीके से करें। तो उन्होंने मेरे सिर पर थपथपाया। यही वह तरीका था जिससे मैं उनसे बात कर पाती थी। उनके शरीर छोड़ने के बाद से मुझे इन दिनों इसी बात की कमी खल रही है।

राम

मैंने महाराजजी को आखिरी बार वृंदावन में देखा था। हम सुबह से ही वहाँ पहुँचने के लिए यात्रा कर रहे थे और दोपहर से कुछ ही पहले पहुँचे, लेकिन वे दोपहर 3:00 बजे के बाद ही अपने कमरे से बाहर आए। जैसे ही वे बाहर आए, वे तुरंत मुझ पर चिल्लाने लगे, मुझे वहाँ से चले जाने को कहने लगे और यह कहने लगे कि वे मेरा चेहरा नहीं देखना चाहते। “जाओ!”

मैंने भी उसे करारा जवाब देते हुए पूछा कि मैंने उसका क्या बिगाड़ा है। मैं सुबह से सफर करके और दिनभर उसका इंतज़ार करके आई थी, और उसका यही जवाब था। “नहीं!” मैंने कहा, “मैं नहीं जाऊंगी।”

वह लगातार चिल्लाता रहा और अंत में चौकीदार को बुलाकर मुझे बाहर निकलवाने को कहा। चौकीदार हाथ जोड़कर आया, विनम्रता से लेकिन दृढ़ता से बोलता रहा। मैंने महाराजजी पर चिल्लाते हुए कहा: “बस मुझे देखने दीजिए कि यह आदमी मुझे कैसे छुएगा! कैसे मुझे बाहर निकालेगा! मैं नहीं जाऊंगी।”

आप जानते हैं, आखिरकार महाराजजी ने मुझे अपने पास बुलाया। उन्होंने मेरे सिर पर थपथपाया और कुछ मंत्र पढ़े, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने पहली बार मुझसे मिलने पर पढ़े थे। अब वे बहुत ही सुंदर ढंग से मुस्कुरा रहे थे। उन्होंने मुझसे कहा कि उनकी शक्ति (आध्यात्मिक ऊर्जा)

हमेशा मेरे साथ रहेगी और अब मुझे जाना चाहिए। तब तक मैं उनसे परिपूर्ण हो चुका था, और मैंने कहा कि उन्हें मुझे जाने के लिए कहने की ज़रूरत नहीं है। मैं अब स्वयं ही जा रहा हूँ, क्योंकि मुझे उनके दर्शन प्राप्त हो चुके हैं।

मेरी माताजी महाराजजी की परम भक्त हैं, और जब उन्हें उचित लगता था तो वे महाराजजी को डांट भी देती थीं। महाराजजी उनके बारे में कहते थे, “देखो, यह कर सकती है। केवल शुद्ध हृदय वाले ही ऐसा कर सकते हैं!” फिर कभी-कभी महाराजजी उन्हें आने पर डांट भी देते थे। “अरे! तुम क्यों आई हो? तुम्हें घर जाना चाहिए। तुम अपने बेटे की अनुमति के बिना आई हो!”

मुझे कभी पता ही नहीं चला कि महाराजजी कौन थे। एक बार जब मैंने वहाँ से जाने से इनकार कर दिया, तो महाराजजी ने कहा, “तुमने मेरा दिमाग खा लिया है। कृपया यहाँ से चले जाओ।” महाराजजी मेरा अपमान करते हुए कहते थे, “चले जाओ। मैं तुमसे बात नहीं करूँगा।” मैं जवाब देता था, “जब तक मेरा काम पूरा नहीं हो जाता, मैं नहीं जाऊँगा।”

मैं महाराजजी के साथ मद्रास नहीं जाना चाहती थी। उन्होंने मुझे चलने के लिए कहा, लेकिन मेरे पास कपड़े नहीं थे। महाराजजी ने कहा कि वे जा रहे हैं, और मैंने कहा कि मैं केवल स्टेशन तक जाकर उन्हें अलविदा कह दूंगी। इसलिए मैं प्रणाम करने के लिए उनके रेल डिब्बे में चली गई। लेकिन उन्होंने मुझसे बात ही नहीं की; वे मुँह फेरकर खड़े हो गए और मेरी तरफ देखा तक नहीं। मैं नीचे नहीं उतरी, और जब ट्रेन चलने लगी, तो महाराजजी हंसने लगे। तब मुझे उनके साथ जाना पड़ा।

उन दिनों महाराजजी एक जगह पर ज्यादा देर नहीं रुकते थे—शायद ही कभी दो-तीन दिन—इसलिए मुझे उनके दर्शन का बहुत कम मौका मिला। फिर मैं कानपुर छोड़कर कलकत्ता चला गया और बीस साल वहीं रहा, जहाँ मैं बहुत व्यस्त था और महाराजजी से मेरा कोई संपर्क नहीं रहा। कानपुर लौटने पर मुझे महाराजजी की याद आई, मैं सोचता रहा कि वे कहाँ हैं और उनसे मिलने न जाने के लिए खुद पर बहुत गुस्सा आया। मैंने दो महीने तक खाना नहीं खाया। मेरी पत्नी ने मुझसे पूछा कि मैं क्यों नाराज़ हूँ, अनाज क्यों नहीं खा रहा, लेकिन मैंने उसे कभी कारण नहीं बताया। मैं खुद से बहुत नाराज़ था।

एक बार इलाहाबाद में एक व्यक्ति ने मुझसे एक बहुत अच्छे संत के दर्शन करने का अनुरोध किया। संत का नाम जाने बिना ही मुझे दादा के घर ले जाया गया। महाराजजी ने मुझे देखा और कहा, "तुमने दो महीने से भोजन क्यों नहीं किया?"

मैंने जवाब दिया, “आपने मुझे दर्शन क्यों नहीं दिए? मैं शायद पागल हूँ, लेकिन आप तो संत हैं—आपको पागल नहीं होना चाहिए।” एक बच्चे की तरह मैंने उनसे बहुत ही असभ्य तरीके से बात की।

किसी ने मुझसे पूछा, "क्या तुम महाराजजी से झगड़ा करने जा रहे हो?"

मैंने कहा, “हाँ, बिल्कुल। मैं क्यों न लड़ूँ? वह मेरे पिता के समान है और मैं उसका पुत्र। हम

क्यों न लड़ें? आप दखल न दें।”

महाराजजी ने कहा, “कृपया हस्तक्षेप न करें। वह मेरे बहुत पुराने भक्त हैं।”

लोग चले गए और महाराजजी ने मेरी ओर मुड़कर कहा, “अब घर जाओ। मैं कल सुबह तुम्हारे घर आऊंगा और वहीं भोजन करूंगा।”

मैंने कहा, “ठीक है, जब तुम मेरे यहाँ भोजन करोगे, तभी मैं अनाज खाना शुरू करूँगा। अगर तुम नहीं आओगे, तो मैं भी नहीं खाऊँगा।”

महाराजजी ने कहा, "कल आना।"

मैंने कहा, “नहीं, महाराज जी। मुझे आपकी बातों पर भरोसा नहीं है। आप मुझे कल आने के लिए कहते हैं, लेकिन हो सकता है कि आप तब यहाँ न हों। तब मेरी क्या स्थिति होगी? मैं नहीं जाऊँगा। मैं आज रात यहीं बरामदे में या घास पर सो जाऊँगा।”

महाराजजी ने कहा, “नहीं। यहाँ तुम्हारे सोने के लिए कोई जगह नहीं है।”

मैंने कहा, “कोई बात नहीं, महाराज जी। मैं गेट के बाहर सार्वजनिक सड़क पर एक-दो ईंटें तकिया बनाकर सो जाऊंगा। फिर सुबह मैं आपको पकड़ लूंगा।”

महाराजजी ने कहा, “अरे नहीं। तुम्हें मुझ पर भरोसा करना चाहिए। मैं तुम्हारे साथ जरूर चलूंगा। तुम जाओ!”

महाराजजी ने दृढ़ता से मुझे वचन दिया। फिर उन्होंने मुझे घर छोड़ने के लिए किसी को भेजा। उस व्यक्ति ने मुझे आधे घंटे इंतजार करने को कहा। मैं बैठ गया। कई लोगों ने महाराजजी के साथ मेरी बातचीत सुनी थी और उन्होंने मुझे बताया कि महाराजजी अक्सर बिना शर्त वादा कर देते हैं, जिसे कभी भुनाया नहीं जाता। वे आ भी सकते हैं और नहीं भी।

मैंने उनसे कहा कि मैं अगली सुबह आऊंगा, और अगर महाराजजी मेरे साथ नहीं आए, तो मैं शपथ लूंगा कि उनके आने तक मैं पानी तक नहीं पीऊंगा।

जैसे ही मैं यह कह रहा था, महाराजजी तुरंत अंदर से आए और बोले: “रुको, रुको। मैं अभी तुम्हारे साथ चलता हूँ।”

हम दो कारों में सवार होकर मेरे घर के लिए रवाना हुए और रात के लगभग ग्यारह बजे पहुँचे। ताज़ा खाना उपलब्ध नहीं था, लेकिन महाराजजी ने रात के खाने के बचे हुए भोजन में से थोड़ा-थोड़ा खाया। उन्होंने कहा, “मैंने खा लिया। अब तुम खाओ। अनाज खाना शुरू करो और उपवास मत करो।” फिर वे चले गए। यह महाराजजी के मुझ पर आशीर्वाद की कहानी है। धीरे-धीरे यह आशीर्वाद बढ़ता गया।

महाराजजी और भक्तों के बीच का व्यवहार अक्सर सचमुच बच्चों जैसा होता था।

महाराजजी मुझसे एक बिगड़े हुए बच्चे की तरह विनती करते थे। “ओह, माँ, कृपया भजन गाएँ।” वे भजन की पंक्तियाँ सुनाते थे, “बिना पानी का कुआँ, बिना दूध की गाय, बिना दीपक का मंदिर, ठीक वैसे ही मनुष्य बिना भजन के होता है।”

राम

रक्षाबंधन का दिन था, भाइयों की कलाई पर रक्षाबंधन बांधने का दिन। मैंने पहले ही अपने भाइयों और महाराजजी के लिए भी रक्षाबंधन खरीद लिए थे। भाइयों वाले तो मैंने घर पर ही छोड़ दिए थे, लेकिन महाराजजी का पर्स में था। मैंने महाराजजी के साथ यह दिन कभी नहीं बिताया

था और मैं उनकी कलाई पर रक्षाबंधन बांधना चाहती थी, लेकिन इतने सारे लोगों के सामने ऐसा करने में मुझे शर्म आ रही थी। जब हम कुछ पल के लिए अकेले हुए, तो उन्होंने मुझे अपनी कलाई पर रक्षाबंधन बांधने दिया। तभी कोई कमरे में आया और महाराजजी ने उससे बड़े संकोच से कहा, "माँ रक्षाबंधन बांध रही हैं।"

राम

महाराजजी सुबह से अपने कमरे में ही थे और कई लोगों को दर्शन दे रहे थे। कई घंटों बाद दादा ने महाराजजी से एक पिता की तरह बच्चे से फुसफुसाते हुए कहा, "आइए महाराजजी, आप सुबह से यहीं हैं और एक बार भी पेशाब करने नहीं गए।"

महाराजजी ने सारा दोष दादाजी के कंधों पर डाल दिया: “यह सब तुम्हारी गलती है। तुमने मुझे याद नहीं दिलाया!”

राम

एक बार महाराजजी ने कागज पर बैठी एक मरी हुई मक्खी को उठाने के लिए बड़ी कोशिश की। अंत में उन्होंने वह कागज दादा को उठाने के लिए दिया। जैसे ही दादा ने उसे उठाने के लिए हाथ बढ़ाया, मक्खी उड़ गई, और महाराजजी ने गुस्से से कहा, "मैंने इतनी मेहनत की, और तुमने उसे जाने दिया!"

“बाबा,” दादा ने कहा, “वह आपके हाथ में था, मेरे हाथ में नहीं।” महाराजजी बस हंस पड़े।

राम

1968 में कैंची में, महाराजजी अपना अधिकांश समय दादाजी के पलंग पर बैठे बिताते थे। वे कहते थे, “दादाजी जागते रहते हैं, इसलिए मुझे भी जागते रहना चाहिए।” सुबह 3:00 बजे वे दादाजी के कमरे में आए और दरवाजा खटखटाया। “आपने मुझे जगाया, तो आज मैं आपको जगाऊँगा!”

“लेकिन अभी तो सुबह के 3 बज रहे हैं,” दादाजी ने विरोध करते हुए कहा, “और मैं तुम्हें 5 बजे जगाता हूँ।” महाराजजी बस हँसे और अंदर आ गए।

राम

एक बार माताजी महाराजजी के पास आकर बोलीं, “महाराजजी, आइए स्नान कर लीजिए।” उन्होंने उत्तर दिया, “चले जाइए। मैं नहीं नहाना चाहता। आइए, केके, हम वृंदावन चलते हैं!”

राम

महाराजजी सर्दी-जुकाम से बीमार होकर लेटे हुए थे। श्रीमती सोनी, जिन्होंने उन्हें पहले कभी इस तरह बीमार नहीं देखा था, ने उनके पैर मलते हुए कहा, "ओह, महाराजजी, आपके पैर कितने ठंडे हैं।"

“क्या वे हैं, माँ?” वह एक छोटे बच्चे की तरह था।

अमावस्या थी, जिसे देखना शुभ माना जाता है। इसलिए, जैसे कोई बच्चे से कहता है, वैसे ही उसने कहा, "महाराज जी, दरवाजे पर आइए और अमावस्या देखिए, आप ठीक हो जाएंगे।"

“क्या मैं देख पाऊँगी, माँ?” उसने उसे दरवाजे तक पहुँचाया और फुसलाते हुए कहा। “माँ, मुझे ऐसा नहीं लगता।”

"वहाँ है।"

“कहाँ, माँ?” अंत में: “ओह, मुझे दिख गया।”

फिर उसने कहा, "अब तुम कल तक बिल्कुल ठीक हो जाओगे।" उसने उसे वापस बिस्तर पर लिटाया, और अगले दिन वह ठीक हो गया।

राम

एक भक्त ने बताया कि उनके पास कैमरा तो था, लेकिन उन्होंने कभी महाराजजी की तस्वीरें नहीं ली थीं। वह अपना कैमरा दूसरों को उधार देती थीं। एक दिन कैमरा भरा हुआ था और उनके पास था। वह महाराजजी के साथ अकेली थीं और उन्होंने तस्वीरें लेने की कोशिश करने का फैसला किया।

“उन्होंने मेरी टांग खींचने की कोशिश की। आप जानते हैं—कभी इस तरह तो कभी उस तरह पोज देते, कभी सिर दाएं घुमाते, कभी बाएं, ध्यान लगाने का नाटक करते। बहुत मजा आता था।” उन्होंने आश्रम की दीवारों पर लगी महाराजजी की कई तस्वीरें दिखाईं, जो उस समय ली गई थीं।

राम

खाना खाते, नहाते या शौचालय जाते समय, हर समय केवल हमें ही उसके साथ रहने की अनुमति थी। वह कितना प्यारा था! कभी-कभी वह एक छोटे बच्चे की तरह चंचल और खुशमिजाज होता था। कभी-कभी वह बिल्कुल असहाय सा लगता था।

राम

एक आदमी छलावरण वाले जंगल के कपड़े पहनकर कैंची आता और महाराजजी को अपने शिकार के किस्से सुनाता। महाराजजी उस आदमी को अंग्रेज़ी में "शिकारी" कहते थे। एक बार उस आदमी ने बड़ी कुशलता से बताया कि कैसे वह चुपके से घास में रेंगते हुए बाघ की तलाश कर रहा था, और रेंगते हुए धीरे-धीरे घास को हटाता जा रहा था। घटना सुनाते हुए उसने अपने किरदार को अभिनय करके दिखाया। इस पूरे समय महाराजजी पूरी एकाग्रता से सुन रहे थे, और कहानी के माहौल के अनुरूप उनमें डर भी झलक रहा था। "फिर अचानक," शिकारी ने कहा, "मेरे सामने एक बाघ था!"

यह सुनकर महाराजजी बच्चों की तरह उछल पड़े। उन्हें यह कहानी सुनकर बहुत आनंद आया।

राम

एक बार जब पश्चिमी लोग आए तो महाराजजी ने बच्चों जैसी खुशी से चिल्लाकर कहा, "देखो, वे आ रहे हैं! वे मुझसे मिलने आए हैं।"

ये तुम्हें कहाँ से मिला? मुझे तो किसी ने नहीं दिया।

महाराजजी का डाकुओं या लुटेरों से लंबा संबंध रहा है। महाराजजी किसी भी व्यक्ति में अगर कोई आध्यात्मिक या पवित्र भावना होती, तो उसे पहचान कर उसे और भी प्रज्वलित करते, चाहे उस व्यक्ति की सामाजिक स्थिति कुछ भी हो। साथ ही, वे चोरी को बिल्कुल भी बर्दाश्त नहीं करते थे और जब भी उन्हें इसका पता चलता, वे सख्ती से निपटते थे। समाज के कानून तोड़ने वाले तत्वों से वे अक्सर जेलों में मिलते थे, और सड़कों पर नालों में भी। अपने शुरुआती दिनों में

जब वे जंगल में भटकते थे, तो मानसून की बारिश को रोकने के लिए बनाई गई सड़कों के नीचे की बड़ी-बड़ी खाइयाँ रात में उनके लिए आश्रय का काम करती थीं। और यहीं उन्हें ऐसे लोग मिले जो किसी न किसी रूप में उनके भक्त बन गए।

महाराजजी कई नालों में सोते थे। डाकू भी ऐसा ही करते थे। वे अंदर घुसकर जाले वगैरह हटाकर सोते थे। मथुरा के पास एक पुल के नीचे एक बहुत बड़ा नाला है, जहाँ लुटेरे अपने शिकार का इंतज़ार करते हैं। महाराजजी वहाँ सोते थे और डाकू कहते थे, “बाबा, क्या आज रात हमें कुछ पैसे मिलेंगे? हाँ कह दीजिए, नहीं तो हम आपको मार देंगे।”

महाराजजी कहते हैं कि इसीलिए वे सभी बदमाशों को जानते हैं।

नैनीताल में डाकुओं को मुफ्त शिक्षा मिलती थी। बच्चे महाराजजी से मिलने आते थे और महाराजजी उनके पिताओं के बारे में कहते थे, “कभी-कभी उनके हृदय कितने पवित्र होते हैं।” किसी ने महाराजजी को रुद्राक्ष की माला (शिव की पवित्र माला) पहने एक डाकू की तस्वीर दिखाई। महाराजजी ने टिप्पणी की, “कितना सच्चा है! उसने बुरे काम किए, लेकिन अपने कर्तव्य के प्रति वह कितना पवित्र था।”

एक पुलिसकर्मी एक कैदी को शहर से ले जा रहा था और उसके साथ बहुत क्रूरता कर रहा था। महाराजजी ने कहा, "ऐसा मत करो।"

पुलिसकर्मी ने महाराजजी के साथ बहुत बुरा बर्ताव किया, लेकिन महाराजजी ने जवाब दिया, “तुम्हें थोड़ा दयालु होना चाहिए। पता नहीं कब तुम भी ऐसी ही स्थिति में आ जाओ।”

अगले दिन उस पुलिसकर्मी को रिश्वतखोरी के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया और उसे हथकड़ियों में बांधकर पूरे शहर में घुमाया गया।

महाराजजी राम लीला (एक ऐसा त्योहार जिसमें प्रतिदिन रामायण का मंचन होता है) के दौरान एक जेल में गए थे, और कैदी रामायण के पात्रों का अभिनय कर रहे थे। जेल अधीक्षक घमंड से महाराजजी को बता रहा था कि कौन किस अपराध के लिए और कितने समय से जेल में है—जबकि कैदी रामायण के पात्रों का अभिनय कर रहे थे। तभी अधीक्षक के बूढ़े पिता आए, और महाराजजी ने उनसे राम का किरदार निभा रहे कैदी की आरती करने और उसके पैर छूने को कहा। इससे अधीक्षक का मन ललचा गया।

एक महिला और उसकी बहन को महाराजजी बरेली के एक किशोर सुधारगृह में दर्शन कराने ले गए। कैदियों ने महाराजजी के बैठने के लिए एक चबूतरा बनाया था, लेकिन उन्हें उनसे कुछ दूरी पर बैठने के लिए कहा गया था। उन्होंने हाथ जोड़कर कीर्तन किया। महाराजजी ने अधीक्षक को सबके लिए मिठाई खरीदने के लिए कुछ पैसे दिए, लेकिन उनसे कहा कि वे किसी को न बताएं कि पैसे कहाँ से आए हैं। जब वे वहाँ से जा रहे थे, तो उन्होंने कुछ लड़कों को अपनी कोठरियों में बैठे देखा।

महाराजजी के साथ मौजूद महिलाओं में से एक ने पूछा, "महाराजजी, क्या आप उनके लिए

कुछ नहीं कर सकते?"

महाराजजी की आंखों में आंसू थे। "क्या तुम यह जिम्मेदारी लेना चाहते हो?"

राम

एक बार महाराजजी को आवारागर्दी के आरोप में गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया। रात में तीन-चार बार वे पेशाब करने के लिए कोठरी की कुंडी खोलकर बाहर गए, जिससे जेलर बहुत परेशान हुआ। सुबह जेलर ने महाराजजी की इस परेशानी के बारे में अपने वरिष्ठ अधिकारी को बताया। वरिष्ठ अधिकारी ने महाराजजी को पहचान लिया और उनसे माफी मांगते हुए उन्हें भोजन दिया और उन्हें छोड़ दिया। वे महाराजजी के महान भक्त बन गए।

राम

महाराजजी अक्सर अपने शरीर और आश्रमों के संदर्भ में "केंद्रीय जेल" शब्द का प्रयोग करते थे। महाराजजी इस शब्द का प्रयोग तब भी करते थे जब जे केंद्रीय जेल के पुलिस अधीक्षक नहीं बने थे। महाराजजी फतेहगढ़ केंद्रीय जेल में बंद एक एंग्लो-इंडियन भक्त से मिलने जाया करते थे। जे के घर जाकर महाराजजी जेल का खाना मांगते थे और उन्हें कैदियों का खाना परोसा जाता था। वे उसे खाकर कैदियों से मिलने जाते थे। इन लोगों में से कुछ, जो समाज के विभिन्न वर्गों से थे, स्वयं को भक्त मानते थे।

राम

दादा और गुरुदत्त शर्मा महाराजजी के साथ जीप में भूमिधर स्थित मंदिर जा रहे थे। मंदिर के पास पहुँचते ही उन्होंने कुछ लोगों को मंदिर में जबरदस्ती घुसने की कोशिश करते देखा। महाराजजी बहुत उत्साहित हो गए और बोले, “ये हनुमानजी को ढूंढ रहे हैं! चलो चलें! चलो चलें!”

डाकू सड़क पर भाग गए। महाराजजी जीप से कूदे, अपना कंबल गिराया और पूरी रफ्तार से उनके पीछे दौड़ पड़े। दादा और गुरुदत्त शर्मा ने उनका पीछा करने की कोशिश की, लेकिन वे एक-दूसरे के रास्ते में आते रहे, और जब तक वे महाराजजी के पास पहुँचे, तब तक वे वापस लौट रहे थे। वे हँस रहे थे और खुश थे। “मैंने उनका पीछा किया, दादाजी। मैंने उन्हें डरा दिया! मैं इतनी जोर से चिल्लाया कि वे डर के मारे पैंट में पेशाब कर गए। मैंने अच्छा किया, दादाजी। है ना अच्छा?”

राम

एक बार रिश्वत लेने के आरोपी एक निरीक्षक, केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त और महाराजजी एक साथ बैठे थे। महाराजजी ने निरीक्षक से पूछा, "तुम रिश्वत लेते हो, है ना?"

वह आदमी कांपने लगा और रोने लगा। महाराजजी ने कमिश्नर से पूछा, "क्या उसे बाहर निकाल कर जेल भेज दिया जाएगा?"

बॉस ने जवाब दिया, "मुझे नहीं पता।"

तब महाराजजी ने कहा, "अगर उसे बाहर निकाल दिया गया, तो उसके बच्चे और पत्नी मर जाएंगे।"

उस व्यक्ति को बरी कर दिया गया। महाराजजी लोगों से सार्वजनिक रूप से अपराध स्वीकार करवाते थे, जिससे उनका अंतरात्मा शांत हो जाता था, और फिर वे उनके लिए दया की भीख

मांगते थे।

रात

गर्मी की एक तपती रात थी और महाराजजी और कुछ भक्त डी के घर के लॉन में बाहर बैठे थे। महाराजजी एकमात्र कुर्सी पर बैठे थे। सभी उच्च वर्ग के लोग उनके चारों ओर घेरा बनाकर बैठे थे। मैं थोड़ी दूरी पर बैठा देख रहा था। तभी दो लोग आए, एक वकील की पारंपरिक पोशाक में और दूसरा धोती में। दोनों ने प्रणाम किया और मेरे बगल में बैठ गए, लेकिन महाराजजी ने उन्हें अनसुना कर घेरा बनाकर बैठे लोगों से बात की। दोनों नए लोग बहुत अधीर थे और वकील जाना चाहता था। मुझे उनकी बेचैनी महसूस हुई, क्योंकि अगर आप किसी संत के सामने हैं, तो भागने की क्या ज़रूरत है? वकील ने सफेद कपड़े वाले व्यक्ति पर दबाव डाला, जो खड़ा हो गया और महाराजजी का ध्यान अपनी ओर खींचा। उसने कहा कि उसकी एक विनती है।

महाराजजी ने कहा, "आगे बढ़ो।"

उन्होंने आगे कहा, "मेरा दोस्त (वकील) बहुत बड़ी मुसीबत में है।"

तो महाराजजी ने वकील से कहा, "आप वकील तो नहीं हैं?"

उन्होंने उत्तर दिया, "सच है, मैं नहीं हूँ।"

महाराजजी ने पूछा, “तुम्हें क्या परेशानी है?”

वह व्यक्ति जवाब नहीं दे सका लेकिन सफेद कपड़े पहने उसके दोस्त ने कहा, "वह हत्या में शामिल था।"

“क्या तुमने हत्या नहीं की?” महाराजजी ने पूछा।

"नहीं।"

"क्या हत्या की साजिश आपने नहीं रची थी?"

"हाँ।"

महाराजजी को ऐसा लग रहा था मानो वे अपनी आँखों के सामने कोई स्लाइड देख रहे हों। महाराजजी ने कहा, “उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा? क्या वह सीधा-सादा और ईमानदार आदमी नहीं था?”

"हां, लेकिन वह मेरे रास्ते में एक बाधा था।"

महाराजजी ने कहा, “उसके तीन या चार बच्चे थे। यह एक जघन्य अपराध है। क्या तुम्हें अफसोस नहीं है?”

"हाँ।"

“क्या तुम इस जीवन में ऐसा दोबारा नहीं करोगे?”

"नहीं।"

“अब तुम जा सकते हो,” महाराजजी ने कहा।

धोती पहने उस आदमी ने पूछा, "क्या उसे बरी कर दिया जाएगा?"

महाराजजी ने कहा, "हां, उसे माफ कर दिया जाएगा।"

महाराजजी ने हत्यारे से कहा, “उस आदमी की पत्नी और असहाय बच्चों के बारे में सोचो। उनकी देखभाल कौन करेगा?” वह आदमी कांप रहा था।

“बच्चों का ख्याल रखो,” महाराजजी ने आगे कहा, “उनकी मदद करो, और तुम्हें बाद में

एहसास होगा कि तुमने क्या किया है।” मामले के न्यायाधीश ने पहले ही फैसला लिख दिया था, लेकिन देर रात वे उठे और फैसले को बदलकर बरी करने का आदेश दे दिया।

महाराजजी की अनुपस्थिति में वृंदावन आश्रम से सीमेंट की कई बोरियां चोरी हो गईं। उनके लौटते ही उन्होंने माली को बुलाया।

आपने सीमेंट की कितनी बोरियां चुराईं?

“नहीं, महाराजजी, मैंने उन्हें नहीं लिया।”

महाराजजी ने आगे पूछा, “बताइए, आपको इनके लिए कितने पैसे मिले?”

"कुछ नहीं।"

महाराज जी खड़े हुए और माली के चेहरे पर इतनी ज़ोर से थप्पड़ मारा कि वह ज़मीन पर गिर पड़ा। फिर महाराज जी उसे वहीं छोड़कर चले गए। पाँच मिनट बाद, महाराज जी ने दूसरों से पूछा, “वह अब कैसा है? उसे बुलाओ।”

माली फिर महाराजजी के सामने आया।

“क्या तुमने इन्हें चुराया? कितने रुपये?”

माली ने अपना जुर्म कबूल कर लिया और कहा कि उसे सीमेंट के लिए 250 रुपये मिले थे।

महाराजजी ने आश्रम के लेखा-जोखा प्रभारी की ओर मुड़कर उससे कहा, "इसे 250 रुपये और दे दो," और माली से कहा, "अब जाओ!"

माली को नौकरी से निकाल दिया गया और भेज दिया गया। कुछ समय बाद वह लौटा और महाराजजी के पैर छूकर अपनी पुरानी नौकरी वापस देने की विनती की।

महाराजजी ने कहा, “तुम वापस आ गए! इस बार मैं तुम्हें केंद्रीय कारागार में डालूंगा।”

माली को लखनऊ मंदिर भेजा गया, जहां सेवानिवृत्त जेल अधिकारी महोत्रा प्रबंधक थे।

एक पुलिसकर्मी और एक डाकू महाराजजी से मिलने आए थे। दोनों एक-दूसरे के पैर की मालिश कर रहे थे। महाराजजी ने डाकू से कहा, "तुम्हारे लिए इनाम रखा गया है और जो भी तुम्हें पकड़कर लाएगा उसे इनाम मिलेगा, क्या यह सच नहीं है?"

“मुझे नहीं पता, महाराजजी,” डाकू ने उत्तर दिया।

फिर महाराजजी ने पुलिसकर्मी की ओर मुड़कर पूछा, "क्या तुम इसे पहचानते हो?"

उनका खेल कुछ ऐसा ही था।

*

---

[3] यह उद्धरण, और पुस्तक में इसी तरह से दिए गए अन्य उद्धरण, महाराजजी के प्रत्यक्ष उद्धरण हैं।

विश्वास... कोई डर नहीं

महाराजजी जहाँ भी जाते थे, वहाँ होने वाला रंगीन नाटकीय दृश्य; भक्तों के महाराजजी के प्रति विभिन्न विचार और प्रतिक्रियाएँ, और उनकी प्रतिक्रिया में महाराजजी के अनेक रूप; क्रोध और अपशब्द, फटकार, कोमलता—यह सब उस समय और स्थान को भर देता था जब हम उनके आसपास होते थे, और फिर भी... हम जानते थे कि यह संबंध का एक हिस्सा था, सार नहीं। यह कार्य, शब्द या राय नहीं थी, बल्कि कुछ बहुत ही सूक्ष्म था जो महाराजजी हमें दे रहे थे। महाराजजी हमें हमारे भीतर गहराई में धीरे-धीरे रूपांतरित कर रहे थे।

जीवन का ऐसा कोई पहलू नहीं था जो उनसे अछूता रहा हो।

आप जानते हैं, आप कई समस्याओं से भरे हुए महाराजजी के पास जा सकते हैं। आप उनके साथ थोड़ी देर बैठेंगे और आपकी सभी समस्याएं हल हो जाएंगी।

वह आपको सिखाने के लिए पूरी परिस्थिति ही रच देते थे। वह कभी व्याख्यान नहीं देते थे या शास्त्रों से शिक्षा नहीं देते थे, बल्कि घटनाओं और परिस्थितियों के माध्यम से सिखाते थे।

महाराजजी ने हमें आध्यात्मिक, मानसिक और भौतिक, हर स्तर पर मार्गदर्शन दिया। उन्होंने बच्चों के पालन-पोषण, अच्छे वैवाहिक साथी बनने और व्यापार में सफलता के बारे में निर्देश दिए। लेकिन ये कोई विशिष्ट नियम या निर्देश नहीं थे। उन्होंने हृदय परिवर्तन के माध्यम से मार्गदर्शन किया।

एसलेन के कुछ प्रभावशाली लोगों ने मुझे दक्षिण अमेरिका में एक सूफी शिक्षक के साथ अध्ययन करने के लिए आमंत्रित किया। मैं इस पूरे मामले को लेकर बहुत अनिश्चित था, इसलिए मैंने भारत में केके को पत्र लिखकर उनसे महाराजजी से यह पता लगाने को कहा कि क्या मुझे इन अध्ययनों के लिए चिली जाना चाहिए। तब केके का उत्तर आया: "महाराजजी कहते हैं कि यदि आप चाहें तो आप जाकर एक सूफी संत के साथ अध्ययन कर सकते हैं।"

जब मैंने वह पत्र पढ़ा तो मेरे दिल में कुछ हलचल हुई और अचानक मुझे पूरी तरह से यकीन हो गया कि मैं नहीं जाना चाहता, और इसलिए मैं नहीं गया। भारत की अपनी अगली यात्रा पर, जब मैंने के.के. से इस पत्र के बारे में बात की, तो उन्होंने मुझे बताया, "जब मैंने महाराजजी से पूछा, तो उन्होंने कहा, 'अगर वह चाहता है, तो उसे जाने दो...' और फिर उन्होंने कहा, 'वह क्यों जाना चाहेगा?' लेकिन फिर उन्होंने तुरंत कहा, 'पत्र में वह आखिरी हिस्सा मत लिखना।'"
(आर.डी.)

इसी गहरे स्तर पर हमने महाराजजी को चरवाहा और खुद को झुंड का हिस्सा महसूस किया। इस अनकही प्रक्रिया के माध्यम से हमने उस जगह विश्वास विकसित किया जहाँ पहले भय था। हमारा विश्वास यह था कि ब्रह्मांड की बदलती अनिश्चितताओं के बीच, यदि हम महाराजजी को अपने हृदय में रखें, यदि हम विश्वास के साथ उनकी छत्रछाया में रहें, तो सब ठीक हो जाएगा।

महाराजजी के साथ कई वर्षों से रहने वाले भक्तों के जीवन में अक्सर निर्भीकता झलकती

थी, जो उनकी सुरक्षा में उनके विश्वास का परिणाम थी। कुछ भक्तों को उन्होंने विशेष रूप से निर्भीक होना सिखाया था।

एक बार महाराजजी ने मुझे अपने पास बुलाया और कहा, “राम दास, तुम्हें किसी बात से डरने की जरूरत नहीं है।” (आर.डी.)

राम

एक बार जब मेरी आर्थिक स्थिति खराब थी, तब महाराजजी मेरे घर आए और कहा कि मुझे चिंता नहीं करनी चाहिए। मैंने उनसे कहा कि मैं चिंता नहीं कर रहा हूँ—हालांकि मैं वास्तव में चिंतित था। “नहीं, नहीं, नहीं। आपको बिल्कुल भी चिंता नहीं करनी चाहिए।”

यह अजीब है। मैं अब भी वही इंसान हूँ, लेकिन संकट के समय में भी मुझे लगता है कि देर-सवेर सब ठीक हो जाएगा। महाराज जी ही ऐसा करते हैं: मुझे कभी चिंता नहीं हुई।

मेरी पत्नी कहती है, "तुम बिलकुल बदल गए हो। अब तो गंभीर मामलों को भी हल्के में लेते हो।"

उन्होंने यह नहीं कहा कि वे ऐसा करेंगे, लेकिन उस क्षण उन्होंने मेरी चिंता दूर कर दी।

राम

महाराजजी ने मेरी सारी ज़िम्मेदारियाँ अपने कंधों पर ले ली थीं। उन्होंने मुझसे कहा, “किसी चीज़ से मत डरो। कोई तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता!” जब वे हमारे सामने शारीरिक रूप से मौजूद थे, तब हममें इतनी हिम्मत नहीं थी, लेकिन अब मुझमें दिन-ब-दिन हिम्मत बढ़ती जा रही है। अब उनकी शक्ति काम कर रही है। अब मैं उन्हें सपनों में देखता हूँ, लेकिन बस एक पल के लिए। मुझे पूरा विश्वास है कि वे अपने भक्तों के लिए काम कर रहे हैं।

राम

केके को बहुत डर था—आत्मा का दमन। महाराजजी ने कहा, “तुम डरते हो। तुम बहुत भोले हो और वे चतुर हैं और तुम्हें मूर्ख बनाते हैं। तुम ब्राह्मणों से डरते हो। लेकिन तुम किसी से नहीं डरोगे।”

केके ने उत्तर दिया, "इसके लिए मैं आपके आशीर्वाद की कृपा चाहता/चाहती हूं।"

फिर महाराजजी ने उसकी पीठ पर दो-तीन बार थपथपाया, और उसके बाद सभी ने केके में बदलाव देखा।

राम

एक बार कम वजन वाले फलों के डिब्बे पैक करने के आरोप में अधिकारियों से मेरी शिकायत की गई। मैं निर्दोष था, लेकिन इस आरोप ने मुझे चिंतित कर दिया। महाराजजी ने मुझे फटकारा:

“डरपोक! कभी डरपोक मत बनो! बहादुर बनो! डरपोक! क्यों डरते हो? क्या मुझे नहीं जानते? मैं तुम्हारे साथ हूँ!” फिर उन्होंने मुझे याद दिलाया कि राम ने अपने भक्तों की रक्षा कैसे की थी। उन्होंने कहा कि वे भी हमेशा अपने भक्तों की रक्षा करेंगे। चाहे वे सैकड़ों हत्याएं ही क्यों न कर दें, वे उन्हें पूरी सुरक्षा प्रदान करेंगे।

जिन लोगों को उदाहरणों की आवश्यकता थी, उनके लिए यह साबित करने के लिए उदाहरणों की कोई कमी नहीं थी कि महाराजजी में विश्वास करना उचित था।

मैं कैंची में ठहरा हुआ था। मैं महाराजजी के पास गया और कहा, “अब मुझे जाना ही होगा। यह मेरे फलों का मौसम है और मुझे वहाँ होना ही है। नहीं तो मुझे बहुत बड़ा नुकसान होगा।”

मैं एक सांसारिक व्यक्ति हूँ, आप जानते ही हैं। मुझे अपने फल तोड़कर बंबई और ऐसी ही जगहों पर भेजने पड़ते हैं। कैंची में रहने के दौरान, फल और भी पकते जा रहे थे और जल्द ही इतने पक जाएँगे कि उन्हें भेजना असंभव हो जाएगा।

महाराजजी ने कहा, “नहीं, नहीं, तुम यहीं रुकोगे। तुम कल जाओगे।”

इस तरह पंद्रह दिन बीत गए। फिर अंत में महाराजजी ने कहा, “कल मैं तुम्हें भेज दूंगा। इस बात का पक्का यकीन रखना।”

अगले दिन जब मैं यहाँ आया तो सारे फल बहुत ज़्यादा पक चुके थे। मैंने सोचा, “देखो, महाराज जी ने तो मुझे नुकसान ही पहुँचा दिया।” सारे फल बहुत ज़्यादा पक चुके थे, और मैं उन्हें केवल कानपुर या इलाहाबाद के स्थानीय बाज़ारों में ही भेज सकता था—बंबई में नहीं, जहाँ हमें बेहतर दाम मिलते थे।

और फिर क्या हुआ? बाज़ार में भारी मंदी आ गई! जिन लोगों ने अपने फल बंबई, कलकत्ता या मद्रास भेजे थे, वे माल ढुलाई का खर्च भी नहीं निकाल पाए! और मैंने, जिसने अपने फल स्थानीय बाज़ारों में भेजे थे, उम्मीद से कहीं ज़्यादा कमा लिया। मैं उस महाराजजी से बहुत नाराज़ था जिन्होंने मुझे कैंची में बेवजह रोक रखा था। भला कौन जाने उनके कारनामे?

राम

किसी कारणवश एक परिवार के दुश्मनों ने उनके घर को घेर लिया और उन्हें तीन दिन और तीन रातों तक अंदर बंद रखा। अगर वे और ज़्यादा देर अंदर रहते तो भूख से मर जाते, और अगर बाहर जाते तो उन दुष्टों से पिट जाते। जब परिवार अंदर अपनी दुविधा पर चर्चा कर रहा था, तभी उन्हें अपने दरवाजे पर किसी के चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दी: “दरवाजा खोलो! दरवाजा खोलो! बाहर आओ और लड़ो! क्या तुम जातिवादी हो या कायर? आओ!” उन्होंने बाहर झाँका और महाराजजी को लाठी लहराते और चिल्लाते हुए देखा। वे सबने लाठियाँ उठाईं और महाराजजी की ओर दौड़ पड़े। जब हमलावरों ने परिवार को लाठियों से लैस और इस मोटे आदमी के नेतृत्व में आते देखा, तो वे भाग गए।

तब महाराजजी ने कहा, “फलां-फलां को फोन करो और उन्हें बताओ कि मैं यहां हूं।”

आधे घंटे के भीतर ही पुलिस जनरल और सरकारी मंत्री उस व्यक्ति के घर के बैठक कक्ष में बैठे थे। इसके बाद परिवार पर हमले बंद हो गए।

राम

एक आदमी का आठ महीने का बच्चा तीस फुट ऊंची बालकनी पर खड़ा था। नौकर और बच्चे का भाई वहां पतंग उड़ा रहे थे, तभी बच्चा तीस फुट नीचे संगमरमर के फर्श पर गिर गया। मां ने बच्चे को पकड़ने की कोशिश की, लेकिन पकड़ नहीं पाई। बच्चा हिला तक नहीं, लेकिन फिर भी ऐसा लग रहा था कि उसकी कोई हड्डी नहीं टूटी है। अचानक बच्चा हंस पड़ा, और डॉक्टरों को कुछ भी गलत नहीं मिला और उन्होंने कहा कि यह असंभव है। कुछ दिनों बाद, महाराजजी उनके घर आए और बोले, “तुम परेशान थे। तुम्हें अभी तक एहसास नहीं हुआ कि तुम्हारे कंधों पर कौन है, जो तुम्हारी रक्षा कर रहा है। बच्चा जमीन पर नहीं गिरा। वह मेरी गोद में

गिरा।”

राम

एक दिन मद्रास में रहते हुए महाराजजी ने कहा, “मैं अपनी आँखें किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाना चाहता हूँ। यहाँ कौन अच्छा डॉक्टर है?” मैंने उन्हें बताया कि पास में ही एक विशेषज्ञ डॉक्टर है। महाराजजी ने कहा, “ठीक है। मैं अपनी आँखें उन्हें दिखा देता हूँ।” उसी शाम मुझे पता चला कि वह डॉक्टर शहर से बाहर हैं, इसलिए मैंने सुबह 10:30 बजे एक दूसरे विशेषज्ञ डॉक्टर से मिलने का समय तय कर लिया।

जब मैंने महाराजजी को स्थिति समझाई, तो उन्होंने पूछा कि दूसरा डॉक्टर कौन है, और जब मैंने उन्हें उसका नाम बताया तो महाराजजी ने कहा, "नहीं, नहीं! मैं पहले डॉक्टर को देखना चाहता हूँ, इस दूसरे को नहीं।"

महाराजजी ने मुझे तीन दिन बाद आने को कहा। यह बहुत लंबा समय था और मैं बेचैन था। दो दिन बाद पहले डॉक्टर वापस आ गए, इसलिए मैंने महाराजजी से मिलने का समय तय किया। मैं उन्हें बताने के लिए तुरंत धर्मशाला गया, लेकिन महाराजजी का सामान अभी बाहर ले जाया जा रहा था। जब मैंने उन्हें बताया कि डॉक्टर आ गए हैं, तो वे हँसे और बोले, "आज मैं रामेश्वरम जा रहा हूँ।" उन्होंने मुझे अपने साथ जाने से मना कर दिया।

लगभग एक महीने बाद, मुंबई जाते समय, मेरा चश्मा टूट गया। वहाँ एक विशेषज्ञ ने मेरे लिए नया चश्मा बनाया, लेकिन उसे पहनते ही पाँच मिनट के भीतर मुझे तेज़ सिरदर्द हो गया। विशेषज्ञ ने सब कुछ जाँच कर कहा कि चश्मा ठीक है, लेकिन इसे पहनने की आदत पड़ने में कुछ दिन लगेंगे।

मैं मद्रास लौट आया, लेकिन फिर भी मैं उन चश्मों को कुछ पलों से ज़्यादा देर तक नहीं पहन पाता था। मैंने उन्हें मद्रास के एक विशेषज्ञ को दिखाने का फैसला किया और सोचने लगा कि मुझे किसके पास जाना चाहिए—पहले डॉक्टर के पास या दूसरे के पास। दूसरा डॉक्टर बहुत जल्दी काम करता था और हमेशा उपलब्ध रहता था, जबकि पहला डॉक्टर बहुत व्यस्त रहता था और उससे मिलने के लिए घंटों इंतज़ार करना पड़ता था। लेकिन मुझे महाराजजी की कही बात याद आ गई, इसलिए मैंने पहले डॉक्टर से अपॉइंटमेंट ले लिया। जब मैंने अपने बेटे को बताया, तो उसने भी जाँच के लिए साथ आने को कहा। डॉक्टर ने मेरी आँखों की जाँच की और पाया कि बॉम्बे के डॉक्टर द्वारा दिए गए नए चश्मे गलत नंबर के थे। उन्हें ठीक कर दिया गया। जब उन्होंने मेरे बेटे की आँखों की जाँच की, तो पाया कि कॉर्निया फटा हुआ था—इतना गंभीर कि तुरंत ऑपरेशन की ज़रूरत थी। हालाँकि मेरे बेटे की कॉलेज की अंतिम परीक्षाएँ छूट गईं, लेकिन उसकी आँखें बच गईं। यही वह विषय था जिस पर महाराजजी ने एक महीने पहले लीला की थी।

राम

इलाहाबाद के एक श्रद्धालु ने बताया कि उनकी मुलाकात महाराजजी से चालीस वर्ष पूर्व हुई थी। वे रात्रि के समय यात्रा कर रहे थे और रास्ता भटक गए थे, तभी अचानक उन्हें एक गुफा दिखाई दी जिसमें रोशनी थी। गुफा के पास पहुँचते ही उन्होंने देखा कि महाराजजी वहाँ बैठे हैं। महाराजजी ने उन्हें भोजन कराया और भोजन के बाद कहा, “तुम रास्ता भटक गए हो। उस दिशा में जाओ।” लगभग पंद्रह कदम चलने पर श्रद्धालु को अचानक गाँव दिखाई दिया। लेकिन जब

उन्होंने पीछे मुड़कर देखा, तो गुफा और उसके आसपास का इलाका दोनों ही गायब हो चुके थे।

राम

महाराजजी अक्सर एक गरीब भक्त को लंबी तीर्थयात्राओं पर अपने साथ चलने के लिए बुलाते थे। भक्त हमेशा बिना किसी शिकायत के सहमत हो जाता था, हालांकि उसे अक्सर इन यात्राओं के लिए पैसे उधार लेने पड़ते थे। एक बार महाराजजी ने उसे बद्रीनाथ आने के लिए कहा। जाने से पहले, उस व्यक्ति ने अपनी पूजा की मेज पर रखी महाराजजी की छोटी सी तस्वीर की ओर इशारा करते हुए अपनी पत्नी से कहा कि अगर किसी कारणवश वह उनके जाने के बाद उनसे बात करना चाहे, तो वह महाराजजी की तस्वीर को संबोधित करे, क्योंकि वे दोनों साथ होंगे। कुछ दिनों बाद, हिमालय की ऊँचाई पर, महाराजजी अचानक उस भक्त की ओर मुड़े और बोले, "तुम यहाँ क्यों आए हो?"

भक्त ने उत्तर दिया कि वह महाराजजी के अनुरोध पर आया था।

महाराजजी ने कहा, “तुम्हारे घर में न दाल है, न आटा, न कुछ भी। तुम्हारी पत्नी बहुत चिंतित है क्योंकि खाने को कुछ नहीं है और तुम बहुत दूर हो। तुम्हें कम से कम उनके लिए रोटी तो उपलब्ध करानी चाहिए थी!”

लेकिन महाराजजी की उपस्थिति लोगों पर एक मदहोश कर देने वाला प्रभाव डालती थी। उनकी चिंताएँ दूर हो जाती थीं और उन्हें लगता था कि महाराजजी सब कुछ अच्छे के लिए संभाल रहे हैं। अपनी पत्नी को भोजन के बिना छोड़ने के लिए भक्त को फटकार लगाने के आधे घंटे बाद, महाराजजी ने पुकार कर कहा, “भोजन आ गया है! उन्हें भोजन मिल गया है। कश्मीरी माँ ने उन्हें दिया है। चिंता मत करो।”

जब वह लौटा, तो भक्त ने अपनी पत्नी से पूछताछ की। उसने बताया कि जब खाना खत्म हो गया, तो वह महाराजजी की तस्वीर के पास गई और उन्हें बताया कि घर में अब खाना नहीं बचा है। कुछ ही मिनटों में एक धनी पड़ोसी, जो उसे बेटी की तरह मानती थी, आटे, चावल, दाल आदि से भरे थैले लेकर घर आई। वह तस्वीर के पास गई और महाराजजी को धन्यवाद दिया।

राम

एक बार महाराजजी ने मुझे सांप के काटने से बचाया था। मैं हल्द्वानी के एक छोटे से कमरे में सर्दियों का मौसम गुजार रहा था, जहाँ मैं किसी से बात कर रहा था, तभी अचानक बिना किसी वजह के मैं बीच में ही रुक गया। मैंने मुड़कर अपने कमरे में देखा। यह बहुत अजीब था। एक सांप कमरे में रेंग रहा था, और अंदर घुसकर एक बोरी के नीचे चला गया। मैंने सोचा: आखिर मैं उसी समय क्यों मुड़ा? यह नीम करोली बाबा का ही काम होगा (भले ही महाराजजी शारीरिक रूप से सैकड़ों मील दूर थे)। मैंने यह भी सोचा कि यह जहरीला सांप होगा। नहीं तो महाराजजी मुझे इसे क्यों दिखाते? मैंने बड़ी सावधानी से सांप को एक डिब्बे में डाला और उसे बाहर छोड़ दिया।

लगभग पाँच साल बाद, मैं महाराजजी से शिकायत कर रहा था कि वे मेरी किसी भी तरह से मदद नहीं कर रहे हैं और न ही मेरी रक्षा कर रहे हैं; मुझे बहुत सारी परेशानियाँ हो रही थीं। महाराजजी ने कहा, “क्यों? मैंने एक बार तुम्हारी जान बचाई थी। मैंने तुम्हें साँप से बचाया था।” मुझे मन ही मन पता था कि उन्होंने ही ऐसा किया था। ऐसी बातें संयोग से नहीं होतीं।

राम

कैंची में एक अंधेरी, बरसाती रात को, महाराजजी ने कई भक्तों को जगाया और कहा कि सड़क पर आधा मील आगे एक जीप फंसी हुई है। उन्होंने कहा कि यात्रियों के लिए चाय ले जाओ। महाराजजी के कहने पर भक्त दौड़ पड़े। महाराजजी चाहते थे कि वे उस जगह जाएं जहां कोई रास्ता नहीं था। उन्हें जीप मिली जिसमें चार महिलाएं और एक पुरुष थे, और उनके पास कंबल भी नहीं थे। महाराजजी ने और भी भक्तों को जीप के पास भेजा और उनसे कहा, “चाय ठंडी हो गई होगी। उनके लिए और चाय लाओ।” जब आखिरकार लोगों को मंदिर लाया गया, तो महाराजजी ने कहा, “मैं तीस साल पहले इन महिलाओं के घर जाया करता था और उन्होंने मुझे कंबल दिया था और मुझ पर दया दिखाई थी।” उन्होंने उन्हें कंबल दिए और वे उन्हें पहले से याद करने लगीं।

राम

आम तौर पर जब महाराजजी कहीं बाहर होते थे, तो वे जहाँ भी होते थे, वहीं से अपना आशीर्वाद भेजते थे। वे फ़ोन नहीं उठाते थे। लेकिन जब मैं 1967 में छह महीने के लिए बाहर था, तो वे लगभग हर महीने कानपुर में मेरे परिवार से मिलने आते थे। जब मैं जर्मनी में था, तो मैं और मेरा सहकर्मी कुछ समय के लिए कार खरीदने और बाद में उसे बेचने के बारे में सोच रहे थे। हमने कार पहले ही तय कर ली थी, जिसे हम रविवार को खरीदने के लिए दृढ़ थे। शनिवार को आमतौर पर हमें कोई डाक नहीं मिलती थी, लेकिन बिक्री से ठीक एक दिन पहले मेरी पत्नी का एक पत्र आया। उसने कहा,

“आज महाराज जी आए हैं। उनका कहना है कि तुम कार खरीदने जा रहे हो और तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। अगर तुम्हारे मन में ऐसा कोई इरादा है, तो महाराज जी का आदेश है कि उसे छोड़ दो।” मैंने अपने दोस्त से कहा कि सौदा रद्द हो गया है और अगर उसने कार खरीदी तो मैं उसके साथ नहीं चलूंगा।

महाराजजी ने ये कैसे किया? एक सुबह वो मेरे परिवार से मिलने आए और मेरी पत्नी से वो पत्र लिखने को कहा। उन्होंने कहा, “वो कुछ बेवकूफी भरा काम करेगा! उसे रोक दो!” वो चले गए और दो घंटे बाद फिर आए और मेरी पत्नी से पूछा कि क्या उसने पत्र लिख दिया है। उसने नहीं लिखा था। उन्होंने कहा, “ठीक है, मैं तब तक यहीं रुकूंगा जब तक तुम पत्र लिखकर पोस्ट नहीं कर देती, वरना बहुत देर हो जाएगी।” पत्र पोस्ट होने के बाद ही महाराजजी गए। पत्र सोमवार तक हम तक पहुँच सकता था, लेकिन समय पर पहुँच गया। शनिवार दोपहर को डाक आने का वो पहला और आखिरी मौका था। ये उनकी कृपा थी। लेकिन मेरी पत्नी को बताने के लिए वो कैंची से इतनी दूर क्यों आए? अगर वो चाहते तो उनके सामने काफी लोग थे जिनसे बात करना ज़रूरी था। उन्होंने मेरे बारे में क्यों सोचा?

राम

हरिद्वार में एक बार एक आदमी नदी में नहा रहा था और उसका पैर फिसल गया। वह एक लकड़ी के लट्ठे की तरह भंवर में बहता चला गया। वह अपनी पत्नी से काफी बड़ा था (शादी के समय वह बावन साल का और वह पंद्रह साल की थी), जो उससे बहुत प्यार करती थी। महाराजजी का नाम लेकर उसने नदी में छलांग लगाई और अपने पति को किनारे पर खींच लाया।

जब वे महाराजजी के पास गए, तो वहां के लोगों ने उन्हें बताया कि महाराजजी बहुत कठोर और हिंसक हो गए थे और किसी को भी अपने पास नहीं आने देते थे। महिला ने जाकर धीरे से दरवाजा खटखटाया। उन्होंने उसे प्यार से अंदर बुलाया और उसकी नथनी के बारे में पूछा (जो नदी में गिर गई थी)। (नथनी का गिरना भारतीय महिलाओं के लिए अपशगुन माना जाता है, जो उनके पति की मृत्यु का संकेत देता है।) जब उसका पति आया, तो महाराजजी ने कहा, "तुम नदी में ऐसे बह रही थी जैसे कोई लकड़ी का टुकड़ा घूम रहा हो।" जाहिर है, महाराजजी के व्यवहार में आए बदलाव, उनके हिंसक स्वभाव ने ही उस आदमी की जान बचाई थी।

राम

महाराजजी अपने सभी भक्तों का अनेक प्रकार से ध्यान रखते हैं। एक दिन एक भक्त कैंची जा रहा था और रास्ते में एक ढाबे पर रुका और उसने कुछ तले हुए पकौड़े खाए। (उन दिनों वह प्रतिदिन पकौड़े खाता था।) कैंची पहुँचते ही महाराजजी ने सबसे पहले कहा, “क्या तुम पकौड़े खाते हो? तुम तो इन्हें बहुत दिनों से खा रहे हो! क्यों खाते हो? इससे तुम्हारा पेट खराब हो जाएगा।” उस दिन से उस भक्त ने फिर कभी बाजार से पकौड़े नहीं खाए।

राम

एक महिला भक्त कमरे के कोने में एक अजनबी आदमी के पास बैठी थी। महाराजजी ने उससे कहा, “आओ यहाँ बैठो। दूसरों के बुरे कर्मों का फल व्यक्ति को भुगतना पड़ता है।”

राम

बंबई के एक डॉक्टर, जो नेहरू समेत कई वीआईपी लोगों का इलाज करते थे, थोड़े सख्त मिजाज के थे (हालाँकि वे अक्सर दूसरों की मालिश करते थे)। जब डॉक्टर महाराजजी से मिलने आए, तो एक और भक्त वहाँ मौजूद था। महाराजजी ने डॉक्टर को आते देखा और दूसरे कमरे में चले गए। उन्होंने कहा, "मैं उससे नहीं मिलूंगा।" तभी दूसरे कमरे से महाराजजी चिल्लाए, "तुम नेहरू को नहीं बचा सके। क्या बात है?"

डॉक्टर ने कहा, "जब मैंने उसकी मालिश की तो उसकी हालत में सुधार हुआ, लेकिन फिर उसकी नसें बहुत खराब हो गईं।" दूसरे श्रद्धालु ने डॉक्टर से पूछा कि क्या उन्होंने भारत से बाहर यात्रा की है।

"हां, बारह महीने तक वीआईपी लोगों के साथ उपस्थित रहने के लिए।"

उसने उससे पूछा कि वह महाराजजी को कैसे जानता है।

उन्होंने उत्तर दिया, “मैंने कभी संतों में विश्वास नहीं किया। 1942 के स्वतंत्रता आंदोलन में मैं एक क्रांतिकारी था और मुझे गोली मारने के आदेश जारी किए गए थे। मैं बद्रीनाथ के पास कांपरायाग में था। मैं एक छोटी सी धर्मशाला में था और जब मैं स्नान कर रहा था, महाराजजी पास ही एक स्वामी को फटकार रहे थे। जब मैं वहाँ से गुजर रहा था, महाराजजी ने मुझे पकड़ लिया और कहा, ‘तुम्हें भूख लगी है। उस कमरे में जाओ।’ उस कमरे में ताजी पूरियों और आलू से भरी दो थालियाँ थीं, जिन्हें महाराजजी ने मुझे खाने को कहा। जब मैंने सब खा लिया, तो महाराजजी ने कहा, ‘और ले जाओ। अब भागो। एक घंटे के भीतर पुलिस यहाँ आ जाएगी। तिब्बत जाओ। लेकिन इस रास्ते से मत जाना, उस रास्ते से जाना।’ “लेकिन मुझे महाराजजी पर कुछ संदेह था और मैंने एक मित्र को वहीं रुककर देखने के लिए छोड़ दिया। एक घंटे के भीतर

एक जिला पुलिस अधीक्षक, जो महाराजजी को जानता था, एक तलाशी दल के साथ मेरी तलाश में आया।" महाराजजी ने उनसे पूछा, "इस समय कौन आएगा?" और जब वे तिब्बत की ओर बढ़ने लगे, तो महाराजजी ने उन्हें चेतावनी दी: "यह हिमस्खलन का मौसम है, और यदि आप आगे बढ़े तो हिमस्खलन आपको मार डालेगा। वापस लौट जाओ।" इसलिए वे वापस लौट गए।

राम

एक दिन जब महाराजजी नीब करोरी के पास एक गाँव में थे, तो एक स्त्री कुएँ से पानी लेने आई। महाराजजी हँस पड़े। जब एक भक्त ने उनसे पूछा कि वे क्यों हँसे, तो उन्होंने बताया कि वह स्त्री और उसका पति तीन मील दूर एक गाँव में रहते हैं और छह घंटे में उसी पानी को लेने के चक्कर में उसका पति मर जाएगा। "उसे प्यास लगेगी और वह पानी के घड़े के पास जाएगा और उसे एक कोबरा काट लेगा।" लेकिन महाराजजी ने आगे कहा, अगर भक्त चाहे तो वह उसे बचा सकता है। भक्त ने तुरंत दो-तीन आदमियों को भेजा, जो दौड़कर आए और उस आदमी को पानी लेने जाते ही रोक लिया। सचमुच, वहाँ एक कोबरा था और वह आदमी बच गया।

राम

आगरा से एक वनपाल कलकत्ता जाते समय कैंची आया, और महाराजजी ने उससे कहा, "आज मत जाओ।"

"लेकिन महाराज जी, मुझे जाना होगा। मेरा इंटरव्यू है।"

महाराजजी ने ज़िद की। वनपाल नाराज़ था लेकिन नहीं गया। अगले दिन उसने अखबारों में पढ़ा कि हाल के समय में भारत की सबसे भीषण ट्रेन दुर्घटना उसी ट्रेन से हुई थी जिसमें वह यात्रा करने वाला था।

राम

1943 में महाराजजी फतेहगढ़ आए, जहाँ एक वृद्ध दंपति रहते थे जिनका बेटा बर्मा में युद्ध लड़ रहा था। जब महाराजजी उनके घर आए तो उन्होंने अपना थोड़ा-बहुत सामान उन्हें दे दिया। उनके पास केवल दो पलंग थे। महाराजजी ने कहा, "मैं अब सोऊंगा।" उन्होंने उन्हें एक पलंग और एक कंबल दे दिया। वृद्ध दंपति पूरी रात महाराजजी की निगरानी करते रहे। वे सुबह 4:00 बजे तक पलंग पर कराहते और करवटें बदलते रहे। 4:30 बजे महाराजजी शांत हुए; फिर उन्होंने पलंग उठाया और उसमें कुछ लपेटा। उन्होंने बूढ़े से कहा, "यह बहुत भारी है। इसमें क्या है यह देखने की कोशिश मत करना। इसे गंगा में फेंक देना जहाँ गहरा पानी है। कोई तुम्हें न देखे वरना तुम्हें गिरफ्तार कर लिया जाएगा।" जब वे उसे गंगा में ले जा रहे थे तो उन्होंने उसे छुआ और पाया कि वह गोलियों से भरा हुआ था।

जब वह लौटा, तो महाराजजी ने उस बूढ़े से कहा, "चिंता मत करो। तुम्हारा बेटा एक महीने में आ रहा है।" कुछ सप्ताह बाद जब बेटा आया, तो उसने बताया कि वह लगभग मर ही गया था। उसकी टुकड़ी पर दुश्मन ने घात लगाकर हमला किया था और संयोग से वह एक खाई में गिर गया था। पूरी रात गोलियां चलती रहीं। सुबह 4:00 बजे जापानियों ने देखा कि उन्होंने सभी को मार डाला है, इसलिए वे पीछे हट गए। 4:30 बजे भारतीय सेना आ गई। बेटा अकेला जीवित बचा था। (जिस रात महाराजजी माता-पिता से मिलने गए थे, उसी रात यह घात लगाकर हमला हुआ था।)

राम

एक दिन महाराजजी ने मैदानी इलाके से दूर स्थित पहाड़ी कस्बे भीमताल तक जाने के लिए वाहन का अनुरोध किया। वे सीधे एक भक्त के घर गए और वहाँ के लोगों से कहा कि वे शिव मंदिर में स्थित पुराने तीर्थयात्रा विश्रामगृह में जाकर वहाँ ठहरे हुए किसी भी व्यक्ति को वापस ले आएं। वर्षों से उस जर्जर विश्रामगृह में कोई नहीं ठहरा था, इसलिए भक्तों को यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि दरवाजे अंदर से बंद थे। उन्होंने दरवाजा खटखटाया और आवाज लगाई, लेकिन किसी ने जवाब नहीं दिया। फिर वे वापस लौटे और महाराजजी को सूचना दी।

महाराजजी उस घर से निकलकर एक अन्य भक्त से मिलने गए, जहाँ उन्होंने फिर से लोगों को विश्रामगृह में यह हिदायत देकर भेजा कि विश्रामगृह में रहने वाले व्यक्ति के बिना वापस न लौटें। उन्होंने द्वार पर खूब हंगामा किया, अंततः एक बूढ़े व्यक्ति ने खिड़की खोली। उन्होंने भक्तों को वहाँ से भगाने की कोशिश की, लेकिन वे डटे रहे, और अंत में उस व्यक्ति और उसकी पत्नी को महाराजजी के पास लाया गया। तुरंत ही महाराजजी चिल्लाने लगे, "क्या तुम्हें लगता है कि तुम भूखे रहकर भगवान को धमका सकते हो? वह अपने भक्तों को इतनी आसानी से मरने नहीं देते। प्रसाद ग्रहण करो!" उन्होंने पूरियां और मिठाई मंगवाई, लेकिन उस व्यक्ति ने मना कर दिया। महाराजजी ने ज़ोर दिया, और अंततः दोनों ने भोजन किया।

यह दंपत्ति दक्षिण भारत से बद्रीनाथ और अन्य पवित्र स्थानों की तीर्थयात्रा पर आए थे। वे एक बहुत ही धनी परिवार से थे, लेकिन उन्होंने अपने घर-परिवार को छोड़कर अपने शेष वर्ष प्रार्थना में समर्पित करने का निश्चय किया था। उन्होंने अपने खर्च पर यात्रा करने और कभी भीख न मांगने का संकल्प लिया था। बद्रीनाथ से लौटते समय उनका सारा पैसा और सामान चोरी हो गया। उनके पास केवल भीमताल तक बस का किराया ही बचा था, जहाँ उन्हें एक सुनसान विश्राम कक्ष मिला। उन्होंने वहीं रुकने और मरने का निश्चय किया, क्योंकि उन्हें लगा कि यही भगवान की इच्छा है। उन्हें तीन दिनों तक बिना भोजन के अंदर बंद रखा गया, जिसके बाद महाराजजी ने उन्हें बाहर निकाला। महाराजजी ने जोर देकर कहा कि वे मद्रास वापस जाने के लिए पैसे स्वीकार करें। उन्होंने कहा कि वे भीख नहीं मांगेंगे। महाराजजी ने कहा कि वे भीख नहीं मांग रहे हैं और घर पहुँचकर वे पैसे डाक से वापस भेज सकते हैं। उन्होंने पैसे स्वीकार कर लिए और उन्हें विदा कर दिया गया।

राम

"हे कबीर, जब स्वयं भगवान तुम्हारी रक्षा करते हैं तो किसी से क्यों डरना? जब तुम हाथी पर बैठे हो तो क्या फर्क पड़ता है अगर हजार कुत्ते जोर-जोर से भौंकें?"

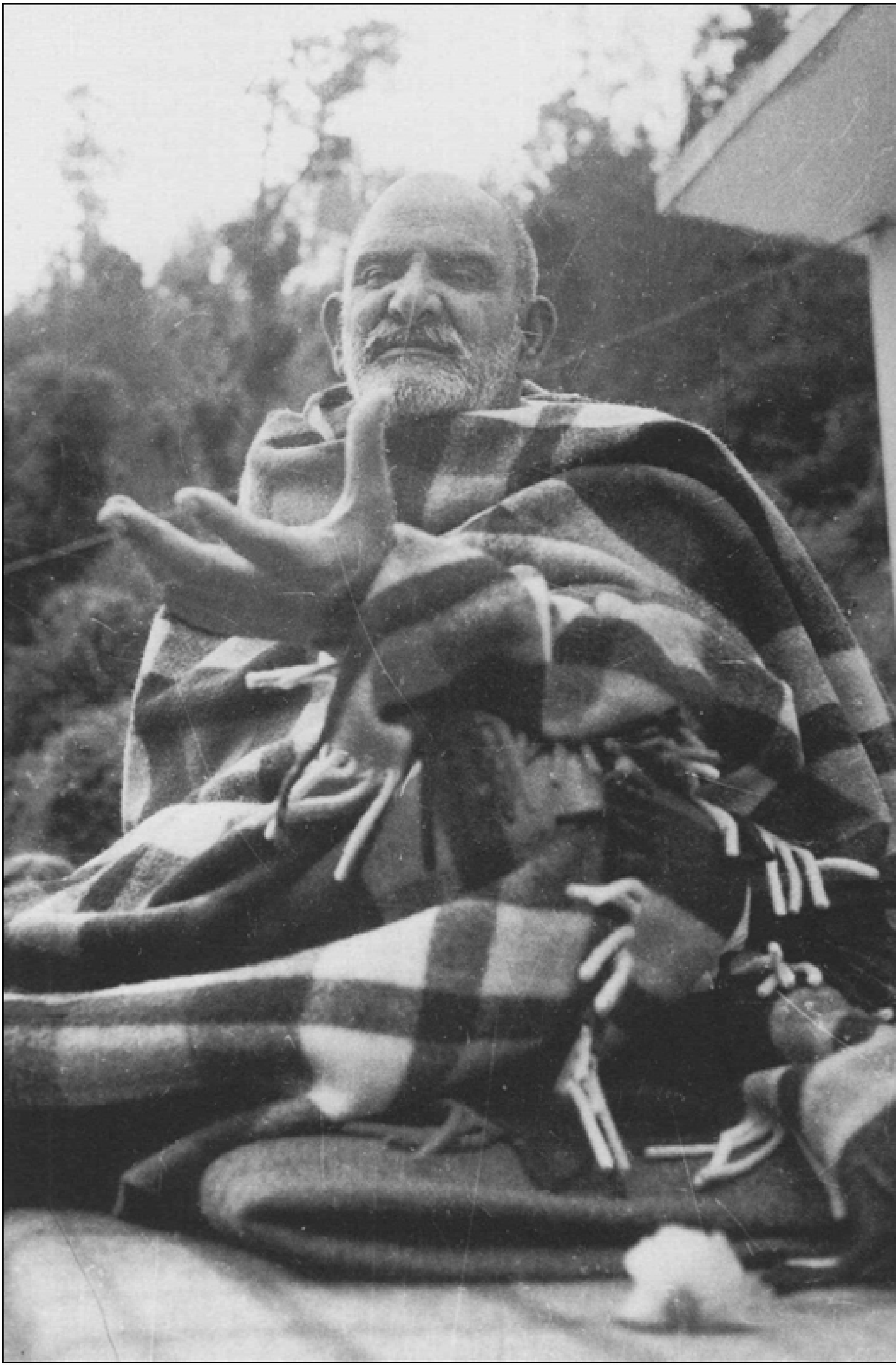

फोटो: प्यारी लाल साह

मन की कुंजी

महाराज जी की अपने भक्तों के प्रति गहरी चिंता और उनकी रक्षा करने की भावना को दर्शाने वाली कहानियाँ उनकी अद्भुत मानसिक शक्ति का भी संकेत देती हैं। ऐसा लगता था मानो वे अपने भक्तों के बारे में सब कुछ जानते हों, चाहे हम उनके निकट हों या दूर। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि हम निर्भीक हो जाते थे, यह जानते हुए कि वे सचमुच हमारी रक्षा कर रहे हैं।

विभाजन के समय मैं महाराजजी के साथ था और पाकिस्तान से इतने शरणार्थी आए थे कि पैर रखने की भी जगह नहीं थी। महाराजजी और मैं भीड़ में से रास्ता बनाते हुए आगे बढ़ रहे थे, तभी एक महिला उनके पास आई और उनके सामने सिर झुकाकर उनसे विनती की कि वे हमसे कुछ दूरी पर स्थित एक नवजात शिशु को आशीर्वाद देने आएं। महाराजजी मान गए।

आगे चलकर वही महिला लाहौर के विनाश के बारे में कड़वी शिकायत कर रही थी। महाराजजी ने तुरंत उसे एक व्यंग्यात्मक प्रश्न से फटकारा: "क्या लाहौर के उस संत ने तुम्हें छह महीने पहले ही नहीं बताया था कि ऐसा होने वाला है?"

कभी-कभी जब बहुत से लोग उनके पास आते थे, तो वह प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तिगत इतिहास सुनाते थे, जिसमें उनके पूर्वजों के कार्यों का विवरण भी शामिल होता था, मानो वह उस व्यक्ति को बहुत लंबे समय से अच्छी तरह से जानते हों।

राम

महाराजजी कभी-कभी दोपहर तक हम विदेशियों को अपने पास नहीं आने देते थे, इसलिए एक सुबह हममें से कुछ लोग उस छोटे से आश्रम में दर्शन करने गए जो कभी उस क्षेत्र के एक और महान संत, सोमबारी महाराज का निवास स्थान हुआ करता था। यह एक सुखद यात्रा रही। दोपहर में लौटते समय, हमें एक पहाड़ी मिली जिस पर हमारी वीडब्ल्यू बस हम सभी के साथ चढ़ नहीं पाई, इसलिए हम सब बस को धक्का देने के लिए बाहर निकल गए—यानी हम सभी, सिवाय उन दो युवतियों के जो बाहर नहीं निकलीं।

हम आसानी से बस से पहाड़ी पर चढ़ गए, लेकिन मुझे इस बात से बहुत बुरा लगा कि युवतियों ने हमारी मदद नहीं की। मैं इतना सभ्य था कि कुछ बोल नहीं पाया; हालांकि अंदर ही अंदर मैं बहुत गुस्से में था और मंदिर तक के पूरे रास्ते चुप रहा। मंदिर में प्रवेश करते ही महाराजजी ने कहा, "राम दास नाराज़ हैं।" लेकिन मैंने अपना गुस्सा अच्छी तरह छिपा लिया था और सभी ने महाराजजी से असहमति जताते हुए कहा कि इसके विपरीत, मैं बहुत ही विनम्र था। लेकिन महाराजजी टस से मस नहीं हुए।

“नहीं,” उन्होंने कहा, “राम दास इसलिए नाराज़ हैं क्योंकि युवतियाँ बाहर आकर बच्चे को धक्का देने में मदद नहीं कर रही थीं।” (आर.डी.)

राम

एक बार जब महाराजजी बिना खिड़कियों वाले एक कमरे में बैठे थे, तो उन्होंने कहा, "अरे, फलां व्यक्ति अभी आ रहा है!" कुछ ही क्षणों में, वह व्यक्ति कमरे में प्रवेश कर गया।

राम

महाराजजी ने मुझे तरह-तरह की बातें बताईं। उन्होंने कहा, "तुम माताजी के साथ हॉकी खेल

रहे थे।" उनका इशारा इस बात की ओर था कि मैं कुछ समय से श्री अरबिंदो के आश्रम में था और माताजी के साथ हॉकी खेल रहा था।

राम

सन् 1940 के दशक में, इंग्लैंड में पढ़ रहे एक मुस्लिम आईसीएस अधिकारी के बेटे को दिल का दौरा पड़ा था और उसकी माँ उससे मिलने वहाँ गई थी। महाराजजी एक ऐसे भक्त के घर गए हुए थे जो उनसे कभी कुछ नहीं पूछता था; लेकिन इस बार उन्होंने महाराजजी से उस लड़के के बारे में पूछा, क्योंकि वे पारिवारिक मित्र थे। इससे पहले कि वह महाराजजी से सवाल पूछ पाते, महाराजजी ने कहा, “क्या? वह उस लड़के के बारे में पूछ रहा है जो इंग्लैंड में पढ़ रहा है। तुम क्या पूछना चाहते हो? माँ वहाँ गई है। तुमने उसे हवाई अड्डे पर विदा किया है। उसके पहुँचते ही बेटे की हालत सुधरने लगी।” फिर महाराजजी उठे और बोले, “चलिए। मन इसी तरह चलता है।” (बाद में यह पुष्टि हुई कि माँ के पहुँचने के बाद लड़के की हालत वाकई सुधरने लगी थी।)

राम

महाराजजी ने एक व्यक्ति से पूछा कि क्या उसने कैंची जैसी कोई जगह पहले कभी देखी है—जो इतनी सुंदर, शांत और ध्यान के लिए आदर्श है, जिसमें पहाड़, नदी और जंगल हैं। स्वामी ने उत्तर दिया कि उसने ऐसी ही एक जगह कैंडी (श्रीलंका) में देखी थी। महाराजजी, जो कभी वहां नहीं गए थे, ने उस जगह का छोटे से छोटे विवरण तक वर्णन करके उस व्यक्ति को आश्चर्यचकित कर दिया।

राम

हमारी सबसे बड़ी बेटी ने भारत सरकार में नौकरी के लिए कुछ प्रतियोगी परीक्षाओं में भाग लिया था। परीक्षा के बाद हम वृंदावन में महाराजजी से मिलने गए। जब हम उन्हें प्रणाम कर रहे थे, तभी महाराजजी ने उससे कहा, "तुमने अपने पाँचों प्रश्नपत्र खराब कर दिए हैं!"

उसने कहा, "हाँ।"

महाराजजी ने कहा, “चिंता मत करो। तुम फिर भी सफल हो जाओगे और तुम्हें नौकरी मिल जाएगी।”

और उसने ऐसा किया।

राम

हमारा परिवार बड़ा है, लेकिन अमीर नहीं है, फिर भी उनकी कृपा से हमारा जीवन सुचारू रूप से चल रहा है। मुझे बैंक में नौकरी उन्हीं की कृपा से मिली। नौकरी के लिए इंटरव्यू के बाद मैं उनसे मिलने गया। उन्होंने मुझे वे सभी प्रश्न बताए जो मुझसे पूछे गए थे और कहा, "तुम्हारा चयन हो जाएगा।" वास्तव में, मेरा चयन उम्मीदवारों की सूची में सबसे ऊपर हुआ था।

राम

एक दिन महाराजजी ने मेरी ओर मुड़कर कहा, "क्या तुम अब भी उस बनारस के पंडित (धार्मिक विद्वान) को पैसे भेजते हो?"

“जी हां, महाराजजी, मैं करता हूं,” मैंने उत्तर दिया।

महाराजजी की इस पंडित से कभी मुलाकात नहीं हुई थी और न ही मैंने महाराजजी को कभी

बताया था कि मैं नियमित रूप से उन्हें पैसे भेजता था। यह पंडित रामायण के पाठकर्ता थे और अपने श्रोताओं के दान से अपना जीवन यापन करते थे। महाराजजी सर्वज्ञानी थे और वे उन लोगों का भी ख्याल रखते थे जिनसे वे कभी मिले भी नहीं थे।

राम

रेलवे में काम करने वाले एक श्रद्धालु ने पहली बार एक दंपत्ति को महाराजजी के दर्शन के लिए लाया। महाराजजी ने दंपत्ति से एकांत में कहा, “आप एक दस वर्षीय गरीब बच्चे का पालन-पोषण कर रही हैं। यह आपका बहुत ही सराहनीय कार्य है।” जब वह कमरे से बाहर निकली तो वह अत्यंत आश्चर्यचकित थी, क्योंकि किसी को भी, यहां तक कि उसके पति को भी, यह पता नहीं था कि वह बच्चे का पालन-पोषण कर रही है।

राम

भोजन करने से पहले हम महाराजजी की तस्वीर को अपना भोजन अर्पित करते हैं। एक बार मेरी पत्नी करी में नमक डालना भूल गई। उसने कहा, “मैं भूल गई, लेकिन महाराजजी मुझे क्षमा कर देंगे।” पंद्रह दिन बाद महाराजजी आए और मेरी पत्नी उनके चरणों में बैठ गई। उन्होंने सबसे पहले उससे कहा, “तुमने मुझे बिना नमक के करी परोसी।”

राम

कानपुर के एक परिवार का एक युवक चीन युद्ध में सेना में शामिल था। खबर आई कि उसकी मृत्यु हो गई है और उसका भाई महाराजजी को यह बताने आया। महाराजजी ने कहा, “नहीं, उसकी मृत्यु नहीं हुई है।” किसी ने भी महाराजजी की बात पर विश्वास नहीं किया और विधवा ने छह महीने बाद दोबारा शादी कर ली और युद्ध विभाग की फाइल बंद कर दी गई। कुछ समय बाद वह युवक वापस लौटा।

राम

1968 में, मंदिर में कुछ समय बिताने के बाद, मुझे दिल्ली जाना पड़ा। उस समय मैं एक अत्यंत शुद्ध योगी बनने का प्रयास कर रहा था। दिल्ली में मैंने अपना सारा काम जल्दी से निपटाया और फिर पहाड़ों पर लौटने से पहले शाकाहारी भोजन करने का समय मिला। भोजन के अंत में मुझे चाय के साथ दो बिस्कुट परोसे गए। मुझे नहीं लगा कि वे योगी भोजन के अनुरूप हैं, लेकिन वे मलाई से भरे हुए थे और मैं खुद को रोक नहीं पाया। चूंकि मैं नंगे पैर था और अपने उल्फी (साधु के वस्त्र) में था और रेस्तरां में भी मेरे साथ साधु जैसा व्यवहार किया जा रहा था, इसलिए मैंने चुपके से बिस्कुट खा लिए। महाराजजी के पास लौटने पर उनके पहले शब्द थे, "तुम्हें बिस्कुट कैसे लगे?" (आर.डी.)

राम

चूंकि मैं उन गिने-चुने पश्चिमी लोगों में से एक थी जो हिंदी बोलते थे, इसलिए वे मुझसे बातें करते थे। कभी-कभी हम गपशप करते थे, और वे एक-दो चौंकाने वाली बातें कह देते थे। वे किसी ऐसे व्यक्ति का ज़िक्र करते जिसका मैंने कभी किसी और से ज़िक्र नहीं किया होता और पूछते, "इस व्यक्ति के साथ क्या कहानी थी?" मैं चौंक जाती! और वे हंसते, खिलखिलाते और फिर मेरी तरफ देखकर मुस्कुराते। अक्सर जब मैं महाराजजी के साथ बैठी होती, तो मैं खुद को एक खिलखिलाती हंसी की दीवानी पाती। मैं लोटपोट हो जाती और कभी-कभी लगभग गिर ही

जाती, और वे मुझे गले लगा लेते।

गुरु को आपके बारे में सब कुछ पता होना चाहिए।
मुझे सब कुछ पता है। मुझे क्यों पता है?

महाराजजी न केवल हम पर नजर रख रहे थे, बल्कि वे हमारे भीतर भी आसानी से देख सकते थे। और यह बिल्कुल अलग बात थी।

यह एहसास कि कोई आपके मन के गुप्त कोनों तक पहुँच सकता है, बेचैन कर देने वाला होता है। इससे एक ऐसी आत्मीयता उत्पन्न होती है जो हमारे अधिकांश मानवीय संबंधों में बेजोड़ है। हममें से जो लोग किसी दूसरे व्यक्ति के करीब होते हैं, वे अक्सर दूसरे की भावनाओं को भांप लेते हैं। जब हम दूसरे के सोचने के तरीके को जान लेते हैं, तो हम शायद यह भी अनुमान लगा सकते हैं कि उसके मन में क्या चल रहा है। लेकिन बहुत सारे छोटे-छोटे, सूक्ष्म विचार होते हैं; और इनमें से कई तो मन में आते ही दबा दिए जाते हैं क्योंकि वे सामाजिक रूप से अस्वीकार्य होते हैं या हमारे स्वयं के सचेत स्वरूप के लिए भी अस्वीकार्य होते हैं। यह एहसास कि कोई इन विचारों तक भी पहुँच सकता है, आपको तुरंत एक असाधारण नुकसान में डाल देता है, मानो आपके प्रतिद्वंद्वी ने आपका कोड तोड़ दिया हो। आप बेहद असुरक्षित हो जाते हैं। लेकिन निश्चित रूप से, किसी दूसरे की चेतना से इतने अंतरंग तरीके से मिलना भी बेहद रोमांचक होता है। और महाराजजी के साथ, इसमें दूसरे की ओर से निःशर्त प्रेम का गुण भी जुड़ गया था, मानो वे आपसे कह रहे हों, "मैं तुम्हारे बारे में सब कुछ जानता हूँ और मैं तुमसे प्यार करता हूँ।"

महाराजजी के बारे में सबसे अनमोल बातें कहानियों में बयान नहीं की जा सकतीं—जैसे उनके पैरों की मालिश करना। अगर मालिश करते समय मेरे मन में कोई बेकार सा विचार आता, तो वे मेरा हाथ हटा देते; और फिर जब मैं अपना ध्यान केंद्रित कर लेती, तो वे मेरा हाथ वापस रख देते। इन सूक्ष्म तरीकों से वे आपको सिखाते थे।

राम

मेरी पत्नी की महाराजजी से पहली मुलाकात इंडिया होटल में भीड़ के बीच हुई थी। महाराजजी ने उससे बात नहीं की थी, और कुछ समय बाद वह सोच रही थी कि उसे घर जाकर मेरे लिए चाय बनानी चाहिए, जो वह उस समय हर दिन करती थी। महाराजजी मिठाई बांट रहे थे और अचानक उन्होंने उसकी ओर मुड़कर कहा, “अब तुम घर जाओ। तुम्हारे पति चाय का इंतजार कर रहे हैं।”

राम

जब मैं उनसे पहली बार मिली थी, तब उन्होंने अपने बाल मुंडवा लिए थे और मैंने सोचा कि काश मैं उनके सिर पर सीधे चुंबन कर पाती। और उसके कुछ ही समय बाद, एक दर्शन के दौरान, वे मुझे अपने कमरे में ले गए। खिलखिलाते और हंसते हुए, वे थोड़ा झुक गए और ऐसा करते हुए उन्होंने अपना सिर मेरे सामने कर दिया। मेरे पास उन्हें चूमने के अलावा कोई चारा नहीं था, और उसी क्षण मुझे एहसास हुआ कि मेरी इच्छा पूरी हो रही है।

राम

मैं हमेशा मन ही मन महाराजजी से बातें करता था। जब वे किसी को शर्मिंदा करते थे, तो मैं सोचता था, "हे महाराजजी, ऐसा मत कीजिए।" फिर वे मेरी तरफ देखते और जवाब देते, जिससे

मुझे पता चल जाता था कि वे मेरी बात सुन रहे हैं।

राम

एक दिन जब मैं टक्के के पास बैठकर उनके दर्शन के लिए बाहर आने का इंतज़ार कर रहा था, तभी मेरे मन में यह विचार आया कि काश मेरा दिल भी महाराजजी के दिल की धड़कन की तरह ही एक ही गति और ताल पर धड़क रहा होता। जैसे ही मैंने यह सोचा, भवन के भीतर से ज़ोरदार हलचल हुई, दरवाज़े ज़ोर से बंद हुए और अचानक महाराजजी बाहरी दरवाज़ों से होते हुए बरामदे में आ गए। वे तेज़ी से टक्के पर बैठ गए और सीधे मेरे सामने आ गए, उनका सीना मुझसे लगभग छह इंच दूर था। मैं अपने दिल की धड़कन महसूस कर सकता था और कुछ देर तक लगातार इस बात से अवगत रहा कि मेरा दिल उनके साथ ताल मिलाकर धड़क रहा है। हालाँकि महाराजजी जीवंत थे और कई लोगों से बातें कर रहे थे, फिर भी उन्होंने अपना शरीर मेरे पास इसी स्थिति में रखा। तभी मेरा मन कहीं और भटकने लगा और तुरंत महाराजजी घूम गए और टक्के के दूसरी तरफ, मुझसे दूर मुँह करके बैठ गए। मैं दंग रह गया और मेरे मन में यह विचार कौंधा, “महाराजजी, अगर सच में ऐसा हुआ है, तो मेरी तरफ देखिए।” पलक झपकते ही उन्होंने सीधे मेरी तरफ देखा और फिर नज़रें हटा लीं। दर्शन के बाकी समय में उन्होंने मेरी तरफ दोबारा नहीं देखा।

राम

महाराजजी मेरी इच्छाओं के साथ बड़ी चतुराई से खेलते थे। उनके दर्शन से पहले ही मुझे उनकी बेंच पर एक सेब नज़र आ जाता था। मैं सोचती थी कि काश मुझे वह सेब मिल जाता और कितने दिनों से मैंने सेब नहीं खाया है। फिर महाराजजी प्रकट होते और मानो जानबूझकर वही सेब मुझे देते। लेकिन ज़ाहिर है, वे दूसरे भक्तों को भी फल देते रहते थे, इसलिए कुछ कहा नहीं जा सकता था। मैं हमेशा यही सोचती, "यह कितना दिलचस्प है!"

राम

एक बार जब मैं मंदिर के पीछे पहाड़ियों में बहुत ऊँचाई पर रह रहा था, जहाँ बहुत ठंड होती थी, तब मैंने कुछ नए आए भक्तों से अंतरिक्ष यात्रियों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले एक गर्म कंबल के बारे में सुना, जिसका वज़न कुछ औंस ही था। अपनी ठंडी झोपड़ी में मैं यही सोचता रहा कि काश मेरे पास भी ऐसा कंबल होता। अगली सुबह मैं मंदिर आया और एक अन्य भक्त के साथ चाय पी रहा था, जो अपना थैला साफ़ कर रहा था। उसने वह चीज़ मेरी तरफ फेंकी और कहा, “लो, इसे क्यों नहीं ले लेते? यह एक अंतरिक्ष कंबल है जिसे मैं कभी इस्तेमाल नहीं करता।” जब मेरे साथ ऐसी घटनाएँ बार-बार होने लगीं, तो मैंने सोचा कि अगर महाराजजी मेरी सभी इच्छाओं को पूरा करने वाले हैं, तो मुझे उनसे कुछ और महत्वपूर्ण चीज़ों की माँग शुरू कर देनी चाहिए, जैसे थोड़ी सी दया।

राम

बरेली में महाराजजी ने मुझे सुबह स्टेशन पर मिलने के लिए बुलाया। बहुत तेज बाढ़ आई हुई थी और मैंने सोचा, "महाराजजी शायद नहीं आएंगे, लेकिन मैं फिर भी स्टेशन चला जाता हूँ।" लेकिन महाराजजी आ गए और सबसे पहले उन्होंने कहा, "तुम सोच रहे थे कि मैं खाने की वजह से नहीं आ पाऊंगा।"

राम

अगर मैं मन ही मन यह सोचता कि कोई साथी भक्त उतना संत नहीं है जितना वह खुद को समझता है, तो महाराजजी तुरंत मुझसे पूछते, "क्या फलां व्यक्ति उतना संत नहीं है जितना वह खुद को समझता है?"

मैंने अपनी पत्नी से कहा कि मैं महाराजजी से मिलने नहीं जाना चाहता, क्योंकि वे सिर्फ प्रसाद लेकर जाने को कहेंगे। लेकिन उसने ज़िद की। उस दिन उन्होंने मुझे जाने के लिए नहीं कहा। मैंने भोजन नहीं किया था, फिर भी उन्होंने मुझे रात 11 बजे तक रुकने दिया। जब सब लोग खड़े हुए, तो महाराजजी ने कहा, "आज से किसी को मत बताना कि मैं तुम्हें यहाँ बैठने की अनुमति नहीं देता।"

राम

मैं वहां बैठकर सत्संग से दूर जाकर साधना करने का अवसर पाने के लिए प्रार्थना कर रहा था, तभी महाराजजी ने कहा, "नेपाल जाओ।" पता चला कि मेरा वीजा एक दिन पहले ही समाप्त हो गया था।

राम

कभी-कभी आप उसके पीछे बैठे होते और वह आपकी ओर बेपरवाह सा दिखता। फिर आपके मन में कोई विचार आता और वह सीधे आपको जवाब देता, या कोई इशारा करता, या किसी और से कुछ ऐसा कहता जो उस विचार का उत्तर होता। कभी-कभी वह आपके साथ कमरे में गंभीर बातें कर रहा होता और अचानक बीच में ही मुड़कर खिड़की खोलकर बाहर बैठे किसी दूसरे व्यक्ति से अपने मन की बात कहने लगता।

राम

महाराजजी महज़ एक नज़र में ही आपको संपूर्ण शिक्षा दे सकते थे। आप वहाँ बैठे होते, मन में असहनीय पीड़ा से गुज़र रहे होते। वे बस आपकी ओर देखते और आपका पूरा अस्तित्व बदल जाता। पता नहीं वे सचमुच कुछ कर रहे थे या यह महज़ उनकी नज़र का असर था, लेकिन आपको यह एहसास हो जाता कि ब्रह्मांड सही है और आपकी देखभाल की जा रही है। कभी-कभी आप किसी मानसिक उलझन में होते, और महाराजजी की एक हल्की सी नज़र से ही आप पूरी तरह से सुलझ जाते।

राम

एक पति-पत्नी निम्नलिखित कहानी सुनाते हैं:

पति: मैं कलकत्ता में चेचक कार्यक्रम में काम कर रहा था। एक दिन मुझे थोड़ा पछतावा हुआ। मैं कलकत्ता की सड़कों पर घूम रहा था और मैंने सारे भिखारियों को देखा, उनके दुख के बारे में सोचा और हमेशा की तरह भगवान से दुख के बारे में बहस करने लगा। मैं उससे बार-बार कह रहा था, "यह बिल्कुल भी ज़रूरी नहीं है।"

उस समय मैं प्लेटो द्वारा रचित सुकरात की मृत्यु का वृत्तांत, फ़ेडो पढ़ रहा था। फ़ेडो का अंत सुकरात और उनके शिष्यों के बीच इस चर्चा से होता है कि क्या सुकरात को हेमलॉक लेने में देरी करनी चाहिए। सुकरात कहते हैं कि इसे ले आओ, क्योंकि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। शिष्य रो रहे थे और सुकरात ने उनसे कहा, “सुनो, केवल दो ही संभावनाएं हैं: या तो मृत्यु के बाद कुछ है

या मृत्यु के बाद कुछ नहीं है। यदि मृत्यु के बाद कुछ नहीं है, तो ईश्वर का धन्यवाद कि अंततः मुझे चैन की नींद आने वाली है। और यदि मृत्यु के बाद कुछ है, तो कम से कम मुझे अच्छी बातचीत करने का अवसर तो मिलेगा।” तब वे हेमलॉक ले आए, जिसे सुकरात ने लिया और उनकी मृत्यु हो गई।

इसलिए मैंने सोचा कि अगर सुकरात, अपनी सारी बुद्धिमत्ता के बावजूद, अपनी मृत्यु के समय जीवन के स्वरूप को नहीं जान पाए, तो मुझे इतना निराश नहीं होना चाहिए कि मुझ जैसे साधारण व्यक्ति को यह समझ नहीं आया। इससे मुझे तसल्ली मिली।

पत्नी: जिस समय मेरे पति कलकत्ता में थे, मैं महाराजजी की तलाश में दिल्ली में थी। आखिरकार हमें वे नई दिल्ली में बर्मन के घर पर मिले (शरीर त्यागने से पहले यह उनकी आखिरी यात्रा थी)। जिस दिन वे आए थे, उसी दिन दोपहर में हम उनके साथ बैठे थे। महाराजजी ने मेरी ओर देखा और बस इतना कहा, "सुकरात।" उसी दिन बाद में उन्होंने फिर मेरी ओर देखा और कहा, "सुकरात।"

मैंने अपने साथ आए भक्तों से इस बारे में बात की और यह समझने की कोशिश की कि उनका क्या मतलब था। शायद उनका मतलब यह था कि मैं सुकरात जैसी दिखती या सोचती थी, लेकिन हम पूरी तरह समझ नहीं पाए। मेरे पति कलकत्ता से घर आए और उन्हें महाराजजी के दर्शन के बारे में बताने के बाद मैंने कहा, “आप जानते हैं, उन्होंने मुझसे एक बहुत ही अजीब बात कही और हम अब तक उसका मतलब नहीं समझ पाए हैं। उन्होंने मेरी तरफ देखा और मुझे ‘सुकरात’ कहकर पुकारा। आपको क्या लगता है इसका क्या मतलब है?” तब मेरे पति ने मुझे बताया कि वे क्या सोच रहे थे और तब हमें पता चला कि यह ठीक वही दिन था जिसका वर्णन मेरे पति ने अभी किया।

राम

दादा ने कहा, “महाराजा के आसपास मन पढ़ना, भविष्य बताना, आने वाले लोगों के बारे में जानना आदि जैसी चीजें हमेशा होती रहती थीं। इनमें कुछ भी खास नहीं था।”
मानव मन को जानने की इस अद्भुत क्षमता ने महाराजजी को न केवल दूसरों के विचारों और कार्यों को जानने की अनुमति दी, बल्कि दूसरे व्यक्ति के मन में प्रवेश करने और भीतर से परिवर्तन लाने में भी सक्षम बनाया।

महाराजजी ने एक बार मुझसे कहा था, "मन की कुंजी मेरे हाथ में है और मैं इसे किसी भी दिशा में घुमा सकता हूँ।"

राम

अंग्रेजों के कब्जे के दौरान, एक अंग्रेज ने ट्रेन में प्रथम श्रेणी का डिब्बा आरक्षित कराया था, और जब वह अपने डिब्बे में पहुँचा तो उसने वहाँ महाराजजी को पाया। वह कंडक्टर के पास गया और कहा कि उसके डिब्बे में एक बहुत ही संदिग्ध दिखने वाला व्यक्ति है और कृपया उसे वहाँ से हटा दें। कंडक्टर आया और उसने देखा और कहा, "मुझे खेद है। वह एक संत हैं और मैं उन्हें नहीं हटा सकता।"

तो अंग्रेज और भी ज़्यादा नाराज़ होकर मुख्य कंडक्टर को बुलवाया। जब मुख्य कंडक्टर आया, तो उसने भी वही बात दोहराई। इसलिए अगले बड़े स्टेशन पर अंग्रेज ने उस आदमी को

खुद उतारने का फैसला किया, लेकिन डिब्बे में जाते ही वह अपना गुस्सा और इरादा भूल गया और बाकी सफर शांति से बैठा रहा। आखिर में महाराजजी ने कहा, "यह मेरा गाँव है," और ट्रेन रोक दी गई और वह और उनके साथी उतर गए।

राम

मुझे लगता है कि उसी ने मुझे अपने साथ जाने के लिए मजबूर किया था। मैं उसके साथ जाया तो करती थी, लेकिन मैं कभी जाना नहीं चाहती थी।

राम

'माँ' कहलाने वाली ये महिलाएं महाराजजी की देखभाल करने में सबसे अधिक आनंदित होती थीं। एक बार डॉक्टर ने कहा था कि महाराजजी को सुबह 10:00 बजे कुछ गोलियां लेनी चाहिए। उस दिन माँएं दवा दस मिनट देरी से लेकर आईं। महाराजजी ने क्रोधित होकर कहा, "अगर तुम लोग मेरी बेहतर देखभाल नहीं करोगे, तो मैं तुम लोगों को अपने खिलाफ भड़का दूंगा"—यह उनकी ओर से दी जा सकने वाली सबसे गंभीर धमकी थी।

राम

मैं माउंट अबू का स्टेशन मास्टर था, और महाराजजी ने वहाँ आने का वादा किया था। ड्यूटी खत्म होने पर मेरी नीति थी कि मैं कभी स्टेशन के अंदर नहीं जाता था। लेकिन एक दिन मैं अपने एक दोस्त से काफी देर तक बात कर रहा था, और स्टेशन से निकलते समय मैंने सोचा कि किसी तरह अपनी नीति तोड़कर स्टेशन से होकर गुजरूँ ताकि घर पहुँचने में समय बच जाए। जैसे ही मैं स्टेशन के अंदर पहुँचा और जल्दी-जल्दी निकलने लगा, बॉम्बे मेल ट्रेन आ गई, और महाराजजी खिड़की पर दस्तक दे रहे थे।

राम

हममें से कई पश्चिमी लोग बोधगया के एक बौद्ध आश्रम में एक साथ ध्यान कर रहे थे। कुछ समय बाद, हममें से कुछ लोग विश्राम करना चाहते थे और शिव जयंती मनाने के लिए सैकड़ों मील दूर दिल्ली जाना चाहते थे। समूह की एक महिला, जो चार्टर बस से सड़क मार्ग से भारत आई थी, ने बताया कि बस चालक भी हमारे साथ समय बिताना चाहता है। इसलिए हम चौंतीस लोग बोधगया से निकले और बनारस में बस से मिले और दिल्ली के लिए रवाना हो गए।

समूह के सदस्यों में से एक, डैनी, कुंभ मेले का अनुभव करने के लिए बीच में ही कुछ समय के लिए पाठ्यक्रम छोड़कर इलाहाबाद चला गया था। वह बहुत प्रभावित होकर लौटा और मेले के मैदान से खरीदे गए हनुमान बंदर की आकृति वाले छोटे-छोटे पदक हम सभी के लिए लाया।

जब पता चला कि बस का रूट इलाहाबाद के पास से होकर गुजरता है, तो डैनी ने हमें मेले के मैदान में जाने के लिए ज़ोर दिया। मैंने विरोध किया कि मेला तो अब समाप्त हो चुका है और वहाँ बस नदी का खाली किनारा ही होगा। लेकिन उसने बताया कि यह भारत के सबसे पवित्र स्थानों में से एक है। हममें से कुछ लोग थके हुए थे, क्योंकि इतने लंबे ध्यान अभ्यास के बाद दुनिया में यह हमारा पहला दिन था, और हम सब बस धर्मशाला पहुँचना चाहते थे जहाँ हमने रात बिताने की योजना बनाई थी। नदी तक पहुँचने के लिए कुछ मील का अतिरिक्त रास्ता तय करने का विचार भी अच्छा नहीं लग रहा था, फिर भी वह एक बहुत ही पवित्र स्थान था। मैंने विकल्पों पर विचार किया और अंत में सूर्यास्त देखने के लिए नदी पर थोड़ी देर रुकने के लिए सहमत हो

गया।

जैसे ही हम मेले के मैदान के पास पहुँचे और अंदर जाने लगे, जो अब काफी सुनसान था, ड्राइवर ने पूछा कि उसे गाड़ी कहाँ खड़ी करनी चाहिए। डैनी ने एक जगह की ओर इशारा करते हुए कहा कि वह हनुमान मंदिर के पास है और वही जगह है जहाँ से उसने छोटे पदक खरीदे थे।

जैसे ही बस उस जगह पर रुकी, किसी ने चिल्लाकर कहा, "देखो, महाराजजी आ गए!"

सच में, दादाजी के साथ बस के पास से गुज़रते हुए, वो वहीं थे। हम सब बस से उतरकर उनके पैरों की ओर दौड़े। मैं खुशी से हंसते-रोते लोटपोट हो रही थी। मुझे याद है मैंने उनके पैरों को चूमते हुए आनंद का अनुभव किया और उसी क्षण मुझे यह भी एहसास हुआ कि जिस रेत पर वो खड़े थे, उससे पेशाब की तेज़ गंध आ रही थी।

दादा ने बाद में हमें बताया कि जैसे ही बस नजर आई, महाराजजी ने कहा, "देखो, वे आ गए हैं।"

महाराजजी ने हमें उनके पीछे चलने का निर्देश दिया, और बस साइकिल रिक्शा के पीछे-पीछे इस महान विश्वविद्यालय शहर की उपनगरीय सड़क पर दादा के घर तक गई। कुछ ही मिनटों में हमें भोजन दिया गया, और पास ही एक अन्य श्रद्धालु के यहाँ हमारे ठहरने की व्यवस्था की गई। मुझे बताया गया कि सुबह से ही महाराजजी के आदेश पर नौकर हमारे आने की उम्मीद में भोजन तैयार कर रहे थे। लेकिन अगर ऐसा था, तो हममें से किसने सोचा होगा कि वे बस में बैठकर मेले के मैदान में जाने के बारे में फैसला कर रहे थे? जाहिर है, सब कुछ वैसा नहीं था जैसा मैंने "सोचा" था। (आर.डी.)

महाराज जी ही जानते थे कि वे किसे और क्यों याद करते थे। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता था कि यह सब उनके वश में नहीं था, क्योंकि कई भक्तों ने पाया कि उनके बारे में सोचने मात्र से ही महाराज जी का ध्यान आकर्षित होता था, या वे स्वयं महाराज जी के समक्ष उपस्थित हो जाते थे।

एक मां ने कहा, "यदि भक्ति पर्याप्त रूप से प्रबल हो, तो गुरु भक्त की ओर आकर्षित हो जाते हैं।"

राम

एक फ्रांसीसी व्यक्ति आनंदमयी माँ के आश्रम में ठहरे हुए थे और उन्होंने एचआरजे से नीम करोली बाबा के दर्शन की इच्छा से उनके बारे में पूछा। एचआरजे ने कहा कि यदि वे केवल दस मिनट के लिए महाराजजी का स्मरण करें, तो महाराजजी प्रकट हो सकते हैं। फ्रांसीसी व्यक्ति ने अपनी आँखें बंद कर लीं और बार-बार "नीम करोली बाबा, नीम करोली बाबा" दोहराया, और दस मिनट बाद, अचानक, महाराजजी माँ के आश्रम में आ गए। वे फ्रांसीसी व्यक्ति के पास गए और पूछा, "तुम मेरा स्मरण क्यों कर रहे हो? मैं तो आ चुका हूँ। तुम्हें क्या चाहिए?"

राम

मुझे सुबह करीब 2:00 बजे उठने और कुछ देर ध्यान में बैठने की आदत थी।

मैंने इस घटना के बारे में किसी को नहीं बताया। एक सुबह जब मैं दर्शन के लिए आई, तो माताएँ बड़ी प्रसन्नता से मेरे पास दौड़कर आईं और एक साथ बातें करने लगीं। उन्होंने मुझे बताया कि आधी रात को जब वे महाराजजी के साथ बैठी थीं, तो महाराजजी ने उनकी ओर

मुड़कर कहा, “एस अभी-अभी जागी है। वह मेरे बारे में बहुत सोच रही है।”

राम

एक दिन मैं महाराजजी से मिलने की उम्मीद में स्नोव्यू से तल्लीताल आया। मैं सोच रहा था कि उन्हें कैसे ढूंढूं, क्योंकि वे कभी एक घर में रहते थे, कभी दूसरे घर में।

जैसे ही मैं उस घर के पास से गुज़रा जिसमें वह ठहरे हुए थे, तभी कोई बाहर आया और मुझे पकड़ लिया। महाराजजी को पता था कि मैं आ रहा हूँ और उन्होंने ही उस व्यक्ति को मुझे रोकने और उनके पास लाने के लिए भेजा था।

राम

एक मंगलवार की सुबह मैंने कैंची में महाराजजी से मिलने का प्लान बनाया था, लेकिन मुझे एक कॉल आ गया और मुझे काम से नैनीताल जाना पड़ा। मैंने सोचा कि मैं कैंची जाने वाली आखिरी बस पकड़ लूँगा, लेकिन जब समय आया तो मेरी बस छूट गई। रात करीब 8:00 बजे मुझे भोवाली तक लिफ्ट मिल गई, लेकिन तब तक कैंची जाने का कोई रास्ता नहीं बचा था। मैं थोड़ा उदास हो गया और घर लौट आया। मैं इसी बारे में सोच रहा था कि तभी मेरे दरवाजे पर दस्तक हुई। मैंने अपने बेटे से कहा कि जो भी हो, उसे बता दे कि मैं थका हुआ हूँ और उसका नाम पूछ ले। तभी मुझे किसी के चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दी: “मैं बाबा नीम करोली हूँ!” यह रात करीब 9:00 बजे का समय था। महाराजजी ने मुझसे कहा, “तुम हमेशा इधर-उधर की बातें करते रहते हो! क्यों परेशान हो रहे हो?” उन्होंने मेरे घर पर खाना खाया और फिर जीप में बैठकर कैंची लौट गए।

राम

कार्यवाहक पुलिस अधीक्षक को जब पता चला कि उनकी नियुक्ति स्थायी नहीं होगी, तो वे बहुत निराश हुए और उन्होंने इस्तीफा देने का फैसला किया। रात करीब 8 बजे वे अपनी पत्नी के साथ थे, तभी एक अर्दली आया और बोला, “बाहर सड़क पर एक आदमी बैठा है, जो आपको बुला रहा है।” वे समझ गए कि वह महाराजजी थे।

महाराजजी ने उनसे कहा, “तुम रो रहे थे। तुम इस्तीफा देने की सोच रहे थे। कितनी मूर्खता है।”

राम

एक बूढ़ा आदमी, जो कई सालों से जेल गार्ड के रूप में काम कर रहा था, अचानक बहुत बीमार पड़ गया। एक समय ऐसा भी आया जब उसके डॉक्टर ने उसे सिर्फ चौबीस घंटे जीने का समय दिया, लेकिन उस आदमी ने महाराजजी को याद किया, उनका ध्यान लगाया और मरने से इनकार कर दिया। तीसरे दिन, महाराजजी शहर में आए और एक अन्य भक्त के घर गए। उन्होंने उससे कहा, “यहाँ पास में ही एक बूढ़ा आदमी रहता है। वह मुझे बहुत याद करता है और बहुत बीमार है। हमें उससे मिलने जाना चाहिए।”

बीमार व्यक्ति के कमरे में प्रवेश करने पर उन्होंने पाया कि उसकी हालत अत्यंत गंभीर थी। महाराजजी ने अपना पैर उस व्यक्ति के सिर के पास रखा। मरणासन्न व्यक्ति ने महाराजजी को प्रणाम किया और फिर अपना शरीर त्याग दिया।

महाराजजी ने दूसरे भक्त से कहा, “वह मुझे बहुत याद कर रहा था। दर्शन दिए गए, फिर

समाप्त! बस!”

मैं यहाँ हूँ और मैं अमेरिका में हूँ।
जो भी मुझे याद रखता है, मैं उसके पास जाता हूँ।

अराजकता और भ्रम

महाराजजी जहाँ भी होते, वहाँ अफरा-तफरी और भ्रम का माहौल होता था। कभी-कभी दो लोगों को एक ही काम करने के लिए भेजा जाता था, तो कभी एक को पहले वाले के काम को बिगाड़ने के लिए भेजा जाता था। महाराजजी एक व्यक्ति से कुछ कहते और दूसरे से ठीक विपरीत; जब उन्हें इस तरह की विसंगतियों का सामना करना पड़ता, तो वे सब कुछ नकार देते। इस भ्रम के कई स्पष्ट उद्देश्य थे। पहला, इससे उनकी शक्तियाँ छिपी रहती थीं, जिससे कोई भी पूरी तरह से निश्चित नहीं हो पाता था कि अभी-अभी क्या हुआ है। और इस भ्रम से प्रत्येक व्यक्ति को परस्पर विरोधी जानकारियों में से वह सुनने का अवसर मिलता था जो उसे सुनने की आवश्यकता होती थी। इस तरह की विसंगतियाँ कठोर सोच वाले भक्तों के मन को मुक्त करने का काम करती थीं। एक अन्य दृष्टिकोण से, इस भ्रम को इस तथ्य के प्रतिबिंब के रूप में समझा जा सकता है कि महाराजजी केवल एक व्यक्ति नहीं थे। एक दर्पण की तरह, वे उन सभी का प्रतिबिंब थे जो उन पर विचार कर रहे थे, और वे एक ही समय में कई स्तरों पर सचेत थे। इस प्रकार, एक कथन, जैसे "मैं कुछ नहीं कर सकता," के कुछ ही क्षण बाद यह कथन भी आ सकता था, "मन की कुंजी मेरे पास है। हर कोई मेरी कठपुतली है।" महाराजजी के इस आयाम को समझने से भ्रम में भी आनंद मिलता था।

दो पुराने भक्तों को बताया गया कि वे गंगा तट पर स्थित एक विशेष मंदिर में महाराजजी को पा सकते हैं। वे तुरंत वहाँ गए और उन्हें पा लिया। महाराजजी ने ऐसा व्यवहार किया मानो उन्होंने उन्हें पहले कभी देखा ही न हो। “आप कौन हैं? आप कहाँ से आए हैं? आप क्या काम करते हैं? आप यहाँ क्यों आए हैं?” उन्होंने उन दोनों से ये सब पूछा। उन्होंने धैर्यपूर्वक उत्तर दिए, और अंत में महाराजजी ने कहा, “बैठ जाइए!”

राम

महाराजजी कभी किसी चीज के बंधन में नहीं रहते थे। वे सुझावों का पालन नहीं करते थे और अप्रत्याशित कार्य करते थे। उदाहरण के लिए, यदि मैं उनसे अधिक समय तक रुकने का अनुरोध करता, तो वे उठकर चले जाते।

राम

महाराजजी अक्सर राजनीतिक चर्चा के बीच में ही अनौपचारिक रूप से भविष्यवाणियां कर बैठते थे या व्यक्तिगत महत्व की कोई बात कह देते थे। उनकी भविष्यवाणियां अक्सर सच नहीं होती थीं। यदि आप महाराजजी से कोई विशिष्ट भविष्यवाणी जानना चाहते थे, तो वे अक्सर अस्पष्ट जवाब देते थे और अपनी भविष्यवाणियों का कभी स्पष्टीकरण नहीं देते थे।

राम

आप उनके बारे में जो कुछ भी कह सकते हैं, उसका विपरीत भी कह सकते हैं।

राम

एक बार वृंदावन में महाराजजी ने हम सबको बुलाया और हम सब दौड़ते हुए सबसे आगे थे।

कमरे में सबसे पहले पहुँचते ही मुझे लगा जैसे मैंने उन्हें अचानक पकड़ लिया हो। उन्होंने मुझे देखा और शर्मिंदा हो गए। ऐसा लगा जैसे उन्हें कुछ ऐसा करते हुए पकड़ा गया हो जो उन्हें नहीं करना चाहिए था—जैसे वे रंगे हाथों पकड़े गए हों! वे बहुत दोषी लग रहे थे और मैं यह समझने की कोशिश कर रहा था कि मैंने उन्हें क्या करते हुए पकड़ा है। आखिरकार मैंने हार मान ली; ज़रूर वे अपनी कोई और चाल चल रहे होंगे।

राम

एक बार कुछ भक्त महाराजजी के साथ गंगा में थे और उन्होंने महाराजजी से वहीं स्नान करने का प्रस्ताव रखा। महाराजजी ने मना किया, लेकिन उन्होंने उन्हें मना लिया और अंततः उन्हें अपनी नाव से पानी में उतारने में सफल हो गए। महाराजजी ने पहले तो डूबने का नाटक किया, फिर अचानक वे नाव के चारों ओर तैरने लगे। बाद में, घटना का वर्णन करते हुए, महाराजजी ने सबको बताया कि उन्होंने उन्हें डुबाने की कोशिश की थी।

राम

एक बार आधी रात को आश्रम में चीख-पुकार और कदमों की आहट से हमारी नींद खुल गई। लोग इधर-उधर भाग रहे थे और हर जगह बत्तियाँ जल-बुझ रही थीं। हमने दरवाजे से झाँककर देखा तो महाराजजी जाग गए थे। उन्हें रोटियाँ चाहिए थीं। तभी वे चिल्लाए, “माताओं के कमरे में साँप है!” और जब वे देखने गए तो उन्हें वहाँ एक रस्सी मिली!

राम

कैंची में उनका एक छोटा सा साधारण कमरा था, जिसे हम उनका "ऑफिस" कहा करते थे। उसमें एक खिड़की थी जिसके अंदर की तरफ शटर लगे थे, जिसे वे खोल सकते थे। अक्सर वे वहीं बैठकर बाहर देखते और दर्शन देते थे। कभी-कभी वे उस कमरे में पिंजरे में बंद बंदर की तरह उछल-कूद करते या अपना चेहरा सलाखों से सटा लेते। कभी-कभी कोई उनसे मिलने खिड़की पर आता तो वे शटर जोर से बंद कर देते।

राम

वह बातचीत की शुरुआत एक बात से करते और बातचीत के अंत तक उसका ठीक उल्टा हो जाता। एक बार उन्होंने एक पश्चिमी भक्त से गांजा पीने के बारे में कहा, “तुम्हें चरस पीना पसंद है? अच्छी बात है; शिव चरस पीते हैं। इसका मतलब है कि तुम शिव को पसंद करते हो।” यह सुनकर हम सब बहुत खुश हुए, लेकिन फिर उन्होंने बात को घुमाते हुए कहा, “तुम्हारे लिए क्या बेहतर है, चरस पीना या खाना खाना?” लगभग पाँच मिनट बाद उन्होंने कहा, “गांजा मत पियो!”

राम

एक बार उन्होंने कहा, “कैंची में कितना सुकून और शांति है! यहाँ आकर सचमुच मन को शांति मिलती है। शांति मिलती है।” फिर कुछ हफ़्ते बाद सड़क पर एक ट्रक गुज़रा और उन्होंने कहा, “अरे, ये कैंची, कितना शोरगुल भरा है—यहाँ बिल्कुल शांति नहीं, अशांत।” एक ही जगह पर उनकी शांति भंग हो गई और फिर अशांति छा गई।

राम

महाराजजी क्या कह रहे हैं, यह समझना कभी-कभी बहुत मुश्किल होता था। अक्सर वे एक ही शब्द को लगभग पाँच बार दोहराते थे। उनकी एक पसंदीदा आदत थी एक ही बात को बार-

बार दोहराना, बस उसे अलग-अलग शब्दों में कहना, ताकि वह आपके दिमाग में बैठ जाए। उदाहरण के लिए, अगर किसी की शादी की बात होती, तो वे कहते, "तुम्हारी शादी हो गई, है ना? नहीं, नहीं हुई। हुई है ना? हुई है।" वे इसी तरह बार-बार यही दोहराते रहते। वे चीजों के साथ भी ऐसे ही खेलते थे—वे कोई चीज उठाते, उसे पलटते, फिर पलटते, फिर पलटते। शब्दों के साथ भी वे यही करते थे—वे एक वाक्य लेते और उसे उलट-पुलट कर देते (और आपके दिमाग को भी)।

राम

एक सुबह, महाराजजी ने अपने भक्तों से मिलते हुए अपने घुटने में बहुत दर्द की शिकायत की। कुछ भक्तों ने उनकी बात को गंभीरता से लिया और कई तरह के इलाज सुझाए। वहीं कुछ अन्य भक्तों ने उनकी शिकायत को हल्के में लिया और महाराजजी से कहा कि वे खुद ही अपना इलाज कर लें, क्योंकि उनकी तकलीफ का कारण वे खुद ही थे। फिर भी, दर्द वाली जगह पर तेल, मलहम और पट्टियाँ लगाई गईं, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। महाराजजी ने जोर देकर कहा कि इन उपायों से कोई लाभ नहीं होगा, और उन्हें एक खास दवा की जरूरत है जो उन्होंने एक बार दादा के घर में देखी थी। उन्होंने इसे "मूंछ वाले आदमी की दवा" कहा और अपनी मूंछें घुमाकर इशारा किया। उन्होंने कहा कि यही एकमात्र दवा है जो असर करेगी।

इन सब बातों का दादाजी पर कोई असर नहीं हुआ, क्योंकि उन्हें अपने घर में मूंछों से जुड़ी कोई दवा याद नहीं आ रही थी। दिन में बाद में दादाजी आश्रम के लिए सामान खरीदने बाज़ार गए। फार्मेसी में उन्होंने स्लोन बाम के एक छोटे से डिब्बे पर मूंछों वाले आदमी की तस्वीर देखी। स्लोन बाम एक गर्माहट देने वाली दवा थी। उन्होंने उसे खरीद लिया और महाराजजी को दे दिया। महाराजजी चिल्लाए, “बस यही है! मूंछों की दवा! इसे लगाओ!” बाम को घुटने पर मलते ही महाराजजी ने घोषणा की कि दर्द गायब हो गया है और अब वे ठीक हैं।

राम

जानकी और द्रौपदी महाराजजी के सामने बैठी थीं, और महाराजजी ने जानकी की ओर मुड़कर पूछा, "मुझे तुम ज्यादा पसंद हो या द्रौपदी?"

जानकी ने मधुर स्वर में कहा, "क्यों, महाराज जी, आप हम सभी से एक समान प्रेम करते हैं।"

महाराजजी ने उत्तर दिया, “नहीं! मुझे द्रौपदी अधिक पसंद है!” इससे वह बहुत आहत हुईं। वह उठीं और भाग जाने के इरादे से वृंदावन बाजार की ओर चल पड़ीं! भला गुरुओं की क्या पसंद होती है? बाजार में जाकर उन्हें एहसास हुआ कि वह भाग नहीं सकतीं। किसी के लिए कुछ अच्छा करने की चाह में उन्होंने हनुमान जी की एक छोटी पीतल की मूर्ति खरीदी और मंदिर लौटकर उसे अपने कमरे में रख दिया। तुरंत बाद महाराजजी ने उन्हें पकड़ लिया और पूछा, “तुम कहाँ थीं? क्या कर रही थीं? क्या खरीदा?” उन्होंने उन्हें उस छोटी मूर्ति के बारे में बताया। उन्होंने उसे मूर्ति लाने को कहा, और जब वह लाईं तो उन्होंने कुछ देर तक उसे हाथ में लेकर देखा और फिर मुझसे देने को कहा! मुझे नहीं पता कि उन्होंने यह मेरे लिए ही मांगी थी या महाराजजी ने ही ऐसा किया था। जिस दिन मैंने चुपके से हनुमान जी की छोटी मूर्ति की कामना की थी, उसके ठीक अगले दिन मुझे यह मूर्ति मिल गई।

मैं महाराजजी के कमरे में उनके साथ अकेला होता था और मैं चाहता था कि हर कोई इस अनुभव को साझा करे, इसलिए मैं कहता था, "महाराजजी, उन्हें अंदर आना बहुत अच्छा लगेगा।"

वह कहता था, "क्या मुझे उन्हें अंदर आने देना चाहिए?"

मैं कहता, "हाँ। उन्हें अंदर आने दो।"

वह कहते थे, "जाओ उन्हें अंदर ले आओ।" कभी-कभी वह कहते थे, "नहीं! तुम यहीं रहो।"

या फिर वो कहता कि सब बदमाश हैं। मैं उससे बहस करता कि सब बदमाश नहीं हैं, उनमें से कुछ मेरी ही तरह भ्रमित हैं। वो कहता कि ये बात सही है, फिर कहता, "नहीं, सब बदमाश हैं।"

बड़े हवन यानी अग्नि अनुष्ठान के समय, बहुत से लोगों ने कहा कि वे उपवास रखेंगे, लेकिन दो दिन बाद उन्होंने उपवास नहीं रखा। और जिन लोगों ने उपवास न रखने की बात कही थी, उन सभी ने अंततः उपवास रखा।

एक बार इलाहाबाद में एक सिख परिवार ने सत्संग में आए सभी लोगों को अपने घर पर भोजन कराया और दोपहर भर हमारा मनोरंजन किया। मैं महाराजजी के साथ रुकना चाहता था, इसलिए मैं छत पर जाकर छिप गया, जहाँ कोई नहीं जाता था। सभी लोग सैर के लिए निकलने लगे, और जब सब चले गए, तो मुझे बहुत डर लगा। मैंने सोचा, "जब महाराजजी को पता चलेगा कि मैं अभी भी यहाँ हूँ, तो वे क्या करेंगे?"

मैंने दीदी (दादा की पत्नी) से पूछा कि जब महाराजजी को इस बारे में पता चलेगा तो वे क्या करेंगे।

उसने कहा, "ओह, बेहतर होगा कि तुम दादा से बात करो।"

तो मैं दादाजी के पास गया और बोला, “दादाजी! मुझे नहीं पता महाराजजी क्या करेंगे।”

उन्होंने जवाब दिया, "कौन करता है?"

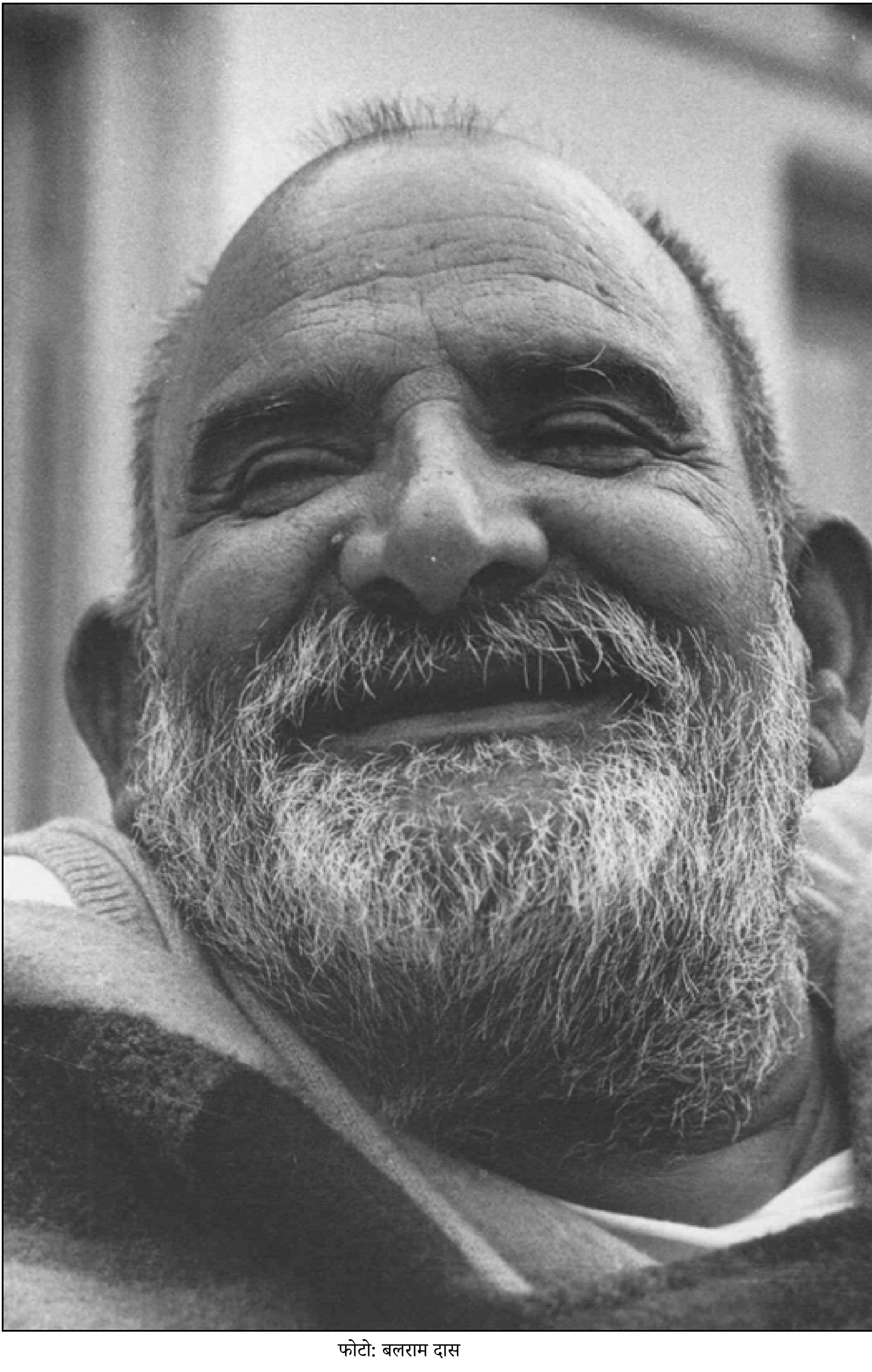

फोटो: बलराम दास

भगवान ही सब कुछ करता है

भारत के महान योगियों की परंपरा में, महाराजजी की शक्तियाँ दूसरों के मन को जानने की सीमा से कहीं अधिक थीं। उनसे चमत्कारों की भरमार निकलती थी, और यद्यपि वे अपने इनकार और भ्रम से हमें भ्रमित करते थे, फिर भी हमें इस असाधारण प्रक्रिया का अनुभव करने का अवसर मिलता था। लेकिन ये घटनाएँ जितनी आश्चर्यजनक और नाटकीय थीं, महाराजजी के करीबी भक्तों की दृष्टि में वे सार नहीं थीं। महाराजजी स्वयं चमत्कार थे। उनके आसपास रहने मात्र से ही सामान्य बातें चमत्कारिक लगने लगती थीं, और इसके विपरीत, चमत्कारिक बातें भी सामान्य लगने लगती थीं। फिर भी जब भक्त एकत्रित होते हैं, तो चमत्कार की कहानियाँ ही सबसे आसानी से उनके मुख से निकलती हैं। शायद इसका कारण यह है कि ऐसी कहानियाँ "बताने योग्य" हैं, जबकि प्रेम का सागर, कोमलता और करुणा का वह उपचार जिससे महाराजजी ने - ईसा मसीह की तरह - हम पर अपने सच्चे चमत्कार किए, वे अवर्णनीय हैं।

इन चमत्कारी शक्तियों का क्या महत्व था? शायद ये उस उद्देश्य की पूर्ति करती थीं जो महान संत शिरडी साई बाबा, जिन्होंने चमत्कारों का असाधारण उपयोग किया, ने इन्हें प्रदान किया था: "मैं उन्हें वह देता हूँ जो वे चाहते हैं, इसलिए वे वही चाहेंगे जो मैं देता हूँ।" सभी चमत्कार भौतिक जगत, संसार, भौतिक धरातल से संबंधित हैं, लेकिन महाराजजी जैसे व्यक्तियों के साथ हमारा जो संबंध है उसका सार आध्यात्मिक है, जो इन चमत्कारों से कहीं परे है। चमत्कार केवल अप्रत्याशित होते हैं; और आध्यात्मिकता में कोई अपेक्षित नहीं होता, इसलिए कोई अप्रत्याशित भी नहीं होता।

इसी तरह महाराजजी नीम करोली बाबा के नाम से प्रसिद्ध हुए, जिसका अर्थ है नीम करोली (या नीब करोरी) के साधु। यह कई साल पहले की बात है, शायद जब महाराजजी अपनी उम्र के तीसवें दशक के उत्तरार्ध में थे।

कई दिनों से उन्हें कुछ भी खाने को नहीं मिला था और भूख के मारे वे पास के शहर जाने वाली ट्रेन में सवार हो गए। जब कंडक्टर ने महाराजजी को बिना टिकट के प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठे देखा, तो उसने आपातकालीन ब्रेक लगा दिया और ट्रेन रुक गई। कुछ कहा-सुनी के बाद, महाराजजी को बिना किसी औपचारिकता के ट्रेन से उतार दिया गया। ट्रेन नीब करोरी गाँव के पास रुकी थी, जहाँ महाराजजी रहते थे।

महाराजजी एक पेड़ की छाँव में बैठ गए, जबकि कंडक्टर ने सीटी बजाई और इंजीनियर ने इंजन की गति बढ़ा दी। लेकिन ट्रेन नहीं चली। कुछ देर तक ट्रेन वहीं खड़ी रही और उसे चलाने के लिए हर संभव प्रयास किया गया। उसे धक्का देने के लिए एक और इंजन बुलाया गया, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। एक हाथ वाले स्थानीय मजिस्ट्रेट, जो महाराजजी को जानते थे, ने अधिकारियों को सुझाव दिया कि वे उस युवा साधु को ट्रेन में वापस लाने के लिए मना लें। शुरू में अधिकारी इस तरह के अंधविश्वास से हैरान थे, लेकिन ट्रेन को चलाने के कई असफल प्रयासों के बाद उन्होंने एक बार कोशिश करने का फैसला किया।

कई यात्री और रेलवे अधिकारी महाराजजी के पास भोजन और मिठाई लेकर आए। उन्होंने महाराजजी से ट्रेन में चढ़ने का अनुरोध किया। महाराजजी दो शर्तों पर सहमत हुए: (1) रेलवे

अधिकारियों को नीब करोरी गांव के लिए एक स्टेशन बनवाने का वादा करना होगा (उस समय ग्रामीणों को निकटतम स्टेशन तक पहुंचने के लिए कई मील पैदल चलना पड़ता था), और (2) रेलवे को अब से साधुओं के साथ बेहतर व्यवहार करना होगा। अधिकारियों ने अपनी पूरी कोशिश करने का वादा किया, और अंततः महाराजजी ट्रेन में सवार हो गए।

फिर उन्होंने महाराजजी से ट्रेन शुरू करने को कहा। वे बहुत क्रोधित हो गए और बोले, "क्या ट्रेन शुरू करना मेरा काम है?" इंजीनियर ने ट्रेन शुरू की, ट्रेन कुछ गज चली और फिर इंजीनियर ने उसे रोक दिया और कहा, "जब तक साधु मुझे आदेश नहीं देंगे, मैं आगे नहीं बढ़ूंगा।" महाराजजी ने कहा, "उसे जाने दो।" और वे आगे बढ़ गए।

महाराजजी ने कहा कि अधिकारियों ने अपना वादा निभाया और उसके तुरंत बाद नीब करोरी में एक रेलवे स्टेशन बनाया गया और साधुओं को अधिक सम्मान मिलने लगा।

राम

जब भी महाराजजी इलाहाबाद से वृंदावन के लिए निकलते थे, तो हमेशा एक जुलूस निकलता था—कभी-कभी तो अठारह रिक्शा तक लोगों से भरे होते थे जो रेलवे स्टेशन की ओर जाते थे! एक बार हम सब कतार में खड़े थे और जुलूस शुरू हो गया। मैंने रिक्शा चालकों को सबसे छोटे रास्ते से जाने का निर्देश दिया, लेकिन महाराजजी ने हस्तक्षेप किया और लंबे रास्ते से जाने पर जोर दिया। उस रास्ते पर कई भक्त जमा थे, सभी उनके प्रस्थान के समय एक झलक पाने की आशा में थे। इन अंतिम दर्शनों के कारण महाराजजी को देर हो गई, और सिद्धि माता और वे माताएँ जिनके साथ उन्हें यात्रा करनी थी, सभी ट्रेन में थीं।

उन दिनों मुझे आरक्षण जैसे कामों में खुशी मिलती थी, इसलिए मैं माताओं को सीट देने और उनकी जरूरतों का ध्यान रखने में व्यस्त था। महाराजजी अभी भी श्रद्धालुओं के साथ स्टेशन के बाहर ही थे जब इंजीनियर और कंडक्टर ने ट्रेन चलने का इशारा किया। मैंने सोचा, "हे भगवान! अब क्या होगा? मैं खुद माताओं के साथ ट्रेन में ही रहूंगा। मैं उन्हें अकेले नहीं जाने दे सकता।" लेकिन पूरे चार मिनट तक इंजीनियर ट्रेन को चलाने की कोशिश करता रहा, पर वह टस से मस नहीं हुआ। अपने श्रद्धालुओं के साथ धीरे-धीरे टहलते हुए महाराजजी प्लेटफार्म पर आए। ट्रेन में चढ़ते ही उन्होंने अंग्रेजी में मुझे चिल्लाकर कहा, "बाहर निकलो!" महाराजजी के सीट पर बैठते ही ट्रेन चलने लगी।

राम

एक बार महाराजजी ने मुझसे उसी दिन जाने वाली ट्रेन में दो प्रथम श्रेणी, वातानुकूलित सीटें आरक्षित करने को कहा! सभी अधिकारियों ने मुझे बताया कि कलकत्ता से कालका (भारत के पूर्वी तट से पश्चिमी तट तक) जाने वाली ट्रेन पूरी तरह से बुक है। फिर भी, एहतियात के तौर पर, मैंने दो अनारक्षित टिकट खरीद लिए। मुझे यकीन था कि मैं अपना समय बर्बाद कर रहा हूँ और हमें उन्हें भुनाना पड़ेगा। महाराजजी स्टेशन में दाखिल हुए, धीरे-धीरे प्लेटफार्म पर चले और एक जगह पर एकदम स्थिर होकर रुक गए। जब ट्रेन आई, तो महाराजजी के ठीक सामने एक प्रथम श्रेणी, वातानुकूलित डिब्बा रुका हुआ था। मैंने देखा था कि उन्होंने खड़े होने के लिए वही जगह चुनी थी, इसलिए मैंने कंडक्टर से, जो वहीं खड़ा था, उस डिब्बे में दो बर्थ माँगीं, और उसने कहा, "क्या! क्या तुम पागल हो? कलकत्ता से कालका जाने वाली यह ट्रेन पूरी तरह से भरी हुई है!"

उस क्षण मेरा आत्मविश्वास डगमगा गया और मैंने महाराजजी की ओर देखा। उन्होंने बस एक उंगली उठाई और धीरे से कहा, "सेवक।"

तो मैं कार अटेंडेंट के पास गया और दोबारा दो बर्थ माँगे, तो उसने कहा, “जी हाँ, आपके लिए जगह है। देखिए, एक दल जिसने पूरी यात्रा आरक्षित की थी, उसे अचानक किसी काम से मुगल सराय में उतरना पड़ा। इस कार में दो बर्थ खाली हैं।” यह वही कार थी जो महाराजजी के ठीक आगे खड़ी थी।

राम

एक दिन महाराजजी और उनका ड्राइवर बरेली से कैंची जा रहे थे। वे कैंची पहुँचे और थोड़ी देर बाद, कुछ और लोग वहाँ पहुँचे और बोले, “आप उस रास्ते से नहीं आए होंगे। सड़क चार दिनों से बह गई है और कोई यातायात नहीं है, यहाँ तक कि ट्रक भी नहीं।” सड़क दो और दिनों तक दुर्गम बनी रही।

राम

महाराजजी कश्मीर जा रहे थे, तभी कार का क्लच खराब हो गया। हम एक छोटे से गाँव में थे जहाँ कोई मरम्मत की सुविधा नहीं थी और पहाड़ी रास्ते के कारण ड्राइवर आगे जाने से डर रहा था। एक मैकेनिक मिला, लेकिन उसने जितनी कोशिश की, क्लच उतना ही खराब होता गया, आखिरकार वह पूरी तरह से काम करना बंद कर दिया। मैंने महाराजजी से पूछा कि क्या करना चाहिए, तो उन्होंने कहा कि एक ट्रक रोककर कार को टो करवा लो। लेकिन सारे ट्रक उल्टी दिशा में जा रहे थे। मैंने यह बात महाराजजी को बताई, तो उन्होंने कहा, "अरे, ये ब्राह्मण तो बड़े कंजूस हैं, कार को टो करवाने के लिए ट्रक किराए पर लेने के लिए पैसे भी नहीं देंगे।" (मेरे पास एक हजार रुपये थे, जो काफी थे।) आखिरकार मुझे एक बस मिल गई जो कार को टो करने को तैयार थी। मैंने एक रस्सी खरीदी और हम निकलने ही वाले थे कि तभी दूसरी दिशा से एक बस आई और चेतावनी दी कि आगे बस चेक-स्टॉप है, इसलिए बस वाले कार को टो करने की कोशिश न करें। अब अंधेरा हो चुका था और आसपास कोई होटल नहीं था, इसलिए मैं महाराजजी के पास गया और कहा, "ये तीन विकल्प हैं: हम पूरी रात बिना कंबल के इसी तरह कार में बैठे रह सकते हैं; हम किसी ट्रक से वापस खिंचवा सकते हैं; या हम आगे बढ़ सकते हैं," (इस आखिरी विकल्प का मतलब था कि हमें महाराजजी की शक्ति पर निर्भर रहना होगा, क्योंकि क्लच खराब हो चुका था)।

महाराजजी ने कहा, "आगे चलें।"

श्रीनगर तक पूरे रास्ते में हमें रुकने या क्लच का इस्तेमाल करने की कोई जरूरत नहीं पड़ी, और हमें पेट्रोल की भी जरूरत नहीं पड़ी। सामान्य परिस्थितियों में तो यह बिल्कुल असंभव था।

राम

एक मेले में महाराजजी लोगों से कहते रहे कि गंगा वास्तव में पानी नहीं बल्कि दूध है। एक दिन महाराजजी और कई अन्य लोग नाव में नदी पर थे, और भक्त महाराजजी की बातों की सच्चाई जानने के लिए उत्सुक थे। लेकिन उन्होंने कुछ नहीं कहा। महाराजजी ने उनसे गंगाजल का एक लोटा लाने और उसे ढकने को कहा। जब उन्होंने उसे गिलासों में डाला, तो वह अत्यंत मीठा दूध था। चूंकि शिविर में अन्य भक्त भी थे, नाव में बैठे एक व्यक्ति ने सोचा कि वह उनके

लिए भी थोड़ा दूध ले आएगा, लेकिन महाराजजी ने उस भक्त का गिलास छीनकर क्रोध में गंगा में फेंक दिया।

राम

एक बार महाराजजी ने राम दास नामक एक भारतीय साधु की आस्था को अपनी शक्तियों का प्रदर्शन करके मजबूत किया। महाराजजी ने कहा, “देखो राम दास, मैं गायब हो रहा हूँ, समझे?” उन्होंने एक छोटा पत्थर लिया और अपने शरीर पर मारा। राम दास महाराजजी को देख नहीं पाए। फिर महाराजजी ने कहा, “अब देखो, मैं फिर से प्रकट हो रहा हूँ,” और राम दास उन्हें फिर से देख पाए। महाराजजी ने यह प्रक्रिया तीन-चार बार दोहराई।

राम

एक बार पचास-साठ कांग्रेसी नेताओं का एक दल महाराजजी से मिलने जा रहा था। वे हनुमान घर में ठहरे हुए थे। वहाँ से दूर-दूर तक सड़क दिखाई देती थी, इसलिए उन्हें पता था कि वे आ रहे हैं। महाराजजी अचानक उठे और पहाड़ी से नीचे उतर गए। एक भारतीय साधु, राम दास के साथ, वे एक छोटे से देवी मंदिर की ओर चले। जब दल वहाँ पहुँचा तो उन्होंने महाराजजी के बारे में पूछा। उन्हें उस रास्ते पर जाने का निर्देश दिया गया। महाराजजी और राम दास मंदिर के सामने बैठ गए। कांग्रेसी भी उस छोटे मंदिर में आ गए, और हालाँकि वे खुले मैदान में लगभग छह फीट की दूरी पर खड़े थे, फिर भी वे उन्हें या राम दास को नहीं देख पाए। वे लोग लगभग उनके सामने खड़े थे और मन ही मन कह रहे थे, "नीम करोली बाबा कहाँ हैं?" महाराजजी और राम दास दोनों ही अदृश्य हो गए थे।

रामदास को हशीश की लत लग चुकी थी और उसे खांसी भी हो रही थी, जो कि स्वाभाविक रूप से इसके साथ आती है। उसे खांसी का दौरा पड़ा और वह खांसना चाहता था। वह इसे रोक नहीं पा रहा था, लेकिन उसे डर था कि अगर उसने खांसा तो ये लोग सुन लेंगे और स्वाभाविक रूप से समझ जाएंगे कि महाराजजी यहाँ हैं। महाराजजी ने कहा, "चिंता मत करो। जितना चाहो खांसो," तो रामदास ने जोर से खांसा और उसे राहत मिली। लेकिन इन लोगों ने न तो बातचीत सुनी और न ही रामदास की खांसी। कांग्रेस के लोगों ने अपनी खोज छोड़ दी और चले गए, और तभी महाराजजी फिर से प्रकट हुए।

राम

यात्रा के दौरान एक घोड़ा बेकाबू हो गया, जिससे सवारों को खतरा हो गया। महाराजजी घोड़े के पास गए और उससे बोले, “देखो भाई। इन्हें अभी नीचे उतरने दो। इन्हें नीचे उतरने दो। समझे?” घोड़ा तुरंत शांत हो गया। भक्त नीचे उतर गए और यात्रा पैदल ही जारी रही।

राम

एक सेना कर्नल सेना शिविर के द्वार पर पहुंचा और उसने महाराजजी को द्वार के ठीक सामने जमीन पर लेटा हुआ पाया। जब उसे हटने का आदेश दिया गया, तो महाराजजी ने उत्तर दिया कि यह भगवान की भूमि है और वह केंद्रीय खुफिया विभाग (सीआईडी) के साथ हैं। कर्नल क्रोधित हो गया और उसने पहरेदारों को महाराजजी को ले जाकर सेना के बाड़े में कैद करने का आदेश दिया। कुछ घंटों बाद, कर्नल बाहर से लौटकर फिर से द्वार पर पहुंचा। उसने फिर से महाराजजी को द्वार के सामने लेटा हुआ पाया। कर्नल अपने आदेशों का पालन न करने के लिए पहरेदारों पर

चिल्लाने लगा, लेकिन उन्होंने उसे आश्वासन दिया कि उन्होंने उसके निर्देशानुसार कार्य किया है। बाड़े की जांच करने पर पता चला कि महाराजजी अभी भी वहीं हैं। इसके बाद कर्नल भक्त बन गया।

राम

महाराजजी और कुछ भक्तों ने बद्रीनाथ जाते समय रास्ते में एक धर्मशाला में रात बिताई। महाराजजी ने पूरे समूह को अपने कमरे से बाहर भेज दिया और रात में उन्हें अंदर आने से मना कर दिया। उन्होंने महाराजजी के पलंग पर एक बड़ा नाग देखा था। सुबह महाराजजी नाग को लेकर बाहर आए और उसे भगा दिया। कुछ समय बाद कैंची में महाराजजी को बताया गया कि आश्रम में एक नाग है। उन्होंने जोर-जोर से चिल्लाकर कहा—"नाग है, नाग है!"

एक भक्त ने उनसे कहा, “ये क्या है? अब एक कोबरा के लिए इतनी चिंता? जब आप पूरी रात एक कोबरा के साथ सोए थे, तब क्या हुआ था? अब आप इतना हंगामा कर रहे हैं!”

“अरे दुष्ट! यहाँ से चले जाओ!” महाराजजी ने उत्तर दिया।

राम

महाराजजी अपने एक भक्त, पुलिस अधीक्षक के साथ बनारस में थे। वे गंगा के मध्य में स्थित एक द्वीप पर साधुओं के शिविर में जा रहे थे, और अधीक्षक ने कहा, "हम नाव से चलेंगे।" (बनारस में गंगा एक मील से अधिक चौड़ी है।)

महाराजजी ने जवाब दिया, "नहीं, हम पानी में जाएंगे।"

अधीक्षक को तैरना नहीं आता था और उन्होंने विरोध करते हुए कहा, "महाराज जी, यह हमारे बस की बात नहीं है!"

महाराजजी ने उत्तर दिया, “बस अपना हाथ मेरे कंधे पर रख दो।” इस प्रकार वे नदी में उतरे और देखते ही देखते वे द्वीप पर पहुँच गए। वे उसी रास्ते से वापस लौट आए।

राम

हमारे घर में, महाराजजी के आगमन के तीसरे या चौथे दिन के बाद, मेरी पत्नी ने महाराजजी की तस्वीर के पास से आवाज़ सुनी, "रात के लिए मेरे लिए थोड़ा पानी रख देना।" एक रात वह भूल गई, लेकिन बाद में जब वह बहुत प्यासी उठी तो उसे तस्वीर के पास पानी रखने की याद आई। सुबह तक उसने जो गिलास ढका था, वह लगभग खाली था।

राम

एक दल वसुधारा (बद्रीनाथ के पास) जा रहा था, जहाँ से गंगा नदी का उद्गम होता है, लेकिन एक माँ बीमार थीं, इसलिए दल उन्हें साथ नहीं ले जा रहा था। जब दल जाने लगा, तो माँ अपनी बदकिस्मती पर विलाप कर रही थीं, तभी महाराजजी आए और बोले, “तुम वसुधारा के दर्शन करना चाहती हो?” उन्होंने माँ का हाथ छुआ और कहा, “अब बरामदे में जाओ।” माँ ने वैसा ही किया और उन्हें वसुधारा के दर्शन हुए। वे परमानंद में डूब गईं। बाद में पता चला कि दल सड़क पर अवरोध के कारण वसुधारा नहीं पहुँच सका था। जब वे लौटे तो माँ ने सबको बताया कि वे वहाँ गई थीं, लेकिन ज़ाहिर है, किसी ने उनकी बात पर विश्वास नहीं किया। उन्होंने विस्तार से वर्णन किया, और एक पुराने मार्गदर्शक, जो पहले वहाँ जा चुका था, ने भी उनके वर्णन की पुष्टि की।

राम

कानपुर के पुजारी से महाराजजी को खबर मिली कि नई मूर्ति, जिसका अभी तक राज्याभिषेक नहीं हुआ था, टूट गई है। महाराजजी और हममें से कुछ लोग तुरंत कानपुर के लिए निकल पड़े और पूरी रात गाड़ी चलाते रहे। मुझे लगा कि इस लगन से महाराजजी किसी काम पर डटे रहने का अनुशासन सिखा रहे थे: 'राम का काम पूरा होने तक सोना नहीं है।' मैंने महाराजजी को यह कहावत सुनाकर थोड़ा धीमा करने की कोशिश की, "रात में सफर मत करो और दोपहर में आलस मत करो।"

महाराजजी ने कहा, “यही सिद्धांत हर परिस्थिति में लागू नहीं होता।” जब हम वहाँ पहुँचे तो हमने पाया कि मूर्ति अब टूटी हुई नहीं थी। तब महाराजजी ने संत रामकृष्ण की एक कथा सुनाई, जिसमें दुर्गा (परमेश्वर का एक रूप) की मूर्ति टूट गई थी और रामकृष्ण ने उसकी पूजा की और भजन गाए, और शीघ्र ही वह ठीक हो गई।

राम

एक व्यक्ति अपने खेत में कुआँ खोदने की असफल कोशिश कर रहा था, इसलिए अंत में उसने अपने बेटे को महाराजजी के पास मदद के लिए भेजा। महाराजजी खेत में आए, पेशाब किया और यह कहते हुए चले गए, "अपने पिता से कहो कि फिर से कोशिश करें।" सचमुच, एक कुआँ मिल गया, जो आज भी बह रहा है।

राम

एक मेले में बाढ़ से एक पुल टूट गया, और हर बार पुनर्निर्माण के प्रयास विफल होने पर वह गिर जाता था। मेले के आयोजक ने महाराजजी से मदद मांगी और महाराजजी ने पुल को आशीर्वाद देने का वादा किया, लेकिन उस व्यक्ति ने जोर दिया कि महाराजजी स्वयं पुल स्थल पर आएं। महाराजजी कुछ देर वहां खड़े रहे और बाढ़ का पानी कम होने लगा। जल्द ही पुल का पुनर्निर्माण हो गया और मेला अब तक के सबसे शांतिपूर्ण मेलों में से एक साबित हुआ।

राम

लोग अक्सर महाराजजी को कंबल भेंट करते थे। एक बार जब उन्होंने एक कंबल का इस्तेमाल कर लिया, तो वह अचानक बहुत छोटा हो गया, और उन्होंने कहा, "आप मुझे ये छोटे कंबल क्यों दे रहे हैं?"

राम

महाराजजी और एक भक्त ट्रेन के प्रथम श्रेणी के डिब्बे में सफर के लिए बैठ गए। भक्त को लगा कि अगर महाराजजी कंडक्टर के आने तक टिकट अपने पास रखें तो ज्यादा सुरक्षित रहेगा, इसलिए उसने टिकट महाराजजी को दे दिए। महाराजजी ने टिकटों को देखा और कहा, "ये किसलिए हैं?" और चलती ट्रेन की खिड़की से बाहर फेंक दिए। भक्त चौंक गया लेकिन कुछ नहीं बोला। महाराजजी अपनी बातचीत जारी रखते रहे, जबकि भक्त टिकटों और कंडक्टर को लेकर चिंतित था। आखिरकार कंडक्टर ने दरवाजा खटखटाया और टिकट दिखाने को कहा। भक्त एक पल के लिए झिझका और फिर महाराजजी को बताया कि कंडक्टर टिकट देखना चाहता है। महाराजजी ने खिड़की की ओर हाथ बढ़ाया और टिकट भक्त को दे दिए। वे हँसे और बोले, "क्या इसी बात की तुम्हें चिंता थी?"

राम

1958 में, मैं "भूमिहीन जन आंदोलन" का नेता था। मुझे गिरफ्तार किया गया और मुझ पर चार आरोप लगाए गए: (1) दंगा भड़काना, (2) अनाधिकृत प्रवेश, (3) हत्या का प्रयास, और (4) सरकारी कर्मचारी को उसके कर्तव्यों का निर्वहन करने से रोकना। महाराजजी ने मुझे आश्वस्त किया कि चिंता न करें, सब ठीक हो जाएगा; लेकिन 1964 में मुझे दोषी ठहराया गया और चार साल के कारावास की सजा सुनाई गई। मैंने तुरंत फैसले के खिलाफ अपील की।

मुझे चिंता नहीं थी, लेकिन मेरे रिश्तेदार काफी परेशान थे और उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि मैं इस मामले को लेकर फिर से महाराजजी के पास जाऊं। महाराजजी ने मुझे एक बार फिर भरोसा दिलाया कि सब ठीक हो जाएगा और कहा कि जब एक खास जज, जिनका नाम उन्होंने बताया, पद पर होंगे, तो फैसला पलट दिया जाएगा। (उन्होंने जो नाम बताया था, वह मौजूदा जज का नाम नहीं था।) दरअसल, मौजूदा जज का जल्द ही तबादला हो गया, लेकिन उनकी जगह जो जज आए, वो भी महाराजजी के बताए जज नहीं थे। मामले की सुनवाई चल रही थी और एक तय दिन के अंत तक इसे खत्म होना था। मैंने मन ही मन सोचा, "ऐसा कैसे हो सकता है?" वह एक सर्द, हल्की बारिश वाला दिन था और सूरज डूब चुका था, और अभी भी कई घंटों की सुनवाई बाकी थी, इसलिए जज ने मामले को अगले दिन के लिए टाल दिया। उस दिन एक बहुत ही महत्वपूर्ण कागज़ात रहस्यमय तरीके से गायब हो गए, जिससे मामला खत्म नहीं हो सका। जज ने कागज़ात मिलने तक सुनवाई को और आगे बढ़ाने का आदेश दिया, और कागज़ात मिलने में तीन साल लग गए। तब तक, यानी 1968 में, महाराजजी द्वारा बताए गए जज को पद पर नियुक्त कर दिया गया था। उनके फैसले के तहत मामला रद्द कर दिया गया।

राम

मैं दक्षिण भारत में एक संत से मिलने गया था, जो अनेक चमत्कार करने के लिए प्रसिद्ध थे। जब मैं जाने की तैयारी कर रहा था, तो उन्होंने मुझसे कहा, "राम दास, क्या आपको कुछ चाहिए?"

“नहीं, बाबा जी, मुझे कुछ नहीं चाहिए।”

“लो,” उसने कहा और अपना हाथ हथेली ऊपर की ओर करके धीरे-धीरे गोलाकार गति में घुमाने लगा। मैं अभी भी उसके पैरों के पास बैठा था, जिससे मेरी नज़र उसके हाथ पर टिकी हुई थी, और मैं ज़रा सी भी हरकत पर पैनी नज़र रख रहा था, पलकें भी नहीं झपका रहा था। लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ कि उसके हाथ पर एक नीली रोशनी दिखाई दी, जो एक पदक में बदल गई। यह सब मेरे लिए समझ से परे था: उसने ऐसा क्यों किया?

बाद में मैंने सुना कि महाराजजी ने ऐसे चमत्कारों के बारे में कहा था: “ऐसी सिद्धियाँ तो होती हैं, लेकिन उनका अधिक उपयोग नहीं करना चाहिए। वे आत्मा को जादू में बदल देती हैं।” और उन्होंने ऐसे संतों के बारे में कहा: “उन्हें खेलने दो। दक्षिण के कुछ संत चमत्कारों के पीछे बहुत भागते हैं।” (आर. डी.)

राम

एक बार गुरु पूर्णिमा (गुरु को सम्मान देने का दिन) से पहले वृंदावन में, महाराजजी हमें अपने हाथों से पेड़ा खिला रहे थे। एक-एक करके वे हमें एक-एक पेड़ा खिलाते गए। मैंने भी उन्हें

एक पेड़ा खिलाने की कोशिश की। ज़ाहिर है, वे चीनी नहीं खाते थे, लेकिन मैं ज़िद कर रहा था, यह सोचकर कि यह भी प्रसाद है। "आपको इसे खाना ही होगा, कृपया इसे खा लीजिए।" तो उन्होंने खाने का नाटक किया।

लेकिन नाइमा ने उन्हें पकड़ लिया: “आपने इसे नहीं खाया, महाराजजी।” वे दोषी महसूस कर रहे थे, मानो कह रहे हों, “ओह, आपने मुझे पकड़ लिया।” वह उनके हाथ में ही था। उन्होंने उसे छुपा लिया था। इसके बाद एक अद्भुत खेल शुरू हुआ, और वे जादूगर की तरह अभिनय करने लगे।

“किस हाथ में है? हा! तुम गलत हो, इस हाथ में है।” मुझे नहीं लगता कि वह इस खेल के लिए अपनी शक्तियों का इस्तेमाल कर रहा था। वह सचमुच उसे हथेली में छुपा रहा था, कंबल में छिपा रहा था और हाथ की सफाई का इस्तेमाल कर रहा था—ये सभी तरकीबें कोई भी जादूगर कर सकता है। लेकिन वह कह रहा था, “देखो! देखो! मैं साईं बाबा जैसा हूँ। मैं इसे प्रकट कर सकता हूँ; मैं इसे गायब कर सकता हूँ। मैं कुछ भी कर सकता हूँ। जादू! यह जादू है!”

राम

हम बंबई में महाराजजी के साथ कार में थे। वे हमें छोटी-छोटी गलियों से गुज़रने का निर्देश दे रहे थे, और अंत में हम एक घर के पास पहुँचे। एक माँ दौड़कर बाहर आईं और महाराजजी के चरण छुए। संयोगवश, मेरे एक सहकर्मी ने मुझे महाराजजी से सत्य साई बाबा के चमत्कारों के बारे में पूछने के लिए कहा था, लेकिन महाराजजी उस प्रश्न को अनसुना कर रहे थे। कुछ समय बाद, उसी घर में, महाराजजी ने कहा, “माँ, वे चीजों को प्रकट करना बहुत बड़ी बात समझते हैं। हमें कुछ मूर्तियाँ दीजिए।” और अचानक उनके हाथ में कृष्ण की छोटी-छोटी मूर्तियाँ आ गईं। सिद्धि माँ ने उनमें से दो को अपनी साड़ी में लपेट लिया, और जब वे घर पहुँचीं तो उन्हें वहाँ तीन मूर्तियाँ मिलीं।

राम

चमत्कारों के बारे में महाराजजी बाबाओं से कहते थे, “यह क्या है? यह सब मूर्खता है।” वे चमत्कार कर सकते थे, लेकिन सबसे बड़ा चमत्कार यह था कि वे किसी के हृदय और मन को ईश्वर की ओर मोड़ सकते थे, जैसा कि उन्होंने मेरे लिए किया।

मेरे पास कोई शक्तियां नहीं हैं। मुझे कुछ भी नहीं पता।

महाराजजी वास्तव में सबसे बड़े संत थे। उन्होंने योग की सभी तपस्याएँ की थीं। भारत में ऐसे संत हैं, जो बहुत वृद्ध हैं, और वे लगभग कभी लोगों को दर्शन नहीं देते। कुछ गिने-चुने लोगों को छोड़कर, जिन पर वे कृपा करते हैं, इन संतों को देखा नहीं जा सकता। कभी-कभी वे बाघ, बंदर या भिखारी का रूप धारण कर लेते हैं। आप उनके दर्शन तभी कर सकते हैं जब वे स्वयं चाहें, अन्यथा नहीं। भगवान के सच्चे भक्त कभी भगवा वस्त्र नहीं पहनते, न ही माला धारण करते हैं और न ही चंदन लगाते हैं। आप उन्हें तभी जान सकते हैं जब वे स्वयं चाहें, और फिर भी आप उन्हें उतना ही जान सकते हैं जितना वे अनुमति दें।

माँ, मैं क्या करूँ—कोई मेरी ओर देखने वाला नहीं है। मुझे कोई नहीं जानता, कोई मुझे समझता नहीं। मैं क्या करूँ?
[शरीर त्यागने से चार दिन पहले कहा गया]

भक्तों का एक और समूह भी था, जिनमें से कई महाराजजी के सबसे लंबे समय से जुड़े सहयोगी थे, जिन्होंने महाराजजी की पहचान के बारे में बिल्कुल भी अटकलें नहीं लगाईं।

आप महाराजजी को समझने की कोशिश नहीं कर सकते। आप उन्हें केवल जूते या कपड़े की तरह पहनकर महसूस कर सकते हैं।

राम

मैंने एक श्रद्धालु से पूछा, "जब आप रुके और अपनी पत्नी से बात नहीं की, तो क्या आपकी पत्नी को आश्चर्य नहीं हुआ?"

“नहीं, बिल्कुल नहीं। जब हम महाराजजी के साथ होते हैं, तो हम चीजों के बारे में तर्कसंगत रूप से नहीं सोचते। उन्हें बस इतना पता था कि मैं महाराजजी के साथ हूँ।”

राम

उसे पकड़ना बेहद मुश्किल है।

राम

मुझे इन सब बातों के बारे में कुछ नहीं पता। मैं बस इतना जानती हूँ कि वो मेरे बाबा हैं। हालांकि महाराजजी के आसपास चमत्कार होना आम बात थी, लेकिन उनके जीवनकाल में इन पर शायद ही कभी चर्चा होती थी। भक्तों को यह बात अच्छी तरह से पता थी कि उन्हें इन बातों का ज़िक्र पसंद नहीं था। जब कई भक्त बैठकर उनके चमत्कारों पर चर्चा करते, तो महाराजजी उन्हें बुलाकर डांटते और कहते, “तुम सब झूठ बोल रहे हो!” महाराजजी कहते थे कि सब कुछ भगवान ही करते हैं और वे (महाराजजी) कुछ नहीं करते, और अगर लोग उनके बारे में लिखेंगे, तो चमत्कारों की अफवाहों के कारण लाखों लोग उन्हें परेशान करने आ जाएँगे।

1963 में एक व्यक्ति ने महाराजजी के बारे में कहानियां एकत्र कीं। महाराजजी ने कहा, "तुम बदनामी लाना चाहते हो? इन्हें जला दो!" उन्होंने उन्हें जला दिया।

एक अन्य भक्त ने एक लेख लिखा, और महाराजजी ने उस पांडुलिपि को फाड़ दिया।

राम

किसी ने महाराजजी से पूछा कि क्या वे कुछ तस्वीरें लेने की अनुमति देंगे। महाराजजी ने मना कर दिया और अपनी असहमति व्यक्त की। उस व्यक्ति ने महाराजजी पर दबाव डाला, अंततः उन्होंने हार मान ली। उस व्यक्ति ने तीन-चार तस्वीरें खींचीं। जब फिल्म रोल को डेवलप किया गया, तो ये तीनों-चार फ्रेम पूरी तरह से खाली थे।

अगर आप कभी उन्हें कोई चमत्कार करते हुए देख लेते, जैसे कि पूरियां बनाना, तो वे आपसे कहते कि किसी को मत बताना। “मैं तुमसे कहता हूँ, यह तुम्हारे लिए बुरा होगा। किसी को मत बताना।”

राम

एक बार महाराजजी जिस गाड़ी में सवार थे, वह एक ऐसी जगह पर रुक गई जहाँ आसपास कहीं भी पेट्रोल नहीं मिल रहा था। महाराजजी ने ड्राइवर को टैंक में पानी भरकर गाड़ी चलाने को कहा। फिर उन्होंने ड्राइवर को चेतावनी दी कि जब तक महाराजजी जीवित हैं, वह इस घटना के बारे में किसी को न बताए। महाराजजी ने कहा कि अगर उसने बताया तो उसे कुष्ठ रोग हो जाएगा! महाराजजी के देह त्यागने के लगभग तीन साल बाद उस व्यक्ति ने पहली बार यह

कहानी सुनाई।

> **आपको अपनी संपत्ति, पत्नी या साधना के बारे में बात नहीं करनी चाहिए, अन्यथा वे आपसे दूर चले जाएंगे।**

महाराजजी की रणनीति स्पष्ट रूप से कारगर रही, क्योंकि वे केवल उन्हीं लोगों को जानते थे जिन्हें वे जानना चाहते थे, फिर भी आम जनता उन्हें नहीं जानती थी। उदाहरण के तौर पर, 'इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया' ने भारतीय संतों, भूतपूर्व और वर्तमान, पर एक पूरा अंक प्रकाशित किया। सैकड़ों संतों के नाम सूचीबद्ध थे, फिर भी पूरे पत्रिका में उनका ज़िक्र तक नहीं था। शायद यही उनकी शक्ति का सबसे बड़ा प्रमाण था।

जब पश्चिमी देशों के लोग महाराजजी के पास आने लगे, तो उनमें बदलाव आया। उन्होंने तस्वीरें खिंचवाने की अनुमति देना शुरू कर दिया और यहाँ तक कि 'बी हियर नाउ' नामक पुस्तक के लिए अपना आशीर्वाद भी दिया, जिससे पश्चिमी दुनिया के लाखों साधकों को महाराजजी और उनकी शक्तियों के बारे में जानने का अवसर मिला। उनके इस बदलाव का कारण अज्ञात है। शायद वे अपनी विरासत को संवार रहे थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि महाराजजी ने अपने भक्तों को अपनी प्रकट शक्तियों में से कोई भी शक्ति प्रदान नहीं की। शायद वे शिरडी साई बाबा के समान ही महसूस करते थे, जिन्होंने कहा था, "मैं उन्हें शक्तियाँ नहीं देता क्योंकि मैं नहीं चाहता कि वे अपना मार्ग भटक जाएँ।" किसी सिद्धि या योगिक शक्ति के बजाय, महाराजजी ने हमें अधिक मूलभूत चीजें दीं: आस्था, प्रेममय हृदय और ईश्वर की वास्तविकता को स्वीकार करना। साथ ही, उन्होंने यह भी माना कि कुछ भक्तों में ऐसी शक्तियों की इच्छा थी, और उन्हें उन लोगों के साथ समय बिताने में आनंद आता था।

1967 में महाराजजी ने मुझसे पूछा, "क्या तुम उड़ना चाहते हो?" उस समय मेरे पास पायलट का लाइसेंस था, और हालांकि मैं जानता था कि उनका मतलब यह नहीं था, मैंने कुछ मज़ाकिया अंदाज़ में कहा, "मैं पहले से ही उड़ सकता हूँ, महाराजजी।"

महाराजजी ने मेरी प्रतिक्रिया को अनसुना करते हुए कहा, "तुम उड़ना चाहते हो। तुम उड़ोगे।"

सन् 1972 में, चार साल से भी अधिक समय बाद, एक स्वामी के मार्गदर्शन में मंत्र का अभ्यास करते समय, मुझे सूक्ष्म जगत में उड़ने का अनुभव हुआ। तब तक मैं बदल चुका था, और अब मैं कहीं जाना नहीं चाहता था। (आर.डी.)

राम

1967 में उन्होंने मुझसे जो पहली बातें कही थीं, उनमें से एक यह थी, "क्या आप गांधी को जानते हैं?"

“मैं उन्हें जानता हूँ, महाराजजी।”

आपको उसके जैसा होना चाहिए।

महज इतना कहकर उन्होंने मेरे मन में सत्ता के प्रति धार्मिक कल्पनाओं का एक ऐसा सिलसिला शुरू कर दिया जो वर्षों तक चलता रहा। हाल ही में मैंने गांधीजी को सत्ता के बजाय करुणा के रूप में देखना शुरू किया है। महाराजजी के इस कथन ने मुझे आत्म-चिंतन करने के लिए प्रेरित किया।

मेरी इन आसक्तियों को और हवा देने के लिए, एक दिन महाराजजी ने पूछा, “क्या तुमने निक्सन के घर चाय पी थी?” मैं हैरान रह गया, क्योंकि सवाल का कोई संदर्भ नहीं था। लेकिन फिर मुझे याद आया कि कई साल पहले अल्मोड़ा में बसे एक अंग्रेज, जो कृष्ण प्रेम के नाम से जाने जाते थे और जिन्हें कई भारतीय संत मानते थे, उनका असली नाम निक्सन था। मैंने महाराजजी से पूछा कि क्या वे इसी निक्सन की बात कर रहे हैं।

नहीं, वो अमेरिका वाला, जिसमें एक बड़ा सफेद घर है। वो घर जो मुक्तानंद के घर से भी बड़ा है।

अब इसमें कोई शक नहीं था; उनका मतलब राष्ट्रपति से था। "नहीं, मैंने ऐसा कभी नहीं किया।"

फिर यह सोचकर कि शायद पीढ़ियों को लेकर कोई भ्रम हो गया हो, मैंने मदद करते हुए कहा, "लेकिन मेरे पिता ने ऐसा किया है।"

"क्या आप मिस्टर निक्सन के घर में नहीं थे और उन्होंने आपको चाय पिलाई थी और आपके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया था?"

"नहीं।"

“ओह।” बस इतना ही। एक और छोटा सा संकेत कि शायद मुझे सांसारिक सत्ता के गलियारों में खेलना था।

और एक दिन उन्होंने फिर से राष्ट्रपति पद के बारे में बात की। इस बार उन्होंने कहा,

आप जानते हैं, लिंकन एक बहुत अच्छे राष्ट्रपति थे।

"हाँ?"

“हां। वह एक अच्छे राष्ट्रपति थे क्योंकि वे जानते थे कि ईसा मसीह ही असली राष्ट्रपति हैं। वे तो केवल कार्यवाहक राष्ट्रपति थे।”

"ओह।"

“हां, वह बहुत अच्छे थे। उन्होंने गरीबों और दुखियों की मदद की। वह कभी भी मसीह को नहीं भूले।”

आह!”

फिर उन्होंने पूछा, “क्या आप लिंकन को जानते थे?” वहाँ एक अजीब सी खामोशी छा गई, क्योंकि वहाँ मौजूद सभी लोग इस “असंभव” बात को जानते थे। तब दादा ने महाराजजी को बताया कि मैं उन्हें नहीं जान सकता था, क्योंकि लिंकन की मृत्यु 1865 में हुई थी। उन्होंने यह बात एक बच्चे को समझाई। लेकिन हम सभी जानते थे कि महाराजजी कभी भी यूं ही कुछ नहीं कहते थे। (आर.डी.)

राम

भारत के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश के पुलिस प्रमुख दर्शन के लिए आए थे और महाराजजी के चरणों में बैठकर श्रद्धापूर्वक उनकी टांगें मल रहे थे। मुझे भी उनके साथ बैठने का बुलावा आया और महाराजजी ने उनका मुझसे परिचय कराया और पूछा कि क्या अमेरिका की पुलिस भारत की पुलिस जैसी है। जब मैंने राज्य पुलिस अधीक्षक को महाराजजी की टांगें मलते देखा तो मुझे यह तुलना सुनकर हंसी आ गई। मैंने कहा कि अमेरिका की पुलिस के पास बहुत शक्ति है और वे

अक्सर भूल जाते हैं कि वे जनता के सेवक हैं। मैंने यह भी कहा कि किसी भी राज्य पुलिस प्रमुख के लिए किसी संत के चरणों में घुटने टेककर मलना असंभव है। तब महाराजजी ने मेरा परिचय उस पुलिसकर्मी से कराते हुए कहा, "ये राम दास हैं। ये अमेरिका की पुलिस को भगवान के पास ले जाएंगे।" मुझे हंसी आ गई। अब वे भविष्य में ऐसी शक्तियों की बात कर रहे थे जो मेरी कल्पनाओं से भी कहीं अधिक होंगी।

लगभग इसी समय महाराजजी ने मुझे समर्थ गुरु राम दास कहना शुरू किया। पहले वे मुझे कुछ हफ़्तों के लिए अलग-अलग नामों से पुकारते थे (जैसे, "ईशा"—यीशु—या "कबीर")। हर बार जब कोई नया नाम आता, चाहे थोड़े समय के लिए ही सही, मैं उस व्यक्ति के बारे में जानने की कोशिश करता जिसके नाम पर मेरा नाम रखा गया था और उस नाम को अपनाकर देखता। यीशु के बारे में तो मैं पहले से ही जानता था। कबीर एक महान संत थे, एक बहुत ही गरीब बुनकर थे जिन्होंने सभी धर्मों की एकता का उपदेश दिया और ईश्वर में अपने खुले विश्वास के लिए प्रसिद्ध थे। उनकी कविता मेरे हृदय में पहले से ही बहुत श्रद्धा रखती थी। पहले तो मुझे लगा कि समर्थ गुरु राम दास का मतलब सिख गुरु राम दास ही होगा, लेकिन फिर मुझे एक किताब मिली जिसमें समर्थ गुरु राम दास का वर्णन था, जो 1600 के दशक में राजा शिवाजी के गुरु थे और उन्होंने कई हनुमान मंदिरों का निर्माण करवाया था। समर्थ नाम का अर्थ "सर्वशक्तिमान" था और उनकी चमत्कारी शक्तियों की कई कहानियां प्रचलित हैं। वे राजा के महल के पास एक मिट्टी की झोपड़ी में रहते थे। राजा अपनी प्रजा के प्रति चिंता और गरीबों को उदारतापूर्वक भोजन कराने के लिए बहुत सम्मानित थे, लेकिन ऐसा लगता था कि कभी-कभी उनका अहंकार उन पर हावी हो जाता था। जब ऐसा होता, तो गुरु एक पत्थर को तोड़ते, जिसमें बहुत सारे छोटे-छोटे कीड़े होते, और राजा से पूछते, "इन कीड़ों को कौन खिला रहा था?" अपने प्रयासों की तुच्छता का यह अहसास राजा को फिर से विनम्र बना देता था।

मुझे यह नाम अच्छा लगा, और हालाँकि मैं उन सभी शक्तियों को पाना चाहता था जिनका ज़िक्र महाराजजी कर रहे थे, मुझे पता था कि अगर वे मुझे वे शक्तियाँ दे देंगे तो मैं सचमुच उनमें खो जाऊँगा। लेकिन कभी-कभी महाराजजी मुझे ऐसे अनुभव देते थे, जिनमें मुझे उनकी मदद करने का मौका मिलता था, और मुझे यह एहसास होता था कि सच्ची शक्तियाँ तभी प्रकट होती हैं जब कोई यह समझ लेता है, "मैं कुछ नहीं कर सकता; सब कुछ भगवान ही करते हैं।"

एक बार महाराजजी ने मुझसे कहा, "हरि दास अमेरिका में हैं। तुम उन्हें पांच साल तक वहीं रखो।"

मुझे पता था कि हरि दास के पास केवल तीन महीने का वीज़ा है और स्थायी वीज़ा प्राप्त करना—अर्थात् संयुक्त राज्य अमेरिका में पंजीकृत विदेशी नागरिक बनना—आसान नहीं है। इसलिए मैंने महाराजजी से कहा, "मैं ऐसा नहीं कर सकता। संयुक्त राज्य अमेरिका में मेरी कोई राजनीतिक शक्ति नहीं है।"

लेकिन महाराजजी ने मेरी बात नहीं सुनी। उन्होंने बस यही दोहराया, "तुम हरि दास को पाँच साल अमेरिका में रखो। मैंने भगवान दास को यहाँ सात साल रखा था।" इस बात का मतलब समझकर मुझे हंसी आ गई। महाराजजी, जिनके पास हर तरह की शक्ति थी, ऐसी बेतुकी तुलना कर रहे थे। अमेरिकी सरकार में मेरी शक्ति बिल्कुल न के बराबर थी, इसलिए मैंने फिर विरोध

किया। लेकिन वे उतने ही अड़े रहे, तो मैंने कहा कि मैं इस पर ज़रूर काम करूँगा।

उस बातचीत से कुछ दिन पहले, लॉस एंजिल्स से एक पश्चिमी व्यक्ति, जिससे मैं पहले कभी नहीं मिला था, मुझसे मिलने नैनीताल आया। मैंने उसे बताया कि मेरे गुरु पास ही हैं और उसे महाराजजी से मिलवाने ले गया, जिन्होंने उसका नाम बद्रीनाथ दास रखा। वह व्यक्ति महाराजजी से बहुत प्रभावित हुआ और मेरी मुलाकात करवाने के लिए वास्तव में आभारी था। नैनीताल में अपने आखिरी दिन, जो हरि दास की महाराजजी से हुई बातचीत के अगले दिन था, बद्रीनाथ दास ने मुझे फिर से धन्यवाद दिया और पूछा कि क्या वह अमेरिका में मेरे लिए कुछ कर सकते हैं। मैंने उनसे पूछा, "उदाहरण के लिए, क्या?" और उन्होंने बताया कि वह लॉस एंजिल्स में एक सफल वकील हैं। उस समय मुझे कोई ऐसा मित्र याद नहीं आ रहा था जो मुश्किल में हो, लेकिन मैंने उनके प्रस्ताव के लिए उन्हें धन्यवाद दिया। फिर मैंने सोचा, "मेरे परिवार में कई वकील हैं, लेकिन अभी मुझे केवल हरि दास बाबा के लिए अमेरिका का दीर्घकालिक वीज़ा प्राप्त करवाना है," और मैंने उन्हें महाराजजी के आदेश समझाए।

बद्रीनाथ दास ने कहा, “अरे वाह, ये तो अजीब बात है कि आपको इसकी ज़रूरत पड़ रही है। मेरे जीजाजी पश्चिमी अमेरिका के आव्रजन कार्यालय के निदेशक हैं, और हम एक पत्र लिखकर ही इसका इंतज़ाम कर सकते हैं।” और ऐसा ही हुआ। जब हरि दास साक्षात्कार के लिए आव्रजन विभाग आए, तो उनकी फ़ाइल पर विशेष वीआईपी स्टिकर लगे हुए थे, और उन्हें बिना किसी कठिनाई के विदेशी वीज़ा मिल गया।

जाहिर है महाराजजी को पता था कि यह सब कैसे होगा, लेकिन बद्रीनाथ दास के सामने खुद यह बात रखने के बजाय उन्होंने मुझे उनकी मदद करने दिया।

लेकिन एक ओर महाराजजी मेरी सांसारिक शक्ति की लालसाओं से खेल रहे थे, वहीं दूसरी ओर वे उन्हें धीरे-धीरे जड़ से उखाड़ रहे थे। एक दिन जब मैं महाराजजी और केके के साथ बैठा था, तो कई सीआईडी अधिकारी महाराजजी के दर्शन करने आए। वे इंदिरा गांधी के साथ आए थे, जो पास ही में दर्शन के लिए आई थीं। उनके जाने के बाद महाराजजी ने कहा, “इन सब बातों का क्या फायदा? एक राजा तो सिर्फ अपने सैनिकों को आज्ञा मानने का आदेश दे सकता है, लेकिन एक संत जंगली जानवरों को भी आज्ञा मानने का आदेश दे सकता है और वे भी आज्ञा मान लेंगे।”

एक सांसारिक राजा के इस अपमान, समर्थ गुरु रामदास की कहानियों और लिंकन द्वारा वास्तविक राष्ट्रपति की पहचान को समझने के बीच, महाराजजी ने मुझे उस सांसारिक शक्ति की वास्तविक सीमाओं का गहरा प्रभाव समझाया, जिसके पीछे अधिकांश मनुष्य भागदौड़ करते हैं। ये शिक्षाएँ तब से मुझ पर निरंतर प्रभाव डाल रही हैं। (आर.डी.)

महाराजजी के चरणों में आने वाले हजारों साधकों में कई ऐसे पुरुष और महिलाएं थीं जिनके पास सांसारिक शक्ति थी, चाहे वह राजनीतिक हो या आर्थिक, हालांकि महाराजजी सांसारिक शक्ति को महत्व नहीं देते थे। कभी-कभी महाराजजी उनसे बचते थे, और कभी-कभी वे उनकी सहायता या मार्गदर्शन करने के लिए विशेष प्रयास करते प्रतीत होते थे।

महाराजजी आगरा केंद्रीय कारागार के अधीक्षक के घर पर ठहरे हुए थे, तभी अचानक वे उठे और कहीं और चले गए। उन्होंने बताया कि एक धनी आयातक उन्हें परेशान करने आ रहा है।

महाराजजी के जाने के कुछ ही मिनट बाद, एक लिमोसिन कार आई और प्रसाद से लदा एक हट्टा-कट्टा आदमी घर की ओर बढ़ा।

राम

महाराजजी ने उनसे मिलने के इच्छुक कम से कम दो-तीन राज्यपालों से बचने की कोशिश की। लेकिन उनमें से एक राज्यपाल बिना सूचना दिए ही आ गया। महाराजजी ने कहा, "अगर वह मुझसे मिलने के लिए इतना उत्सुक है, तो मैं उसे कैसे रोक सकता हूँ?"

राम

महाराजजी राजनीति में उतनी ही सक्रियता रखते थे जितनी उनके भक्तों के हित में होती थी। वे कहते थे, "हाँ, तुम राज्यपाल बनोगे," या "तुम भारत के उपराष्ट्रपति बनोगे," इत्यादि।

राम

एक बार उपराष्ट्रपति गिरि की पत्नी आईं। महाराजजी ने उनसे मिलने से इनकार कर दिया, हालांकि उन्होंने उनके आने से पहले ही घोषणा कर दी थी। उन्होंने कहा, "उन्हें प्रसाद दे दो।"

राज्यपाल अपने बेटे के साथ आए, और हालांकि महाराजजी आराम कर रहे थे, फिर भी उन्होंने उन्हें परेशान किया। जब महाराजजी ने उनसे बात की तो राज्यपाल ने पूछा कि क्या गिरि को राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव लड़ना चाहिए।

बाद में गिरि स्वयं चार अन्य व्यक्तियों के साथ आए। महाराजजी ने उनसे पंद्रह मिनट तक अकेले मुलाकात की। उसके बाद गिरि चले गए, दिल्ली लौट गए और उपराष्ट्रपति पद से सेवानिवृत्ति की घोषणा कर दी। जब उनसे कारण पूछा गया, तो उन्होंने कहा, "यह मेरी आत्मा की वाणी है जो मुझे ऐसा करने के लिए कह रही है।" इसके बाद उन्होंने भारत के राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव लड़ा।

राष्ट्रपति चुनाव के वोटों की गिनती शुरू होने से पहले ही महाराजजी ने कहा, "गिरि जीत गया है।" और वह सच में जीत गया था।

राम

महाराजजी को कभी भी प्रसिद्धि नहीं चाहिए थी और वे हमेशा वीआईपी लोगों से दूर रहने की कोशिश करते थे। वे महत्वपूर्ण बन चुके भक्तों से भी दूरी बनाए रखते थे। वे अक्सर मुझसे कहते थे, “वे पहले अक्सर हमारे यहाँ आते थे, लेकिन अब जब उन्होंने हमें सिंहासन पर बिठा दिया है, तो उन्होंने हमें छोड़ दिया है। वे अब नहीं आते। काश उन्होंने हमें वहाँ न बिठाया होता। कम से कम हमें उनके दर्शन तो हो पाते।”

राम

एक दिन भारत के प्रधानमंत्री नेहरू असम जाते समय कलकत्ता हवाई अड्डे पर उतरे। हवाई अड्डे पर पत्रकारों और सरकारी अधिकारियों के लिए एक प्रेस कॉन्फ्रेंस आयोजित की गई थी। नेहरू के भाषण के दौरान, पास ही एक और विमान उतरा और यात्री बाहर निकलने लगे। कुछ मिनट बाद, नेहरू ने देखा कि उनके श्रोता कम हो गए हैं और कुछ लोग नए आए विमान की ओर चले गए हैं। नेहरू ने अपने सलाहकारों से पूछताछ की, जिनमें सबसे करीबी महाराजजी के एक पुराने भक्त थे। उन्होंने नेहरू को बताया कि बाबा नीम करोली उसी विमान में हैं और लोग उनके दर्शन के लिए उमड़ रहे हैं। नेहरू ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा, "भारत वास्तव में भाग्यशाली है

यदि यहाँ ऐसा कोई संत है जिसके दर्शन के लिए लोग अपने प्रधानमंत्री को भी छोड़ देते हैं।"

राम

1962 में भारत-चीन युद्ध शुरू होने के कुछ ही समय बाद, भारत के सैन्य कमांडरों ने प्रधानमंत्री नेहरू को नई दिल्ली को पूरी तरह से खाली करने का आदेश देने की सलाह दी, क्योंकि चीनी आक्रमण का खतरा मंडरा रहा था। स्वाभाविक रूप से, नेहरू इस आदेश को जारी करने में बहुत अनिच्छुक थे। भारत के लंबे इतिहास में, सैन्य तख्तापलट के दौरान दिल्ली को कई बार खाली करना पड़ा था, और हर बार इसने देश की हार का संकेत दिया था। हालांकि, नेहरू के जनरलों ने उन्हें तबाही से बचने के लिए चौबीस घंटे के भीतर खाली करने का आदेश जारी करने की सलाह दी।

नेहरू बहुत परेशान थे। उन्होंने अपने मुख्यमंत्री, जो महाराजजी के लंबे समय से भक्त थे, से महाराजजी से सलाह लेने के लिए कहा। मंत्री ने नेहरू को बताया कि उन्हें विश्वास है कि महाराजजी सब कुछ जानते हैं और यदि महाराजजी दर्शन देना चाहते हैं तो वे अवश्य आएंगे। उन्होंने कहा कि महाराजजी सच्चे मन से की गई प्रार्थना का उत्तर अवश्य देते हैं। खैर, महाराजजी का पता उनके भक्त को पता नहीं था।

उसी शाम महाराजजी ने फोन किया और भक्त, नेहरू के मंत्री से कहा, "उन्हें कहो कि चिंता न करें। सब ठीक हो जाएगा। वे पीछे हटना शुरू कर चुके हैं।" अगली सुबह, शीर्ष सैन्य अधिकारियों ने नेहरू को बताया कि रात के दौरान दुश्मन पहाड़ी दर्रों से पीछे हट गया था और लड़ाई शांत हो गई थी।

राम

प्रधानमंत्री नेहरू लंबे समय से महाराजजी के दर्शन की इच्छा रखते थे, लेकिन महाराजजी हमेशा उनसे मिलने से बचते रहे। एक दिन नेहरू के एक करीबी मित्र, जो महाराजजी के भक्त भी थे, ने महाराजजी को उनसे मिलने के लिए राजी कर लिया। महाराजजी ने प्रधानमंत्री के आवास पर आने की इच्छा जताई, लेकिन उन्होंने चेतावनी दी कि उनकी ओर से कोई समारोह या धूमधाम नहीं होनी चाहिए।

नेहरू के अंतिम दिनों में महाराजजी कहा करते थे, "नेहरू एक अच्छे इंसान हैं। वे आंतरिक रूप से ईश्वर की पूजा करते हैं। वे इसे ज्यादा महत्व नहीं देते।"

राम

मुजीब का भाई आया। इस आदमी को नहीं पता था कि उसका भाई मुजीब जीवित है या मर गया है। ज़्यादातर लोग उसे मरा हुआ मानते थे। लेकिन महाराजजी ने कहा, "चिंता मत करो। तुम्हारा भाई आएगा और एक राजा की तरह आएगा।" और वह आया भी, बांग्लादेश के गठन का नेतृत्व करने के लिए।

राम

एक दिन एक साधारण व्यक्ति महाराजजी से मिलने आया, बस अपनी मनोकामना पूरी करवाने के लिए: वह मंत्री बनना चाहता था। महाराजजी ने कहा, "ठीक है, तुम मंत्री बनोगे। प्रसाद लो और जाओ।" कई वर्षों बाद एक दिन मैं कैंची स्थित कमरे में महाराजजी के साथ अकेला था। घंटों हम दोनों वहाँ अकेले थे और वे गहरी समाधि (आध्यात्मिक ध्यान) की अवस्था

में थे, तभी अचानक उन्होंने एक व्यक्ति का नाम पुकारा। पंद्रह मिनट बाद एक झंडा लगी कार कैंची पहुँची, जिसमें कोई सरकारी मंत्री था। मैंने महाराजजी को बताया, जिन्होंने कहा कि उन्हें प्रसाद देकर अंदर बुलाओ।

वह व्यक्ति अंदर आया और बोला, “महाराज जी, एक बार मेरी आपसे मुलाकात हुई थी। आपने मुझसे कहा था कि मैं मंत्री बनूंगा। अब मैं मंत्री बन चुका हूं। यह सब आपकी कृपा से ही संभव हुआ है। पदभार ग्रहण करने से पहले, मुझे लगा कि मुझे यहां आकर आपके चरण कमलों की धूल ग्रहण करनी चाहिए। इसलिए मैं आपके दर्शन के लिए यहां आया हूं। इसके बाद मैं अपना पदभार ग्रहण करूंगा।”

महाराजजी कभी-कभार ही राजनीति पर चर्चा करते थे। आमतौर पर वे सांसारिक मामलों में विशेष रुचि नहीं रखते थे, जब तक कि उनके भक्त उन पर दबाव न डालते। अक्सर उनका दृष्टिकोण समसामयिक और विनोदपूर्ण होता था।

एक दिन एक पश्चिमी भक्त से बातचीत करते हुए महाराजजी ने पूछा कि क्या वैज्ञानिक अब मंगल ग्रह पर रॉकेट भेजने की योजना बना रहे हैं। जब भक्त ने कहा कि हाँ, वे ऐसा कर रहे हैं, तो महाराजजी खूब हँसे।

राम

एक राजनेता ने महाराजजी से उनके अपने काम के बारे में कहा, "हम जनता के लिए इतना कुछ कर रहे हैं।"

महाराजजी ने सूखे की ओर इशारा करते हुए उत्तर दिया, “तुम्हारी हरित क्रांति कहाँ है?” उन्होंने आगे कहा, “तुम्हें लगता है कि तुम सब कुछ कर सकते हो। तुम कुछ नहीं कर सकते। केवल भगवान ही कर सकते हैं।”

राम

महाराजजी ने भारत की स्वतंत्रता के प्रति अपना समर्थन व्यक्त करते हुए कहा, "अंग्रेज हृदय से अच्छे थे।"

राम

पच्चीस साल पहले हममें से कुछ लोग महाराजजी के साथ बैठे थे, और उन्होंने पाकिस्तान-भारत विभाजन के बारे में कहा, "आप देखेंगे, पाकिस्तान का एक हिस्सा भारत के साथ होगा।"

राम

1962 में, भारत-चीन युद्ध के दौरान, मैंने महाराजजी से कहा, "चीनी सेना असम में घुस आई है। हमारी सेनाएँ तमाशा देखती रही हैं। अगर वे इसी तरह नहीं लड़े, तो चीनी मैदानी इलाकों में आ जाएँगे।"

महाराजजी ने कहा, “कुछ नहीं होगा। चीन पीछे हट जाएगा। भारत ऋषियों और आत्म-बलिदान का देश है। यहाँ साम्यवाद नहीं आ सकता।”

“लेकिन महाराज जी,” मैंने आगे कहा, “चीनी सेनाएं क्यों आई हैं?”

“बस आपको जगाने के लिए,” उसने जवाब दिया।

राम

वे कम्युनिस्ट सत्ता पर संभावित कब्ज़े की बात कर रहे थे और महाराजजी ने कहा, “नहीं!

नहीं, कम्युनिज़्म यहाँ नहीं आ सकता। यहाँ के सभी लोग धार्मिक और आस्थावान हैं। कम्युनिज़्म केवल उन्हीं देशों में आता है जहाँ ईश्वर में आस्था नहीं होती। जिन देशों में धर्म है और उसका पालन किया जाता है, वहाँ कम्युनिज़्म नहीं आ सकता।”

> भारत एक स्वर्णपक्षी है। यह ऋषियों और संतों का देश है। परिवर्तन ही संसार का नियम है, और यदि कलियुग (अंधकार युग) में इसे इसी मार्ग पर चलना है, तो चलने दो। जब तक आप स्वयं भगवान नहीं हैं, आप इसे रोक नहीं सकते, तो फिर इसकी निंदा क्यों करें?

महाराजजी भगवान के रूप में

हालांकि महाराजजी ने यह कहकर विरोध किया कि केवल भगवान ही ऐसा कर सकते हैं, वे कुछ नहीं कर सकते, फिर भी कई भक्तों ने उनमें भगवान के साथ एकरूपता देखी।

संतों और साधुओं के अनेक वर्ग हैं। महाराजजी एक अलग ही प्रकार के संत थे, जिन्हें अद्वैतवाद कहा जाता है, जिसका अर्थ है, "केवल ईश्वर है, मैं स्वयं ईश्वर हूँ और समस्त वस्तुएँ मेरा हृदय और आत्मा हैं तथा ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है।"

महाराजजी अद्वैतवाद के अनुयायी थे। वे प्रत्येक व्यक्ति में अपनी आत्मा देखते थे। उनके लिए सब एक ही था।

राम

महाराजजी कृष्ण के समान थे: कभी वे भगवान के समान होते थे तो कभी एक साधारण व्यक्ति के समान।

राम

बाहरी रूप से वह एक पुरुष है, लेकिन वह पुरुष नहीं है। वह यहाँ बातें करता था, लेकिन असल में वह कहीं और होता था। वह अपना काम करवाने के लिए किसी भी समय किसी भी व्यक्ति में अपनी आत्मा (स्पिरिट) प्रवेश करा सकता है। उसका शरीर जल गया है और वापस नहीं लौट सकता, लेकिन उसकी आत्मा किसी भी रूप में आ सकती है। सपने में उसने मुझसे कहा, "तुम मेरे दर्शन कर सकते हो, लेकिन इस रूप में नहीं!"

राम

वह हमारे जीवन का इतना अभिन्न अंग थे कि उनके साथ रहते हुए हमें उनकी शक्तियों की विशालता का एहसास ही नहीं हुआ। उन्होंने अपनी महानता को छुपाए रखा। हमने कभी उनके किस्से नहीं संजोए क्योंकि हमें लगता था कि वह अमर रहेंगे।

राम

एक बहुत ही विद्वान साधु के.बी. के घर उनसे मिलने आए। दोनों प्रतिदिन घंटों दर्शनशास्त्र पर चर्चा करते थे। साधु ने कहा कि ब्रह्मांड आज भी ऋषियों द्वारा शासित है, जो दिव्य प्राणी हैं और सर्वोच्च राजा के नेतृत्व में एक क्रम बनाते हैं। उन्होंने कहा कि सांसारिक लीलाएँ और सांसारिक शासक इन शाश्वत ऋषियों के नियंत्रण में हैं। उन्होंने सर्वोच्च राजा और उनके व्यवहार का वर्णन किया। के.बी. चकित रह गए। साधु ने महाराजजी का बिल्कुल सटीक वर्णन किया था।

कुछ समय बाद महाराजजी के.बी. के घर आए और दीवार पर साधु की तस्वीर देखकर क्रोधित हो गए। “तुम्हें यह तस्वीर कहाँ से मिली? तुम उस आदमी से कहाँ मिले?” वे चिल्लाए। “अरे नीच! तुम बहुत ज्यादा बोलते हो और दूसरों को भी बोलने पर मजबूर करते हो।” महाराजजी चले गए, और के.बी. पहले से कहीं अधिक उत्सुक हो गए। कुछ वर्षों बाद, के.बी. ने महाराजजी से धर्म (आध्यात्मिक जीवन शैली) और शासकों के बारे में बात की, और साधु के उस रहस्यमय रहस्योद्घाटन को हमेशा याद रखा। प्राचीन भारत के पौराणिक ऋषि-राजा जनक का जिक्र करते हुए उन्होंने महाराजजी से पूछा कि क्या जनक ही संसार के अंतिम प्रबुद्ध शासक थे? महाराजजी ने उत्तर दिया, “नहीं, नहीं! आज भी संसार का ऐसा ही एक राजा है। समस्त ब्रह्मांड का एक राजा है, जो जनक से भी महान है।”

राम

बंबई में एक साधु सिद्ध लोक (सर्वोच्च आध्यात्मिक स्तर) में विराजमान संतों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि महाराजजी हम सबके ऊपर बर्फ में एक सफेद पत्थर पर नग्न अवस्था में बैठे हैं।

भगवान या हनुमान से पूछो। मैं तो बस एक साधारण इंसान हूँ। मैं कुछ नहीं कर सकता।

एक गर्मी की शाम हम महाराजजी के चारों ओर बैठे थे, जो पीठ के बल लेटे हुए थे और मानो किसी देहांत में मग्न थे। मैंने उनका दाहिना हाथ पकड़ रखा था और चुपचाप उस पर बनी रेखाओं को देखने लगा। महाराजजी थोड़ा हिले और धीमी आवाज़ में मुझसे पूछा कि मैं उनकी हथेली में क्या देख रहा हूँ। मैंने उनसे कहा, “महाराजजी, आपकी हथेली में लिखा है कि आपको भगवान के दर्शन होंगे।” एक छोटे बच्चे की तरह, मानो वह कुछ छिपा रहा हो, उन्होंने पास बैठे एक भक्त से फुसफुसाकर कहा, “अरे, सबको पता चल गया!”

मैं जगत का पिता हूँ। सारा संसार मेरा बच्चा है।

ब्रह्मचारी महाराज कुमाऊं पहाड़ियों में अत्यधिक पूजनीय एक महान संत थे। जब उनकी और महाराजजी की मुलाकात हुई, तो ब्रह्मचारी महाराज ने दुंडा प्रणाम किया। वह दिन बहुत गर्म था, और ब्रह्मचारी महाराज ने तिवारी को लस्सी (मथकर बनाया गया दही, पानी और चीनी का पेय) बनाने के लिए पानी लाने भेजा। ब्रह्मचारी महाराज दूर स्थित एक झरने का ही पानी पीते थे, इसलिए तिवारी को पानी लाने में कुछ समय लग गया। जब वह लौटे, तो ब्रह्मचारी महाराज ने उन्हें फटकारा: “तुम्हें कोई समझ नहीं है। तुम नहीं समझते। ये कोई साधारण संत नहीं हैं। महाराजजी नल का पानी भी पी सकते हैं। उन्हें इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।”

राम

एक बार महाराजजी लखनऊ पहुँचे और श्री ब्रह्मचारी महाराज से मिले। संक्षिप्त अभिवादन के बाद वे एक भीतरी कमरे में गए और दरवाजा बंद कर लिया। पंद्रह-बीस मिनट बाद दरवाजा खुला और श्री ब्रह्मचारी महाराज बाहर आए, उनका चेहरा दमक रहा था। वे चुपचाप मुस्कुराते हुए खड़े रहे। कमरे के भीतर महाराजजी एक विशेष मुद्रा (योगिक मुद्रा) में दिखाई दे रहे थे। उनका पूरा शरीर एक गोल, कोमल शरीर जैसा प्रतीत हो रहा था। वे लगभग तुरंत बाहर आ गए, और उनका शरीर बहुत लाल रंग का दिखाई दे रहा था। कुछ क्षणों तक दोनों संत चुपचाप साथ खड़े रहे, फिर महाराजजी चले गए।

राम

जब गांधीजी को गोली मारी गई और सब रो रहे थे, तब ब्रह्मचारी महाराज ने पूछा, "सब लोग क्यों रो रहे हैं?" जब उन्हें बताया गया, तो उन्होंने कहा, "भारत में केवल एक ही ऐसा व्यक्ति है जो उन्हें पुनर्जीवित कर सकता है और वह हैं नीम करोली बाबा।"

राम

महाराजजी ने शिवानंद आश्रम से आए एक स्वामी को पूरियां खिलाईं और उन्हें मंदिर के पीछे गुफा में बैठने को कहा। हालांकि, स्वामी महाराजजी की ओर बहुत आकर्षित हुए और जल्द ही उनके पास लौट आए। तब महाराजजी ने उन्हें बड़े पेड़ के नीचे बैठने को कहा, जहाँ से वे महाराजजी को देख सकें। उनकी आँखों के सामने कैंची का दृश्य ऋषिकेश के शिवानंद आश्रम में बदल गया और महाराजजी शिवानंद बन गए। फिर महाराजजी/शिवानंद स्वामी के पास गए और बोले, “क्या तुम्हें लगता है कि हम दोनों में कोई अंतर है? क्या हम एक ही नहीं हैं?”

स्वामी ने कहा, “आप उस रूप में भी मौजूद हैं। आप वास्तव में वही हैं। आप इस रूप में मुझे भ्रमित कर रहे हैं।” महाराजजी ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे केवल मुस्कुराए।

मैं सबका गुरु हूँ।

इस स्तर पर मुझे अभी तक कोई दूसरा व्यक्ति नहीं मिला है। व्यक्ति काफी ऊपर तक तो जा सकता है, लेकिन सर्वोच्च अनुभूति प्राप्त करना और भौतिक जगत में वापस लौटना बहुत कठिन है। महाराजजी मानो एक ही समय में सभी स्तरों पर विद्यमान थे। यही सर्वोच्च अवस्था है।

राम

जब तक मुझे यह पता नहीं चला कि वह कौन है, तब तक मैंने उसके साथ एक साधारण साधु जैसा व्यवहार किया।

वह छड़ी जो ठीक करती है

महाराजजी अक्सर अपनी अद्भुत शक्तियों का उपयोग अपने भक्तों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए करते थे। यह बात तब सबसे अधिक स्पष्ट और आश्चर्यजनक होती थी जब किसी भक्त की बीमारी ठीक करनी होती थी। कुछ भक्तों के लिए तो यह उपचार उनके स्पर्श, दृष्टि या वचन मात्र से ही हो जाता था; दूसरों के लिए वे दवाइयाँ लिखते थे। कुछ कहानियाँ बताती हैं कि ये दवाइयाँ कितनी अनोखी थीं। कुछ अन्य भक्तों को, जो बीमार होकर उनके पास आते थे, वे यह कहकर टाल देते थे कि वे कुछ नहीं कर सकते और उन्हें इलाज के लिए डॉक्टरों या विशेष मंदिरों में भेज देते थे। लेकिन जब परिस्थिति ऐसी होती थी और भक्त की आस्था प्रबल होती थी, तो महाराजजी दूर से भी, फोन के माध्यम से या स्वप्न में भी, रोगमुक्त कर देते थे। जब उनकी चमत्कारिक उपचार शक्तियों का प्रश्न उठता था, तो महाराजजी सब कुछ नकार देते थे। ऐसे समय में वे केवल इतना ही कहते थे, "सब ईश्वर है।"

महाराजजी की एक पुरानी भक्त का गंभीर ऑपरेशन होने के बाद, महाराजजी नौ दिनों तक उनके घर में रहे। किसी ने उनसे पूछा कि वे इतने लंबे समय तक क्यों रुके हैं, जबकि वे आमतौर पर किसी भी जगह पर कुछ दिनों से अधिक नहीं ठहरते थे। महाराजजी ने उत्तर दिया, “तुम क्यों पूछ रहे हो? मुझे भोजन कराने की ज़िम्मेदारी तुम्हारी नहीं है। तुम्हें चिंता क्यों है?” सातवीं रात को उस महिला की तबीयत फिर बिगड़ गई। डॉक्टरों ने उन्हें नींद की गोलियां दीं और आराम करने को कहा, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। उन्हें नींद नहीं आई। उनके पति ने महाराजजी को सूचना दी, जिन्होंने कहा, “चिंता मत करो, मैं आ रहा हूँ।” आखिरकार, कई घंटों बाद, वे उनके कमरे में गए और डॉक्टरों के आदेश के बावजूद न सोने के लिए उन्हें खूब डांटा। फिर, उन्होंने अपना दाहिना पैर उठाकर अपने अंगूठे से उनके माथे को छुआ और कुछ ही सेकंड में वे गहरी नींद में सो गईं। जब वे उठीं तो वे बिल्कुल ठीक थीं।

राम

एक श्रद्धालु को ऑपरेशन के लिए अस्पताल में भर्ती कराया गया। डॉक्टरों ने बताया कि उन्हें कैंसर है और ऑपरेशन ही उनके बचने का एकमात्र उपाय है। उनके परिवार ने महाराजजी का आशीर्वाद लेने के लिए उनसे मुलाकात की। महाराजजी ने कहा, “ऑपरेशन करवा लीजिए। उन्हें कैंसर नहीं हो सकता। ऑपरेशन के बाद वे बिल्कुल ठीक हो जाएंगे।” दो-तीन दिन तक वे मृत्यु के करीब रहे। महाराजजी ने प्रसाद भेजा और एक माता को उनके पास भेजा, जो दो दिन तक उनके बिस्तर के पास रहीं। ऑपरेशन हुआ और कैंसर नहीं पाया गया। जांच में कैंसर का पता चला था, लेकिन ऑपरेशन के समय तक वह गायब हो चुका था।

राम

एक बार हार्वर्ड के एक प्रोफेसर और उनकी पत्नी महाराजजी से मिलने आए। पत्नी एक कलाकार थीं और उन्होंने महाराजजी के सामने बैठकर उनका चित्र बनाया। उसी रात उनकी तबीयत अचानक बिगड़ गई, उन्हें तेज बुखार था और खून की खांसी आ रही थी। यह बहुत ही असामान्य था, क्योंकि वह एक स्वस्थ महिला थीं। यह दुर्भाग्यपूर्ण भी था क्योंकि उनका समय बहुत कम था और उन्होंने उसी दिन दिल्ली के लिए प्रस्थान करने की योजना बनाई थी। जब

महाराजजी को उनकी बीमारी के बारे में पता चला, तो उन्होंने कहा, "वह आज ही दिल्ली चली जाएंगी।" लेकिन डॉक्टर आए और बताया कि उन्हें बेहतर आवास में ले जाना होगा और यात्रा करने में कम से कम एक सप्ताह का समय लगेगा। वे उन्हें अच्छे आवास में ले जाने के लिए तैयार हुए और रास्ते में मंदिर के पास से गुजरे, इसलिए उन्होंने गाड़ी रोक दी। बीमार महिला सहित सभी लोग महाराजजी को प्रणाम करने के लिए अंदर गए। जैसे-जैसे वह उनके करीब आती गईं, उन्हें बेहतर महसूस होने लगा और जब वह बिल्कुल उनके सामने थीं, तो उन्हें पूरी तरह से स्वस्थ महसूस हुआ। महाराजजी उन पर मुस्कुरा रहे थे। उन्होंने अपना बनाया हुआ चित्र निकाला और महाराजजी ने चित्र के चारों ओर 'राम, राम, राम' लिख दिया।

राम

रामपुर के पुलिस इंस्पेक्टर की बेटी टाइफाइड से मर रही थी, और उन दिनों इलाज का एकमात्र तरीका यही था कि उसे खाना-पीना न दिया जाए। उसे लगभग चालीस दिनों से खाना नहीं दिया गया था, इसलिए वह मौत के कगार पर थी। रामपुर से नैनीताल को एक पत्र आया जिसमें महाराजजी से बच्ची के दर्शन करने का अनुरोध किया गया था। दरअसल, पत्र आने से एक दिन पहले महाराजजी ने कहा था, "चलो, हमें रामपुर जाना है।" वे चले गए।

बेडरूम में जाकर उसने कहा, “वे मेरी बेटी को भूखा रख रहे हैं। ये क्या हो रहा है! मुझे बहुत भूख लगी है। मेरे लिए खाना बनाओ।” फिर उसने खाना खाया और लड़की से कहा, “वे तुम्हें भूखा रख रहे हैं। ये लो, ये चपाती खाओ। उठो और ये खाओ।” लड़की किसी तरह उठी और थोड़ा सा खा लिया। फिर उसने कहा, “मैं थक गया हूँ। मुझे आराम करना है। तुम कुर्सी पर बैठो और मैं पलंग पर सो जाता हूँ।” लड़की ने वैसा ही किया जैसा उसने कहा था। लगभग एक घंटे तक वह बिल्कुल चुप रहा, मानो सो रहा हो। फिर वह उठा और चला गया, और लड़की ठीक हो गई।

राम

एक माता को तीर्थयात्रा के दौरान पीठ में दर्द हो रहा था। उन्होंने महाराजजी और विभूति (पवित्र अग्नि की राख, जिसका प्रयोग आमतौर पर उपचार के लिए किया जाता है) का सपना देखा, लेकिन वे इसे उनकी पीठ पर मल रही थीं, जिससे उन्हें दर्द हो रहा था। अगले दिन एक अन्य माता ने कहा, "हमारे पास महाराजजी की विभूति है। चलिए, हम इसे आपकी पीठ पर मल देते हैं।" उन्होंने ऐसा किया, और उनकी पीठ में सुधार हुआ और उन्होंने तीर्थयात्रा जारी रखी।

राम

एक महिला गर्भवती थी, लेकिन सभी डॉक्टरों ने उसे बताया कि उसकी गर्भावस्था अनियमित है और वह गर्भ को पूरा नहीं कर पाएगी। तभी उसे महाराजजी के दर्शन हुए। उन्होंने बस उसकी ओर देखा और कहा, "ठीक हो जाएगा।" उसने गर्भ को पूरा किया और सामान्य प्रसव द्वारा एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दिया।

राम

जब आर की बेटी केवल एक वर्ष की थी, तब वह अपने घर की खिड़की से तीस फुट नीचे गिर गई। उसे कोई चोट नहीं आई, और अगले दिन, जब उन्हें पता चला कि महाराजजी कैंची आए हैं, तो वे उसे उनके पास ले गए। महाराजजी ने कहा कि वह ठीक हो जाएगी। जब वही

छोटी बच्ची दो वर्ष की हुई, तब वह फिर से तीस फुट नीचे गिर गई - अपने घर की एक और खिड़की से। इस बार भी उसे कोई चोट नहीं आई और फिर से महाराजजी कैंची आए हुए थे, इसलिए उसे डॉक्टर के पास ले जाने के बजाय वे उसे महाराजजी के पास ले गए, जिन्होंने सहजता से कहा कि वह ठीक हो जाएगी। यही घटना तीसरी बार तब दोहराई गई जब वह तीन वर्ष की थी। इस बार बच्ची को खुद याद है। उसने कहा, "मुझे गिरना याद है। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं तैर रही थी।"

इस बार जब वे उसे महाराजजी के पास ले गए, तो उन्होंने उसके माता-पिता से कहा, "मैं उसे मरने नहीं दूंगा।"

राम

एक भक्त का बेटा बहुत बीमार था और उसने अपनी माँ से महाराजजी की विभूति माँगी। फिर वह सो गया और उसने सपना देखा कि वह एक झील में डुबकी लगाने की कोशिश कर रहा है और महाराजजी उसे बार-बार बाहर खींच रहे हैं। जब वह जागा तो उसकी बीमारी गंभीर अवस्था से बाहर निकल चुकी थी।

राम

मेरी पत्नी की आंख और मुंह में लकवा हो गया था, और हालत इतनी बिगड़ गई थी कि वह आत्महत्या करना चाहती थी, लेकिन वह बहुत छोटी थी।

हम दो पलंगों पर सोए। एक रात हम दोनों ने महाराजजी को एक ही समय पर, सुबह 3:30 बजे देखा। मेरी पत्नी ने मुझसे उठकर महाराजजी के लिए चाय का इंतजाम करने को कहा। मैं उठा, लेकिन वहाँ कोई नहीं था। हम दोनों को नींद नहीं आ रही थी, इसलिए हमने खुद ही चाय पी ली। अचानक मैंने अपनी पत्नी की ओर देखा और पाया कि उसका चेहरा फिर से हिल रहा था और उसकी आँखें झपक रही थीं। बाद में डॉक्टर ने कहा, “यह असंभव है। यह ईश्वर ने किया है।”

कुछ दिनों बाद महाराज जी सुबह 6:00 बजे आए और पूछा, “तुम्हारी पत्नी को क्या हुआ?” उनकी सारी रौनक लौट आई थी। अब हमारे सात बच्चे हैं।

राम

मेरी माताजी ने एक सपना देखा जिसमें एक साधु के सिर में चोट लगी थी और उन्होंने महाराजजी द्वारा दी गई कोई वस्तु उनके मुँह में डाली। वह इस अजीब सपने से परेशान होकर जाग उठीं। अगले दिन हरि दास मंदिर के लोगों के लिए भोजन लेने हमारे घर आए। भोजन तैयार नहीं था, इसलिए हरि दास को प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया। वे शौचालय गए और फिर ऊपर आते समय सीढ़ियों पर बेहोश हो गए, जिससे उनके सिर पर चोट लगी और बहुत खून बहने लगा। मेरे पिताजी आए और हरि दास को सीढ़ियों पर देखकर मेरी माताजी को बुलाया और दोनों मिलकर उन्हें बिस्तर पर ले गए। वे बेहोश थे और बचने की उम्मीद कम ही लग रही थी, लेकिन मेरी माताजी को अपना सपना याद आया और उन्होंने महाराजजी से प्राप्त विभूति ली। उन्होंने उसे हरि दास के मुँह में डाला और वे आधे घंटे के भीतर उठ गए।

राम

आर की पत्नी मरणासन्न थीं और उन्हें सर्जरी की आवश्यकता थी। उनके विशेष रक्त समूह

का रक्त बॉम्बे में भी उपलब्ध नहीं था। उन्होंने महाराजजी का नाम लेते हुए सर्जरी करवाई, और सर्जन को आश्चर्य हुआ कि ऑपरेशन लगभग पूरी तरह से रक्तस्राव रहित रहा। बाद में उन्होंने बताया कि उन्हें चेतना के एक ऐसे स्तर का अनुभव हुआ जहाँ महाराजजी ने कहा, "इसे यहाँ से ले जाओ। यह यहीं रहेगी।"

राम

दादा के भतीजे को चेचक हो गया था और ऐसा लग रहा था कि उनका अंतिम समय आ गया है, क्योंकि शव को पलंग से उठाकर ज़मीन पर रख दिया गया था। सुझाव दिया गया कि गंगा के उस जल की एक बूँद, जिससे महाराजजी के पैर धोए गए थे, लड़के के गले में डाली जाए। ऐसा करने पर लड़का उठ बैठा और अगले दिन तक चेचक ठीक हो गया।

उसी समय, कई मील दूर पहाड़ियों में, जहाँ सिद्धि माँ महाराजजी के साथ थीं, अचानक महाराजजी के पूरे शरीर पर ये धब्बे उभर आए। क्योंकि पहाड़ियों में चेचक आम बात नहीं थी, इसलिए वहाँ के लोग इसके लक्षण नहीं जानते थे। उन्होंने लोशन लिया और इसे एलर्जी समझकर इलाज किया। अगले दिन तक धब्बे गायब हो गए और महाराजजी ने कहा, “वह लोशन तो कमाल का था। ये धब्बे आखिर क्या थे? मुझे किसी चीज़ से एलर्जी रही होगी।” बहुत बाद में पता चला कि लड़के का ठीक होना और महाराजजी की “एलर्जी” एक ही समय पर हुई थी।

राम

महाराजजी आश्रम के एक छोटे से कमरे में दर्शन दे रहे थे, तभी एक विचलित सा दिखने वाला व्यक्ति अंदर आया। महाराजजी तुरंत उस पर चिल्लाने लगे और उसकी ओर हाथ बढ़ाया। वह व्यक्ति कुछ बुदबुदाया और सिर हिलाया, लेकिन महाराजजी उससे कुछ न कुछ मांगते रहे। अंत में उस व्यक्ति ने अपनी कमीज की जेब में हाथ डाला और एक छोटी सी चिड़िया निकाली जिसके सीने में एक डंडी फंसी हुई थी। वह बिल्कुल मरी हुई लग रही थी। महाराजजी ने चिड़िया को उठाया, अभी भी उस पागल आदमी पर चिल्ला रहे थे, और चिड़िया के शरीर से डंडी निकाल दी। फिर उन्होंने चिड़िया को पुजारी को देते हुए कहा, "इसे बाहर ले जाओ और पानी पिलाओ।" जैसे ही पुजारी ने चिड़िया ली और दरवाजे से बाहर जाने लगा, चिड़िया उसके हाथ से उड़कर दूर चली गई।

राम

आगरा में एक शाम महाराजजी हमारे घर आए। वे बरामदे में इधर-उधर, बार-बार चलने लगे। हमें लगा मानो वे किसी का दर्द अपने ऊपर ले रहे हों। कुछ घंटों बाद वे एक कुर्सी पर बैठ गए और गर्म चाय माँगी। तभी फोन की घंटी बजी। लखनऊ से श्रद्धालु महाराजजी से संपर्क करने की कोशिश कर रहे थे। उन्होंने कहा कि महाराजजी को बताएँ कि उनकी एक श्रद्धालु, पहाड़ों की रहने वाली एक गरीब छिहत्तर वर्षीय महिला का ढाई घंटे का ऑपरेशन हुआ है और वह सफल रहा है। महाराजजी अपने तरीके से ऑपरेशन के दौरान उनके साथ ही रहे। इस दौरान वे काफी परेशान दिखे। फोन आने पर उन्होंने बड़ी राहत महसूस की।

राम

मेरी पत्नी महाराजजी को बचपन से जानती थीं और उनका पूरा परिवार लंबे समय से उनका भक्त था। हालांकि, मेरी उनसे मुलाकात 1962 तक नहीं हुई थी, जब मेरे फेफड़ों का ऑपरेशन

हुआ था। मेरी हालत गंभीर थी। तब मेरी पत्नी ने मुझे महाराजजी के बारे में बताया और मैं उनके बारे में पहले सुनी हुई सभी बातें याद कर रहा था और अपनी मृत्यु से पहले उनसे मिलने की प्रार्थना कर रहा था। उसी दिन महाराजजी हमारे घर आए, मेरे बिस्तर के पास आए और मुझे आशीर्वाद दिया। उस दिन से मेरा स्वास्थ्य सुधरने लगा और बीमारी फिर कभी नहीं लौटी। उसके बाद हर बार जब भी महाराजजी उनसे मिलने आते, वे मुझसे कहते कि मेरा स्वास्थ्य ठीक हो जाएगा।

राम

युधिष्ठिर महाराजजी को कार में बिठाकर भूमिधर लाए थे। युधिष्ठिर झरने में स्नान करने गए। दौड़ते हुए वापस आकर उन्होंने महाराजजी को बताया कि उन्हें सांप ने काट लिया है और वे बेहोश होकर गिर पड़े हैं। उनका हाथ नीला-काला पड़ गया था। महाराजजी ने ब्रह्मचारी बाबा से एक कंबल बिछाने और युधिष्ठिर को उस पर लिटाने को कहा। फिर उन्होंने ब्रह्मचारी बाबा से एक गिलास पानी लाने को कहा, जिसे उन्होंने कंबल के नीचे अपने हाथ में रखा। महाराजजी चिल्ला रहे थे, “इसे सांप ने काट लिया है! अब क्या होगा?” युधिष्ठिर बेहोश ही रहे। कुछ मिनट बाद महाराजजी ने ब्रह्मचारी बाबा को पानी दिया और उनसे कहा कि जहां सांप ने काटा है, वहां पानी मलें। जैसे ही उन्होंने पानी मलना शुरू किया, युधिष्ठिर को होश आ गया। एक घंटे के भीतर वे पूरी तरह ठीक हो गए।

राम

एक बार जब मैं बच्चा था, मुझे बहुत तेज बुखार हो गया था। मेरी माँ ने महाराजजी को फोन किया और वे तुरंत आ गए। उन्होंने बस मेरे सिर पर हाथ रखा और मेरा बुखार उतर गया।

राम

1964 में मुझे दिल का दौरा पड़ा। मेरी पत्नी बहुत चिंतित थी, लेकिन मुझे महाराजजी से अपने मन में एक शांत आश्वासन मिला कि मेरी मृत्यु नहीं होगी।

राम

एक सुबह तड़के, पाँच युवक कैंची आए। वे महाराजजी के प्रकट होने का बेसब्री से इंतज़ार कर रहे थे। जैसे ही वे अपने कमरे से बाहर आए, उन्होंने उनसे कुछ सवाल पूछे। उन्होंने बताया कि वे पास के एक शहर से मुसलमान हैं। उनके एक करीबी रिश्तेदार की मृत्यु हो रही थी और उन्होंने उन्हें महाराजजी का आशीर्वाद लेने के लिए भेजा था। महाराजजी ने अपने सेवकों से कुछ पानी माँगा, जो उन्हें एक प्लास्टिक के प्याले में दिया गया। उन्होंने प्याला अपने होठों से लगाया, कुछ बुदबुदाया, फिर पानी में फूँक मारी और उसे उन युवकों को दे दिया। उन्होंने उनसे कहा कि वे तुरंत बीमार व्यक्ति के पास लौटें और उसे वह पानी पिलाएँ। “ठीक हो जाएगा।”

राम

लखनऊ में कुछ भक्तों के घर पर महाराजजी एक बड़ी भीड़ को दर्शन दे रहे थे। महाराजजी के कमरे के बाहर एक साधु ऊँची, पंडित जैसी आवाज़ में गीता का पाठ कर रहे थे, जबकि घर का मुखिया पास ही अपनी बीमार बिल्ली की देखभाल कर रहा था। महाराजजी ने अपने भक्त से पूछा, “तुम इस बिल्ली के साथ क्या कर रहे हो?” भक्त ने बताया कि बिल्ली बहुत बीमार है, इसलिए वह उसे धूप में सेंक रहा है और उसे पशु चिकित्सक के पास ले जाने की सोच रहा है।

महाराजजी ने कहा, “यह प्रकृति का नियम है कि बिल्लियों को आमतौर पर डॉक्टर की ज़रूरत नहीं होती। वह प्रकृति की देन है; वह ठीक हो जाएगी।” उन्होंने एक छोटी मिठाई लेते हुए कहा, “इसे खिला दो।” हालाँकि बिल्ली इतनी बीमार थी कि वह दूध भी नहीं पी सकती थी, फिर भी उसने बिना किसी झिझक के मिठाई खा ली। एक मिनट बाद वह उछली और साधु पर कूद पड़ी, जिससे उनका पाठ रुक गया। फिर वह भाग गई। जब भक्त कमरे में वापस आया, तो महाराजजी ने कहा, “तुम्हारी बिल्ली अब ठीक है? जानवर खुद ही ठीक हो जाते हैं। जब वे बीमार होते हैं, तो वे खाना नहीं खाते। वे जड़ी-बूटियाँ ढूंढकर खा लेते हैं।”

लखनऊ में उच्च रक्तचाप से पीड़ित एक महिला ने अपने पति को कार्यालय में फोन किया और बताया कि उसे चक्कर आ रहे हैं और उसने उनसे घर आने को कहा, क्योंकि वह किसी डॉक्टर से संपर्क नहीं कर पा रही थी। जब वह घर पहुंचे, तब भी महिला किसी डॉक्टर से संपर्क नहीं कर पाई थी। वे सोच ही रहे थे कि क्या करें, तभी फोन की घंटी बजी और आगरा से महाराजजी का फोन आया। उन्होंने कहा, “आप अपनी पत्नी के उच्च रक्तचाप को लेकर चिंतित हैं? चिंता न करें। उन्हें कुछ नहीं हुआ है। उन्हें एक गिलास पानी पिला दीजिए।”

एक सुबह तड़के 4:00 बजे जब महाराजजी मेरे घर पर ठहरे हुए थे, तो उन्होंने कहा, "चलो, चलते हैं।"

मैंने कहा, "महाराज जी, मैं अपनी कार लेकर आता हूँ और आपको ले जाता हूँ।"

लेकिन उन्होंने कहा, "नहीं, मैं पैदल चलूंगा।"

तो मैंने अपनी चप्पलें ले लीं। महाराजजी नंगे पैर चले। मुझे नहीं पता था कि हम कहाँ जा रहे हैं, लेकिन मैंने हमेशा महाराजजी पर पूरा भरोसा किया क्योंकि, भले ही वे कहते कि उन्हें कोई जगह नहीं पता, फिर भी उन्हें पता होता था। अक्सर महाराजजी पूछते, “क्या तुम्हें पता है कि फलां जगह कहाँ है?” मैं ना कह देता और फिर वे हमें वहाँ ले जाते। इस तरह मैंने खुद को उनके हवाले कर दिया।

हम एक झुग्गी बस्ती में गए। महाराजजी एक झोपड़ी के पास पहुँचे जिसमें खिड़की जैसा एक छोटा सा दरवाज़ा था। उन्होंने उसे धक्का देकर खोला और अंदर देखा। वहाँ लगभग बारह साल का एक लड़का चारपाई पर लेटा हुआ था, वह बहुत बीमार था। महाराजजी ने लड़के से कहा, “उठो, तुम बीमार नहीं हो।” जैसे ही लड़का उठकर दीवार के सहारे खड़ा हुआ, महाराजजी भी चारपाई पर लेट गए। इसी समय, लड़के की देखभाल कर रही बूढ़ी, अंधी दादी जाग उठीं और पूछा, “वहाँ कौन है?”

मैंने उत्तर दिया, "एक महात्मा (महान आत्मा) आए हैं।"

महाराजजी ने उससे पूछा, "क्या उसे दो सप्ताह से बुखार और ठंड लग रही है?"

उसने हां कहा।

लड़के को शायद टाइफाइड बुखार था। तभी माँ असहज हो गई क्योंकि उसके पास महाराजजी को देने के लिए कुछ नहीं था। महाराजजी ने यह देखा और उनकी नज़र पानी से भरे एक पुराने डिब्बे पर पड़ी।

"माँ, क्या आपके पास थोड़ा पानी है? मुझे बहुत प्यास लगी है।"

उसे कम से कम पानी पिलाने का मौका पाकर खुशी हुई। उसने जी भरकर पानी पिया और फिर बर्तन मुझे दिया, लेकिन वह जानता था कि मैं कभी पानी नहीं पीऊँगी, और मैंने मना कर दिया। फिर हम चले गए, और लड़का ठीक हो गया।

राम

1972 या 1973 में राम दास ने ओहियो में एक प्रवचन दिया। उस रात प्रवचन सुनने आया एक लड़का अगली सुबह ओहियो के क्लीवलैंड से न्यूयॉर्क, फिर लंदन और फिर नई दिल्ली के लिए पहली फ्लाइट में सवार हो गया। वहाँ से उसने टैक्सी ली और कैंची तक पहुँच गया। छत्तीस घंटे से भी कम समय पहले उसने राम दास को महाराजजी के बारे में बात करते हुए सुना था। वह आश्रम में दाखिल हुआ। उसने अपनी कमीज़ उतार रखी थी, क्योंकि बहुत गर्मी थी, और मैंने देखा कि उसकी छाती पर एक भयंकर दाने थे। मैंने उसका स्वागत किया और उससे पूछा कि वह कहाँ से आया है, और उसने मुझे अपनी कहानी सुनाई। फिर मैंने उससे पूछा कि उसने अपने दानों का इलाज क्यों नहीं कराया। उसने बताया कि सभी डॉक्टरों ने उसे बताया था कि यह लाइलाज है; उसने इंजेक्शन और मलहम भी आजमाए, लेकिन कुछ भी काम नहीं आया।

मैंने कहा कि यह तो बेवकूफी है—यह तो बस टिनिया कॉर्पस है, जिसका इलाज बहुत आसानी से हो जाता है। मैंने कहा कि दरअसल, द्वारका नैनीताल जा रहा है और वह इसे ठीक करने के लिए सल्फर तार ला सकता है और उसी रात वापस ला सकता है। फिर कुछ दिनों में दाने गायब हो जाएंगे। और उसने मुझसे कहा, "मैंने दो दिन पहले ही राम दास को सुना था। और अब मैं डॉक्टर अमेरिका (महाराज जी का मुझे दिया हुआ उपनाम) से मिल चुका हूँ और महाराज जी के आश्रम में हूँ। आप जो चाहें कहिए!" उसकी आँखें प्लेट जितनी बड़ी हो गई थीं।

द्वारका से सल्फर तार लाया गया। मैंने लड़के को इसका इस्तेमाल करने का तरीका बताया और कहा कि कुछ ही दिनों में दाने ठीक हो जाएंगे। वह इसे इस्तेमाल करने के लिए तैयार हो गया और बोला कि वह उसी दिन एक हफ्ते के लिए बद्रीनाथ जा रहा है। फिर वह चाय की दुकान की ओर चल पड़ा।

मुझे याद आया कि मैंने काफी समय से चिकित्सा का अभ्यास नहीं किया था और मेरा अभ्यास थोड़ा कमज़ोर हो गया था। मैं अपने ठहरने की जगह पर गया और अपनी चिकित्सा पुस्तकों में उस बीमारी के बारे में जानकारी देखी जिसका मैंने अभी-अभी निदान किया था। मुझे एहसास हुआ कि मैंने गलत बीमारी का निदान किया था। मैंने उसे जो इलाज दिया था वह बिल्कुल बेकार था, इसलिए मैं जल्दी से चाय की दुकान पर भागा, और ठीक उसी समय उसे बस में चढ़ते और जाते हुए देखा। मुझे बहुत बुरा लगा। उसकी बीमारी का गलत निदान करके, मैं न केवल महाराजजी के प्रतिनिधि के रूप में असफल रहा, बल्कि मैंने उस लड़के को एक बेकार दवा देकर भेज दिया था—और जब वह वापस आएगा, तो वह सोचेगा कि महाराजजी के आसपास के सभी लोग मूर्ख और अक्षम हैं। जिस सप्ताह वह दूर रहा, वह मेरे लिए बहुत बुरा था। मैंने कुछ बहुत बड़ी गलती कर दी थी।

एक सप्ताह बीतने के बाद वह वापस आया। मैंने उसे आश्रम के दूसरी तरफ से देखा और दौड़कर उसके पास गई और कहा, "मुझे माफ कर दो!"

उसने कहा, “माफ़ करना? देखो!” उसने अपनी कमीज़ खोली और उसकी छाती पूरी तरह से ठीक हो चुकी थी। एक भी निशान नहीं था। सब कुछ गायब हो गया था। मुझे समझ नहीं आया, लेकिन मैं जानता था कि यह उस दवा का असर नहीं था जो मैंने उसे दी थी।

मैं महाराजजी के उस कमरे की खिड़की पर गया जिसे हम "कार्यालय" कहते थे, और मैंने कहा, "महाराजजी, आपका धन्यवाद। आपने उन्हें ठीक कर दिया।"

उन्होंने कहा, “सब ईश्वर है।”

राम

एक महिला श्रद्धालु बहुत ज़्यादा अचार खाने से बीमार पड़ गई। उसे अचार बहुत पसंद था, लेकिन उसका पेट खराब था और वह अचार पचा नहीं पाती थी। इसलिए जब उसने आम की चटनी खाई, तो अगली सुबह उसका पेट खराब हो गया। उसके पति ने महाराजजी को बताया कि उसकी पत्नी बीमार है, तो महाराजजी दौड़ते हुए आए और अपने साथ कागज़ में लिपटी कोई चीज़ लाए। हम सबने सोचा कि वे कोई गुप्त जड़ी बूटी या प्राचीन औषधि लाए हैं। महाराजजी ने पैकेट खोला और उसके पति को दे दिया: एक सेलोफ़ेन में लिपटी जेलुसिल की गोली!

राम

मुझे पता चला कि मुझे मधुमेह है और मुझे मसालेदार, स्टार्चयुक्त, तैलीय या मीठी कोई भी चीज़ नहीं खानी चाहिए। इसके तुरंत बाद, मैं पहली बार कैंची गया और मुझे तेल में पकी हुई पूरियों की एक बड़ी थाली, कुछ हलवा और कुछ मसालेदार आलू परोसे गए—ये सभी चीज़ें मुझे बिल्कुल नहीं खानी चाहिए थीं। डॉक्टर ने मुझे बताया था कि अगर मैंने ये सब खाया तो मैं बहुत बीमार पड़ सकता हूँ। मैंने डॉक्टर की बात पर विचार किया और महाराजजी की ओर देखा, जो मुस्कुरा रहे थे। मैं यह तय करने की कोशिश कर रहा था कि डॉक्टर पर विश्वास करूँ या महाराजजी पर। (उस समय मुझे यह भी नहीं पता था कि वे मेरे गुरु हैं या नहीं।) महाराजजी के भक्त के रूप में यह मेरा पहला दिन था।

आखिरकार मैंने खाना खाने का फैसला किया। दरअसल, मुझे इतनी भूख लगी थी कि मैंने दो बड़ी थालियाँ खा लीं। उसके बाद हर दिन मैं आता और पेट भरकर खाता। कुछ हफ्तों बाद, मैं नैनीताल गया और अपने रक्त शर्करा स्तर की जाँच करवाई। यह सीमा रेखा से नीचे था। डॉक्टर ने कहा, “मुझे समझ नहीं आ रहा कि यह इतनी जल्दी इतना कम कैसे हो गया। यह समझ से परे है।”

मैंने कहा, "ठीक है, मुझे लगता है कि मुझे पता है कि क्या हुआ था।"

राम

मेरी माँ बीमार थीं। कई डॉक्टरों ने उन्हें देखा और कहा कि उन्हें संक्रमण है और अस्पताल जाना पड़ेगा। मेरी माँ, जो बहुत रूढ़िवादी हैं, अस्पताल नहीं जाना चाहती थीं। मैंने महाराजजी को पत्र लिखा और उन्होंने मुझे उन्हें एक होम्योपैथ के पास ले जाने के लिए कहा, जिसका नाम उन्होंने मुझे बताया। मेरी माँ ठीक हो गईं। हालाँकि, उस बूढ़े होम्योपैथ ने, जो महाराजजी से कभी नहीं मिले थे, कहा, “महाराजी के पास इतने सारे लोग आते हैं और मैं उन्हें चाहे जो भी दवा दूँ, वे ठीक हो जाते हैं, चाहे बीमारी कितनी भी पुरानी क्यों न हो। मुझे नहीं पता यह कैसे होता है!”

राम

एक बार जब मैं कैंची में ठहर रहा था, मेरी पत्नी महाराजजी के दर्शन के लिए आई, हालांकि मुझे पता नहीं था कि वह आई है। उन दिनों उसे हृदय में बहुत दर्द हो रहा था। जब भी वह सीढ़ियों से ऊपर या नीचे जाती, उसका दिल ज़ोर से धड़कने लगता। वह रोते हुए मेरे पास आती, उसे लगता कि वह मरने वाली है। लेकिन महाराजजी की शक्ति पर विश्वास रखते हुए, मुझे उसकी कोई चिंता नहीं थी और मैंने कभी महाराजजी से इस बारे में बात नहीं की।

उस दिन वह स्वयं महाराजजी के पास आई और उन्हें सब कुछ बताया। तुरंत महाराजजी ने पुकारा, “वह कहाँ है? उसे बुलाओ!” मैं आया, और उन्होंने कहा, “क्या? वह बीमार है और तुम्हें कोई परवाह नहीं?” वे इसी तरह बोलते रहे। मैंने कोई जवाब नहीं दिया क्योंकि मैं जानता था कि आप जो भी सोचते हैं, वह सब जानते हैं और आपके विचारों का उत्तर ऐसे देते हैं जैसे आपने उन्हें बोला हो। आप सोचते हैं और वह बोलते हैं।

मैं सोच रहा था, "मुझे कुछ क्यों करना चाहिए—सब कुछ तो उसके हाथ में है।"

उन्होंने ज़ोर से जवाब दिया, “नहीं! एक डॉक्टर हैं। आगरा जाइए। वे हृदय रोग विशेषज्ञ हैं। वे एक महान शिष्य हैं।” फिर महाराजजी ने पास खड़ी एक माँ की ओर मुड़कर कहा, “उन्हें बताइए कि मैंने आपके रिश्तेदार को उनके पास कैसे भेजा है। यह डॉक्टर एक महान संत हैं।”

उन्होंने कहा, "जब मैंने डॉक्टर को महाराजजी द्वारा भेजा गया पत्र दिखाया, तो वह मेरे रिश्तेदार का घर पर इलाज करने के लिए दौड़कर आए।"

महाराज जी ने कहा, “और क्या हुआ?”

"खैर, दो-तीन दिनों में ही वह ठीक हो गई।"

“देखो! देखो!” महाराजजी ने मुझसे कहा। “यह मेरा महान शिष्य है। जाओ! कल तुम यहाँ से चले जाओ। जाओ! जाओ! अगर तुम्हें पैसों की ज़रूरत हो, तो मैं तुम्हें दे दूंगा। तुम्हें जाना ही होगा!”

मैंने कुछ नहीं कहा। मैंने मन ही मन सोचा, “महाराज जी, आप तो बहुत महान हैं। मुझे वहां जाने की कोई जरूरत नहीं है। आप भगवान हैं। आप ही उसे ठीक कर सकते हैं।”

मेरे मन में उठ रहे विचारों को झट से सुनते ही उन्होंने जवाब दिया, “नहीं, नहीं, तुम्हें जाना ही होगा! बदमाश! यही मेरा आदेश है!” मैं चुप रही। उन्होंने कहा, “क्या तुम्हें नहीं पता? डॉक्टर एक महान संत हैं। उनके दर्शन होते ही वह ठीक हो जाएगी। उनकी कृपा देखो, उनके पास जाओ, दवा की जरूरत नहीं पड़ेगी। उनसे मिलो। वह ठीक हो जाएगी। जाओ! कल तुम्हें जाना ही होगा! मना मत करो!” मैं सोच रही थी कि मैं नहीं जाऊंगी। “क्या? तुम मेरे आदेश नहीं मानोगी? मेरे आदेश मानो! तुम बहुत दुष्ट हो। तुम्हें जाना ही होगा।”

खैर, मैं सोच रहा था कि यह मेरे लिए बड़ी परेशानी है, लेकिन वह कहता है कि मुझे जाना ही होगा, इसलिए मुझे जाना ही पड़ेगा। अगले दिन, मुझे लगा कि वह मुझे जाने का निर्देश देगा, लेकिन उसने इस बारे में कुछ नहीं कहा। उसने कहा, “ठीक है, यहाँ आओ, मेरे पास बैठो। मंदिर में कितने लोग आ रहे हैं? उन्हें प्रसाद दो, उन्हें जो भी चाहिए दे दो।” लेकिन उसने आगरा जाने के बारे में कुछ नहीं कहा। उस दिन से लेकर अब तक—आठ साल हो गए—मेरी पत्नी को कोई दर्द नहीं हुआ है।

अपने प्रारंभिक वर्षों में, भारत के मैदानी इलाकों के कुछ गांवों में, महाराजजी मानसिक रूप से

विक्षिप्त लोगों को ठीक करने के लिए प्रसिद्ध हो गए थे। उन दिनों कई ऐसे लोगों को जंजीरों में बांधकर महाराजजी के पास मदद के लिए लाया जाता था। बाद के वर्षों में उन्होंने ऐसा कम ही किया और अक्सर ऐसे लोगों को बाला-जी हनुमान नामक मंदिर में ले जाते थे; फिर भी, एक शब्द, एक नज़र या उंगली के इशारे से ही वे मन के टेढ़ेपन को सीधा कर देते थे।

एक भारतीय व्यक्ति अपनी विधवा माता को लेकर आया था, जो अपने पति की मृत्यु के बाद से भावनात्मक और शारीरिक रूप से असहाय थीं। वह कई वर्षों से महाराजजी की भक्त थीं, लेकिन ऐसा लगता था कि वह उनसे बहुत कम ही मिल पाती थीं, इसलिए उनके बेटे ने उन्हें महाराजजी के पास यह सोचकर लाया कि इससे उन्हें कुछ राहत मिलेगी। जब महाराजजी बाहर आए, तो मुझे यह देखकर दुख हुआ कि वह व्यक्ति और उसकी माता सबसे पीछे खड़े थे और महाराजजी के पास का सारा क्षेत्र युवा पश्चिमी लोगों से भरा हुआ था।

मैंने हिम्मत जुटाकर लोगों से थोड़ा हटकर रास्ता देने को कहा ताकि ये लोग आगे आ सकें। लोग तुरंत हट गए। फिर महाराजजी विधवा को छोटे से कमरे में ले गए, जहाँ वह कुछ देर उनके साथ रहीं। वह बिल्कुल बदल कर निकलीं, सचमुच दमक रही थीं। मैं इससे बहुत प्रभावित हुआ, और उनके बेटे और पोती भी बहुत भावुक हो गए।

राम

एक पश्चिमी व्यक्ति बेहद बेचैन हो गया। उसने सोना छोड़ दिया और नग्न अवस्था में शहर में घूमने लगा, चीजें चुराने लगा और कई तरह से अतार्किक व्यवहार करने लगा। अंत में, वह केवल एक शॉल ओढ़े हुए टैक्सी में बैठकर लगभग दो सौ मील दूर स्थित एक मंदिर में महाराजजी से मिलने चला गया। वहाँ पहुँचकर वह मंदिर में दाखिल हुआ और महाराजजी की ओर बढ़ा। जैसे ही वह पास पहुँचा, महाराजजी ने अपनी तर्जनी उंगली उठाई, और उस व्यक्ति ने बाद में बताया कि उसे तुरंत ऐसा लगा जैसे उसके शरीर में कई दिनों से व्याप्त वह असीम ऊर्जा, जिससे उसे अलौकिक शक्तियों का आभास हो रहा था, पल भर में उससे निकल गई हो। उसे याद है कि महाराजजी द्वारा उससे यह ऊर्जा छीन लेने पर उसे बहुत गुस्सा आया था।

राम

कई साल पहले नीब करोरी गाँव में, पागलों को कभी-कभी जंजीरों में जकड़कर महाराजजी के पास लाया जाता था। महाराजजी कहते थे, “इन्हें खोल दो और हनुमानजी के पास रखो।” वे एक छोटी सी बाँस की छड़ी लेकर उनके सिर पर मारते थे। फिर पूछते, “क्या तुम ठीक हो?” वे कहते, “हाँ।” तब महाराजजी उनसे कुछ काम करने को कहते, जैसे, “रंबन (कैक्टस का पौधा) की एक टहनी लाओ।” जब वे उसे लाते, तो वे कहते, “अब सब ठीक है।” उन्हें एक-दो दिन के लिए रहने दिया जाता और फिर वे उन्हें लाने वालों से उन्हें वापस घर ले जाने को कहते।

राम

कई साल पहले, महाराजजी जिस जगह ठहरे थे, उसके पीछे एक मुसलमान रहता था। वे दोनों एक-दूसरे से बहुत प्यार करते थे। एक दिन, दो पागल आदमियों को वहाँ लाया गया और महाराजजी ने मुसलमान से कहा, “तुम इनमें से एक को ठीक कर दो और मैं दूसरे को ठीक कर दूंगा।” महाराजजी के साथ वाला आदमी थोड़ी ही देर में ठीक हो गया, लेकिन मुसलमान को कुछ समय लगा और वह अभी भी ठीक नहीं हुआ था। भक्त वहाँ बैठकर देख रहे थे। महाराजजी ने

दूसरे पागल आदमी को अपने पास बुलाया और उसके सिर पर धीरे से थपथपाया, और वह भी पूरी तरह से ठीक हो गया। लेकिन महाराजजी ने कहा, “अरे, मुसलमान ने पहले किया।”

राम

मैं महाराजजी के साथ था जब वे प्रधानाचार्य के छोटे भाई से मिलने पागलखाने गए थे, जो मानसिक रूप से विक्षिप्त हो गया था। उसे जंजीरों में जकड़कर कमरे में लाया गया था, और उसकी बेजान आँखें इधर-उधर घूम रही थीं। महाराजजी उसके सामने खड़े होकर उससे बात कर रहे थे। अचानक वह व्यक्ति महाराजजी के चरणों में गिर पड़ा और पूरी तरह से होश में आ गया। वह सभी सवालों के जवाब देने में सक्षम था। बाद में उसे रिहा कर दिया गया, हालाँकि यह मानसिक बीमारी का उसका आखिरी दौर नहीं था।

राम

एक बार एक पश्चिमी भक्त गुस्से में महाराजजी के सामने खड़ा हो गया। वह नशे में चूर था और उसे लगने लगा था कि वह स्वयं यीशु मसीह है और महाराजजी को पश्चाताप करने की आवश्यकता है। वहाँ मौजूद कई अन्य भक्तों के सामने, उस व्यक्ति ने चिल्लाकर अपना विरोध जताया। महाराजजी ने कुछ क्षणों तक मौन भाव से उस व्यक्ति की ओर देखा, उनकी दृष्टि में खुलेपन और करुणा का भाव था। वह व्यक्ति फिर भी अपनी बात कहता रहा, इसलिए महाराजजी ने सिर हिलाकर कुछ भक्तों को उसे बाहर निकालने का आदेश दिया। बाहर निकाले जाने के बाद भी, महाराजजी ने और भक्तों को यह सुनिश्चित करने के लिए भेजा कि वह बस में चढ़कर शहर से चला गया है। (बाद में, जब उससे पूछा गया कि उस दौरान उसे कैसा महसूस हुआ, तो उस व्यक्ति ने कहा कि वह महाराजजी के प्रेम से परिपूर्ण महसूस कर रहा था और विशेष रूप से इस बात से प्रभावित था कि महाराजजी ने उसे बस में चढ़ाने में मदद करने के लिए लोगों को भेजा।)

महाराजजी उन सभी को ठीक नहीं करते थे जो बीमार होकर उनके पास आते थे या जो उनसे ठीक होने की प्रार्थना करते थे। कुछ लोग ठीक क्यों हो जाते थे और कुछ नहीं, यह केवल उन्हें ही पता था। कभी-कभी वे बीमारी को कम तो कर देते थे, लेकिन व्यक्ति को कुछ कष्ट सहने देते थे। ऐसे समय में उनकी टिप्पणियाँ बताती हैं कि महाराजजी के उपचार का व्यक्ति के कर्मों से गहरा संबंध था—कि अक्सर व्यक्ति के लिए बीमारी के कुछ या शायद पूरे दर्द को सहना आवश्यक होता था। जबकि अधिकांश लोग कष्ट सहना नहीं चाहते, महाराजजी समय-समय पर अपने भक्तों को याद दिलाते थे कि कष्ट हमें ईश्वर के निकट लाता है।

मेरी बेटी जब पैदा हुई तो बहुत बीमार थी। मैं उसे एक एलोपैथ और एक आयुर्वेद चिकित्सक (जड़ी-बूटी विशेषज्ञ) के पास ले गई, लेकिन किसी से भी आराम नहीं मिला। मैं उसे एक ज्योतिषी के पास ले गई, जिसने कहा, “उसकी कुंडली में तीन ग्रह मृत्यु का संकेत दे रहे हैं। अगर वह ढाई साल से ज़्यादा जी जाए तो उसे मेरे पास कुंडली बनवाने के लिए लाना। अब तो कुंडली बनवाना बेकार है।” फिर मैं उसे महाराज जी के पास ले गई और उनसे मदद मांगी। महाराज जी ने अपना सिर अपनी बांह पर झुका लिया और कुछ देर तक अपना चेहरा छिपाए रखा। लगभग पाँच मिनट तक उन्होंने ध्यान लगाया। फिर उन्होंने अपना सिर उठाया और कहा, “चिंता मत करो, वह ठीक हो जाएगी।” उस दर्शन के बाद, मेरी बेटी को बार-बार निमोनिया हुआ,

लेकिन वह बच गई। अब वह छह साल की है। मुझे उसकी चिंता नहीं है। अब जो होना है वो कर्म है और हमें उसका सामना करना होगा।

राम

महाराजजी के एक भक्त को गंभीर रूप से जहर दिया गया था। उनकी हालत बेहद खराब थी और किसी को भी उनके बचने की उम्मीद नहीं थी। महाराजजी ने कहा, “तुम्हें इस थोड़े से कष्ट से संतुष्ट रहना होगा। तुम्हें इसका कुछ हिस्सा सहना होगा।” दूसरे शब्दों में, महाराजजी की कृपा से उनकी पीड़ा और भी बढ़ सकती थी। लेकिन वे बच गए।

राम

मेरी बड़ी बहन हमेशा से ही बहुत बीमार रहती थी, उसे कई तरह की बीमारियां रहती थीं। महाराजजी ने उससे कहा कि इसका कोई उपाय नहीं है, उसे किसी न किसी तरह अपने पिछले संस्कारों का प्रायश्चित करना ही होगा। उन्होंने उससे कहा कि वह अपना मन हमेशा भक्ति भाव में लगाए रखे, अन्यथा वह सब कुछ खो देगी।

राम

महाराजजी ने एक भारतीय लड़की से चार बार पूछा, “तुम्हें दुख पसंद है या सुख?” हर बार लड़की ने जवाब दिया, “मैंने कभी सुख नहीं जाना, महाराजजी, सिर्फ दुख ही जाना है।” अंत में महाराजजी ने कहा, “मुझे दुख पसंद है। यह मुझे ईश्वर के करीब लाता है।”

राम

मुझे पहली बार शनिवार को गठिया का बहुत तेज दर्द हुआ। रविवार तक, महाराजजी के आगरा के लिए रवाना होने के बाद, दर्द ठीक हो गया था। सर्दियों में यह दर्द फिर से बहुत तेज हो गया, लेकिन मैंने इसके लिए कुछ नहीं किया। मैं उस दर्द को अपने अंदर रखना चाहता हूँ ताकि मुझे उस दिन की याद रहे। वह महाराजजी के मेरे आखिरी दर्शन थे।

> कष्टों से ही ज्ञान प्राप्त होता है। बीमार होने पर, श्मशान घाट पर या अस्पताल में, आप ईश्वर के साथ एकांत में होते हैं। कष्ट सहते समय आप ईश्वर से प्रार्थना करते हैं।

महाराजजी के ही ज्ञात कारणों से, कभी-कभी वे मृत्यु से सौदेबाजी करते हुए अपने किसी भक्त को मृत्यु से दूर धकेल देते थे, जबकि कभी-कभी वे हस्तक्षेप नहीं करते थे और भक्त की मृत्यु हो जाती थी। चूंकि महाराजजी प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु का समय जानते थे, पर वे बुरी खबर देने से घृणा करते थे, इसलिए वे अक्सर उस समय अनुपस्थित रहते थे जब उनके किसी भक्त को मरना होता था। कुछ मामलों में, दबाव पड़ने पर, वे एक सूक्ष्म संकेत देते थे, लेकिन अक्सर उनकी अनुपस्थिति ही उन भक्तों के लिए संकेत होती थी जो उनके तौर-तरीकों को जान चुके थे।

एक बार पड़ोस की एक महिला मेरी पत्नी के पास आई और बोली कि वह एक स्थानीय बाबा के दर्शन के लिए जा रही है। उसने मेरी पत्नी से भी साथ चलने को कहा, तो मेरी पत्नी भी उसके साथ चली गई। पड़ोसी महिला ने बाबा को अपना हाथ दिखाया, क्योंकि बाबा हस्तरेखा शास्त्र, ज्योतिष और ऐसी ही चीजों के विशेषज्ञ माने जाते थे। लेकिन बाबा ने कहा, “मैं तुम्हारा हाथ नहीं देखना चाहता; मैं उसका (मेरी पत्नी का) हाथ देखना चाहता हूँ।” मेरी पत्नी अपना हाथ दिखाना नहीं चाहती थी, लेकिन बाबा ने ज़िद की और उससे कहा कि छह महीने में उसकी मृत्यु

हो जाएगी।

मेरी पत्नी ने यह बात महाराजजी को बताई, तो वे तुरंत बोले, “सब गलत है! उस बाबा ने ऐसा क्यों कहा? क्या तुम नहीं मरोगे? क्या कभी ऐसा समय नहीं आएगा जब तुम मरोगे? सब मरेंगे! तुमने उससे यह क्यों नहीं कहा, ‘क्या—तुम नहीं मरोगे? क्या तुम अमर हो?’ वह भी मरेगा। सब मरेंगे। वह ऐसी बातें क्यों कहता है? उसका ऐसी बातें कहना बहुत बुरा है। दुष्ट!”

फिर महाराजजी ने एक संत के बारे में एक और कहानी सुनाई। मैं उसे सुनने के लिए वहाँ मौजूद था।

“एक संत थे। एक स्त्री उनसे मिलने आई। उसके पति का अभी-अभी निधन हुआ था। उसने संत के चरण कमलों में प्रणाम किया और उन्होंने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा कि उसे पाँच पुत्र होंगे। स्त्री ने कहा, ‘हे महाराज, मैं तो आपके पास इसलिए आई हूँ क्योंकि मेरे पति का अभी-अभी निधन हुआ है। मुझे पाँच पुत्र कैसे होंगे?’ संत ने उत्तर दिया, ‘मैंने तुम्हें बताया है कि तुम्हें पाँच पुत्र होंगे और मैं अपना वचन पूरा करूँगा।’ और उसके पति जीवित हो उठे।” तब महाराजजी ने कहा, “और मैं भी यही करूँगा। क्योंकि मैंने वचन दिया है, मैं उसे पूरा करूँगा। तुम नहीं मरोगी। तुम पचहत्तर वर्ष तक जीवित रहोगी। चिंता मत करो।” यह बात आठ वर्ष पहले की है। वह स्त्री आज भी जीवित है।

राम

महाराजजी एक ऐसी जगह से गुजर रहे थे जहाँ एक हस्तरेखा विशेषज्ञ काम कर रहा था। उस विशेषज्ञ ने महाराजजी के एक भक्त की हथेली देखकर कहा कि उसकी मृत्यु तीन दिन में हो जाएगी। भक्त बहुत दुखी हुआ। लेकिन महाराजजी ने कहा, “वह तो बड़ा होशियार है। पर उस मूर्ख को यह एहसास नहीं है कि तीन दिन में तो उसकी ही मृत्यु होने वाली है।” और सच में उसकी मृत्यु हो गई।

राम

मैं महाराजजी के साथ नाव में था और उन्होंने मुझे पानी में कूदने को कहा। मैं डर गया और बोला, “महाराजजी, मुझे तैरना नहीं आता। मैं डूब जाऊंगा।”

महाराजजी ने एक ऊंचे पुल की ओर इशारा करते हुए कहा, "अगर सही समय नहीं आया है, तो तुम उस पुल से कूद सकते हो और मरोगे नहीं।" यह सुनकर मुझे बहुत विश्वास हुआ और मैं कूद गया, और पानी सिर्फ मेरी कमर तक ही था।

राम

रामघर में एक फेरीवाला रहता था। वह बहुत बीमार हो गया और चिंतित परिवार उसे मदद के लिए एक स्थानीय बाबा के पास ले गया। बाबा ने कहा कि वह आदमी जल्द ही मर जाएगा, लेकिन उसके पास एक दवा है जिससे उसकी जान बच सकती है। परिवार ने महाराजजी से भी सलाह ली और उन्हें पहले बाबा की बात बताई। महाराजजी ने तुरंत जवाब दिया, “बकवास! वह अस्सी साल तक जिएगा। वह दुष्ट बाबा तो बस तुम्हें डराकर अपनी दवा बेचना चाहता है।”

राम

एक बीमार महिला का पति महाराजजी के पास गया। महाराजजी ने एक खास तरह की लकड़ी बनाकर उस आदमी को दी और हिदायत दी कि वह उसे अपनी पत्नी के तकिए के नीचे

रख दे। उसने ऐसा ही किया और जल्द ही उसकी पत्नी ठीक हो गई, लेकिन जब उन्होंने लकड़ी ढूंढी तो वह गायब थी। अब लकड़ी पाने की लालसा में पति महाराजजी के पास गया और उन्हें बताया कि लकड़ी गायब है। महाराजजी ने कहा, “तुम्हारी पत्नी तो तुम्हारे पास है। तुम्हें लकड़ी की क्या ज़रूरत है?” कुछ समय बाद एक दूसरे आदमी की माँ बीमार पड़ गई। वह आदमी महाराजजी के पास गया और बोला, “आपने फलां व्यक्ति को उसकी पत्नी को ठीक करने के लिए लकड़ी दी थी। क्या आप मुझे मेरी माँ को ठीक करने के लिए लकड़ी देंगे?” महाराजजी ने कहा, “वह एक जवान लड़की थी और मैंने उसकी जान बचाई। तुम्हारी माँ एक बूढ़ी औरत है और वह मर जाएगी।” और वह मर गई।

मेरे पिता के कई ऑपरेशन हुए, और हर ऑपरेशन से पहले और बाद में महाराजजी उनसे मिलने आते थे। लेकिन आखिरी बार जब वे बीमार पड़े, तो महाराजजी नहीं आए। हम जानते थे कि उनका जीवन जल्द ही समाप्त होने वाला है। महाराजजी उनकी मृत्यु के बाद आए।

मेरी माताजी के साथ भी ऐसा ही हुआ। जब मेरी माताजी बीमार पड़ीं, तो महाराजजी कानपुर आए, लेकिन हमारे घर नहीं आए, जबकि वे जब भी कानपुर आते थे, हमसे मिलने जरूर आते थे। उनकी मृत्यु हो गई। दो दिन बाद, महाराजजी घर आए और उस पूजा-गृह में गए जहाँ मेरी माताजी की तस्वीर रखी थी। महाराजजी पाँच साल के बच्चे की तरह रोने लगे। बस रोते ही रहे।

राम

महाराजजी के निधन के बाद एक ऐसी घटना घटी जिसने मुझे उनके पास पहुँचा दिया। मेरे छोटे बहनोई, जो कैंसर से पीड़ित थे, हम सबसे दूर, मुंबई के कैंसर अनुसंधान संस्थान में भर्ती थे। डॉक्टरों ने हमें तार भेजकर बताया कि उनका उसी दिन निधन हो जाएगा, वे कैंसर की अंतिम अवस्था में थे। हम सब बहुत दुखी थे। मैं जौनपुर (नई दिल्ली में महाराजजी का नया मंदिर) गया, यह सोचकर कि अगर महाराजजी सचमुच उतने ही महान संत हैं जितना लोग कहते हैं, तो वे हमारी मदद कर सकते हैं। अपनी तपस्या के फल से वे हमारी सहायता कर सकते हैं। इसलिए मैं गया और तीन बातों के लिए प्रार्थना की: पहली, मैंने प्रार्थना की कि मेरे बहनोई का जीवन दो महीने और बढ़ जाए। मैं इलाज की प्रार्थना नहीं करूँगा (जो होना है वही होगा; एक कमजोर शरीर को मरना ही है), लेकिन जीवन में कुछ समय की वृद्धि की प्रार्थना की। दूसरी, मैंने प्रार्थना की कि उनका निधन यहीं, उनके परिवार के बीच हो। तीसरी, मैंने प्रार्थना की कि उनकी मृत्यु शांतिपूर्ण हो।

फिर हमें बॉम्बे से खबर मिली कि उनकी बीमारी में सुधार हो गया है और उन्हें अस्पताल से छुट्टी दे दी गई है। वे तुरंत दिल्ली आ गए और हमसे मिल गए। यहाँ डॉक्टरों ने उनकी जाँच की और उन्हें काम पर लौटने के लिए पूरी तरह स्वस्थ घोषित कर दिया! खैर, यह सुधार दो महीने और एक दिन तक ही चला, फिर वे दोबारा बीमार पड़ गए और हम सबके बीच शांति से उनका निधन हो गया। उन्हें वह एक दिन और क्यों मिला? वे दो महीने के आखिरी दिन महाराजजी के मंदिर गए और प्रसाद ग्रहण किया। उस प्रसाद ने ही उनकी जान बचाई। प्रसाद ग्रहण करने वाले दिन उनका निधन नहीं हो सकता था।

राम

जब मेरे पिता के निधन का समय आया, तो महाराजजी ने उनसे कहा, "मुझसे कुछ भी मांग लेना।"

पिता ने कहा, “मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैंने अपना जीवन जी लिया है। अब मैं काशी (बनारस) में गंगा के किनारे मरना चाहता हूँ।”

महाराजजी ने उनसे एकांत में कहा, “तुम्हें एक साल और जीना होगा। तुम्हारी मृत्यु गंगा के किनारे होगी, काशी में नहीं।”

एक साल बाद, गंगा नदी के किनारे स्थित धारगन में, जहाँ मेरा नया घर था, मेरे पिता ने कहा, “धारगन में तुम्हारा घर तो है, लेकिन तुम्हें पता नहीं कि यह तुम्हारे लिए कितना दुर्भाग्यपूर्ण है।” यह बात उन्होंने जुलाई में कही थी। उनका निधन नवंबर में वहीं हुआ।

राम

1951 में मेरे पिता, जो जिला मजिस्ट्रेट थे, बीमार थे और बहुत पीड़ा में थे। उन्हें तीस दिनों से 99 डिग्री बुखार था। उनके निधन से चार दिन पहले, महाराजजी आए और उनके लिए चार गुलाब लाए। मेरे पिता से उन्होंने कहा, "आप ठीक हो जाएंगे।" मुझसे उन्होंने कहा, "शरीर को अपना अंत करना है।"

हालांकि ये सभी घटनाएँ महाराजजी के भक्तों से संबंधित हैं, लेकिन उनकी उपचार शक्तियाँ उनसे कहीं अधिक व्यापक थीं। सुब्रह्मण्यम (डॉ. लैरी ब्रिलियंट, एक पश्चिमी चिकित्सक जिन्हें महाराजजी की पत्नी गिरिजा ने उनके पास लाया था) की कहानी में हमें महाराजजी के अप्रत्यक्ष कार्य करने का एक उदाहरण मिलता है। इस मामले में उन्होंने सुब्रह्मण्यम और संयुक्त राष्ट्र के विश्व स्वास्थ्य संगठन के माध्यम से चेचक के उन्मूलन में तेजी लाने का काम किया।

जैसे ही हम अंदर आए और बैठ गए, उसने हमसे सबसे पहले यही कहा, "डॉक्टर— डॉक्टर अमेरिका! आपके पास कितने पैसे हैं?"

मैंने कहा, "ओह, महाराजजी, मेरे पास पांच सौ डॉलर हैं।"

“नहीं, नहीं, नहीं, सच में—आपके पास कितने पैसे हैं?” मैंने जोर देकर कहा कि मेरे पास बस इतना ही पैसा है।

उन्होंने कहा, “जी हां, हां, यह तो भारत में है। लेकिन अमेरिका में आपके पास कितना पैसा है?”

मैंने इस बारे में सोचा, और मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझे थोड़ी चिंता हुई कि कहीं वह किसी मंदिर के लिए पैसे की गुहार तो नहीं लगा रहा है। मैंने कहा, "मेरे पास अमेरिका में सिर्फ पाँच सौ डॉलर हैं," जो सच था। फिर मैंने जल्दी से जोड़ा, "लेकिन मुझ पर मेडिकल स्कूल का बहुत बड़ा कर्ज भी है। मुझे मेडिकल की पढ़ाई पूरी करने के लिए बहुत सारा पैसा उधार लेना पड़ा था, और भले ही मेरे पास एक हजार डॉलर हैं, लेकिन कर्ज उससे कहीं ज्यादा है।"

उन्होंने कहा, “क्या? तुम्हारे पास पैसे नहीं हैं? तुम डॉक्टर नहीं हो!” यह बिल्कुल वैसा ही था जैसा मेरी माँ कहती थीं। उन्होंने मेरी तरफ देखा और खूब हँसे: “तुम डॉक्टर नहीं हो। तुम डॉक्टर नहीं हो, तुम डॉक्टर नहीं हो, तुम डॉक्टर नहीं हो; तुम डॉक्टर नहीं हो…” मुझे उनकी बात समझ नहीं आई। फिर उन्होंने कहा, “तुम्हें टीकाकरण करना होगा; तुम गाँवों में जाकर टीकाकरण करोगे।”

“क्या आप चाहते हैं कि मैं यहाँ किसी को टीका लगाऊँ?” मैंने पूछा। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि वह मुझे क्या करने को कह रहे हैं। मेरे अलावा बाकी सब समझ रहे थे। आखिर में उन्होंने मेरी तरफ देखा और कहा, “डॉक्टर अमेरिका—संयुक्त राष्ट्र संगठन के डॉक्टर। आप संयुक्त राष्ट्र के लिए काम करेंगे। आपको गाँवों में जाकर टीकाकरण करना होगा।”

दरअसल, मैंने विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) में काम करने वाले कुछ परिचितों से बहुत ही अनौपचारिक रूप से पूछताछ की थी, लेकिन उन्होंने जवाब दिया कि डब्ल्यूएचओ में अभी किसी की भर्ती नहीं हो रही है। इसी बीच, अगले कुछ हफ्तों तक महाराजजी मुझसे लगातार पूछते रहे, "क्या तुम्हें नौकरी मिल गई?"

मैं हमेशा कहता था, "नहीं, महाराज जी," और जल्दी से उस विषय को छोड़ देता था।

एक दिन महाराजजी ने मुझसे कहा, “डब्ल्यूएचओ जाओ। तुम्हें नौकरी मिल जाएगी।” तो मैं नई दिल्ली में डब्ल्यूएचओ के कार्यालय गया और उस व्यक्ति से मिला जिससे मैंने पहले बात की थी। वह बहुत ही मिलनसार थे, लेकिन उन्होंने बताया कि डब्ल्यूएचओ में कोई पद खाली नहीं है, और वैसे भी, वे केवल भारत के बाहर के मेडिकल स्कूलों और संस्थानों से विशेषज्ञ सलाहकार नियुक्त करते हैं। फिर उन्होंने कहा, “लेकिन एक कार्यक्रम है। अगर वे कभी कुछ कर सकें, तो यह बहुत अच्छा होगा, लेकिन यह संदेहजनक है कि वे अपना लक्ष्य हासिल कर पाएंगे, क्योंकि यह बहुत कठिन है। यह चेचक कार्यक्रम है। भारतीय सरकार इस समय चेचक से लड़ने के लिए डब्ल्यूएचओ कार्यक्रम का विस्तार करने के सख्त खिलाफ है। उनके पास मलेरिया और परिवार नियोजन जैसी अन्य समस्याएं हैं। चेचक उनकी सर्वोच्च प्राथमिकता नहीं है। लेकिन मैं आपको फ्रांसीसी डॉक्टर निकोल ग्रासेट से मिलवाता हूँ, जो इस कार्यक्रम का निर्देशन करती हैं।”

हमने उनसे मिलने का समय तय किया और फिर मैं महाराजजी के दो भक्तों, बर्मन परिवार के घर लौट आया और बर्मन का सूट उधार लेकर एक भद्दी सी टाई खरीद ली। मैंने अपने बालों को पोनीटेल में बांधकर सफेद कमीज के नीचे छिपा लिया। मेरा पहनावा अजीब और बेढंगा था, और निकोल तुरंत समझ गई कि मैं भी एक आम हिप्पी हूँ। उसने कहा, "माफ़ कीजिएगा। हमारे पास कोई काम नहीं है। लेकिन आपसे मिलकर बहुत अच्छा लगा।"

तो मैं महाराजजी के पास वापस गया और उन्होंने फिर पूछा, "क्या तुम्हें नौकरी मिल गई?" मैंने कहा, "नहीं, महाराजजी। चलिए इस बात को यहीं खत्म करते हैं।"

दो और सप्ताह बीत गए, और महाराजजी ने मेरी ओर देखकर कहा, "वापस डब्ल्यूएचओ में जाओ।"

मैं बस-ट्रेन-बस-रिक्शा से वापस WHO गया। एक बार फिर मैंने अपने परिचित नेड से बात की, और इस बार मैंने एक अलग तरह का फॉर्म भरा, उसे थोड़ा और सही तरीके से टाइप किया, और उसे भेज दिया। साथ ही, मैंने निकोल से फोन पर बात भी की। ज़ाहिर है, वहाँ कोई नौकरी नहीं थी।

अगले हफ्ते महाराजजी ने मुझसे पूछा कि क्या मुझे नौकरी मिल गई और फिर मुझे निकोल को फोन करने के लिए कहा। यह शर्मनाक होता जा रहा था। इस बार मैंने उसे वृंदावन से फोन किया। उसने फिर से बताया कि चेचक कार्यक्रम का विस्तार नहीं हुआ है, अमेरिकी डॉक्टरों को नियुक्त करने की कोई संभावना नहीं है, लेकिन उसने काम में मेरी निरंतर रुचि के लिए मुझे

धन्यवाद दिया।

कुछ समय बाद महाराजजी ने अचानक मुझे बुलाया और कहा, “तुरंत! डब्ल्यूएचओ जाओ।”

मैंने ट्रेन पकड़ी और सीधे WHO पहुँच गया। जब मैं अंदर गया तो वहाँ एक और आदमी था। उसने मुझसे कहा, "तुम यहाँ क्या कर रहे हो?"

मैंने हमेशा की तरह यही बात कही, “मैं डब्ल्यूएचओ में चेचक कार्यक्रम के लिए काम करने आया हूँ। मेरे गुरु ने मुझसे कहा था कि मैं डब्ल्यूएचओ के लिए काम करूँगा।”

मैं फिर से नेड के दफ्तर गया और निकोल को फोन किया। उसने बताया कि चेचक कार्यक्रम का अभी भी विस्तार नहीं हुआ है, लेकिन उस दिन कुछ खास हुआ था: वैश्विक चेचक कार्यक्रम के प्रमुख जिनेवा से आए थे। उसने मुझे उनसे मिलने का सुझाव दिया। मैं उनसे मिलने गया और ज़ाहिर है, वह वही व्यक्ति थे जो दरवाज़े पर खड़े थे, जिन्हें मैंने अभी-अभी बताया था कि मैं WHO के लिए काम करने जा रहा हूँ—और यह उन्हीं का कार्यक्रम था जिसके लिए मैं काम करने जा रहा था। उन्होंने मेरा इंटरव्यू लिया और एक नोट लिखा: “इस नौजवान को विदेशी संस्कृतियाँ पसंद लगती हैं और शायद भविष्य में यह बहुत अच्छा अंतरराष्ट्रीय काम करेगा। हालाँकि, इसे जन स्वास्थ्य में कोई अनुभव नहीं है, इंटर्नशिप के बाद कोई प्रशिक्षण नहीं है, और मैं भविष्य के लिए उसे शुभकामनाएँ देता हूँ। हमारे पास उसके लिए कोई नौकरी नहीं है।” उन्होंने मुझसे कहा कि WHO मुझे कई कारणों से नौकरी पर नहीं रख सकता: पहला, मेरे पास जन स्वास्थ्य का कोई प्रशिक्षण नहीं था। मैंने कभी चेचक का कोई मामला भी नहीं देखा था। दूसरा, राजनीतिक तनाव के कारण, उस समय भारतीय सरकार नहीं चाहती थी कि अमेरिकी भारत में काम करें। तीसरा कारण यह था कि उन्होंने भारत में चेचक उन्मूलन कार्यक्रम को अभी तक पूरी तरह से गति नहीं दी थी। चार देशों को छोड़कर बाकी सभी देशों में चेचक का उन्मूलन हो चुका था, लेकिन रणनीति यह थी कि पहले उन तीन देशों पर काम किया जाए और फिर भारत में काम शुरू किया जाए।

बस इतना ही। उन्होंने आगे कहा कि पाकिस्तान में चेचक का एक कार्यक्रम चल रहा है, और अगर इसमें मेरी दिलचस्पी है, तो मुझे इस पर थोड़ा और विचार करना चाहिए।

मैं रुका और शर्मिंदा होकर बोला, "मुझे अपने गुरु से पूछना पड़ेगा।"

मैं महाराजजी के पास वापस गया। जब उन्होंने पूछा कि क्या मुझे नौकरी मिल गई, तो मैंने कहा, "नहीं, लेकिन पाकिस्तान में नौकरी मिलने की संभावना है।"

उसने चिल्लाकर जवाब दिया, "नहीं! मैंने भारत कहा था!" इसलिए मैंने डब्ल्यूएचओ को वापस फोन किया और निकोल को बताया कि मेरे गुरु ने जोर देकर कहा है कि मैं डब्ल्यूएचओ के लिए भारत में काम करूं।

इससे उसे जरूर हंसी आई होगी, लेकिन वह हमेशा की तरह विनम्र थी और मुझे फोन करने के लिए धन्यवाद दिया।

दो महीने बाद, गिरिजा और मैं पूरी तरह थक चुके थे और निराश हो गए थे। हमने कश्मीर में छुट्टी मनाने का फैसला किया। आश्रम से निकलते समय, मैंने WHO में निकोल को फोन किया और उसे अपनी योजना बताई। मैंने कहा, "अगर किसी भी तरह से नौकरी मिल जाए, तो कृपया मुझे श्रीनगर में फोन करना।"

“जानती हो,” उसने कहा, “अभी-अभी एक बहुत ही अजीब चीज़ घटी। मुझे अचानक प्रेरणा मिली। मुझे नहीं पता—शायद यह तुम्हारे गुरु का प्रभाव हो या कुछ ऐसा ही, लेकिन क्या तुम लिख सकती हो?”

“हां,” मैंने कहा। मैंने कुछ मेडिकल पत्रिकाओं का संपादन किया था।

"ठीक है, आप जानते हैं कि हम आपको चेचक के डॉक्टर के रूप में तो नियुक्त नहीं कर सकते, लेकिन अगर आप वास्तव में डब्ल्यूएचओ के लिए काम करने के लिए इतने दृढ़ हैं, तो शायद मैं आपको प्रशासनिक सहायक के रूप में नियुक्त कर सकता हूं।"

“देखिए, कुछ भी। महाराजजी ने कहा कि मैं आपके लिए काम करूंगा और गांवों में जाकर इंजेक्शन लगाऊंगा। वे कभी गलत नहीं हुए।”

उन्होंने मेरे आवेदन को डॉक्टर के पद से बदलकर प्रशासनिक सहायक के पद के रूप में कर दिया और स्विट्जरलैंड के जिनेवा में कार्यक्रम प्रमुख डी.ए. हेंडरसन को एक टेलीग्राम भेजा: "मैं ब्रिलियंट को नौकरी पर रख रही हूँ।" उन्हें अचानक मुझे नौकरी पर रखने की बहुत इच्छा हुई और उन्होंने आवेदन को आगे बढ़ा दिया। फिर भी, डब्ल्यूएचओ ने उनकी इकाई में कोई पद सृजित नहीं किया था।

कश्मीर में छुट्टियां बिताने के बाद हम कैंची लौट आए और महाराजजी ने मुस्कुराते हुए पहला सवाल पूछा: "क्या आपको नौकरी मिल गई?"

“नहीं, महाराज जी। यह वाकई बहुत पेचीदा है।” उन्होंने मुझे फिर से दिल्ली वापस जाने को कहा। अब तक मैं दस बार दिल्ली आ-जा चुका था, जैसे कोई यो-यो, हर बार बारमैन का सूट और वह भद्दी टाई पहनकर।

जब मैं WHO में पहुंचा तो मुझे पता चला कि प्रशासनिक सहायक के पद के लिए मेरा आवेदन स्वीकृत हो गया था, लेकिन मुझे अभी भी सुरक्षा मंजूरी प्राप्त करनी थी। WHO में काम करने वाले हर अमेरिकी के लिए यह अनिवार्य है। जब मुझे सुरक्षा मंजूरी का वह कागज़ मिला, तो मैं समझ गया कि अब तो सब खत्म हो गया। सुरक्षा मंजूरी मिलने की कोई उम्मीद नहीं थी। हम अमेरिका में वामपंथी युद्ध-विरोधी आंदोलन का हिस्सा थे; मैं मानवाधिकार चिकित्सा समिति नामक एक कट्टरपंथी संगठन का नेता था। सुरक्षा मंजूरी मिलने की कोई गुंजाइश नहीं थी।

कैंची लौटते समय मैं बहुत निराश था। मैंने महाराजजी को सब कुछ बताया और कहा कि अब तक कई बाधाएं आई होंगी, लेकिन यह आखिरी हद थी।

महाराजजी ने कहा, “ओह। ये काम तुम्हें किसने दिया है?” मुझे ठीक से याद नहीं था कि कौन था, लेकिन मैंने बताया कि हेंडरसन बॉस था। महाराजजी ने एक सच्चे फकीर (साधु) होने का नाटक किया। वे सीधे बैठ गए और अपना कंबल से ढका हाथ अपने चेहरे के सामने रखकर पूछा, “उसका नाम कैसे लिखते हो?” मैंने नाम लिखना शुरू किया। “रुको,” उन्होंने कहा। और फिर वे गहरी आवाज़ में धीरे-धीरे अक्षर दोहराने लगे। वे अपने चेहरे को उंगलियों से ढके हुए थे और बीच-बीच में मेरी तरफ देखते हुए लगातार हंस रहे थे। वे नाम लिखते रहे और समाधि में जाने का नाटक करते रहे, बीच-बीच में मुझे देखते रहते ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि मैं उन्हें देख रहा हूँ और उनसे प्रभावित हो रहा हूँ, और ऐसा करते हुए भी वे खिलखिलाते रहे।

इसी दौरान, जिनेवा में डॉ. हेंडरसन अमेरिकी दूतावास में एक कॉकटेल पार्टी में शामिल हुए। अमेरिकी राजदूत और सर्जन जनरल भी वहां मौजूद थे। सर्जन जनरल ने हेंडरसन से चेचक उन्मूलन कार्यक्रम की प्रगति के बारे में पूछा। हेंडरसन ने कहा, "बहुत बढ़िया। हमने चौंतीस देशों को चेचक मुक्त कर दिया है और अब केवल चार देश बचे हैं।"

"क्या सभी देश आपकी मदद कर रहे हैं?" सर्जन जनरल ने पूछा।

“जी हां। रूस ने हमें वैक्सीन दी है। स्वीडन ने हमें बहुत सारा पैसा दिया है। सभी देश मदद कर रहे हैं।”

सर्जन जनरल ने पूछा, "अमेरिका के बारे में क्या? हम आपको क्या दे रहे हैं?"

अपने कार्यक्रम के लिए समर्थन जुटाने में माहिर हेंडरसन ने कहा, "खैर, ऐसा बहुत ज्यादा नहीं है।"

"आपको किस चीज़ की जरूरत है?"

हेंडरसन ने जवाब दिया, "मुझे नहीं पता कि मैं इसमें कैसे फंस गया, और मुझे यह भी नहीं पता कि हम ऐसा क्यों कर रहे हैं, लेकिन हम इस युवा अमेरिकी डॉक्टर को नियुक्त करना चाहते हैं जो भारत के एक आश्रम में रह रहा है। हमने पहले कभी ऐसा कुछ नहीं किया है। और उस लड़के को सुरक्षा मंजूरी नहीं मिल पा रही है।"

अमेरिका के सर्जन जनरल ने कहा, "सुरक्षा मंजूरी? उसे इसकी क्या जरूरत है?"

हेंडरसन ने जवाब दिया, "संयुक्त राष्ट्र के लिए काम करने के लिए प्रत्येक अमेरिकी नागरिक के पास सुरक्षा मंजूरी होनी चाहिए।"

सर्जन जनरल ने कहा, "मुझे यह पता नहीं था। उसे यह मंजूरी कौन देता है?"

हेंडरसन ने कहा, "तुम करते हो।"

“हाँ? मुझे एक नैपकिन दो और बच्चे का नाम बताओ।” उन्होंने एक कॉकटेल नैपकिन लिया और उस पर लिखा, “शानदार—काम शुरू कर सकते हैं।” उन्होंने नैपकिन हेंडरसन को दिया, जिन्होंने नई दिल्ली में WHO को टेलीग्राम भेजा कि मुझे काम करने की अनुमति मिल गई है।

अगली सुबह महाराजजी ने हमें अपने “कार्यालय” में बुलाया। वे बहुत ही स्नेहपूर्ण थे। हंसते-मुस्कुराते उन्होंने चाय और जलेबी मंगवाई और हमें गले लगाया। हम उनके पैर मल रहे थे। यह बहुत ही सुखद अनुभव था। फिर अचानक महाराजजी ने कहा, “ठीक है। अब आपके जाने का समय हो गया है।”

हमें लगा कि वह आश्रम छोड़ने जा रहा है।

हम खड़े हुए, प्रणाम किया और फिर बाहर निकलकर कोने से मुड़ गए। जैसे ही हम आश्रम के द्वार के पास पहुँचे, डाकिया नई दिल्ली से एक टेलीग्राम लेकर आया: “हमें आज सूचित किया गया है कि आपको अमेरिका से सुरक्षा मंजूरी मिल गई है। काम शुरू करने के लिए तुरंत डब्ल्यूएचओ - नई दिल्ली आ जाएँ।”

तो मैं विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) में गई और प्रशासनिक सहायक के रूप में काम शुरू किया। सप्ताह के दिनों में मैं दिल्ली में काम करती थी और सप्ताहांत में हम महाराजजी के साथ समय बिताने के लिए आश्रम आते थे। मुझे कैंची में पीछे की ओर एक दर्शन याद है, जहाँ हमने चेचक के बारे में तीन घंटे तक चर्चा की। यह अब तक की सबसे भयानक बीमारी थी जो मैंने

देखी थी। उन्होंने मुझे इसके बारे में सब कुछ बताया: भारत में यह कहाँ स्थित है, कहाँ पर इसके भयंकर प्रकोप होते हैं, कौन से मौसम होते हैं, इसका संचरण चक्र क्या है, किन स्थानों पर हमें परेशानी हो सकती है—महामारी विज्ञान के बारे में सब कुछ।

उन्हें मुझसे कहीं अधिक जानकारी थी, जबकि मैंने विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के साथ लगभग तीन महीने काम किया था। मैंने उनसे पूछा, "क्या चेचक का उन्मूलन हो जाएगा?" मुझे उनका जवाब याद है क्योंकि मैंने उसे लिख लिया था: "चेचक का उन्मूलन हो जाएगा। यह समर्पित चिकित्सा वैज्ञानिकों के अथक परिश्रम के कारण मानवता के लिए ईश्वर का उपहार है।"

डब्ल्यूएचओ कार्यालय में, मेरी मातृभाषा अंग्रेजी होने के कारण, मुझे कभी-कभी परिचालन योजनाएँ लिखने का काम सौंपा जाता था। महाराजजी पूरी योजना को व्यवस्थित करने में मदद करते थे। भारत की स्थितियों के बारे में मेरी जानकारी का स्रोत इतना सीधा था—और महाराजजी की सलाह इतनी अच्छी थी—इसलिए मुझे धीरे-धीरे अधिक से अधिक ज़िम्मेदारी मिलने लगी। फिर भी, लगभग एक महीने बाद भी मुझे ऐसा नहीं लग रहा था कि महाराजजी की भविष्यवाणी सच हुई है, क्योंकि मैं अभी भी गांवों में जाकर टीकाकरण नहीं कर रहा था। तब तक ऐसा कोई कार्यक्रम शुरू नहीं हुआ था।

परियोजना धीरे-धीरे उस मुकाम पर पहुँच गई जहाँ हम फील्ड में जाने वाले थे। सितंबर पहला महीना था। कुछ कर्मचारी फील्ड में जाने वाले थे, लेकिन मैं नहीं, क्योंकि मैं तो सिर्फ एक प्रशासनिक सहायक था। मुझे नई दिल्ली में रहकर काम संभालना था। लेकिन हुआ यूँ कि दो रूसी डॉक्टर, जिन्हें उस इलाके में भेजा जाना था जहाँ महाराजजी लंबे समय तक रहे थे, सोवियत सरकार की औपचारिकताओं में फँस गए। नक्शे पर एक खाली जगह थी—और मेरे सिवा कोई और नहीं था जिसे वहाँ भेजा जा सके।

मुझे दफ्तर से बाहर गांवों में भेज दिया गया। जिस जीप में मैं और गिरिजा सवार थे, उसके डैशबोर्ड पर महाराजजी की एक बड़ी सी तस्वीर लगी थी। अक्सर जब हम किसी सिविल सर्जन के दफ्तर में जाते और उन्हें चेचक के खिलाफ गंभीर अभियान के महत्व के बारे में बताते, तो वे कहते, “जी हां, आने के लिए धन्यवाद। अब कृपया जाइए। मेरे पास और भी बहुत सारे काम हैं।” फिर, भारतीय शिष्टाचार के चलते, वे हमें हमारी जीप तक छोड़ देते, और डैशबोर्ड पर महाराजजी की तस्वीर देखकर पूछते कि हमने इसे वहां क्यों रखा है। मैं कहता, “ओह, वे मेरे गुरु हैं। उन्होंने मुझे संयुक्त राष्ट्र में काम करने के लिए कहा था। उन्होंने मुझसे कहा था कि चेचक का उन्मूलन हो जाएगा। उन्होंने मुझसे कहा था कि यह समर्पित चिकित्सा वैज्ञानिकों की कड़ी मेहनत के माध्यम से मानवता के लिए ईश्वर का उपहार है।” और फिर सिविल सर्जन कहते, “ओह, कृपया मेरे दफ्तर में वापस आइए। चाय पीजिए! चूंकि चेचक का उन्मूलन होने वाला है, तो हम कैसे संगठित हों?” ऐसा ही होता रहता था।

हर बार—सिर्फ इसलिए कि महाराजजी ने कहा था कि चेचक का उन्मूलन हो जाएगा, और क्योंकि सभी भारतीय अधिकारियों ने सुना था कि वे जो भी कहते हैं वह सच हो जाता है। उन्होंने हमारे काम को गंभीरता से लिया और हमारी मदद करने के लिए अन्य कामों को दरकिनार कर दिया।

अक्सर, संशयवादी विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) या भारतीय अधिकारी मुझसे कहते

थे, "देखिए, आप भारत को समझते हैं। आप भले ही दुनिया के अन्य हिस्सों से चेचक का उन्मूलन कर दें, लेकिन आप जानते हैं कि भारत से चेचक का उन्मूलन कभी संभव नहीं है।" लेकिन जब वे महाराजजी की बात सुनते थे, तो भारतीय अधिकारी अक्सर अपनी राय पूरी तरह बदल देते थे।

जल्द ही हमें उन क्षेत्रों में तैनात किया गया जिन्हें स्थानीय डॉक्टरों के नकारात्मक रवैये के कारण चुना गया था। हमने महाराजजी की भविष्यवाणी पर चर्चा की। कुछ अधिकारियों को 1962 में चीन द्वारा भारत पर आक्रमण का समय याद आया, जब महाराजजी ने कहा था कि चीनी सैनिक स्वयं ही चीन वापस चले जाएंगे। इसलिए इन डॉक्टरों ने अपना रवैया बदल दिया और अपने लोगों को अथक परिश्रम करने के लिए प्रेरित किया, और जल्द ही उनके क्षेत्र में चेचक पर विजय प्राप्त हो गई। इसका प्रभाव यह हुआ कि यद्यपि मुझे चेचक या संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के बारे में बहुत कम जानकारी थी, फिर भी जब भी मुझे किसी कठिन क्षेत्र में भेजा गया, महाराजजी की कृपा से चेचक गायब हो गई।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) मुझे लगातार अजीबोगरीब और दूरदराज के स्थानों पर भेजता रहा। मुझे लगा कि शायद उत्तर प्रदेश में ही मेरा ऐसा सौभाग्य रहा है, लेकिन जनवरी 1974 में उन्होंने मुझे मध्य प्रदेश के एक सुदूर इलाके में भेजा, जो संयोगवश शाहडोल जिले का हिस्सा था—अमरकंटक!—महाराजजी का पुराना साधु निवास स्थान, जहाँ उस समय भारत की सबसे भीषण महामारी फैली हुई थी। जिले में लगभग हर कोई महाराजजी को जानता था, और जब उन्हें पता चला कि उन्होंने कहा है कि चेचक का उन्मूलन हो जाएगा, तो उन्होंने सहयोग किया और अपने पहले के संदेह के बावजूद, दूरदराज की पहाड़ियों में एक व्यापक अभियान चलाया। महामारी समाप्त हो गई!

डब्ल्यूएचओ के लोग मुझसे महाराजजी के बारे में पूछने लगे। मेरी बॉस निकोल ने महाराजजी से बहुत ही सुंदर तरीके से अपने दिल की बात कही। पहली बात तो यह कि उन्हें लगता था कि महाराजजी ने ही उन्हें मुझे नौकरी पर रखने के लिए प्रेरित किया था। दूसरी बात, चूंकि वह कठिन निर्णय लेने से पहले हमेशा सबकी सलाह लेती थीं, इसलिए सप्ताहांत में जब हम महाराजजी से मिलने जाते थे, तो वह हमसे पूछती थीं कि उन्मूलन कार्यक्रम में आने वाली विशिष्ट समस्याओं के बारे में उनकी क्या सलाह है। वे अपनी सलाह हमारे माध्यम से वापस भेजते थे। उनके उत्तर हर स्तर पर ज्ञान से भरे होते थे, व्यावहारिक भी और आध्यात्मिक भी। कई चेचक कार्यकर्ता उनका सम्मान करने लगे। चेचक कर्मचारियों में एक ऐसा गुण था जो संयुक्त राष्ट्र कार्यक्रम में मिले किसी भी अन्य समूह से अलग था: वे बहुत प्रेरित थे। हम महाराजजी के बारे में खुलकर बात करते थे, क्योंकि वे सभी बहुत ही धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे।

पूरे भारत में चेचक पर विजय पाने में केवल दो साल का अथक प्रयास लगा। जब हमने 1974 में शुरुआत की, तब एक ही वर्ष में 180,000 मामले और 30,000 मौतें दर्ज की गईं। 30 विभिन्न देशों के कुल 400 महामारी विशेषज्ञों और 100,000 भारतीय कार्यकर्ताओं ने करुणा और समर्पण की भावना से ओतप्रोत होकर काम किया। भारत में सभी ने कहा था कि यह कभी संभव नहीं हो सकता—यहां तक कि विश्व स्वास्थ्य संगठन के कई अधिकारियों ने भी —लेकिन महाराजजी ने कहा कि यह संभव है। उन्होंने कहा कि यह मानवता के लिए ईश्वर का

उपहार है, और यह सचमुच ऐसा ही था।

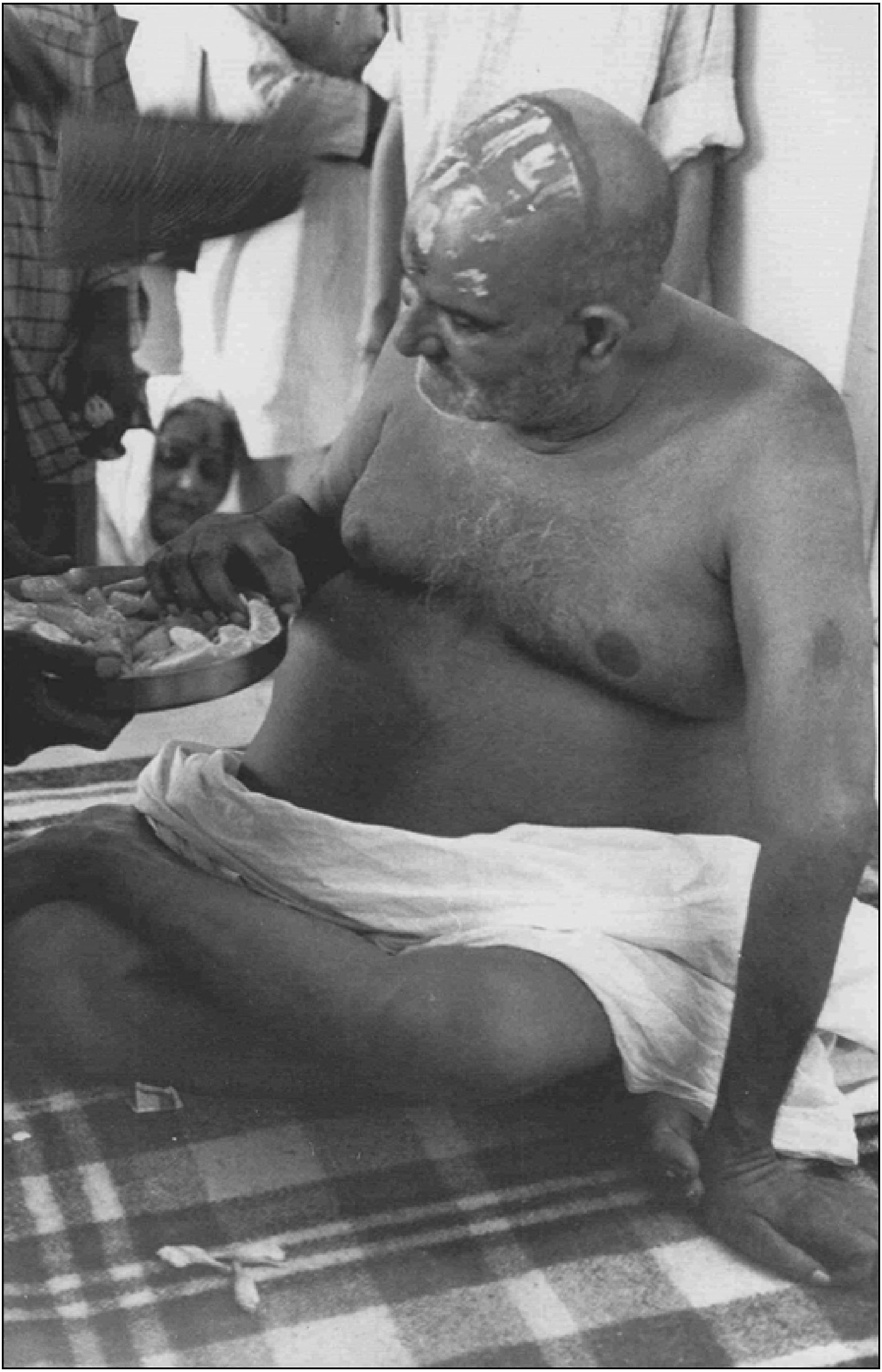

साकार आत्मा

महाराजजी के बारे में शायद सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि उनका भौतिक जगत, विशेषकर अपने शरीर के साथ संबंध कैसा था। हालांकि पहली नजर में उनका शरीर एक साधारण मानव शरीर जैसा प्रतीत होता था, और वे इसे एक साधारण शरीर साबित करने का भरसक प्रयास करते थे, लेकिन इस बात के पर्याप्त प्रमाण थे कि यह न केवल साधारण नहीं था, बल्कि वास्तव में समझ से परे असाधारण था।

शायद सबसे सूक्ष्म आकर्षण उनके शरीर की सुंदरता थी। भले ही राहगीर उन्हें एक छोटे कद के, गोल-मटोल, बुजुर्ग सज्जन के रूप में वर्णित करे, लेकिन एक और नज़र डालने पर यह वर्णन बेमानी हो जाता। महाराजजी के शरीर में एक ऐसी विशेषता थी जो हम भक्तों को अत्यंत आकर्षित करती थी। हममें से अधिकांश लोग घंटों तक केवल उनके इस रूप को निहारकर ही तृप्त हो जाते थे।

अब जब मैं उनके बारे में सोचता हूँ, तो मुझे उनके हाथ याद आते हैं—सिर्फ़ उनके हाथों को पकड़ना ही नहीं, बल्कि उनकी हरकतों को देखना भी। उनकी उंगलियाँ बहुत लचीली थीं, फिर भी ताकत से भरी हुई थीं। जब वे अपने हाथों का इस्तेमाल नहीं कर रहे होते थे, तो वे पूरी तरह से आराम से, खुले और सपाट रहते थे। उनकी उंगलियों के सिरों का आकार अनोखा था। उनके चेहरे से ज़्यादा, मुझे उनके हाथ याद आते हैं।

राम

वह स्वतःस्फूर्तता की मूर्ति थे। वे अद्भुत मुद्राएँ धारण कर लेते थे। वे आकाश की तरह बहते थे। वे पूर्णतः तरल प्रतीत होते थे। उनके शरीर में एक अद्भुत गुण था; उसमें एक चमक और कोमलता थी जो किसी शिशु की त्वचा के समान असामान्य थी।

राम

कभी-कभी उनके शरीर की सुंदरता इतनी आश्चर्यजनक रूप से तेजस्वी होती थी कि आपकी सांसें थम जाती थीं।

गुरु पूर्णिमा से पहले वृंदावन की जुलाई की भीषण गर्मी में, वह केवल एक सफेद धोती पहने हुए बाहर आया, और मेरे मन में केवल रामायण में हनुमान के वर्णन का ही ख्याल आ रहा था:

"एक ऐसा शरीर जो सोने के पहाड़ की तरह चमक रहा हो...।"

राम

मुझे हमेशा उम्मीद रहती थी कि वो कंबल में लिपटा होगा। एक दिन मैं कोने से कमरे में आई और देखा कि वो सिर्फ कमर और पैरों पर चादर ओढ़े हुए था। ये मेरे जीवन के सबसे चौंकाने वाले दृश्यों में से एक था, हालांकि ये डरावना नहीं था। पता नहीं क्यों। मैंने उसकी तस्वीरें देखी थीं, लेकिन उसके व्यक्तित्व की विशालता को देखने के लिए मैं तैयार नहीं थी।

एक बार मैंने उसे बाहर टकेट पर बैठे देखा, उसकी कमर के चारों ओर सिर्फ एक चादर लिपटी हुई थी। इस बार वह मुझे एक शिशु जैसा लगा। यह विशालकाय प्राणी, जो डायपर में लिपटा हुआ, एक प्यारे से नन्हे बच्चे जैसा दिख रहा था और खेल रहा था।

राम

मेरी मां और चाची चुपके से महाराजजी के कमरे में घुस गईं जब वे स्नान करने बाहर गए हुए थे। उन्होंने उनके कंबल को सहलाया और उसे अपने चेहरे पर लगाया। बाद में वे बस यही बात करती रहीं कि उसमें से बच्चे के कंबल जैसी खुशबू आ रही थी।

राम

कभी वह मोटा लगता था तो कभी पतला; कभी लंबा तो कभी छोटा; कभी भारी तो कभी हल्का। और उसके जोड़ सामान्य जोड़ों की तरह काम नहीं करते थे।

उसने न केवल अपने शरीर के साथ बेशर्मी से छेड़छाड़ की, जिस शरीर से हम परिचित थे, बल्कि जाहिर तौर पर उसने अपनी इच्छा से अन्य शरीरों को भी धारण कर लिया।

एक बार मैं रात में महाराजजी के साथ अकेला था। हम वृंदावन में थे। उन्होंने मुझसे कहा, "ठीक है, तुम मुझे सैर पर ले चलो।"

महाराजजी का शरीर इतना विशाल है, और मैंने कहा, "महाराजजी, मैं आपको सैर पर कैसे ले जा सकता हूँ?"

लेकिन उन्होंने ज़िद की। मैंने हथेली ऊपर करके अपना हाथ आगे बढ़ाया, और उन्होंने अपना पूरा वज़न मेरी हथेली पर डाल दिया। मैंने कहा, "महाराज जी, आप बहुत भारी हैं।"

उन्होंने कहा, "क्या ऐसा है? तो फिर मुझे कहीं रख दो।"

तो मैंने उसके लिए थोड़ी देर बैठने की जगह ढूंढी। फिर उसने कहा, "अब मुझे फिर से उठाओ।" और इस बार मैंने पाया कि वह बहुत हल्का था। एक शिशु से भी बहुत हल्का।

उस दिन से लेकर आज तक, मुझे हमेशा यह एहसास होता है कि वह मेरे साथ चल रहा है।

राम

अपने शुरुआती वर्षों में जब वह किसी गाँव में आते थे, तो अक्सर बच्चों के साथ खेलते थे और उन्हें अपने शरीर के अविश्वसनीय करतब दिखाते थे। उनका हर जोड़ ऐसा लगता था मानो आपस में जुड़ा ही न हो। मैं इस पर कभी विश्वास नहीं कर सकता था। हम बीस लोग वहाँ मौजूद थे, जब बच्चों का मनोरंजन करने के लिए उन्होंने अपने हाथों को बिना खोले ही अपनी भुजाओं को पीछे से आगे की ओर सिर के ऊपर उठा लिया।

राम

एक बार एक प्रसिद्ध अस्थि चिकित्सक महाराजजी से मिलने आए। महाराजजी ने उन्हें अपनी दाहिनी भुजा के दाहिने जोड़ की असामान्य गति दिखाई। चिकित्सक ने ध्यानपूर्वक उसकी जांच की, क्योंकि उन्होंने ऐसा पहले कभी नहीं देखा था। फिर उन्होंने कहा, "लगता है बचपन में आपका यह जोड़ टूट गया होगा और ठीक नहीं हुआ।"

“ओह,” महाराजजी ने प्रभावित होकर कहा। “अच्छा, तो इसके बारे में क्या?” और फिर उन्होंने दूसरे हाथ से भी वही किया।

राम

जब महाराजा जी के देह त्यागने के बाद उनकी मूर्ति बनवानी थी, तो वे मेरे पास आए और उनसे उनकी एक तस्वीर माँगी—मूर्ति के लिए सबसे अच्छी तस्वीर। मैंने उन्हें बताया कि मैं बाबा जी को कई वर्षों से जानता हूँ और मेरे पास उनकी सैकड़ों तस्वीरें हैं, जिनमें से कोई भी एक जैसी नहीं है। और बाबा जी स्वयं—कभी छोटे कद के, कभी बहुत मोटे, कभी काफी पतले। मैं

कभी यह नहीं जान पाया कि असली बाबा कौन थे। आप उन्हें कोई भी रूप दे सकते थे, लेकिन उन्हें कैद नहीं किया जा सकता था। वे हवा की तरह थे।

राम

एक श्रद्धालु की किशोरी बेटी कभी-कभी रात मंदिर में रुकती थी। वह अक्सर महाराजजी को देखती रहती थी और अंत में उसने उनसे कहा, “महाराजजी, दिन में जब चारों ओर लोग होते हैं तो आप बड़े असहाय और बूढ़े लगते हैं। लेकिन रात में, द्वार बंद होते ही आप इधर-उधर भागते फिरते हैं। ऐसा क्यों?” महाराजजी हँस पड़े।

राम

एक बार श्रीमती सोनी महाराजजी से मिलने गईं और उनकी तबीयत ठीक नहीं लग रही थी। उन्होंने कहा, "महाराजजी, आपकी तबीयत बिल्कुल भी ठीक नहीं लग रही है।"

“है ना माँ?” फिर उसने अपने शरीर को कुछ इस तरह हिलाया कि वह अचानक दमकता हुआ दिखने लगा। “अब मैं कैसा दिख रहा हूँ माँ?”

“आप अब काफी बेहतर दिख रहे हैं, महाराजजी।”

राम

एक परिवार अपने बूढ़े दादाजी के साथ मंदिर आया था। जब वे महाराजजी के सामने आए, तो उन्होंने दादाजी की ओर इशारा करते हुए कहा, “हम पहले मिल चुके हैं।” लेकिन दादाजी ने कहा कि उन्हें ऐसा नहीं लगता। उन्हें पूरा यकीन था कि वे कभी नहीं मिले थे, लेकिन महाराजजी अपनी बात पर अड़े रहे। आखिरकार महाराजजी ने एक पल के लिए अपनी आँखें बंद कीं और फिर कहा, “क्या तुम्हें याद नहीं? तुमने रेलवे स्टेशन पर मेरी चादर उठाई थी।”

पहले तो दादाजी को लगा कि महाराजजी ने उन्हें किसी और के लिए गलत समझ लिया है। लेकिन फिर उन्हें याद आया कि जब वे ग्यारह या बारह साल के थे, तब वे अपने कुछ सहपाठियों के साथ साइकिल यात्रा पर गए थे। उनकी साइकिल खराब हो गई थी और उनके साथी उन्हें छोड़कर आगे चले गए थे। उन्हें साइकिल ठीक करवाने के लिए कुछ रुपयों की ज़रूरत थी, लेकिन उनके पास पैसे नहीं थे, इसलिए वे रेलवे स्टेशन गए, यह सोचकर कि शायद वे कुली होने का नाटक करके किसी का सामान उठा लें।

समस्या यह थी कि वह बहुत छोटा था, इसलिए उसका थैला बहुत हल्का होना चाहिए था। वह प्रथम श्रेणी के डिब्बों के पास खड़ा था। अचानक एक आदमी ट्रेन से उतरा। उसने सूट, चमकीले जूते और टोपी पहन रखी थी। उसके पास कंबल का एक गट्ठा था, जिसे उसने लड़के को कस्बे के बाहरी इलाके में एक घर तक ले जाने का काम सौंपा। गट्ठा बहुत हल्का था, लेकिन जब वे वहाँ पहुँचे तो उस आदमी ने लड़के को पाँच रुपये दिए (काम की कीमत से कहीं ज़्यादा) और कहा कि अगर वह चाहे तो अगले दिन वापस आकर मिल सकता है। लेकिन लड़के ने पैसे लिए, अपनी साइकिल ठीक करवाई और अपने रास्ते चला गया। वह फिर कभी वापस नहीं लौटा।

राम

एक बार एक भिखारी लड़का हमारे होटल में आया। हमने उसे कुछ खाना दिया, लेकिन वह जाने को तैयार नहीं था। आखिरकार उसने एक खिलौना माँगा और हमने उसे बाहर निकाल

दिया। बाद में महाराजजी ने कहा, "मैं तुम्हारे होटल में आया था, लेकिन तुमने मुझे बाहर निकाल दिया।"

राम

दो बहनें थीं जो महाराजजी का बहुत आदर करती थीं। उनमें से एक शौचालय में गई और भावविभोर होकर बाहर आई और बोली, “मैंने अभी-अभी बाथरूम में महाराजजी के दर्शन किए!” यह घटना उस घर से बहुत दूर हुई जहाँ महाराजजी उस समय थे। दूसरी बहन तुरंत बाथरूम में गई और वहाँ उसने एक विशालकाय कोबरा देखा।

राम

एक बार जब सीएस महाराजजी को स्नान करा रहे थे, तब वे गोरखनाथ के बारे में सोच रहे थे, जिनका कोई वास्तविक शरीर नहीं था, फिर भी वे विभिन्न शरीर धारण करते थे। सीएस महाराजजी को साबुन लगाकर नहलाते हुए उनसे मजाक भी कर रहे थे, लेकिन यह सब उनके मन में चल रहा था। जब वे महाराजजी को धोती बांधने गए, तो उन्होंने महसूस किया कि धोती में कुछ भी नहीं है। और जैसे ही उनके मन में यह विचार आया, महाराजजी मुड़े और उन पर चिल्लाए, “निकल जाओ, निकल जाओ, मैं अपनी धोती खुद बांध लूंगा।”

महाराजजी द्वारा अपनाई जाने वाली असाधारण मुद्राएँ उनके अन्य कार्यों की तरह ही आकस्मिक नहीं थीं। उनके कुछ पुराने भक्त महाराजजी की शारीरिक भाषा को समझने में काफी निपुण हो गए थे, क्योंकि इनमें से कई मुद्राएँ वास्तव में आशीर्वाद देने वाली, विशिष्ट शक्तियों को सक्रिय करने वाली या वातावरण में विशिष्ट परिवर्तन लाने वाली थीं।

सिद्धि मां के हाथ में महाराजजी की एक तस्वीर थी जिसमें वे एक तरफ करवट लेकर लेटे हुए थे, एक हाथ सिर के ऊपर रखा हुआ था। उन्होंने बताया कि सिर के ऊपर हाथ रखने की इस मुद्रा का अर्थ है: “चिंता मत करो। सब कुछ मेरे नियंत्रण में है।”

कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता था कि उनके भक्त दो अलग-अलग स्थानों से उन्हें अपनी ओर खींच रहे हैं। ऐसे समय में, किसी को निराश न करने के लिए, महाराजजी अपनी एक विलक्षण प्रतिभा का प्रदर्शन करते थे—एक ही समय में दो स्थानों पर प्रकट होना।

एक बार महाराजजी अपनी दाढ़ी मुंडवाने के लिए नाई के पास गए। जब नाई दाढ़ी बना रहा था, उसने महाराजजी को बताया कि उसका बेटा कुछ समय पहले घर से भाग गया है और उसे नहीं पता कि वह कहाँ है। वह उसे बहुत याद कर रहा है और उसके बारे में चिंतित है। महाराजजी का चेहरा आधा ही मुंडा था, बाकी आधे पर अभी भी साबुन लगा हुआ था, लेकिन महाराजजी ने ज़िद की कि उन्हें अभी बाहर जाकर पेशाब करना है। थोड़ी देर बाद वे वापस आए, दाढ़ी पूरी हो चुकी थी और महाराजजी चले गए। अगले दिन, नाई का बेटा अपने पिता के पास एक अजीब कहानी लेकर लौटा। वह सौ मील से भी ज़्यादा दूर एक कस्बे में रह रहा था, और एक दिन पहले, एक मोटा आदमी, जिसकी दाढ़ी आधी ही मुंडी हुई थी, उसके होटल में दौड़ता हुआ आया जहाँ वह काम करता था। उसने उसे पैसे दिए और ज़िद की कि वह उसी रात ट्रेन से तुरंत अपने पिता के पास लौट जाए।

राम

एक भक्त के घर में ठहरते समय महाराजजी ने कमरे में बंद रहने का अनुरोध किया।

खिड़कियों पर लोहे की सलाखें लगी थीं और दरवाजा बाहर से बंद था। (भारतीय घरों में अक्सर जंगली बंदरों को अंदर आने से रोकने के लिए खिड़कियों पर भारी लोहे की सलाखें लगी होती हैं। साथ ही, दरवाजे के अंदर और बाहर दोनों तरफ अलग-अलग स्लाइड बोल्ट लगे होते हैं। इसलिए, अगर दरवाजा बाहर से बंद है, तो उसे अंदर से खोला नहीं जा सकता।) कुछ देर बाद एक भक्त आया और पूछा कि महाराजजी कहाँ जा रहे हैं। मेजबान ने कहा, “क्या? वे कमरे में बंद हैं।”

“यह असंभव है। मैंने अभी-अभी उसे एक रिक्शा पर बैठकर दूसरे इलाके की ओर जाते देखा।”

उस समय मेरी बहन के दरवाजे पर महाराजजी आए। उन्होंने कहा, “मुझे खिचड़ी चाहिए। मेरी तबीयत ठीक नहीं है, इसलिए मैं सिर्फ खिचड़ी ही खाऊंगा।”

इसी बीच, मेज़बान के घर पर उन्होंने दरवाज़ा खोला तो कमरा खाली मिला, लेकिन किसी भी तरह की छेड़छाड़ नहीं हुई थी, इसलिए उन्होंने कमरे को दोबारा बंद कर दिया। लगभग एक घंटे बाद, उन्हें कमरे के अंदर से कुछ आवाज़ें सुनाई दीं। उन्होंने दरवाज़ा खोला और इस बार अंदर महाराजजी को पाया।

राम

महाराजजी सुबह 3:00 बजे एक बूढ़ी औरत के बंद घर में उसके कमरे में प्रकट हुए और बोले, "माँ, आप मुझे क्यों परेशान कर रही हैं?" उस समय वह औरत उनसे प्रार्थना कर रही थी।

राम

कानपुर के पास पंकी में महाराजजी के लिए एक नए हनुमान मंदिर का निर्माण भक्तों द्वारा अभी-अभी पूरा किया गया था और आधिकारिक उद्घाटन समारोह का समय निकट था। महाराजजी इलाहाबाद में ठहरे हुए थे और उन्होंने सबको बता दिया था कि वे स्वयं समारोह में शामिल नहीं होंगे। मंदिर के उद्घाटन की सुबह, महाराजजी इलाहाबाद स्थित अपने कमरे में गए और कुछ घंटों के लिए अकेले रहने का अनुरोध किया। उन्हें बाहर से बंद कर दिया गया। अगले दिन कुछ भक्त पंकी में हुई पूजा का प्रसाद बाँटने के लिए इलाहाबाद पहुँचे। उन्होंने महाराजजी के मेज़बान को भी प्रसाद दिया और रंगारंग पूजा एवं भंडारे का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि सब कुछ सुचारू रूप से संपन्न हुआ; महाराजजी स्वयं भी आए, जबकि उन्होंने पहले ही सबको बता दिया था कि वे नहीं आएँगे।

“यह असंभव है!” मेजबान ने कहा। “महाराज जी पूरे समय इलाहाबाद में ही थे।”

“हाँ, वह भी पंकी में ही था। वह सुबह ग्यारह बजे से बारह बजे तक मंदिर में था,” उन्होंने जवाब दिया।

यदि आपकी कुंडलिनी (रीढ़ की हड्डी की ऊर्जा) जागृत हो जाती है, तो आप बिना विमान के अमेरिका जा सकते हैं।

कानपुर की यात्रा के दौरान, नैनीताल के एक भक्त को महाराजजी के दर्शन हुए। जाते समय, महाराजजी ने उन्हें नैनीताल लौटने पर मंदिर में देने के लिए एक संदेश दिया। संदेश यह था कि महाराजजी दो सप्ताह के भीतर वहाँ पहुँच जाएँगे। अगले दिन जब वह नैनीताल पहुँचे, तो भक्त घर जाने से पहले सीधे मंदिर गए। उन्हें आश्चर्य हुआ कि महाराजजी के अनुपस्थित रहने पर

इतने सारे लोग मंदिर क्यों आए हैं। उन्होंने लोगों को यह कहते हुए सुना कि महाराजजी किसी एक कमरे में हैं।

उन्होंने कहा, "मुझे विश्वास नहीं हो रहा। मैंने उन्हें कल ही कानपुर में देखा था। यह असंभव है।"

“नहीं, बाबा यहाँ पंद्रह दिनों से हैं,” उन्होंने उससे कहा।

“लेकिन मैं कानपुर से उनका संदेश लेकर आया हूँ। उन्होंने कहा है कि वे दो सप्ताह तक यहाँ नहीं रहेंगे।” भक्त महाराजजी के कमरे के पास पहुँचा। “बाबाजी जी, यह क्या बात है?” उसने पूछा।

“हप! निकल जाओ! चले जाओ! किसी को कुछ मत बताना। तुम झूठ बोल रहे हो!” महाराजजी उस पर चिल्लाए।

राम

महाराजजी का एक भक्त आगरा में रहता था और उसे कुछ वर्षों से महाराजजी के दर्शन नहीं हुए थे। जब उसे पता चला कि महाराजजी नई दिल्ली आए हैं, तो उसने फोन पर महाराजजी से बात की।

“आप आगरा क्यों नहीं आए? आपने मुझे इतने लंबे समय से दर्शन नहीं दिए। क्या मैं दिल्ली आ सकता हूँ?”

महाराजजी ने उत्तर दिया, “नहीं। यहाँ मत आइए। मैं आगरा आऊंगा।”

"कब?"

"जल्द ही।"

वह व्यक्ति महाराजजी की बात नहीं मान सका, इसलिए उसने दिल्ली जाने की अनुमति मांगी, लेकिन महाराजजी ने जोर देकर कहा कि वे आगरा में ही उस व्यक्ति से मिलेंगे। भक्त ने फोन रख दिया और जैसे ही वह दरवाजे की ओर मुड़ा, उसने महाराजजी को वहाँ खड़ा देखा। भक्त महाराजजी के चरणों में गिर पड़ा। महाराजजी ने उससे तीन-चार मिनट बात की और फिर दिल्ली लौटने के लिए निकल गए। उस व्यक्ति ने फिर दिल्ली में मेजबानों को फोन किया और उन्होंने बताया कि महाराजजी कुछ मिनट पहले ही बाथरूम गए थे। फिर तुरंत बाद उन्होंने कहा, "ओह, वे अब यहाँ हैं।"

राम

एक बार नीब करोरी में एक व्यक्ति महाराजजी के साथ वृंदावन जाना चाहता था, लेकिन महाराजजी जाना नहीं चाहते थे। महाराजजी ने कहा, “मुझे इस कमरे में बंद कर दो। मुझे काम करना है।” जब वह व्यक्ति वृंदावन से लौटा, तो उसने बताया कि उसने और महाराजजी ने साथ में बहुत अच्छा समय बिताया। लेकिन जब कमरा खोला गया, तो महाराजजी अभी भी अंदर ही थे।

राम

एक बार महाराजजी की सेवा में आया एक भक्त सोच रहा था कि महाराजजी एक ही समय में एक से अधिक स्थानों पर कैसे हो सकते हैं। महाराजजी ने उससे तीन बार कहा, "तुम बाहर जाओ और देखो कि दूसरे कमरों में क्या हो रहा है।" अंत में वह भक्त हॉल में गया। घर में छह

कमरे थे और उसने देखा कि महाराजजी उन सभी कमरों से बाहर आ रहे थे।

राम

एक भक्त को व्यापार के सिलसिले में मैदानी इलाके में जाने के लिए नैनीताल के हनुमान मंदिर से जाना पड़ा, जहाँ महाराजजी ठहरे हुए थे। जाते समय वह उदास था, यह सोचकर कि जब वह लौटेगा तो महाराजजी शायद मंदिर में न हों और उससे दोबारा मिलने में लंबा समय लग जाए। वह एक ट्रेन में था जो एक छोटे से स्टेशन पर पानी भरने के लिए रुकी थी। तभी कोई उसके पास आया और बोला, “वहाँ देखो। वहाँ नीम करोली बाबा हैं।” भक्त ने सोचा, “यह तो अजीब बात है। मैंने उन्हें नैनीताल में ही छोड़ दिया था।” वह प्लेटफार्म के दूसरे छोर पर गया और वहाँ महाराजजी को भक्तों से घिरे हुए, हमेशा की तरह बैठे हुए पाया। उस व्यक्ति ने महाराजजी और अन्य भक्तों से भी बातचीत की, और थोड़ी देर बाद महाराजजी ने कहा, “अपनी ट्रेन में वापस जाओ। नहीं तो तुम पीछे छूट जाओगे। ट्रेन चलने वाली है।”

अपना काम खत्म करने के बाद, भक्त नैनीताल लौट आया और उसने देखा कि महाराजजी अभी भी वहीं हैं। महाराजजी पूरे समय मंदिर से बाहर नहीं गए थे।

राम

मेरी माताजी ने एक बार महाराजजी को एक ही समय में दो स्थानों पर देखा। वह भूमियाधर में उनकी ओर चल रही थीं, तभी अचानक उन्हें एक और महाराजजी दिखाई दिए, जो पहले वाले के समान ही थे। एक सड़क किनारे बैठे थे, दूसरे जंगल में। कुछ क्षण बाद, एक रूप लुप्त हो गया, और उन्होंने महाराजजी के "शेष" रूप से बात की।

राम

14 जनवरी 1965 को दादा और दीदी के घर के दर्शन कक्ष की अलमारी में दीवार पर कुछ पदचिह्न दिखाई दिए, जिन्हें वे महाराजजी के पदचिह्न मानते हैं और हर साल भंडारा मनाकर इसका जश्न मनाते हैं। जब उन्होंने महाराजजी से पदचिह्नों के बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा, "मैं आया था, लेकिन दीदी ने मुझे देख लिया।"

राम

एक बार महाराजजी विश्राम कर रहे थे, और कमरे में बैठी माताओं को ऐसा लगा जैसे महाराजजी वहां नहीं हैं। जब उन्होंने उनकी ऊर्जा वापस आते हुए महसूस की, तो उन्होंने उनसे पूछा कि वे कहां गए थे। वे हँसे, और जब उन्होंने कहा कि वे बिना विमान के भी अमेरिका जा सकते हैं, तो उन्होंने उन्हें फटकारा और फिर हँसे।

राम

एक बार मैं अमेरिका में नोबेल पुरस्कार विजेता भौतिक विज्ञानी के साथ दोपहर का भोजन कर रहा था। उन्होंने मुझसे महाराजजी के बारे में पूछा और मैंने उन्हें कई कहानियां सुनाईं। उन्हें सब कुछ बहुत रोचक लगा और उन्होंने हर बात में सच्चाई को स्वीकार किया, जब तक कि मैं महाराजजी के एक ही समय में दो स्थानों पर प्रकट होने की कहानी पर नहीं पहुंचा। इस पर भौतिक विज्ञानी ने कहा, "यह असंभव है। भौतिकी का मूल सिद्धांत यह है कि कोई भी वस्तु एक ही समय में दो स्थानों पर नहीं हो सकती।"

“लेकिन आप देखिए,” मैंने कहा, “महाराज जी ने फिर भी ऐसा किया।” (आर.डी.)

महाराजजी ने स्वयं अपने शरीर की गतिविधियों के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है। हालांकि, यह कहानी एक अन्य वास्तविकता की ओर इशारा करती है जिसमें, कम से कम महाराजजी के लिए, यह पूरी तरह से तर्कसंगत था।

एक बार जब हम पहाड़ों में थे और कड़ाके की ठंड पड़ रही थी, तब महाराजजी ने नौ स्वेटर पहन लिए। बाद में, सोने के समय उन्होंने कहा, “आप लोग सोचते हैं कि मैं ये सब सांसारिक कारणों से करता हूँ। ऐसी मूर्खता मत करो,” और उन्होंने सारे स्वेटर और कंबल उतार दिए और पूरी रात बिना कपड़ों के सोए रहे।

एक बार जब आप महाराजजी द्वारा अपने शरीर के माध्यम से प्रकट की गई इन घटनाओं को स्वीकार कर लेते हैं, तो उन्हें एक साधारण मनुष्य के रूप में देखना कठिन हो जाता है। लेकिन उन्होंने हमें यही विश्वास दिलाने के लिए भरपूर प्रयास किया। उन्होंने कुछ घमंड, बीमारी, बुढ़ापा (हालांकि नीचे दी गई कहानियों में इस बारे में कुछ भ्रम है) और अंततः मृत्यु का प्रदर्शन किया। लेकिन भक्तों के लिए, यह सब उनके खेल का ही एक हिस्सा था।

एक बार जब महाराजजी हमसे मिलने आए, तो उन्होंने अपनी एक तस्वीर देखी जिसमें वे हंस रहे थे और उनकी दाढ़ी काफी लंबी थी। वे मुझे कोसने लगे और पूछने लगे कि मैंने उन्हें उनकी इतनी बढ़ी हुई दाढ़ी के बारे में क्यों नहीं बताया। मैंने उनसे दाढ़ी क्यों नहीं कटवाई? उन्होंने कहा, "अब तो इसने पूरी तस्वीर ही खराब कर दी है!"

राम

कैंची में एक शाम के दर्शन के दौरान, महाराजजी पीछे माताजी के साथ बैठे थे, जिन्होंने अभी-अभी उनकी पूजा पूरी की थी। वे बाहर आए और टके पर बैठ गए। वे एकदम परिपूर्ण लग रहे थे: अत्यंत सुंदर, राजसी व्यक्तित्व। उन्होंने अभी-अभी दाढ़ी बनवाई थी और उनके माथे पर एकदम बीचोंबीच गोल पीला तिलक (धार्मिक महत्व का चिन्ह) लगा हुआ था। वे एक राजा की तरह बैठे और हम उनके सामने काफी देर तक मौन बैठे रहे। ऐसा लग रहा था मानो वे कह रहे हों, "मैं कितना सुंदर हूँ!"

राम

बॉम्बे में एक लिफ्ट में महाराजजी ने दर्पण में खुद को देखा और अपनी मूंछों को संवारा।

राम

कैंची पहुँचने के लगभग दो सप्ताह बाद, महाराजजी ने कहा, “डॉक्टर साहब, मुझे सिरदर्द हो रहा है।” तो मैं दौड़कर अपने चिकित्सा सामग्री वाले कमरों में गया और कोडीन युक्त एस्पिरिन निकाली। मैं सोच रहा था, “क्या सच में मुझे इस आदमी को कोडीन देनी चाहिए?” आखिर वह एक बुजुर्ग थे, और मुझे नहीं पता था कि उनकी क्या प्रतिक्रिया होगी। जब मैं अपनी शीशियों में दवा ढूंढ रहा था, तभी महाराजजी ने मुझे संदेश भेजा कि उन्हें गोली नहीं चाहिए; उन्हें मरहम चाहिए। उस समय मुझे मरहमों का ज्यादा शौक नहीं था, और मेरे पास सिर्फ गोलियां ही थीं, इसलिए मुझे उन्हें बताना पड़ा कि मेरे पास कोई मरहम नहीं है।

चैतन्य ने मेरी मदद की, और वे एसेंशियल बाम लेकर आए, जो एक चीनी मरहम था और एक छोटे, कसकर बंद लाल डिब्बे में आता था। मुझे बहुत खुशी हुई कि एक पश्चिमी डॉक्टर ने सिरदर्द से पीड़ित इस बेचारे बूढ़े के लिए मरहम का इंतजाम कर दिया। मैं महाराजजी के पास

वापस भागा, उनके सामने बैठे भक्तों से टकराता हुआ, उनके पास पहुंचा और उन्हें वह छोटा डिब्बा थमा दिया। उन्होंने कहा, “अरे डॉक्टर! आपकी दवा तो कमाल है! यह तो अद्भुत है! मुझे बिल्कुल यही दवा चाहिए थी!” उन्होंने उसे देखा और खोलने की कोशिश की, लेकिन नाकाम रहे। (उनमें इस तरह की चीजों के लिए ज्यादा सब्र नहीं था।)

फिर, बंद डिब्बा अपने सिर पर रखते हुए उसने कहा, “डॉक्टर साहब! यह दवा बहुत अच्छी है। कमाल की है। इसने मेरा सिरदर्द पूरी तरह से दूर कर दिया। ओह, डॉक्टर साहब, आप तो बहुत ही बढ़िया डॉक्टर हैं! आप बहुत अच्छे हैं। आपकी दवा कमाल की है। सब कुछ एकदम सही है। मेरा सिरदर्द पूरी तरह से गायब हो गया है।”

राम

एक दिन महाराजजी ने शिकायत की कि उन्हें सर्दी लग गई है और उन्हें मोज़े और दवा की ज़रूरत है। के.के. हँसते हुए बोले, “अरे महाराजजी, आपको कुछ भी नहीं हुआ है। आप हम जैसे सीधे-सादे लोगों को बेवकूफ़ क्यों बनाते हैं?” बच्चे की तरह महाराजजी हँस पड़े, मानो किसी चाल में पकड़े गए हों, और जल्द ही वे ठीक हो गए।

राम

वृंदावन में महाराजजी बहुत बीमार थे। उन्हें कई बार दिल का दौरा पड़ चुका था, इसलिए वे दो साल से दिल की दवा ले रहे थे। कभी-कभी बीमार होने पर वे मुझे बुलाते थे, और एक दिन जब हम अंदर गए तो देखा कि वे अपनी तकिया पर बैठे हैं। तकिया पर उनके सामने एक बहुत बड़ा रुमाल रखा था, जिससे वे बार-बार अपनी नाक पोंछ रहे थे। वे एक ऐसे व्यक्ति का हास्यास्पद रूप थे जिसे ज़ुकाम हो गया हो।

उन्होंने कहा, “ओह, डॉक्टर साहब! मैं बहुत बीमार हूँ। क्या आप मुझे कुछ दवा देंगे?” मैंने कहा, “जी महाराज जी,” और मैंने उनसे उनके लक्षणों के बारे में पूछा। मुझे लगा कि उन्हें सर्दी-ज़ुकाम है, इसलिए मैं बाजार गया और तीन अलग-अलग पैकेटों में होम्योपैथिक दवा, आयुर्वेदिक दवा और पश्चिमी दवा लेकर आया। मैंने महाराज जी को एक-एक करके दवा दिखाई: “ये रही होम्योपैथिक दवा। ये रही आयुर्वेदिक दवा। और ये रही पश्चिमी दवा।” (बाद वाली दवा में विटामिन सी, एस्पिरिन और दृष्टन शामिल थे।)

उसने होम्योपैथिक और आयुर्वेदिक दवाइयों को एक तरफ फेंक दिया और कहा, "मुझे यही दवा चाहिए।" और उसने विटामिन सी, एस्पिरिन और दृष्टन को झटपट खा लिया।

वह अक्सर मुझसे कहते थे, "जानते हो, पश्चिमी चिकित्सा बहुत अच्छी है।" और वह मुझे डॉक्टर अमेरिका कहकर बुलाते थे।

राम

एक डॉक्टर, जो कम से कम पच्चीस साल पहले महाराजजी से मिल चुके थे, बाबा से मिलने आए। पंद्रह मिनट बाद महाराजजी ने कहा, “डॉक्टर साहब, मुझे दर्द हो रहा है। क्या आप मेरे पैर की मालिश करेंगे?” डॉक्टर ने तेल लगाकर मालिश शुरू की और फिर कहा, “मैंने कई बूढ़े लोगों को देखा है, वे अकड़ जाते हैं, लेकिन आपकी नसों में कोई बदलाव नहीं आया है। वास्तव में, आपका शरीर 1942 में जब मैं आपसे मिला था, उससे भी ज़्यादा जवान लगता है।”

महाराजजी ने कहा, “जाओ! ये डॉक्टर मूर्ख हैं। आखिर जन्म तो होता है, मरना भी होता है।

एक संत ने इन्हें नसों के बारे में बताया था। इन्हें नसों के बारे में क्या पता?” और महाराजजी ने डॉक्टर को वापस भेज दिया।

राम

एक बार एक महिला ने महाराजजी से कहा, “मेरे रिश्तेदार की शादी नजदीक आ रही है। महाराजजी, आपको अवश्य आना होगा।”

महाराजजी ने कहा, “मैं जाऊँगा,” और वे गए भी—लेकिन अपने सामान्य रूप में नहीं। उन्होंने शादी में उससे कहा कि उन्हें बहुत भूख लगी है, और जब उसने पूछा कि वे क्या खाना चाहेंगे, तो उन्होंने जवाब दिया, “खीर, खीर, और कुछ नहीं। खीर लाओ।” वह खीर ले आई और जब वह और खीर लाने गई, तो वे गायब हो गए। कुछ समय बाद, जब वह फिर से महाराजजी से मिली, तो उसने शादी में न आने के लिए उन्हें फटकारा।

वह चिल्लाया, “नहीं, नहीं! तुमने मुझे खुद खीर खिलाई थी। लेकिन तुमने मुझे दूसरी बार खीर नहीं दी, इसलिए मैं भाग गया। मैंने तुम्हें वहीं पकड़ लिया था!”

> महान साधुओं का कोई मानव शरीर नहीं होता। वे सर्वव्यापी हैं। यदि कोई संत रूप परिवर्तन करते हैं, तो यह आवश्यक नहीं कि वे मानव शरीर धारण करें। आत्मा सूक्ष्म रूप है और मानव शरीर विशाल रूप है।

नीब करोरी में, एक माँ उस भूमिगत गुफा की सफाई करने आई, जिसमें महाराजजी उन दिनों एकांत में काफी समय बिताते थे। जैसे ही वह अंदर आईं, महाराजजी वहाँ साँपों से लिपटे बैठे थे। उन्होंने कहा कि अगर साँप यहाँ हैं तो वह अंदर नहीं आएंगी, और वह गुफा से बाहर भाग गईं। महाराजजी ने उन्हें चिंता न करने के लिए कहा, और जैसे ही वह उठे, साँप उनके शरीर में समा गए।

राम

एक बार जब हम आधी रात को जंगल में थे, तो मैंने उससे कहा, "मुझे भगवान का दर्शन कराओ।"

उसने कहा, "बस मेरा पेट सहलाओ।" मैं थक गई क्योंकि वह लगातार बढ़ता ही जा रहा था, यहाँ तक कि पहाड़ जैसा लगने लगा। वह खर्राटे ले रहा था और उसकी खर्राटे की आवाज़ किसी बाघ जैसी थी। यह तो बस खेल था, लेकिन अगर आप उसकी परीक्षा ले रहे होते तो वह आपको कुछ भी नहीं दिखाता।

राम

कभी-कभी जब महाराजजी तकिये पर लेटते थे तो वह बहुत छोटा लगता था; कभी-कभी वे परछाईं की तरह या कंबल के नीचे एक बहुत छोटे बच्चे की तरह लगते थे।

राम

जब आप उसके साथ चलते थे तो वह कभी विशालकाय लगता था और कभी छोटा।

राम

भूमियाधर में इमारतें बनने से पहले, वहाँ बस एक छोटा सा शौचालय था। एक बार

महाराजजी को शौच करने की ज़रूरत पड़ी, तो सिद्धि माँ पास के एक घर से लोटे में पानी लेकर बाहर इंतज़ार करने लगीं। जब महाराजजी बाहर आए, तो उन्होंने उनका विशाल शरीर देखा और उनके सामने खुद को एक मक्खी के बराबर समझा।

राम

एक बार एक भक्त ने मुझे बताया कि महाराजजी वृंदावन में हनुमान मूर्ति के सामने खड़े होते ही अत्यंत छोटे हो जाते हैं। स्वाभाविक रूप से, मेरी भी इस घटना को देखने की इच्छा हुई, लेकिन मैंने किसी को इसके बारे में नहीं बताया। एक दिन, दोपहर के भोजन के ठीक बाद, जब महाराजजी आमतौर पर अपने कमरे में विश्राम करते थे, मैं मूर्ति के सामने अकेला खड़ा था। मुझे अत्यंत प्रसन्नता हुई जब महाराजजी हनुमान के दर्शन के लिए मंदिर पहुंचे। हम दोनों रेलिंग से टिके हुए थे और उन्होंने अपनी तीव्र दृष्टि से मेरा ध्यान आकर्षित किया। जैसे-जैसे मैं उन्हें देखता गया, वे छोटे होते गए—प्रत्येक रूप के लुप्त होने के साथ ही एक छोटा रूप प्रकट होता गया। यह अत्यंत अलौकिक प्रतीत हुआ।

राम

महाराजजी ने एक बार कहा था, "मैं अमेरिका आ रहा हूँ।"

पश्चिमी लोगों ने पूछा, "क्या हमारे दिलों में?"

“नहीं,” उसने उत्तर दिया, “एक शरीर के रूप में। क्या आप मुझे अमेरिका ले जाएंगे? मैं कहाँ रहूँगा?”

एक बार जब महाराजजी मेरे घर से जा रहे थे, तो मुझे डर लगा कि कहीं वे गिर न जाएँ (वे बूढ़े थे), इसलिए मैंने उनका हाथ पकड़ लिया। उन्होंने मेरा हाथ इतनी ज़ोर से दबाया (फिर भी ज़रा भी थकान नहीं दिखाई) कि मैं गिरने ही वाला था। तब मुझे एहसास हुआ कि वे "बूढ़े" नहीं थे।

राम

1962 में एक वृद्ध महिला महाराजजी के दर्शन के लिए आई। उन्हें देखकर वह आश्चर्यचकित होकर बोली, “नीम करोली बाबा कैसे जीवित हो सकते हैं? उनका तो बहुत पहले निधन हो गया होगा! मेरे पिता नीम करोली बाबा के भक्त थे, और उन्होंने बताया कि वे बाबा को चालीस वर्षों से जानते थे। मैं अब तिहत्तर वर्ष की हूँ; मैंने बाबा को आखिरी बार सात वर्ष की आयु में देखा था और तब वे बिल्कुल वैसे ही दिखते थे जैसे अब दिखते हैं।” महाराजजी ने उन्हें फटकारा और उसके बाद दूसरों को उनसे बात नहीं करने दी।

राम

महाराजजी ने एक बार कहा था, “मैं यहाँ उस फकीर को देखने आता था जो घोड़े पर सवार होता था, उस गोरशिन बाबा को।” (गोरशिन बाबा लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व रहते थे।)

राम

एक बार लखनऊ में एक अस्सी वर्षीय मुस्लिम व्यक्ति आया, जिसने कहा कि वह महाराजजी को तब से जानता है जब वह स्वयं दस या पंद्रह वर्ष का था। महाराजजी ने कहा, "उसकी बात पर विश्वास मत करो!" एक अन्य अस्सी वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति ने कहा कि वह महाराजजी को लगभग सत्तर वर्ष पहले से जानता था, जब वह बीस वर्ष का था, और

महाराजजी ने उसे अपना पहला काम करने के लिए आशीर्वाद दिया था।

एक बार कई लोग एक ऐसे संत के बारे में चर्चा कर रहे थे जो लगभग पाँच सौ साल पहले रहते थे। महाराजजी ने कहा, "ओह, मैं उन्हें जानता था।"

1961 में महाराजजी अपने कुछ भक्तों के साथ चित्रकूट की तीर्थयात्रा पर गए। वहाँ वे एक नदी के किनारे खड़े होकर उस पार गोपाल नाम के एक चरवाहे को पुकारते रहे। बार-बार उनका नाम पुकारा जाता रहा। ऐसे किसी व्यक्ति के बारे में किसी को जानकारी नहीं थी, लेकिन महाराजजी ने बताया कि गोपाल उनका मित्र था जो उनके लिए कई चीजें लाया करता था। काफी पूछताछ के बाद पता चला कि चार पीढ़ियों पहले भी ऐसा ही एक व्यक्ति था जो उस गुरु का भक्त था। अंततः गोपाल के पोते का पता चला, जो काफी वृद्ध थे।

एक बुजुर्ग महिला, जो इतने वर्षों बाद भी महाराजजी को अपरिवर्तित देखकर भ्रमित थी, उससे उन्होंने कहा, "माँ, मैं मर गया था। मेरा पहाड़ों में पुनर्जन्म हुआ है।"

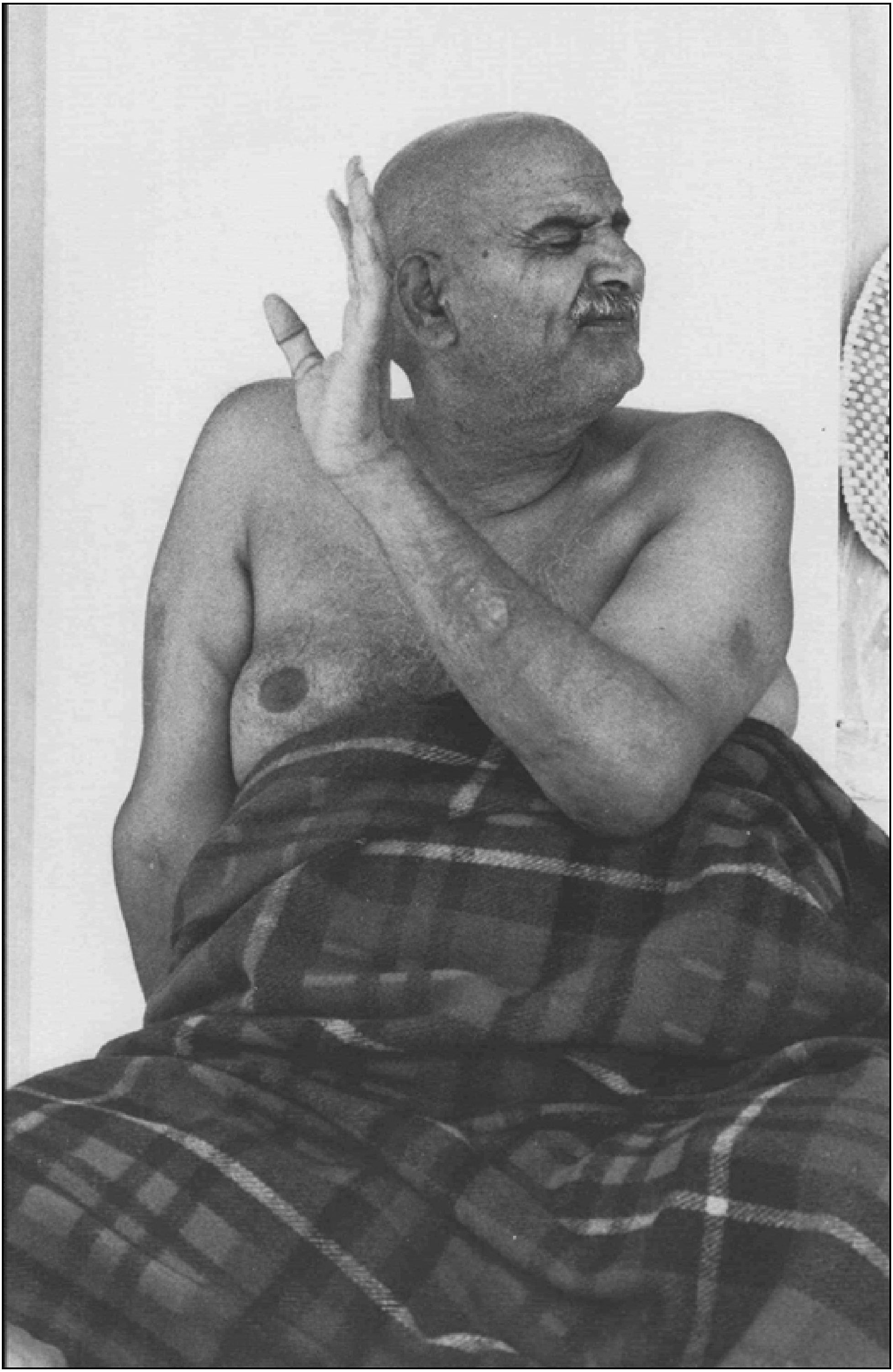

महाराजजी की शिक्षाएँ: आसक्ति के बारे में

महाराजजी ने कोई औपचारिक शिक्षा नहीं दी। फिर भी उनका हर रूप—हर शब्द, हर दृष्टि, हर हावभाव, हर गतिविधि—हममें से उन लोगों को सिखाता था जो उनके प्रति खुले मन से ग्रहणशील थे, और यह ज्ञान अक्सर हमारी बुद्धि से परे जाकर सीधे हमारे हृदय तक पहुँचता था।

महाराजजी अपने भक्तों से बातचीत के दौरान अनेक विषयों पर चर्चा करते थे: सत्य; धन और दरिद्रता; क्रोध; नशा; कामुकता, परिवार और विवाह; तीर्थयात्रा, अनुष्ठान, संत और साधना; सेवा और समर्पण; और, निश्चित रूप से, प्रेम। महाराजजी की असीमता में हमें इन सभी विषयों पर संदेश मिले—ऐसे संदेश जो हमें, भले ही हमेशा भ्रम से मुक्त न हों, ईश्वर की ओर अपने घर लौटने की यात्रा में मार्गदर्शन करते हैं।

महाराजजी, अपने दर्पण स्वरूप में, पल-पल अपने आस-पास के लोगों और उनकी अनूठी कर्मिक परिस्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया देते थे। इसलिए, जो व्यक्ति उनके कथनों और उनके बारे में प्रचलित कहानियों के संग्रह के माध्यम से किसी विषय पर सामान्य शिक्षा प्राप्त करना चाहेगा, वह निश्चित रूप से भ्रमित हो जाएगा। एक क्षण वे कुछ कहते और अगले ही क्षण उसका ठीक उल्टा कहते।

लेकिन हर व्यक्ति जीवन यात्रा के अलग-अलग पड़ाव पर था और इसलिए उसे अलग-अलग शिक्षा की आवश्यकता थी। और उनसे बहने वाली इस विरोधाभास की नदी में, इन शिक्षाओं में जो वास्तव में शिक्षाएँ नहीं हैं, सरल "यह करो" और "वह करो" से कहीं अधिक गहन मार्गदर्शन निहित है। इसमें आत्मा के अस्तित्व का निरंतर स्मरण है, और यह कि इस संसार में जो कुछ हमें दिखाई देता है वह वैसा नहीं है जैसा दिखता है।

ऐसे प्राणी को देखना, सुनना, यहाँ तक कि उसके बारे में जानना भी, जो "संसार में रहते हुए भी संसार का नहीं है", शिक्षा से कहीं बढ़कर है; यह अनुग्रह है।

महाराजजी कुछ ही लोगों से भरे एक कमरे में प्रवचन दे रहे थे, और उनमें से एक व्यक्ति को उनकी बातें निरर्थक लग रही थीं। उसने कहा, “बाबाजी, आपको लोगों को उपदेश और शिक्षा देनी चाहिए।” महाराजजी ने कोई उत्तर नहीं दिया। “कभी-कभी,” उस व्यक्ति ने आगे कहा, “हमें उत्तर दीजिए और कुछ सिखाइए।” महाराजजी ने फिर भी कोई उत्तर नहीं दिया। उस व्यक्ति ने अपनी बात तीसरी बार दोहराई।

स्पष्ट रूप से चिढ़कर महाराजजी चिल्लाए, “क्या निर्देश हैं? ये क्या है? क्या सबक हैं? ये सब मूर्खता है! सबक!” वहाँ खड़े लोगों की ओर मुड़ते हुए—एक सुनार था, एक दुकानदार, एक क्लर्क और एक शिक्षक—महाराजजी ने प्रत्येक से पूछा कि वे अगला दिन कैसे बिताएंगे। प्रत्येक व्यक्ति ने एक जैसा उत्तर दिया, कि वे हमेशा की तरह काम पर जाएंगे, अपना दिन अपनी आदत के अनुसार बिताएंगे। महाराजजी ने कहा, “यहाँ इतने सारे लोग हैं और ये सब कल वही करेंगे जो उन्हें करना है, और उन्होंने पहले से ही योजना बना रखी है। किसी विशेष शिक्षा देने का क्या फायदा? तुम वही करोगे जो तुम चाहते हो। तो फिर शिक्षाएँ क्या हैं? किसी पर कुछ भी थोपने का कोई फायदा नहीं। मैं चाहे कुछ भी कहूँ, तुम वही करोगे जो तुम चाहते हो। फिर भी तुम चाहते हो कि मैं तुम्हें कुछ बताऊँ। इन शिक्षाओं का कोई अर्थ नहीं है। लोगों को सिखाने का कोई

फायदा नहीं। सर्वशक्तिमान ही सबको सिखाते हैं—वे सब पहले से ही अच्छी तरह से सीखे हुए आते हैं। एक ही परम गुरु हैं और उन्होंने सबको सिखाया है। शिक्षाएँ कुछ भी नहीं हैं। जो व्यक्ति स्वयं को गुरु कहता है, वह केवल अपने अहंकार को संतुष्ट करने के लिए ऐसा करता है।”

राम

1970 या 1971 में, के ने शिकायत की, "महाराज जी, मैं इतने समय से आपके साथ हूं और मैंने कुछ भी नहीं सीखा है।"

महाराजजी ने उत्तर दिया, "ठीक है, मैं तुम्हें बताऊंगा।" लेकिन वे हमेशा उसे बताने से बचते रहे।

राम

एक बार एक माता महाराजजी के पास आईं और बोलीं, “महाराजजी, आप हमेशा सांसारिक बातों के बारे में ही बात करते हैं—कितने बच्चे, कितनी शिक्षा, कौन सी नौकरी, कितना पैसा। आप हमें ब्रह्म (निराकार) के बारे में क्यों नहीं सिखाते?”

महाराजजी ने कहा, “ठीक है, मैं तुम्हें सिखा दूंगा।” माताजी कैंची में अपना काम करने चली गईं, और जब नैनीताल जाने वाली आखिरी बस का समय हुआ तो वह प्रणाम कर रही थीं और बस की ओर जा रही थीं। महाराजजी ने उनसे पूछा, “अब जा रही हो?”

उसने कहा, "हां, मुझे अपने परिवार की देखभाल करनी पड़ती है, खाना बनाना पड़ता है और भी बहुत कुछ।"

महाराजजी ने कहा, “सुनो, अभी मत जाओ। मैं तुम्हें ब्रह्म के बारे में सिखाऊंगा। तुम यहीं बैठो।” उसने घर जाकर परिवार की देखभाल करने की ज़िद की। उन्होंने कहा, “नहीं, नहीं। मैं तुम्हें ब्रह्म के बारे में सिखाऊंगा। तुम यहीं बैठो। आज घर मत जाओ।”

“यह कैसे संभव है? मुझे जाना ही होगा।”

"लेकिन पहले तो आप ब्रह्म को चाहते थे, और अब आप पूछते हैं कि यह कैसे संभव है?"

उसके जाने के बाद उसने मुझसे कहा, “उसे देखो। पहले वह ब्रह्म के बारे में बात कर रही थी और अब घर के बारे में सोच रही है। एक व्यक्ति एक ही समय में दो काम नहीं कर सकता। ब्रह्म कोई वस्तु या खिलौना नहीं है जिससे खेला जा सके। कुछ न कुछ त्याग करना ही पड़ता है।”

राम

महाराजजी हमेशा लोगों को अपनी मर्जी से काम करने देते थे और शायद ही कभी किसी को धूम्रपान या शराब पीने से मना करते थे। वे कभी किसी को उपदेश नहीं देते थे, बल्कि ऐसी परिस्थितियाँ बनाते थे जिससे व्यक्ति अपनी आदत छोड़ना चाहे।

राम

जब भक्तों द्वारा अपनी इच्छाओं का त्याग करने की प्रक्रिया के बारे में पूछा जाता था, तो महाराजजी कहते थे, "जब सही समय आएगा।"

राम

एक भक्त की धूम्रपान की आदत पर दया करते हुए, महाराजजी यात्रा के दौरान पानी पीने या पेशाब करने के बहाने गाड़ी रोक देते थे, जिससे भक्त को धूम्रपान करने का समय मिल जाता था।

राम

एम को पान खाने की आदत थी (पाचन के लिए चबाया जाने वाला पत्ता), लेकिन वह केवल बेहतरीन गुणवत्ता वाला पान ही चबाता था। एक बार जब मैं नैनीताल जा रहा था, एम ने मुझे पान के लिए दो रुपये दिए और महाराजजी को इस बारे में पता चल गया। अगली सुबह एक महिला महाराजजी के लिए प्रसाद के रूप में पान लेकर आई (ऐसा अक्सर नहीं होता था)। महाराजजी ने पूछा, "यह क्या है?" एम ने कहा, "अरे, पान! एम! ये रहा तुम्हारा पान!" और कैंची में एम के रहने के दौरान, हर दिन कोई न कोई व्यक्ति प्रसाद के रूप में ताजा पान लेकर आता था। महाराजजी ने कभी इसका आदेश नहीं दिया था, लेकिन स्वाभाविक रूप से यह लाया जाता था।

एम के अंतिम दिन, वह महाराजजी के कमरे में गया और उन्हें एक फूल लहराते हुए पाया, जिसे एम ने सोचा कि महाराजजी उसकी पत्नी के लिए उसे दे रहे हैं। एम ने महाराजजी को अपने मैदानी घर आने का निमंत्रण दिया, और महाराजजी ने कहा कि वे नवंबर में आएंगे और सभी पश्चिमी लोगों को साथ लाएंगे। महाराजजी ने पूछा, "वे कहाँ ठहरेंगे? उनके भोजन की व्यवस्था कैसे करेंगे?" एम ने उत्तर दिया, "वे अपना खाना खुद पका लेंगे।" आँखों में आँसू लिए, महाराजजी ने एम को फूल या पान दिए बिना ही विदा कर दिया। कुछ क्षण बाद, कोई मीठा पान लेकर कमरे में आया। महाराजजी ने एम को वापस बुलाया: "एम, ये लो तुम्हारी यात्रा के लिए पान।" फिर महाराजजी ने उसे मिठाई, फल और उसकी पत्नी के लिए फूल भी दिया।

राम

एक भक्त की शराब पीने की आदत के बारे में महाराजजी ने टिप्पणी की, "मित्र जो करते हैं वह ठीक है।"

राम

एक दिन वृंदावन में दादा सेवा में इतने व्यस्त थे कि उन्हें सिगरेट पीने का भी समय नहीं मिला। महाराजजी ने उनकी ओर मुड़कर कहा, "तुम जाओ और अपने दो मिनट लो और खत्म करो," और ऐसा दिखाया जैसे वह सिगरेट पी रहे हों।

राम

महाराजजी ने धूम्रपान, शराब पीने या मछली, अंडे या मांस खाने जैसी बुरी आदतों वाले लोगों के बारे में कहा, “उनकी ये आदतें हैं। उन्हें इनमें आनंद आता है। मुझे उन्हें क्यों रोकना चाहिए?”

“इंद्रिय-विषयों से अनासक्ति ही मुक्ति है; इंद्रिय-विषयों से प्रेम ही बंधन है। यही ज्ञान है। अब जो मन करे करो।” प्राचीन हिंदू ग्रंथ अष्टावक्र गीता (15:3) का यह उद्धरण महाराजजी के आसक्ति संबंधी उपदेशों को अत्यंत संक्षिप्त रूप से व्यक्त करता है। उन्होंने अपने जीवन में यह सिद्ध किया कि उन्हें किसी भी चीज़ से आसक्त न होना और इस प्रकार ईश्वर के साथ एकाग्र रहना ही प्रसन्न करता था। अपने प्रारंभिक वर्षों में वे केवल एक वस्त्र धारण करके घूमते थे, साथ में एक टूटा हुआ मिट्टी का बर्तन रखते थे जो पानी और भोजन दोनों का काम करता था। बाद के वर्षों में भी वे केवल एक साधारण धोती ही धारण करते थे, लेकिन साथ में एक कंबल और कभी-कभी कड़ाके की ठंड वाली पहाड़ी रातों में एक कमीज, स्वेटर या मोजे भी पहन लेते थे। उनके कमरे

अनासक्ति की स्पष्ट याद दिलाते थे। वहाँ केवल एक दुपट्टा और एक पानी का बर्तन होता था। और कुछ नहीं।

उन्होंने हमें वस्तुओं, लोगों, अपने काम और यहाँ तक कि धर्म से भी अनासक्त रहने की याद दिलाई। कुछ को उन्होंने अधिकाधिक त्याग के लिए प्रेरित किया, जबकि दूसरों को उन्होंने मुक्ति की प्रक्रिया में धैर्यवान और सौम्य रहने की सलाह दी।

महाराजजी ने उद्धृत किया: "ऐ थेई हरि भजन कू, ऊथन लागे कपास [मैं ईश्वर को जानने और उनकी स्तुति गाने आया था, लेकिन गर्भ से बाहर आते ही मैंने कपास के फल (वह फल जो पकने पर सुंदर दिखने पर छूने से ही बिखर जाता है) इकट्ठा करना शुरू कर दिया]।"

> आसक्ति ही आत्मज्ञान की प्राप्ति में सबसे बड़ी बाधा है।
> अगर मृत्यु के क्षण में आप आम की इच्छा रखते हैं, तो आप एक कीड़े के रूप में जन्म लेंगे। अगर आप अगली सांस की भी इच्छा रखते हैं, तो आपका पुनर्जन्म होगा।
> उन्होंने कहा, "यदि किसी बर्तन में इस्तेमाल की गई मिट्टी कच्ची है, तो बर्तन के टूटने पर उसका पुन: उपयोग किया जाता है। लेकिन यदि बर्तन पका हुआ है, तो उसके टूटने पर उसे फेंक दिया जाता है।"
> कामवासना, लोभ, क्रोध, आसक्ति— ये सभी नरक के मार्ग हैं।
> यदि आप इसे खाली नहीं करेंगे, तो आप इसे दोबारा कैसे भरेंगे?
> ईश्वर के दर्शन पाने के लिए अपनी इच्छाओं का नाश करो।
> इच्छाएँ मन में उत्पन्न होती हैं। जब किसी चीज़ की इच्छा हो, तो उस पर अमल मत करो, वह इच्छा अपने आप दूर हो जाएगी। यदि इस चाय को पीने की इच्छा हो, तो मत पियो, और वह इच्छा अपने आप खत्म हो जाएगी।
> संत और पक्षी कुछ भी इकट्ठा नहीं करते। संत तो अपना सब कुछ दान कर देते हैं।
> उन्होंने फटकार लगाते हुए कहा: "यह दुनिया पूरी तरह से आसक्ति पर आधारित है, फिर भी तुम इसलिए चिंतित हो क्योंकि तुम आसक्त हो।"

महाराजजी ने दादा से, जो भक्तों के एक परिवार के मुखिया थे, कहा, "तुम पूरी तरह से मेरे हो गए हो। तुम्हारे लिए परिवार का क्या महत्व है? तुम एक फकीर हो। तुम्हें दिन में केवल दो चपातियाँ चाहिए और वो भी मैं तुम्हें दूँगा। संतों और महात्माओं के लिए आसक्ति क्या है?" यह सुनकर परिवार व्यथित हो गया, लेकिन महाराजजी ने कहा कि यदि दादा को अपनी बात की सच्चाई का एहसास हो जाए, तो उन्हें परिवार छोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है।

राम

महाराजजी ने एक भक्त से कहा, “तुम इस बिल्ली से इतना लगाव क्यों रखते हो? मैं तुम्हें बार-बार कहता हूँ कि सभी आसक्तियों का त्याग करो, फिर भी तुम एक बिल्ली से लगाव रखते हो!”

> विवाह में अधिक लगाव होता है। विवाह के बाद ईश्वर के साथ एकात्म होने के लिए अधिक समर्पण और अनुशासन की आवश्यकता होती है।

मैं कभी-कभी बाग की देखभाल में व्यस्त रहता था। एक दिन महाराजजी ने कहा, “यह बाग मेरा है। तुम प्रबंधक की तरह काम करो। यह मेरी संपत्ति है। प्रबंधक का किसी चीज से कोई लगाव नहीं होता। उसे किसी जगह से निकाल दिया जाए तो वह तुरंत चला जाता है। इसलिए तुम प्रबंधक की तरह रहो।”

राम

महाराजजी ने मुझे यह कहानी सुनाई: “समर्थ गुरु राम दास राजा के गुरु थे और महल के बगल में एक छोटी सी मिट्टी की झोपड़ी में रहते थे। एक दिन राजा महल से बाहर आए और गुरु को प्रणाम किया। फिर राजा ने उन्हें एक पत्र सौंपा जिसमें उन्होंने अपना सारा राज्य गुरु को सौंप दिया था। गुरु ने पत्र लिया, उसे पढ़ा, स्वीकार किया और फिर राजा से कहा, “अब आप इसे मेरे लिए चलाइए!” (आर.डी.)

राम

महाराजजी ने एक बूढ़े भक्त से, जिसके पास एक बड़ी जेब घड़ी थी, पूछा कि उसे इससे इतना लगाव क्यों है। भक्त ने घड़ी को एक पत्थर पर फेंक दिया और वह टूट गई।

राम

एक बार एक साधु ने मुझे अपनी कुछ ज़मीन देने की पेशकश की, ताकि मैं वहाँ पश्चिमी लोगों के लिए आश्रम बना सकूँ। मैंने महाराजजी से इस बारे में पूछा। उन्होंने कहा, “वह तुम्हें अपना लगाव देना चाहता है। यह शुद्ध दान नहीं है। अगर यह शुद्ध होता तो वह इसके बारे में बात करने के बजाय तुम्हें दे देता।” (आर.डी.)

राम

वे मुझे बार-बार यही सलाह देते थे: “राम दास, आसक्ति त्याग दो।” मैं अक्सर उन्हें जवाब देकर यह ज़िम्मेदारी उन पर डालने की कोशिश करता था, “यह सब आपकी कृपा है।” लेकिन वे मुझे याद दिला रहे थे कि मुझे ही प्रयास करना होगा, क्योंकि वे बार-बार यही दोहराते रहते थे, “आसक्ति त्याग दो। तुम्हारे कोई आश्रम नहीं होने चाहिए। किसी भी प्रकार की आसक्ति नहीं होनी चाहिए।” (आर.डी.)

राम

एक बार महाराजजी मुझे सौवीं बार यही बात दोहरा रहे थे कि मुझे आसक्तियों का त्याग कर देना चाहिए। मैंने उनसे कहा कि एक अन्य गुरु ने भी मुझे यही बात कही थी। महाराजजी ने पूछा, “क्या उसके मन में कोई इच्छाएं हैं?”

“हां, मुझे लगता है कि वह अब भी ऐसा ही सोचता है,” मैंने जवाब दिया।

“तो फिर वह तुम्हें इच्छा से कैसे मुक्त कर सकता है?” (आर.डी.)

काली बाबू ने महाराजजी को विभिन्न धातुओं से बने एक ऐसे बर्तन के बारे में बताया जो पानी रखने के लिए अच्छा था और जिसके इस्तेमाल से सेहत भी अच्छी रहती थी। महाराजजी ने उन्हें तब तक समझाया जब तक कि आखिरकार उन्होंने वैसा बर्तन बनवा नहीं लिया। महाराजजी ने दिन भर उस बर्तन का इस्तेमाल पानी पीने के लिए किया। फिर उन्होंने काली बाबू से कहा कि उसे रात भर के लिए ताला लगाकर रख दें और अगले दिन फिर से इस्तेमाल करेंगे। अचानक महाराजजी बोले, “क्या? क्या मुझे उससे लगाव हो रहा है? इसे दे दो।”

एक भक्त ने कहा, “क्या वे सांसारिक मामलों में लिप्त थे? मुझे नहीं लगता कि उन्हें किसी भी चीज़ या किसी व्यक्ति से लगाव था। वे तो बस आपके लगाव का दर्पण थे।”

मैं दुनिया में हूं, लेकिन दुनिया से मुझे कोई लेना-देना नहीं है। मैं बाज़ार में घूम रहा हूं, लेकिन खरीदार के रूप में नहीं।

—महाराजी कबीर के शब्दों को उद्धृत करते हुए

महाराजजी पूरी तरह अनासक्त थे। हनुमानगढ़ मंदिर छोड़ने के बाद उन्होंने कभी उसका नाम नहीं लिया; कैंची मंदिर छोड़ने के बाद उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। वे अक्सर कहते थे, "जब मैं चला गया, तो चला गया।"

> मंदिर तो बस पत्थरों के ढेर हैं। आसक्ति ही आपको पीछे खींचती है।
>
> मुझे कुछ नहीं चाहिए। मेरा अस्तित्व केवल दूसरों की सेवा करने के लिए है।

मैंने ऑस्ट्रेलिया में महाराजजी के लिए मोहेर का कंबल खरीदा था और उन्हें देने के लिए बहुत उत्साहित थी। जब भेंट का दिन आया, तो हममें से कुछ लोगों को उस छोटे से कमरे में ले जाया गया जिसे हम मज़ाकिया तौर पर उनका "कार्यालय" कहते थे और हम उनके सामने घुटने टेक दिए। मैंने कुछ गर्व के साथ कंबल उनके बगल में रखे टकेट पर रख दिया और हम सब यह देखने के लिए उत्सुक हो गए कि आगे क्या होता है। उन्हें कंबल ओढ़ते देखना मज़ेदार होगा और शायद वे हमें अपना पुराना कंबल दे दें, या... हज़ारो संभावनाएं थीं। लेकिन हमारे किसी भी अनुमान ने हमें उनके इस काम के लिए तैयार नहीं किया था। पहले तो उन्होंने कंबल को नज़रअंदाज़ किया, फिर नीचे झुके और तीन उंगलियों से उसे ऐसे उठाया जैसे वह कोई मरा हुआ जानवर हो। वे कंबल को अपने सामने लाए और हमारे समूह की एक महिला को दे दिया जो महाराजजी से पहली बार मिलने आई थी। फिर वे मेरी ओर मुड़े और बोले, "क्या यह सही था?" हम सब दंग रह गए।

मुझे थोड़ा समय लगा यह समझने में कि उसने अभी क्या किया था। फिर मैंने कहा, "बिल्कुल सही।" (आर.डी.)

राम

एक भक्त ने कहा कि महाराजजी को किसी चीज की जरूरत नहीं थी और उन्हें उपहार लेना पसंद नहीं था।

राम

दो पुराने भक्तों को बताया गया कि गंगा के किनारे एक विशेष मंदिर में महाराजजी मिलेंगे, इसलिए वे तुरंत वहाँ गए और उन्हें पा लिया। महाराजजी ने ऐसा व्यवहार किया मानो उन्होंने उन्हें पहले कभी देखा ही न हो। कुछ मिनट बाद महाराजजी अचानक उठे और बोले, “चलो चलें! चलो चलें!” तीनों दौड़ते हुए एक तांगा (घोड़ा गाड़ी) तक पहुँचे, जिस पर वे सवार हुए और अपने रास्ते पर चल पड़े। रास्ते में, दोनों भक्तों ने महाराजजी से पूछा कि वे इतनी जल्दी क्यों भागे थे। उन्होंने उत्तर दिया, “क्या तुम्हें नहीं पता? वह धनी महिला मुझसे मिलने आ रही है। उसके पास एक अंग्रेजी कंबल है जो वह मुझे देना चाहती है, लेकिन मुझे वह नहीं चाहिए।” तभी एक लिमोसिन विपरीत दिशा में उनके पास से गुजरी। महाराजजी हँसे और बोले, “देखो! वह जा रही है!”

राम

एक विशेष पर्व के अवसर पर, एक भक्त ने रेशम और साटन से अत्यंत सुंदर फूलों और पत्तियों के आकार की मालाएँ बड़ी मेहनत से बनाईं। जब उसने ये मालाएँ महाराजजी को भेंट कीं, तो उसने एक माला अपने सिर पर डालने का प्रयास किया, लेकिन महाराजजी ने ऐसा करने से साफ इनकार कर दिया। उन्होंने कहा, “इन्हें ले जाओ। ये तो दुनिया के देखने के लिए बनाई गई थीं।”

राम

एक भक्त ने कहा कि महाराजजी को जो दिया जाता है वह मायने नहीं रखता, बल्कि जिस भावना से दिया जाता है वह मायने रखती है। यदि आप उन्हें दिल से एक पत्ता जैसी साधारण सी चीज भी दें, तो वे उसमें भी लंबे समय तक आनंदित रह सकते हैं।

राम

एक रात महाराजजी ने मुझे यह बड़ा कश्मीरी सेब दिया। उस रात किसी कारणवश मैंने खाना नहीं खाया था और मुझे भूख लगी थी। पगडंडी पर चलते हुए मैंने सेब खाने का सोचा। सेब रसीले और साफ होते हैं, और भारत में कोई भी साफ चीज महत्वपूर्ण मानी जाती है। मैंने यह भी सोचा कि सेब में गुठली नहीं होती (चावल में गुठली खाने के बाद आप इस बात की अहमियत समझ सकते हैं)। सिर्फ यह तथ्य कि कोई चीज बिना गुठली के पैदा हो सकती है—इसमें एक अच्छी बात है, एक तरह से मित्रतापूर्ण।

जब मैं अंततः कुटी पर पहुँचा, तो मेरी इच्छा प्रकट हो उठी, एक ऐसी चीज़ जो सचमुच मूर्त थी। हम अक्सर सोचते हैं कि इच्छा किसी मेज से कहीं अधिक सूक्ष्म होती है, लेकिन उस समय मुझे यह अहसास हुआ कि इच्छा ही मेरे संसार की सबसे वास्तविक वस्तु है। अचानक मुझे संत को प्रसाद चढ़ाने की प्रक्रिया समझ में आई। गीता में कहा गया है कि यदि आप भक्ति भाव से केवल एक फूल भी अर्पित करते हैं, तो वह सबसे पवित्र भेंट है जो आप दे सकते हैं। उस क्षण मैं अपनी इच्छा को प्रसाद के रूप में अर्पित करना चाहता था।

मैंने सेब को संभाल कर रखा, और अगले दिन, क्योंकि मैं मंदिर में बाकी लोगों से पहले आ

गया था, मैंने अपना सेब थाली में रख दिया। सुबह के समय, महाराजजी के आने से पहले, बहुत से लोग आ गए और जल्द ही सेब दूसरे फलों, फूलों, मिठाइयों आदि के नीचे दब गया। लेकिन मेरी नज़र सेब पर टिकी रही। लगभग आधे घंटे बाद महाराजजी बाहर आए, सभी चढ़ावों को छाँटा, मेरा सेब निकाला और मुझे दे दिया।

राम

एक बार मैं बेहद निराश था और मैंने महाराजजी से कहा कि मैं संसार में नहीं रहना चाहता, मैं बस संन्यासी बनना चाहता हूँ। महाराजजी ने चारों ओर बैठे पश्चिमी लोगों की ओर इशारा करते हुए कहा, "तुम अभी संन्यासी नहीं बन सकते। यहाँ बैठे इन भक्तों को देखो। इन भक्तों ने भौतिक जीवन का भरपूर आनंद उठाया है, जबकि तुमने अभी तक नहीं। अगर तुम अभी संन्यासी बन जाओगे तो तुम्हारे लिए बहुत मुश्किल होगा। पहले इन चीजों का स्वाद चखो, फिर इन्हें छोड़ देना।"

राम

मैं महाराजजी से यही कह रहा था कि इस माया (सांसारिक भ्रम) से पार पाना बहुत मुश्किल है। मेरे पिता जीवन भर एक समर्पित भक्त रहे, फिर भी वे अपने बच्चों के स्वास्थ्य और कल्याण को लेकर चिंतित रहते थे। इसलिए मैंने महाराजजी से कहा, "इस माया पर विजय पाना बहुत कठिन है।"

महाराजजी ने मुझसे चार बातें कहीं: "माया? क्या है? कलियां है? नहीं है!" बस इतना ही। वह कितना विचित्र दिन था।

> इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप शादीशुदा हैं या नहीं, फर्क सिर्फ इस बात से पड़ता है कि आप भगवान से कितना प्यार करते हैं।

महाराजजी पीछे अपनी कुर्सी पर बैठकर पहाड़ियों की ओर देखते हुए कहते थे, "उस पहाड़ पर लगे उन पेड़ों को देखो। उन्हें कौन पानी देता है? उनकी देखभाल कौन करता है? ये ही लोगों को ईश्वर के अस्तित्व का आश्वासन देते हैं। लोग इन्हीं पेड़ों को देखकर ईश्वर के बारे में जान सकते हैं।"

राम

महाराजजी में कोई संकोच नहीं था। वे धूल में पसीना बहाते हुए बैठते थे। वे कहते थे, "मैं धरती माता की गोद में बैठा हूँ और मैं मिट्टी का बना हूँ। हर भूमि ईश्वर की है।"

> हर चीज में ईश्वर को देखना, उसे समझने की कोशिश करने से बेहतर है।
>
> अगर आपके दांत में दर्द है, तो आप वही करते हैं जो आपको करना चाहिए, लेकिन आपका ध्यान दांत पर ही केंद्रित रहता है।

एक भक्त ने पूछा, "बच्चे होने पर मैं अनासक्त कैसे रह सकता हूँ?" इस पर महाराजजी ने उत्तर दिया, "बस ईश्वर पर विश्वास रखो और ईश्वर का स्मरण करो, धीरे-धीरे सब कुछ हो जाएगा

और तुम कमल के फूल की तरह अनासक्त जीवन जीने लगोगे।”

> यदि आप आसक्ति से मुक्त हैं, तो आप सरल वातावरण में सरल जीवन व्यतीत करेंगे।

एक बार महाराजजी ने एक स्थानीय साधु के साथ एक युवा पश्चिमी भक्त को कमरे में बुलाया। लड़की ने सुंदर साड़ी पहनी हुई थी और गहने भी पहने हुए थे, जबकि साधु ने साधुओं के विशिष्ट वस्त्र पहने हुए थे। महाराजजी ने उस पश्चिमी भक्त की ओर इशारा करते हुए कहा, "यह एक साधु है।"

साधु ने आपत्ति जताते हुए कहा, “वह साधु कैसे हो सकती है? देखो उसने कैसे कपड़े पहने हैं।”

महाराजजी ने उसे फटकारा और कहा, “उसे इन सब चीजों की परवाह नहीं है। उसे इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह रेशमी कपड़े पहने या चिथड़े-तुड़े। वह हीरे भी पहन लेगी। उसे इन चीजों से कोई लगाव नहीं है। उसमें कामवासना, लोभ, क्रोध या आसक्ति नहीं है। वह जीवन भर भटकती रहेगी। इस ब्रह्मांड में उसका कोई घर नहीं है।”

फिर उसने लड़की को कमरे से बाहर भेज दिया।

> ईश्वर आपको आपके आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक सब कुछ प्रदान करेगा। किसी भी चीज़ से चिपके मत रहो। गरीबों से प्रेम करो। उनकी सेवा करो। गरीबों को सब कुछ दे दो, यहाँ तक कि अपने वस्त्र भी। सब कुछ दान कर दो। यीशु ने अपना सब कुछ दे दिया, यहाँ तक कि अपना शरीर भी।

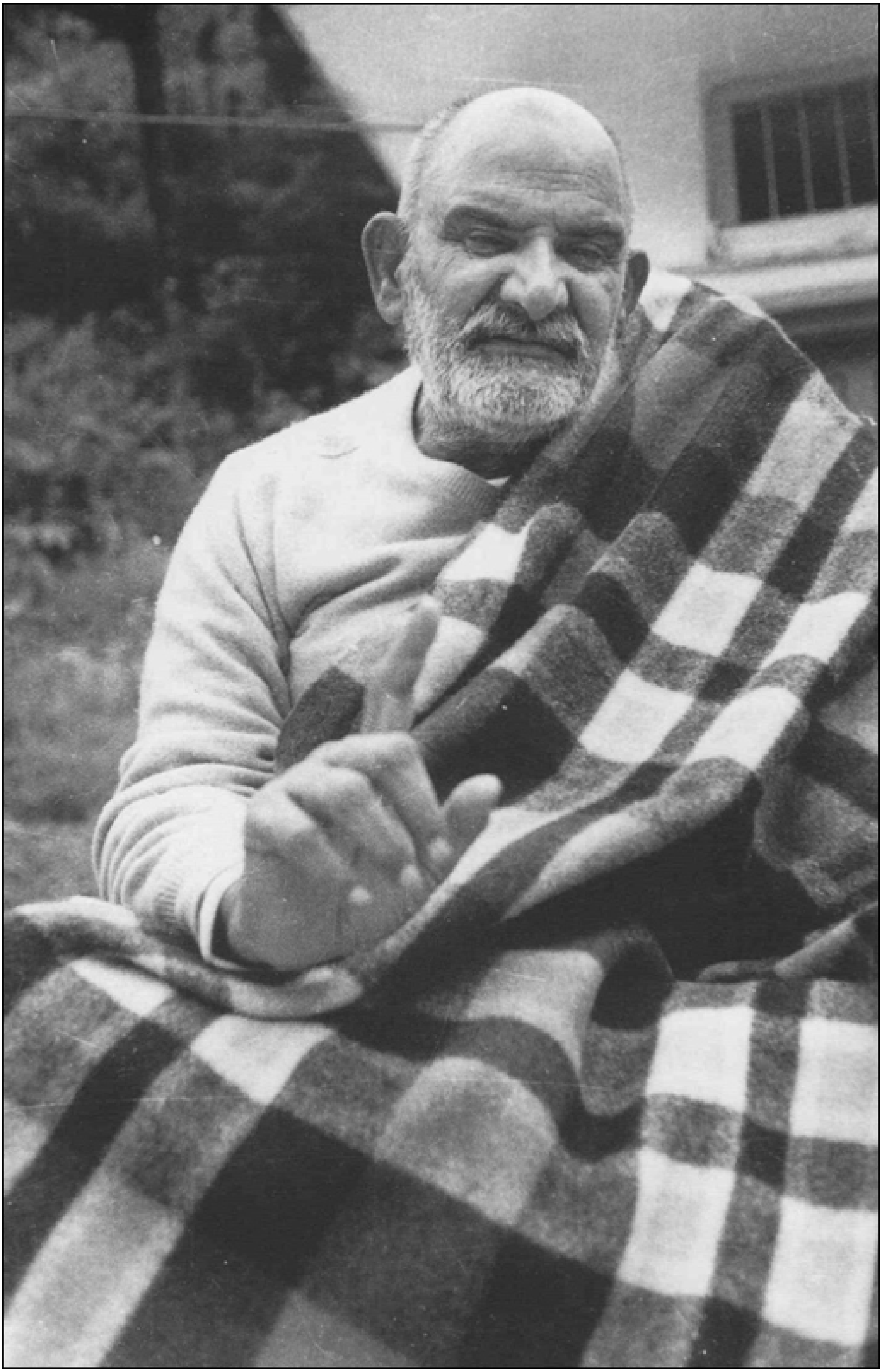

फोटो: प्यारी लाल साह

सत्य के बारे में

महाराजजी की सत्य संबंधी शिक्षाओं को समझने के प्रयास में, यह तय करना होगा कि महाराजजी के कार्य या उनके कथनों में से कौन सी बात उन शिक्षाओं का अधिक सटीक प्रतिबिंब है। एक ओर, वे लगातार भक्तों को सत्य बोलने का निर्देश देते रहे, चाहे इसकी कितनी भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े।

> पूर्ण सत्य आवश्यक है। आपको अपने कहे अनुसार जीवन जीना होगा।
>
> सत्य की तपस्या सबसे कठिन है। लोग सत्य बोलने पर तुमसे घृणा करेंगे। वे तुम्हें अपशब्द कहेंगे। वे तुम्हें जान से भी मार सकते हैं, लेकिन तुम्हें सत्य बोलना ही होगा। यदि तुम सत्य के मार्ग पर चलते हो, तो ईश्वर सदा तुम्हारे साथ रहेगा।
>
> ईसा मसीह सत्य के लिए मरे।
>
> जब उनसे पूछा गया कि हृदय को कैसे शुद्ध किया जा सकता है, तो उन्होंने कहा, "हमेशा सच बोलो।"

एक व्यक्ति महाराजजी के पास आया और महाराजजी ने उससे आश्रम के लिए ईंटों के बदले कुछ पैसे मांगे। उस व्यक्ति ने कहा कि उसके पास कुछ भी नहीं है और वह चला गया। बाद में वह भागता हुआ महाराजजी के पास आया और कहने लगा कि उसकी दुकान जल रही है और वह बर्बाद हो जाएगा।

मुझे लगा था कि आपने कहा था कि आपके पास कोई संपत्ति नहीं है!

“ओह, मैं झूठ बोल रही थी…।”

“तुम झूठ बोल रहे हो। तुम्हारी दुकान में आग नहीं लगी है।”

वह आदमी चला गया और अपनी दुकान पर वापस आया तो उसने पाया कि मिर्च के केवल एक थैले से धुआं निकल रहा था।

राम

जब 'बी हियर नाउ' की पहली प्रति आई, तो मैंने उसे महाराजजी को दे दी थी। उन्होंने अपने एक भक्त से उसे अपने कमरे में रखने को कहा था, और उसके बाद मुझे इसके बारे में कुछ पता नहीं चला। पाँच महीने बाद मुझे मंदिर के पीछे से बुलाया गया। जब मैं महाराजजी के कमरे में पहुँचा, तो उनके हाथ में वह किताब थी। उनकी पहली टिप्पणी थी, "तुम झूठ छाप रहे हो।"

“मुझे इस बात का एहसास नहीं था, महाराजजी। मुझे लगा था कि किताब में लिखी हर बात सच है।”

“नहीं, झूठ बोला जा रहा है,” उसने आरोप लगाते हुए कहा।

“यह तो बहुत बुरा है,” मैंने कहा। लेकिन मैं असमंजस में थी क्योंकि मुझे यकीन नहीं था कि वह सच कह रहे हैं या नहीं, इसलिए मैंने पूछा, “कौन से झूठ, महाराज जी?”

आप यहां कहते हैं कि हरि दास ने मंदिरों का निर्माण करवाया था।

"खैर, मुझे लगा कि उसने ऐसा किया।"

उसी समय महाराजजी ने पास बैठे एक भारतीय व्यक्ति को इशारा किया और उससे पूछा, "मंदिरों से तुम्हारा क्या लेना-देना था?"

"मैंने इन्हें बनाया है, महाराजजी।" महाराजजी ने मेरी ओर ऐसे देखा मानो इससे साबित हो गया हो कि मैंने झूठ बोला था।

तब महाराजजी ने कहा, "और आपने कहा था कि हरि दास आठ साल की उम्र में जंगल में गया था।" उन्होंने फिर एक और आदमी को आगे बुलाया, जिसने पुष्टि की कि हरि दास ने कुछ वर्षों तक वन विभाग में क्लर्क के रूप में काम किया था।

मैं बस इतना ही कह सका, "खैर, किसी ने मुझे बताया था कि वह आठ साल की उम्र में जंगल में चला गया था।"

महाराजजी ने बार-बार मुझसे उन बातों को लेकर सवाल किया जो मैंने कही थीं और जो सच नहीं थीं।

अंत में महाराजजी ने कहा, "तुम लोगों की हर बात पर विश्वास कर लेते हो। तुम सीधे-सादे इंसान हो। अधिकांश पश्चिमी लोग इसकी जाँच कर लेते। इन असत्य बातों के बारे में तुम क्या करोगे?"

मेरा दिमाग चकरा गया। मैं क्या कर सकता था? तीस हज़ार प्रतियों की पहली छपाई तो दुकानों में पहुँच ही चुकी थी और उसे वापस तो लिया ही नहीं जा सकता था, लेकिन स्टीव डर्की ने लिखा था कि वे तीस हज़ार प्रतियाँ और छापने वाले हैं। तो मैंने सोचा, "ठीक है, मैं लिख सकता हूँ और अगली छपाई में झूठ को मिटवा सकता हूँ।"

"ठीक है। तुम ऐसा करो। झूठ से जुड़ने पर तुम्हें ही नुकसान होगा।" इतना कहकर वे दूसरे मामलों की ओर मुड़ गए। मैंने किताब में हुए नुकसान का जायजा लिया और न्यू मैक्सिको में लामा फाउंडेशन में स्टीव के लिए एक पत्र तैयार किया, जहाँ किताब प्रकाशित हुई थी। केवल दो पूरे पैराग्राफ हटाने थे। हालाँकि बदलाव मामूली लग रहे थे, लेकिन मैंने 'बी हियर नाउ' को महाराजजी की किताब माना और अगर महाराजजी इसे बदलना चाहते थे, तो बदलना ही था।

लगभग दो सप्ताह बाद मुझे स्टीव का जवाब मिला, जिसमें उन्होंने कहा कि अगले प्रिंटिंग में बदलाव नहीं किए जा सकते। जब उन्हें मेरा पत्र लामा में मिला, जो टाओस के उत्तर में पहाड़ों में स्थित है, तब वे अल्बुकर्क में प्रिंटर से मिलकर लौटे थे। उस मुलाकात में उन्होंने पुनर्मुद्रण की व्यवस्था की थी, और प्रिंटर ने एक एहसान के तौर पर काम जल्दी निपटाने और अगले दिन ही उसे प्रेस में डालने का वादा किया था। प्रेस पूरी किताब को एक ही बार में प्रिंट, कट और असेंबल करने वाला था। स्टीव ने लामा वापस आते समय दो दिन दूसरे कामों में बिताए थे, और हालांकि उन्होंने प्रिंटर से बात नहीं की थी (क्योंकि लामा में फोन नहीं हैं), उन्हें पूरा यकीन था कि काम हो चुका है। लेकिन उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि बदलाव अगले प्रिंटिंग में कर दिए जाएंगे, जो शायद तीन या चार महीने में होगा।

पत्र को अपने झोला (कंधे के थैले) में रखकर मैं सुबह-सुबह कैंची के लिए बस में सवार हो गया। मंदिर में प्रवेश करते ही महाराजजी ने चिल्लाकर पूछा, "पत्र में क्या लिखा है?" उनका ऐसा करना मुझे हमेशा हास्यास्पद लगता था, क्योंकि अगर उन्हें पता था कि कोई पत्र है तो जाहिर है उन्हें यह भी पता होगा कि उसमें क्या लिखा है। वे बस मुझसे जानना चाहते थे। तो मैंने

उन्हें बताया, और जब मैंने अपनी बात पूरी कर ली तो उन्होंने कहा, “अभी करो।” मैंने धैर्यपूर्वक वेब प्रेस के बारे में और यह बताया कि इन तीस हजार प्रतियों के लिए बदलाव नहीं किए जा सकते। और उन्होंने फिर से कहा, “अभी करो।” मैंने समझाया कि इसका मतलब होगा सभी तीस हजार किताबें फेंक देना और कम से कम दस हजार डॉलर का नुकसान। महाराजजी ने जवाब दिया, “पैसा और सच्चाई का आपस में कोई संबंध नहीं है। अभी करो। जब तुमने इसे पहली बार छापा था तो तुम्हें लगा था कि यह सच है, लेकिन जब तुम्हें पता चल गया है कि यह सच नहीं है तो तुम झूठ नहीं छाप सकते। इससे तुम्हें नुकसान होगा।”

खैर, अगर महाराजजी अब बदलाव चाहते हैं, तो यही करना पड़ेगा। इसका मतलब होगा लामा को सारा मुनाफा गंवाना, और वे इससे खुश नहीं होंगे; लेकिन आखिर सारी रकम तो महाराजजी से ही आई थी। हालांकि सुबह के 9:00 भी नहीं बजे थे, महाराजजी ने मुझे मंदिर से भेज दिया और फिर से कहा, "इसे अभी करो।"

मैंने लिफ्ट लेकर नैनीताल वापस जाने का फैसला किया और स्टीव को नए निर्देश लिखकर तार भेजा। लगभग एक हफ्ते बाद मुझे स्टीव का जवाब मिला। उसने बताया कि एक अजीब घटना घटी थी। जब वह डाकघर गया, तो वहाँ मेरा तार था, और उसी डाक में प्रिंटर का एक पत्र भी था। ऐसा लगता है कि स्टीव के जाने के तुरंत बाद, उसने वादे के मुताबिक किताब को दोबारा छापने के लिए प्लेटें प्रेस पर लगा दीं। लेकिन प्रिंटर को एक पन्ने की एक प्लेट - महाराजजी की पूरी तस्वीर वाली - गायब मिली। इसलिए वह फाइलों में गया, यह सोचकर कि उसे मूल प्लेट मिल जाएगी और वह एक नई प्लेट बना लेगा, लेकिन उसे यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि उस पन्ने की मूल प्लेट भी गायब थी। समझ न आने पर प्रिंटर ने प्रिंटिंग प्रेस से काम रोक दिया और आगे के निर्देशों का इंतजार करने लगा। इसलिए, स्टीव ने निष्कर्ष निकाला कि दो पैराग्राफ बदलने के लिए सिर्फ एक फोन कॉल ही काफी था, दस हजार डॉलर नहीं, जैसा कि मुझे डर था। मैं यह खबर लेकर महाराजजी के पास भागा, लेकिन उस दिन और अगले दिन उन्होंने मुझे बात करने का मौका ही नहीं दिया। (आर.डी.)

राम

जब दादा की भाभी मिलने आई थीं, तो महाराजजी ने मुझे उनके सामने अपने पास बुलाया, उस महिला की ओर इशारा किया और पूछा कि क्या मुझे वह याद हैं। सच तो यह था कि मुझे वह याद नहीं थीं, लेकिन याद न रखना एक तरह की गलती लगती, इसलिए मैंने जानबूझकर मुस्कुराते हुए ऐसा दिखाया जैसे मुझे वह याद हों। महाराजजी ने भी मुस्कुराते हुए मानो मेरी बात मान ली हो और कहा, "जी हाँ, वह दादा की भाभी हैं।"

फिर मेरी वह कपटी "चालाकी" हावी हो गई और मैंने मन ही मन सोचा कि अगर वह दादा की भाभी थी तो शायद मैं उससे इलाहाबाद में मिली थी, जहां दादा रहते थे, इसलिए मैंने कहा, "ओह, हाँ, हम इलाहाबाद में साथ थे।"

इस पर उन्होंने कहा, “नहीं, हम इलाहाबाद में कभी नहीं मिले। हम पिछली वसंत ऋतु में कैंची में मिले थे।” मैं शर्म से लाल हो गया। महाराजजी मेरी ओर मुड़े और अपनी उंगली उठाई, जिसका इस मामले में स्पष्ट अर्थ था, “पकड़ लिया! संभलकर!” (आर.डी.)

राम

इलाहाबाद में, महाराजजी ने मुझे उस स्थिति में पकड़ लिया जिसे हम पश्चिम में "छोटा-मोटा झूठ" कहते हैं। हम उनके चारों ओर इकट्ठा थे, और समूह में राज्य के सर्वोच्च न्यायालय का एक महत्वपूर्ण अधिकारी भी था। महाराजजी के साथ बिताए इतने वर्षों में पहली बार मैंने उन्हें उस अधिकारी से यह कहते सुना कि मैं संयुक्त राज्य अमेरिका में कितना महत्वपूर्ण व्यक्ति हूँ, कि मैं एक प्रोफेसर हूँ और किताबें लिखता हूँ। उनके सामने ये सब बातें मुझे बेमानी लग रही थीं, और उन्हें मेरे पश्चिमी सामाजिक-शक्ति गुणों का बखान करते सुनना अजीब लग रहा था। जब वे रुके, तो सर्वोच्च न्यायालय के अधिकारी ने मुझसे कहा, "आपसे मिलकर मुझे बहुत खुशी हुई। शायद आप सर्वोच्च न्यायालय का दौरा करना चाहेंगे।"

मेरे परिवार में वकीलों का परिवार था और मैं भारत में यहाँ की आध्यात्मिकता में डूबने के लिए आया था, इन दोनों बातों ने मुझे ऐसी यात्रा के विचार से बिल्कुल भी आकर्षित नहीं किया। फिर भी, वह एक महत्वपूर्ण व्यक्ति थे और मैं अपने मन की बात सीधे-सीधे नहीं कह सकता था। इसलिए मैंने कुछ अस्पष्ट शब्दों में कहा, "यह बहुत अच्छा होगा।"

इस पर अधिकारी ने कहा, "क्या कल सुबह 10:00 बजे का समय सुविधाजनक रहेगा?"

मैं फंस गया था, और मुझे बचने का केवल एक ही रास्ता सूझा। मैंने कहा, "हमें अपने गुरु से पूछना होगा। यह उन्हीं पर निर्भर करता है।"

तो अधिकारी ने महाराजजी से पूछा, और उन्होंने उत्तर दिया, "अगर राम दास कहते हैं कि अच्छा रहेगा, तो उन्हें जाना चाहिए।" और फिर उन्होंने मेरी तरफ इस तरह देखा जिसका अर्थ केवल यही निकाला जा सकता था, "फिर से तुम्हें पकड़ लिया।"

अगले दिन की घटनाओं की कहानी से पता चलता है कि मुझ जैसे साधारण लोग भी सीखते हैं। मैं इस सज्जन के साथ अदालत गया था, और इस दौरान हम लॉ रिव्यू के कक्ष में रुके, जहाँ सभी वकील इकट्ठा होते थे। यह निक्सन के चीन के प्रति नाटकीय रवैये का समय था। जब इन सभी वकीलों ने एक अमेरिकी को इस महत्वपूर्ण अधिकारी के साथ देखा, तो वे मुझे घेरकर निक्सन की चीन नीति के बारे में सवाल करने लगे, जो भारत के लिए काफी चिंता का विषय था। मैंने स्थिति को समझते हुए जितना संभव हो सका, उतना विद्वतापूर्ण उत्तर दिया। उस शाम जब मैं एक बार फिर महाराजजी के दर्शन कर रहा था, तो एक और प्रतिष्ठित दिखने वाले सज्जन, जो बाद में शहर के जाने-माने वकील निकले, मुझे एक तरफ ले गए और पूछा कि क्या मैं रोटरी क्लब और बार एसोसिएशन को संबोधित करने के लिए तैयार हूँ। मुझे लगा कि अगर मैंने संभलकर कदम नहीं उठाए तो मेरी हालत खराब हो जाएगी। और पिछले दिन की घटना को याद करते हुए, मैंने कहा, "मैं इन दोनों समूहों के सामने बोलना पसंद नहीं करूँगा, लेकिन महाराजजी जो भी कहेंगे, मैं अवश्य करूँगा।"

तो वकील ने महाराजजी के सामने अपना पक्ष रखा, और महाराजजी निमंत्रणों से बेहद प्रसन्न प्रतीत हुए। वे बार-बार उन निमंत्रणों का ज़िक्र करते रहे, मानो यह जताना चाहते हों कि ये निमंत्रण एक बड़ी उपलब्धि, एक महत्वपूर्ण सफलता और बेहद अहमियत रखते हैं। मुझे महाराजजी से विश्वासघात का आभास होने लगा। तभी महाराजजी मेरी ओर मुड़े और पूछा, “तुम किस विषय पर बोलने वाले हो?”

मैंने तुरंत सोचा और जो एकमात्र संबंध मेरे दिमाग में आया, उसे पकड़ लिया: "मैं कानून

और धर्म के बारे में बात करूंगा।"

"अहा!" महाराजजी ने कहा, "और क्या आप ईसा मसीह के बारे में बात करेंगे?"

"बिल्कुल।"

और हनुमान?

"निश्चित रूप से।"

"और मुझे?"

"बिल्कुल।"

इस समय तक वकील का चेहरा थोड़ा पीला पड़ गया था, और उसने बीच में ही कहा, "खैर, हमें लगा था कि वह निक्सन की चीन नीति के बारे में बात करेंगे, महाराजजी।"

महाराजजी चौंक गए। "अरे नहीं! राम दास ऐसा नहीं कर सकते। वे केवल भगवान के बारे में ही बात कर सकते हैं।"

तब वकील पीछे हट गया और बोला, "खैर, यह ठीक नहीं होगा। शायद मैं अपने घर पर कुछ वकीलों को बुलाकर भगवान के बारे में बात कर सकूँ।" कहने की जरूरत नहीं, उसने ऐसा कभी नहीं किया। मुझे सबक मिल गया था। महाराजजी हमेशा सच बोलने पर मेरा साथ देते थे, चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो।

इन वर्षों के दौरान, मैं अक्सर खुद को किसी न किसी धर्मनिरपेक्ष समूह को व्याख्यान देने से पहले सोचता हुआ पाता हूँ कि मुझे क्या कहना चाहिए। तभी मुझे यह याद आता है, "वह केवल ईश्वर के बारे में ही बोल सकता है।" (आर.डी.)

इन सभी शिक्षाओं के विपरीत, महाराजजी अक्सर झूठ बोलते थे। इसी वजह से, जब महाराजजी कोई भविष्यवाणी करते थे, तो किसी को नहीं पता होता था कि वह सच होगी या नहीं। हालांकि स्थानीय समुदायों में जो लोग उन्हें नापसंद करते थे (और ऐसे लोगों की संख्या काफी थी, क्योंकि वे बहुत मुखर थे), वे उनके झूठ को उजागर करते थे, लेकिन भक्तों के लिए इन विरोधाभासों से कोई फर्क नहीं पड़ता था। हमारे लिए शायद सबक यह था कि एक स्वतंत्र प्राणी के अपने नियम होते हैं; लेकिन जब तक आप स्वतंत्र नहीं हो जाते, तब तक सच बोलना ही सबसे अच्छा है।

महाराजजी आम तौर पर भक्तों के हर अनुरोध को मान लेते थे। लोग अक्सर उन्हें अपने घरों में आकर आशीर्वाद देने और परिवार द्वारा तैयार भोजन ग्रहण करने के लिए आमंत्रित करते थे। वे इन सभी अनुरोधों को स्वीकार तो कर लेते थे, लेकिन अक्सर वे जाते नहीं थे।

राम

जब उनके एक भक्त ने उनसे वादे करने और तोड़ने की उनकी आदत के बारे में पूछा, तो महाराजजी ने जवाब दिया, "मैं तो बस एक बड़ा झूठा हूँ!"

राम

एक भक्त ने महाराजजी से पूछा कि वे हमेशा लोगों से अच्छी-अच्छी बातें क्यों करते हैं या उज्ज्वल भविष्य की भविष्यवाणी क्यों करते हैं, जबकि वास्तव में वे जानते हैं कि इसके विपरीत ही होगा। महाराजजी ने उत्तर दिया, "क्या तुम मुझसे यह अपेक्षा करते हो कि मैं लोगों को बताऊँ कि उनके प्रियजन मर जाएँगे? मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ? ठीक है, क्योंकि तुम मुझे सलाह दे रहे हो, अब से मैं लोगों को स्पष्ट-स्पष्ट उत्तर दूँगा।" कुछ देर बाद, एक महिला अपने पति के शीघ्र

स्वस्थ होने का आशीर्वाद लेने उनके पास आई। महाराजजी उस पर चिल्लाए, “माँ, तुम यहाँ क्यों आई हो? तुम्हारा पति घर पर बिस्तर पर पड़ा मरणासन्न है और कोमा में है। उसे बचाया नहीं जा सकता। तुम्हें जाना चाहिए!” सदमे और आहत होकर वह महिला चली गई। महाराजजी कुछ और लोगों के साथ भी इसी तरह कठोर थे। फिर उन्होंने उस भक्त से पूछा, “तुम मुझसे लोगों के साथ कठोर होने की अपेक्षा कैसे कर सकते हो? मैं उनकी भावनाओं को कैसे ठेस पहुँचा सकता हूँ?”

राम

महाराजजी किसी की भावनाओं को ठेस न पहुंचाने के लिए झूठ बोल देते थे; लेकिन फिर वे किसी और तरीके से सच बता देते थे। जब के ने अपनी बीमार माँ के बारे में पूछा, तो महाराजजी ने कहा, “अगर वो यहाँ नहीं रहेंगी तो तुम्हें कौन खिलाएगा? वो तो अभी बहुत दिन रहेंगी।” लेकिन फिर महाराजजी ने आगरा से एक विशेषज्ञ को बुलाया और उनकी जाँच करवाई।

विशेषज्ञ ने कहा, "यह महिला अट्ठाईस दिनों से अधिक जीवित नहीं रह सकती।"

इससे डॉक्टर हैरान हो गए क्योंकि उन्होंने कभी उस संख्या का इस्तेमाल नहीं किया था, बल्कि एक या दो महीने का समय बताया था। उनतीसवें दिन की सुबह उनकी मृत्यु हो गई। के को लगा कि महाराजजी ने विशेषज्ञ को एक संकेत के रूप में बुलाया था। संत स्पष्ट संकेत देते हैं, लेकिन हम उन्हें हमेशा समझ नहीं पाते।

राम

महाराजजी कुछ कहते और बाद में, अगर उन्होंने खुद का खंडन किया होता और उस विरोधाभास को बताया जाता, तो वे कहते, "मैंने ऐसा नहीं कहा था।"

राम

परीक्षा से ठीक पहले मैंने महाराजजी से आशीर्वाद के लिए पत्र लिखा। मैंने उनसे पूछा, “क्या मैं पास हो जाऊँगा?” लेकिन कोई जवाब नहीं आया। मैं फेल हो गया। अपनी पहली असफलता के बोझ तले दबा हुआ मैं कैंची भागा और वहाँ महाराजजी को मुस्कुराते हुए पाया। मैंने उन्हें बताया कि मैंने कई पत्र भेजे थे, लेकिन उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया।

उन्होंने जवाब दिया, "आप जानना चाहते थे। मैं झूठ नहीं बोल सकता, और सच्चाई बहुत कड़वी थी।"

मैंने पूछा, "क्या मुझे दोबारा परीक्षा देनी चाहिए?"

उसने जवाब दिया, "हां, इस बार तुम्हें कोई नहीं रोकेगा।"

मैं उत्तीर्ण हुआ।

राम

एक बार दो व्यक्ति दर्शन के लिए आए। वे महाराजजी के सामने खड़े होकर अपनी बड़ाई करने लगे, जिससे महाराजजी का धैर्य धीरे-धीरे कम होता गया। जब वे एक जगह रुके, तो महाराजजी ने उन्हें कठोर स्वर में विदा कर दिया। उनके जाते हुए उन्होंने हमारी ओर मुड़कर कहा, “ये लोग वहाँ खड़े होकर मुझसे झूठ बोल रहे थे—ये मुझे मूर्ख बनाने की कोशिश कर रहे थे! क्या इन्हें नहीं पता कि मैं ही तो पूरी दुनिया को मूर्ख बना रहा हूँ?”

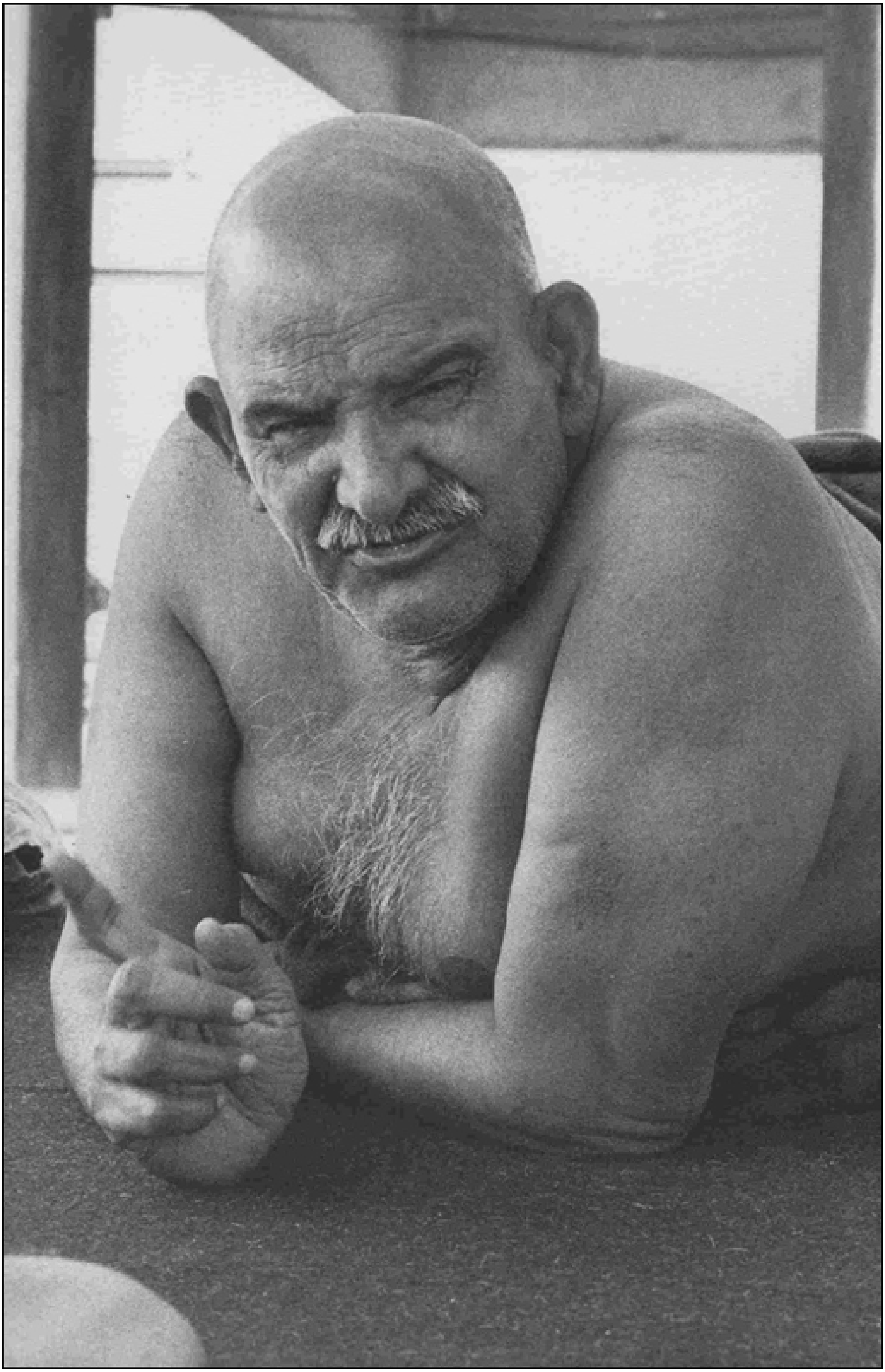

पैसे के बारे में

“कांचन (सोना),” महाराजजी उंगली हिलाते हुए कहते थे। सोना और कामुक इच्छा, ये दो मुख्य बाधाएँ थीं जो ईश्वर प्राप्ति में रुकावट डालती थीं। महाराजजी बार-बार इन घातक आकर्षणों, इन आसक्तियों के बारे में चेतावनी देते थे; लेकिन हममें से कितने कम लोग उनकी बात सुन पाते थे। वे पश्चिमी भक्तों को राजा कहते थे। हममें से अधिकांश लोग आर्थिक रूप से संपन्न परिवारों से आए थे, इसलिए हम जानते थे कि आर्थिक सुरक्षा अपने आप में दुखों से मुक्ति नहीं दिलाएगी। इस बात को जानना ही मार्ग पर एक बड़ा कदम था। कई भारतीय भक्तों ने केवल आर्थिक तंगी और अभाव ही झेला था, और उनके लिए यह सुनना अक्सर कठिन होता था कि सांसारिक सुरक्षा और स्वतंत्रता एक ही चीज़ नहीं हैं। फिर भी कुछ ऐसे भक्त भी थे, जिन्होंने भौतिक सुरक्षा का स्वाद कभी नहीं चखा था, फिर भी उन्हें इन बातों की कोई चिंता नहीं थी। ऐसा लगता था मानो वे सचमुच ईश्वर के लिए ही जन्मे हों।

महाराजजी का धन के विषय में हर व्यक्ति के प्रति अलग-अलग दृष्टिकोण था। जिन लोगों के लिए सोने का मोह मुख्य बाधा नहीं था, उनसे वे कभी इस विषय पर चर्चा नहीं करते थे। दूसरों से वे हर समय धन के बारे में बात करते रहते थे, जिससे भक्तों में भय और लोभ दोनों जागृत हो जाते थे, और शायद उस विशेष मोह के बुरे कर्मों को जड़ से उखाड़ फेंकते थे। अक्सर महाराजजी का यही सुझाव होता था कि लोग अपने शरीर, परिवार और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए जितनी आवश्यकता हो उतना धन बचाकर रखें और शेष गरीबों में बाँट दें। वे हमें बार-बार याद दिलाते थे कि यदि हम ऐसा करें और ईश्वर पर भरोसा रखें, तो सब कुछ ठीक हो जाएगा। कभी-कभी वे हमें एक-दो रुपये देते थे, जो उस समय ऐसा लगता था मानो वे हमें भविष्य की आर्थिक सुरक्षा का वरदान दे रहे हों। कुछ भक्तों ने उन रुपयों को संभाल कर रखा और तब से उन्हें कभी आर्थिक तंगी का सामना नहीं करना पड़ा। अन्य भक्तों ने वे रुपये तुरंत ही पहले भिखारी को दे दिए; उन भक्तों को भी कभी किसी चीज की कमी नहीं हुई। ऐसे वरदान को "लक्ष्मी (धन की देवी) का आशीर्वाद" कहा जाता है। ऐसा आशीर्वाद स्पष्ट रूप से महाराजजी का ही अधिकार था।

1969 में मैंने के.के. को पत्र लिखकर पूछा कि क्या मैं महाराजजी को कुछ पैसे भेज सकता हूँ। के.के. के पत्र के माध्यम से महाराजजी ने मुझे उत्तर दिया: “हमें किसी धन की आवश्यकता नहीं है। भारत सोने का पक्षी है। हमने ‘लेना’ नहीं, ‘देना’ सीखा है। जब तक हमारे मन में इन दो चीजों से आसक्ति है, तब तक हम ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते: (1) सोना और (2) स्त्री (हिंदी में, ‘कामिनी’)। दो तलवारें एक म्यान में नहीं रखी जा सकतीं; जितना अधिक हम त्याग करते हैं, उतना ही अधिक हमें लाभ होता है…।”

> यदि आपके पास पर्याप्त आस्था है, तो आप धन और संपत्ति का त्याग कर सकते हैं। ईश्वर आपको आपके आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक सब कुछ प्रदान करेगा।

एक छोटी, झुर्रियों वाली बूढ़ी औरत महाराजजी के दर्शन के लिए आई। मुझे लगता है कि वह आस-पास के किसी खेत से थी। लड़खड़ाते हुए बरामदे पर चढ़कर उसने महाराजजी के

चरणों को अपने सिर से छुआ और बैठ गई। फिर बड़ी मुश्किल से उसने अपनी साड़ी का किनारा खोला और उसमें से कुछ मुड़े-तुड़े रुपये के नोट निकालकर महाराजजी की ओर बढ़ा दिए। मैंने पहले कभी किसी को महाराजजी को पैसे देते नहीं देखा था और मैं कुछ असहजता के साथ देख रहा था, क्योंकि यह औरत स्पष्ट रूप से बहुत गरीब थी। महाराजजी ने पैसे वापस उसकी ओर धकेल दिए और इशारा किया कि वह उन्हें वापस ले ले। बिना किसी भाव के उसने पैसे उठाए और उन्हें अपनी साड़ी में वापस रखने लगी। उस स्थिति का पूरा अर्थ मैं समझ नहीं पाया, क्योंकि मैं उस संस्कृति को बहुत कम समझता था और जो हो रहा था उसे ठीक से नहीं समझ पाया।

लेकिन तभी महाराजजी ने अपना इरादा बदल लिया और माँ से पैसे वापस माँग लिए। गठिया से पीड़ित हाथों से ही उन्होंने साड़ी का कोना खोला और उन्हें नोट दे दिए। उनमें दो एक रुपये के नोट और एक दो रुपये का नोट था। (चार रुपये लगभग चालीस अमेरिकी सेंट के बराबर थे)। महाराजजी ने उनसे नोट लिए और तुरंत मुझे दे दिए। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करूँ। मैं एक "अमीर पश्चिमी" था (भारत में तो गरीब पश्चिमी भी "अमीर पश्चिमी" कहलाते हैं, क्योंकि दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाओं का मूल्य अलग है), मेरे पास निजी कार थी (भारत में यह एक दुर्लभ विलासिता है) और ट्रैवलर चेक भी थे। मैं ये पैसे स्वीकार नहीं कर पा रहा था। लेकिन जब मैंने उन्हें वापस देने की कोशिश की, तो महाराजजी ने मना कर दिया। मुझे पैसे अपने पास रखने को कहा गया।

उस रात मैंने चार रुपये अपनी पूजा की मेज पर रख दिए और काफी देर तक उन पर विचार किया, लेकिन कोई खास स्पष्टता नहीं मिली। बाद में, एक भारतीय भक्त ने मुझसे कहा कि मुझे पैसे संभाल कर रखने चाहिए, क्योंकि अगर मैं ऐसा करूंगा तो मुझे कभी किसी चीज की कमी नहीं होगी।

उस दौरान एक बूढ़ा सिख दंपत्ति मुझसे होटल में मिलने आने लगा था। उनकी एक छोटी सी सूखे मेवों की दुकान थी और वे ज़ाहिर तौर पर बहुत गरीब थे। फिर भी, हर बार जब वे आते, तो मेरे लिए सूखे मेवों का प्रसाद लाते, मेरे चरणों में घुटने टेकते और मुझे अपने जीवन की कठिनाइयों के बारे में विस्तार से बताते। मुझे नहीं पता कि उन्हें ऐसा क्यों लगा कि मैं उनकी आध्यात्मिक या भौतिक रूप से मदद कर सकता हूँ, लेकिन वे आते रहे। फिर एक दिन उन्होंने मुझे बताया कि बीमारी के कारण उन्हें यह इलाका छोड़कर मैदानों में जाना होगा, जहाँ उनकी आर्थिक स्थिति और भी खराब होने वाली थी। मुझे लगा कि मैं उन्हें उनकी यात्रा के लिए कुछ देना चाहता हूँ, लेकिन तुरंत कुछ समझ नहीं आया। तभी मुझे चार रुपये याद आए। मैंने एक रुपया निकाला और उन्हें समझाया कि यह मेरे पास कैसे आया और अगर वे इसे संभाल कर रखें, तो सब ठीक हो जाएगा। वे नैनीताल छोड़कर चले गए और तब से मैंने उनसे कोई संपर्क नहीं किया है। मेरे पास अभी भी तीन रुपये हैं। और अब तक मेरे पास हमेशा ज़रूरत से ज़्यादा पैसा रहा है। (आर.डी.)

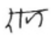

डीएस ने बताया कि महाराजजी ने उसे जो भी पैसे दिए थे, वो हमेशा संभाल कर रखता था, जो एक बार दो सौ रुपये से भी ज़्यादा थे। फिर किसी तरह वो सारे पैसे उसके घर से चोरी हो गए। उसके बाद, जब भी महाराजजी उसे पैसे देते, साथ में ये हिदायत भी देते कि उन्हें खोना

मत। डीएस ने अपने घर में एक छिपी हुई जगह से एक लिफाफा निकाला और मुझे दिखाया। उसके अंदर रुपये के नोटों का एक छोटा सा पैकेट था—दस, पाँच, दो और एक के नोट—सभी नोट कई बार एक साथ स्टेपल किए हुए थे।

राम

महाराजजी ने अपने कंबल के नीचे से दो रुपये निकाले और मेरे हाथ में थमा दिए। जब उन्होंने रुपये मेरे हाथ में रखे, तब उन्होंने कुछ कहा जो मैं सुन नहीं पाया। वे रुपये मेरे पास ज़्यादा देर नहीं रहे। मैंने एक रुपये मनाली के तिब्बती मंदिर में दान कर दिया और दूसरा एक भिखारी को दे दिया।

राम

मुझे नहीं पता कि उसे ये पैसे कहाँ से मिलते थे, पर वो मुझे पैसे दिया करते थे। एक बार तो वो मुझे बहुत सारे पैसे देने ही वाले थे कि मैंने पूछा क्यों? मैं तो काफी कमाता था और वो तो साधु थे। अगर वो मुझे ये अतिरिक्त पैसे दे दें तो शायद मैं फिल्म देखने या शराब पीने चला जाऊँ। मैंने उनसे पूछा, "क्या आपको ये अच्छा लगेगा?"

नहीं, उसने कहा, और इसलिए उसने मुझे पैसे नहीं दिए।

राम

एक बार उन्होंने मुझे पाँच रुपये और मेरी बहन को तीस रुपये दिए और कहा कि इन्हें अपने पास रखें। मेरी बहन ने पैसे रख लिए, लेकिन मैंने अपने पैसे किसी और को दे दिए। मैंने उनसे कहा कि मैं ये चीजें अपने पास नहीं रखूँगी।

राम

एक बार, उसके गायब होने से कुछ समय पहले, उसने मुझे सौ रुपये का नोट दिया। मैंने उससे कहा कि मुझे यह नहीं चाहिए, लेकिन उसने कहा कि मैं इसे रख लूँ; और जब मैंने फिर से मना किया, तो उसने कहा, "ठीक है, तो मैं इसे रख लूँगा।" मुझे नहीं पता कैसे हुआ, लेकिन मेरे जाने के बाद मुझे वह सौ रुपये का नोट मेरी जेब में मिला।

राम

स्वामी एन के पहले दर्शन के दौरान, महाराजजी ने उन्हें एक-एक रुपये के दस नोट दिए और उन्हें प्रसाद के रूप में रखने को कहा। स्वामी ने पैसे अपने पर्स में रख लिए, और उस दिन से उनके पास कभी पैसों की कमी नहीं हुई। उनके पर्स में हमेशा जरूरत से ज्यादा पैसे रहते हैं।

राम

उन्होंने मुझे दो रुपये दिए। लड्डू और प्रसाद के अलावा उन्होंने मुझे बस एक ही बार कुछ दिया था। मुझे वो दो रुपये अच्छी तरह याद हैं, मैं हैरान और परेशान थी क्योंकि मुझे समझ नहीं आ रहा था कि उनका क्या करूं। मैंने सोचा, "अब मैं क्या करूंगी? ये पैसे किसलिए हैं?"

राम

एक दिन यह व्यक्ति मेरे घर में रहने वाले एक साधु के दर्शन करने आया। उसने वहाँ रखी महाराजजी की तस्वीर देखी और कहा, "मैं उन्हें जानता हूँ। मैं उन्हें जानता हूँ," और महाराजजी के साथ अपने दर्शन की कहानी सुनाने लगा।

वह एक छोटा लड़का था और दुनिया से बहुत नाराज़ था। एक दिन वह एक पुराने शिव मंदिर

गया, और वहाँ मंदिर परिसर में महाराजजी सो रहे थे। (उस व्यक्ति ने महाराजजी का सटीक वर्णन किया, जो ज़मीन पर लेटे हुए थे, केवल धोती पहने हुए थे और एक चादर ओढ़े हुए थे।) महाराजजी उठ बैठे और तुरंत लड़के को अपने लिए दूध लाने का आदेश दिया। लड़का अपने इस व्यवहार से बाबा पर क्रोधित हो गया। महाराजजी ने अपनी चादर के नीचे से तीस रुपये निकाले और उसे दूध खरीदने को कहा। लड़का पैसे लेकर भागा और लगभग आधा किलो दूध लेकर लौटा। उसने बाकी पैसे अपनी जेब में रख लिए और महाराजजी ने कभी नहीं मांगे। वह पैसे लेकर चला गया, जिसकी उसके परिवार को बहुत ज़रूरत थी। महाराजजी जानते थे कि उनसे यह पूछना उचित नहीं है कि उन्हें पैसे की ज़रूरत है या उन्हें उपहार देना है। लड़का बहुत स्वाभिमानी था, इसलिए महाराजजी ने उसे चालाकी से पैसे ले लिए।

राम

एक बार जब हम सब कैंची घाटी में रह रहे थे, बलराम ने महाराजजी से पूछा कि क्या हमें घर की मरम्मत के लिए किसी से पैसे मांगने चाहिए। महाराजजी ने कहा, हाँ, हमें हरिनाम को पत्र लिखना चाहिए। मैंने एक एयरोग्राम पर पत्र लिखा, जिसे हमने भेजने से पहले महाराजजी को दिखाया। बलराम ने उसे मोड़कर सील कर दिया और डाक से भेज दिया। जब हरिनाम ने जवाब दिया, तो उन्होंने कहा कि वे पैसे भेज देंगे और उन्हें अच्छा लगा कि हमने दो रुपये का नोट साथ में भेजा, लेकिन हमने उसे क्यों रखा था? हमने उस पत्र में कोई दो रुपये का नोट नहीं रखा था, और जहाँ तक मुझे याद है, महाराजजी ने कभी इसका ज़िक्र नहीं किया। यह उनकी पैसे से जुड़ी छोटी-मोटी तरकीबों में से एक थी।

> पैसा कभी समस्या नहीं होता। मुश्किल तो इसके सही इस्तेमाल में होती है। लाखों-करोड़ों रुपये आसानी से मिल जाते हैं, अगर उन्हें बुद्धिमानी से इस्तेमाल किया जाए।

हाल ही में मुझे दिल्ली के पास स्थित महाराजजी के मंदिर में ध्यान कक्ष के निर्माण के लिए उपयुक्त माध्यम चुनने की समस्या का सामना करना पड़ा। एक दिन वहाँ जाते समय मेरी मुलाकात दो लोगों से हुई जिन्होंने खुद को वास्तुकार बताया। मुझे उनकी बातों में रुचि हुई, इसलिए मैंने उनसे पूछा कि वे किस तरह का काम करते हैं। उन्होंने बताया कि वे पटना में एक पांच सितारा होटल का डिज़ाइन तैयार कर रहे हैं। इससे मुझे लगा कि वे अच्छे वास्तुकार होंगे, इसलिए मैंने उनसे मंदिर में दस मिनट रुककर मेरी समस्या पर सलाह देने का अनुरोध किया। मंदिर और महाराजजी के चित्र देखकर उनमें से एक ने कहा, “तो यह है आश्रम! मैं उन्हें जानता हूँ। वे मेरे जीवन का प्रेरणास्रोत हैं!” मैंने उनसे पूछा कि उनका क्या मतलब है।

उन्होंने बताया कि जब वे छोटे थे, तो उनका परिवार उन्हें महाराजजी से मिलने ले गया था। महाराजजी ने उनकी ओर मुड़कर पूछा, “क्या समस्या है? तुम क्या चाहते हो?” और लड़के ने उत्तर दिया, “पैसा।”

फिर महाराजजी ने अपने कंबल के नीचे से दस रुपये का नोट निकाला। यह देखकर सब हंस पड़े और थोड़ी देर बाद सब चले गए। लड़के के परिवार ने प्रसाद के पैसों से फिल्म देखने का सुझाव दिया, लेकिन उसने पैसे देने से इनकार कर दिया और आज तक उसे संभाल कर रखा है। जब भी उसे पैसों की जरूरत पड़ी है, वह उसे मिल गए हैं। अगर उसे शाम तक दस हजार रुपये

की जरूरत होती है, तो दोपहर तक उसके हाथ में आ जाते हैं—यह सब सिर्फ एक या दो दर्शनों से मिले विश्वास के कारण संभव हुआ है।

महाराजजी के प्रति आभार व्यक्त करते हुए, वास्तुकार ने स्वेच्छा से निःशुल्क ध्यान भवन के डिजाइन में सहायता करने की पेशकश की।

राम

एक बार जब वी घर लौटने वाले थे, तो उन्हें पता चला कि उनके पास पैसों की थोड़ी कमी है। इसलिए उन्होंने दो सौ रुपये उधार लेने का इंतजाम किया और फिर रवाना होने से पहले महाराजजी को प्रणाम करने कैंची गए। महाराजजी ने उन्हें आशीर्वाद दिया और विदा किया। फिर उन्होंने वी को वापस बुलाया और कहा, “तुमने अपना कार्यक्रम बदल दिया है। तुम लखनऊ नहीं जा रहे हो। तुम्हारे पास पैसे खत्म हो गए हैं। तुम्हारे पास दो सौ रुपये कम हैं।” महाराजजी ने मंदिर के संदूक की चाबियों वाले पुजारी को बुलाया, लेकिन पुजारी चाबियों के साथ बाजार में थे। महाराजजी ने वी को हनुमान जी से प्रार्थना करने के लिए भेजा और फिर तुरंत उन्हें वापस बुला लिया।

महाराजजी ने अपने कंबल के अंदर हाथ डालकर दो सौ रुपये निकाले। वी ने पूछा कि उन्हें ये पैसे कहाँ से मिले, तो महाराजजी ने बताया कि जब वी हनुमान जी से मिलने बाहर गया था, तो कोई कमरे में आया और उसे ये पैसे दे दिए।

राम

जब मैं छोटी थी, मेरे पास पैसे नहीं होते थे, लेकिन महाराजजी हमेशा कहते रहते थे कि मेरे पास बहुत पैसा है। मेरे पिताजी और मैं सब्ज़ी का व्यापार करते थे, और जब भी मैं सब्ज़ियाँ लाती, मुझे कभी भी पूरी कीमत नहीं मिलती थी। महाराजजी जो भी देते, मैं उसे ले लेती, लेकिन पिताजी को नहीं बताती थी क्योंकि वे नाराज़ हो जाते। लेकिन मुझे कभी भी हिसाब-किताब का सही हिसाब नहीं मिलता था। एक बार तो मैंने यह भी कह दिया, “महाराजजी, जो खाना मैं लाई हूँ, उसके बदले में ये बहुत कम पैसे मिल रहे हैं।”

महाराजजी ने कहा, “कोई बात नहीं। इसे ले लो।” एक बार उन्होंने कहा, “तुम्हें एक घर मिलेगा।” और बाद में, “सब कुछ दान कर दो।” अब मेरे पास एक घर और दो दुकानें हैं। महाराजजी की कृपा से मैं एक अमीर आदमी हूँ।

राम

केके ने उनके लिए कटे हुए फलों की एक पत्तल (पत्तेदार थाली) तैयार की थी, और जब वह महाराजजी से बात कर रहे थे, तो उन्होंने फल आगे बढ़ाए और महाराजजी ने थोड़ा-थोड़ा खा लिया। महाराजजी ने मुझे वहाँ से बुलाया जहाँ हम पश्चिमी लोग बैठे थे। उन्होंने कहा, "उस पीटर को यहाँ लाओ।" (यह तब की बात है जब उन्होंने मुझे मेरा नाम नहीं बताया था।) उन्होंने पूछा, "तुम मुझे क्या दोगे?"

मैंने कहा, "बाबा, मैं आपको अपना सब कुछ दे दूंगा।" इसका संबंध उनकी पिछली बातचीत से था, जब उन्होंने मुझे उन भारतीयों के साथ चल रही बातचीत में अपनी बात रखने के लिए बुलाया था।

उन्होंने भारतीयों की ओर मुड़कर कुछ इस तरह कहा, “क्या तुम यह देख रहे हो? क्या तुमने

वह सुना?” फिर उन्होंने केके के हाथ में पकड़ी हुई पत्तल से सेब उठाए और उन्हें अपने हाथों से मेरे हाथों में रखते हुए कहा, “इन सेबों के बदले मैं तुम्हें बहुत सारे डॉलर दूंगा।” उन्होंने “डॉलर” शब्द अंग्रेजी में कहा। (भारतीयों ने बाद में मुझसे कहा, “क्या तुम्हें पता है उन्होंने क्या कहा? क्या तुम्हें पता है तुम्हें अभी क्या आशीर्वाद मिला है?!”)

मैंने उनसे उत्तर देते हुए कहा, “महाराज जी, किस प्रकार का धन? मुझे तो केवल आध्यात्मिक धन चाहिए।”

और उन्होंने कहा, "नहीं! बोहुत डॉलर (नहीं, कई डॉलर)! जाओ।"

आप देख सकते हैं कि यह आशीर्वाद मेरे डॉक्टर बनने के लिए अनुचित नहीं है, क्योंकि सभी को लगता है कि डॉक्टर बहुत पैसा कमाते हैं। अगर मैं महाराजजी के कहे अनुसार धनी हो जाता हूँ, तो मैं कुछ व्यवसाय शुरू करना चाहूँगा जिससे सत्संग के कई साथी भक्तों को रोजगार मिल सके।

> पैसा एक बाधा है। ईश्वर के साथ एकाग्र व्यक्ति को पैसे की आवश्यकता नहीं होती।

कैंची में एक दुकानदार था जिसकी बेटी की शादी जल्द ही होने वाली थी, लेकिन उसके पास शादी के लिए पर्याप्त पैसे नहीं थे। महाराजजी ने उसे चिंता न करने को कहा; तीन दिन में उसके पास बहुत सारा पैसा आ जाएगा। तीन दिन बाद भूस्खलन हुआ और सड़क अवरुद्ध हो गई, जिससे सभी कारों और ट्रकों को वहीं रुकना पड़ा। शादी की तैयारी में उसने जो भी अनाज और खाद्य सामग्री इकट्ठा की थी, वह उन लोगों ने खा ली, और इस तरह उसे बहुत सारा पैसा मिल गया।

राम

महाराजजी कानपुर में कुछ दिनों के लिए ठहरते थे। वहाँ भारत के सबसे धनी व्यक्तियों में से एक रहते थे, जिनका पूरा परिवार उनका भक्त था। महाराजजी कभी उनके आलीशान घर नहीं गए थे, और एक बार जब वे वहाँ गए तो उनके परिवार ने उनसे आने का आग्रह किया। वे अपने साथ बहुत से लोगों को लेकर आए। परिवार ने पूजा की और फिर कई तरह के स्वादिष्ट पकवानों की भव्य दावत दी। उन्होंने महाराजजी को यह बताने की कोशिश की कि पहले क्या खाएँ, फिर यह, फिर वह। लेकिन महाराजजी ने मिठाई, करी, फल, सब्जियाँ सब एक ही कटोरे में डाल दीं, उन्हें मिलाया और खा लिया। जब उनका भोजन समाप्त हो गया तो उन्होंने उस धनी व्यक्ति के सारथी को अपने साथ लिया, जिनसे उन्हें बहुत लगाव था (जो उन्हें अमरकंटक की कई दिनों की यात्रा पर भी ले गया था), और गाड़ी में बैठकर चले गए। महाराजजी ने उससे कहा, "अब चलिए आपके घर चलते हैं।"

कानपुर के एक बेहद गरीब इलाके की झुग्गी बस्ती में रहने वाले ड्राइवर को महाराजजी की बात पर यकीन नहीं हुआ, लेकिन वह ज़िद पर अड़ा रहा। वहाँ पहुँचकर महाराजजी ने कहा, “मुझे भूख लगी है। मेरे लिए खाना लाओ।” बहुत गरीब होने के कारण उनके घर में कुछ भी नहीं था। परिवार पहले ही खाना खा चुका था और रोटियाँ बनाने में समय लगता। महाराजजी ने कहा, “नहीं, उस डिब्बे में गुड़ है। उसे मेरे पास लाओ!” वे गए और गुड़ ढूंढ लाए और महाराजजी ने उसे बड़े चाव से खाया।

मैंने एक बार शिकायत की थी कि महाराजजी केवल अमीरों से ही मिलने जाते हैं; तब उन्होंने मुझे कुछ दिनों के लिए एक छोटे से गरीब कमरे में मोची के साथ रहने के लिए ले गए। हालाँकि हम बहुत तंग जगह में रहते थे, फिर भी महाराजजी खुश थे।

राम

वह गरीबों के बीच सबसे ज्यादा खुश नजर आता था। उनके साथ रहने पर उसके चेहरे पर एक सौम्य और प्रसन्न भाव आ जाता था।

राम

महाराजजी ने शिकायत कर रहे एक भक्त से कहा, "तुम्हारे भाग्य में धन नहीं है, तो मैं क्या कर सकता हूँ?"

राम

एक धनी व्यक्ति दर्शन के लिए आया था और महाराजजी से धनवान बनने का आशीर्वाद मांग रहा था। महाराजजी ने उससे कहा, “देखो, तुम पहले से ही बहुत धनी हो। मैं तुम्हें धनवान बनने का कोई आशीर्वाद नहीं देने वाला।” यह व्यक्ति टाटा (भारत के सबसे धनी व्यक्तियों में से एक) जितना धनवान बनने का आशीर्वाद चाहता था।

महाराजजी ने बिरला (एक और अत्यंत धनी भारतीय) की कहानी सुनाना शुरू किया। बिरला एक साधारण व्यक्ति थे, जो अपने गुरु के पास गए और उनसे भारत के सबसे धनी व्यक्ति बनने की प्रार्थना की। उनके गुरु ने बिरला को प्रतीक्षा करने और सेवा करने के लिए कहा, इसलिए बिरला ने अपने गुरु की सेवा करना शुरू कर दिया—शौचालय साफ करना, धोती धोना, और भी बहुत कुछ। कई साल बीत गए, लेकिन उनके गुरु ने उन्हें असीम धन का आशीर्वाद देने का ज़िक्र तक नहीं किया। बिरला ने दस वर्षों तक अपने गुरु की निष्ठापूर्वक सेवा की, और फिर कभी अपनी इस इच्छा का उल्लेख नहीं किया।

एक दिन गुरु ने बिरला को बुलाया और कहा, “ठीक है। ये लो,” और उन्होंने एक लोटा लिया और उसमें पेशाब किया। “इस पेशाब से भरे लोटे को लो। इसे ढक दो और कलकत्ता जाने वाली ट्रेन में चढ़ जाओ। कलकत्ता पहुँचकर ट्रेन से उतर जाओ। ट्रेन से उतरकर पेशाब पी लो। यही आशीर्वाद है।”

तो बिरला ने आज्ञा का पालन किया। जब वे कलकत्ता पहुँचे, तो उन्होंने मूत्र पिया, जो उस समय तक चमत्कारिक रूप से अमृत में परिवर्तित हो चुका था, इसलिए मुझे लगता है कि उन्हें उल्टी नहीं आई होगी। एक के बाद एक घटनाएँ होती गईं और वे भारत के सबसे धनी व्यक्ति बन गए।

यह कहानी सुनकर धनी व्यक्ति ने कहा, “महाराज जी, महाराज जी! मुझे आपका पेशाब पीने दीजिए!”

नहीं, नहीं, नहीं, नहीं। मैं तुम्हें पेशाब नहीं दूंगा।

“कुछ भी, कुछ भी! मुझे अपना पेशाब दो!”

और महाराजजी ने कहा, “अरे नहीं। मैं तुम्हें धन-दौलत का आशीर्वाद नहीं दूंगा। मैं केवल तुम्हारे पोतों को आशीर्वाद दूंगा। मैं तुम्हें आशीर्वाद नहीं दूंगा। तुम्हारे पास पहले से ही पर्याप्त धन-दौलत है।”

ठीक है, ठीक है। करो। करो। कुछ भी करो।

यह सिलसिला तब तक चलता रहा जब तक महाराजजी आखिरकार मान नहीं गए और बोले, “मैं तुम्हें पेशाब नहीं दूंगा। मैं तुम्हें रोटी का एक टुकड़ा दूंगा।” फिर महाराजजी ने हमसे पूछा, “क्या किसी के पास रोटी है? किसी के पास रोटी है?” मुझे पहले रोटी का एक छोटा टुकड़ा मिला था; मैंने उसमें से एक टुकड़ा खा लिया था और बाकी अपने हाथ में रख लिया था। मैंने अपना आधा खाया हुआ टुकड़ा महाराजजी को दे दिया, जिन्होंने उसे आशीर्वाद दिया और अमीर आदमी को दे दिया।

उन्होंने कहा, "ओह, यह तो बहुत ही बढ़िया बात है।" वे बेहद खुश थे।

फिर महाराजजी किसी और विषय पर बोलने लगे, और जब वे बोल रहे थे, तभी एक अन्य भक्त ने उस धनी व्यक्ति की ओर मुड़कर कहा कि रोटी अपवित्र है क्योंकि मैंने उसमें से कुछ खा ली थी। यह सब महाराजजी की पीठ पीछे हो रहा था। धनी व्यक्ति ने रोटी मुझे वापस दे दी—वह रोटी जिसने मुझे करोड़पति बना दिया था! मैंने उसे खा लिया!

राम

महाराजजी हमेशा मुझसे कहते थे कि अपना पैसा खर्च करो: “खर्च करो। बचाओ मत। पैसा बहता रहे। जरूरतमंदों को दो। खर्च करो।”

राम

जब मैं पहली बार महाराजजी से मिला, तब मेरे पास पैसे नहीं थे और पश्चिम लौटने का मेरा हवाई टिकट एक हफ्ते में ही खत्म होने वाला था। लेकिन यह मानते हुए कि "पैसे से चिपके रहना ईश्वर में आस्था की कमी है," मैं वहीं रुका रहा। लगभग दो साल बीत गए, इस दौरान मेरी हर ज़रूरत पूरी होती रही, लेकिन मेरे पास कभी सच में पैसे नहीं थे। फिर मुझे पता चला कि मुझे एक हज़ार डॉलर विरासत में मिले हैं। मैंने तुरंत मन ही मन सारी रकम महाराजजी को अर्पित कर दी और पैसे भारत भेज दिए। जब मैं पैसे लेने दिल्ली जा रहा था, तो मैंने महाराजजी से पूछा कि मैं उनके लिए क्या ला सकता हूँ। उन्होंने बीस झाड़ू और दूध पाउडर के कई डिब्बे मांगे, और जब मैं दरवाजे से बाहर जा रहा था, तो उन्होंने मुझे वापस बुलाया और एक कंबल लाने को कहा। कंबल ही वह पहली चीज़ थी जो मैंने उस पैसे से खरीदी।

जब मैं कैंची लौटा, तो महाराजजी हर दिन मुझसे कुछ न कुछ पैसे मांगते थे, जैसे कि दूसरे पश्चिमी लोग मांगते थे। मैं हमेशा दे देता था। वो मेरे पैसे नहीं थे। फिर, जब मेरे पास लगभग सारे पैसे खत्म हो गए, सिर्फ एक बीस डॉलर का ट्रैवलर चेक बचा था, तो महाराजजी ने मुझे उसे भुनाने से मना कर दिया। लगभग एक हफ्ते बाद उन्होंने मुझे नेपाल भेज दिया और मुझसे वहाँ चार महीने रहने को कहा।

ज़ाहिर है, अब मेरे पास पैसे नहीं थे। उन्होंने कुछ लोगों से मुझे पैसे देने को कहा—कुल मिलाकर शायद पाँच सौ रुपये—और मुझे विदा कर दिया। नेपाल में, एक साथी के साथ यात्रा करते समय, मेरे सारे रुपये खो गए। हम जानते थे कि यह महाराजजी का ही काम था, और जब हम वापस छात्रावास की ओर जा रहे थे, तो एक छोटा लड़का मुस्कुराते हुए हमारे पास आया और पूछा कि क्या सब ठीक है, बिल्कुल वैसे ही जैसे महाराजजी पूछते हैं। हम दोनों को लगा कि यह वही है। छात्रावास में मुझे बीस डॉलर वापस मिल गए, और उसी से हम काठमांडू लौट आए।

काठमांडू में ही हमें पता चला कि महाराजजी ने देह त्याग दी है।

धन का उपयोग दूसरों की मदद के लिए किया जाना चाहिए।

कौसानी में गर्मियों के दौरान, एक पश्चिमी श्रद्धालु ने मुझसे कहा कि वह महाराजजी को कुछ धन देना चाहता है। उसने काफी धन कमाया था और उसे विरासत में भी मिला था। वह चुपचाप उदारता दिखाते हुए सत्संग के उन सदस्यों की मदद करता रहा था जिनके अपने धन खत्म हो गए थे। उसने मुझसे पूछा कि मेरे विचार से उसे महाराजजी को कितना धन देना चाहिए।

मैंने सुझाव दिया, “आप अपना सारा पैसा महाराजजी को क्यों नहीं दे देते?” उन्होंने कहा, “चूंकि आप कहते हैं कि आपकी एकमात्र चिंता यह है कि आपके पैसे का उपयोग सजगतापूर्वक हो—और यदि महाराजजी आपके गुरु हैं तो आपको यह स्वीकार करना होगा कि वे आपसे अधिक सजग हैं—स्पष्ट रूप से उन्हें ही आपके पैसे के संबंध में निर्णय लेना चाहिए। यदि उन्हें लगता है कि आपको इसके लिए जिम्मेदार होना चाहिए, तो वे इसे आपको वापस कर देंगे।”

लेकिन भक्त की सोच अलग थी, इसलिए उसने महाराजजी को लगभग दो हजार डॉलर दे दिए। अब, हमारी रोज़ाना की मुलाकातों में महाराजजी मुझसे अक्सर पूछते रहते थे कि मुझे क्या लगता है कि उन्हें उस पैसे का क्या करना चाहिए—क्या मुझे लगता है कि वह पैसा भक्त को लौटा देना चाहिए या नहीं?

हालांकि मुझे इन सब बातों के परिणाम समझ नहीं आए, फिर भी मैंने महाराजजी से भक्त को पैसे लौटाने का आग्रह किया, शायद इसलिए क्योंकि मुझे लगा कि दान देना आस्था की कमी को दर्शाता है। उस समय तो पैसे लौटा दिए गए, लेकिन अंततः क्या हुआ, मुझे नहीं पता… (आर.डी.)

राम

हाँ, मुझे याद है। अगले वर्ष, जब यह भक्त भारत छोड़ने वाला था, तो उसने महाराजजी को पैसे देने का एक और प्रयास किया। दिल्ली में उसने अपने बचे हुए पैसे रुपयों में बदलवाए और मुझे दे दिए, क्योंकि मैं भारत में ही रह रहा था। मैंने पैसे देने का एक और प्रयास करने का वादा किया और कहा कि अगर वह स्वीकार नहीं हुआ, तो मैं उसे अमेरिका में लौटा दूँगा। मैं रुपयों का वह बड़ा सा बंडल लेकर कैंची वापस गया और दादाजी से इस बारे में निजी तौर पर बात की। कुछ दिनों बाद जब सत्संग के लोग नैनीताल वापस जाने वाली बस पकड़ने वाले थे, तो दादाजी ने घोषणा की कि मुझे कैंची में रात भर रुकना है। इससे काफी हलचल मच गई, क्योंकि ऐसा लग रहा था कि मुझे कोई रहस्यमय विशेष अधिकार दिया जा रहा है। मैं भी बाकी लोगों की तरह ही हैरान था, क्योंकि अब तक मुझे रुपयों का बंडल साथ रखने की आदत हो चुकी थी और मैं उन्हें लगभग भूल ही गया था। शाम के दर्शन और भोजन के बाद, जब हम सब रात के लिए अपने कमरों में चले गए, तो दादाजी टॉर्च हाथ में लिए हुए आए और मुझे अंधेरे मंदिर तक ले गए। वहां मुझे ऐसा लगा मानो मैं सोते हुए हनुमानजी की धीमी सांसें सुन रहा था, जबकि मैं धीरे-धीरे दान पेटी के संकरे छेद से रुपये डाल रहा था।

राम

महाराजजी ने कहा, "गरीबों की सेवा करो।"

“गरीब कौन है, महाराजजी?”

ईसा मसीह के सामने हर कोई गरीब है।

राम

यह मेला था। महाराजजी का वहाँ एक तम्बू लगा हुआ था और आने वाले सभी भक्तों को लगातार प्रसाद बाँटा जा रहा था। लोग सुबह आठ बजे से दोपहर दो-तीन बजे तक खाना बना रहे थे। भारत का सबसे बड़ा करोड़पति वहाँ पहुँचा, और महाराजजी ने तुरंत चिल्लाकर कहा, “चले जाओ! मैं तुम्हारा चेहरा नहीं देखना चाहता! बाहर निकलो! चले जाओ!”

उस व्यक्ति ने कहा, “जी महाराज जी, मैं आपके भंडारे में आपके लिए आटे की ये दो बोरियाँ लेकर आया हूँ, ताकि आप इन्हें गरीबों में बाँट सकें। कृपया स्वीकार कीजिएगा।”

महाराजजी चिल्लाए, “नहीं! चले जाओ! मुझे अपना चेहरा मत दिखाओ। यहाँ मत आओ।”

जब वह आदमी फिर भी नहीं गया, तो महाराजजी उठकर स्वयं चले गए। फिर भी वह आदमी नहीं गया। वह महाराजजी के पीछे-पीछे चलते हुए बोला, “हे महाराजजी, मुझे कुछ शिक्षा दीजिए। मुझे क्या करना चाहिए?”

महाराजजी ने उत्तर दिया, “मैं तुम्हें क्या शिक्षा दूं? क्या तुम मेरा अनुसरण करोगे? यदि मैं तुम्हें शिक्षा दूं, तो क्या तुम मेरा अनुसरण करोगे?”

वह आदमी चुप रहा।

महाराजजी ने उससे कहा, “तुम्हारे पास जो भी धन है, उसे गरीबों को दे दो। यही मेरी शिक्षा है। क्या तुम इसका पालन करोगे?”

धन का त्याग करो, और सारी दौलत तुम्हारी हो जाएगी।

महाराजजी बार-बार यही दोहराते थे कि धन से आसक्ति नहीं रखनी चाहिए, क्योंकि इससे केवल कष्ट ही होता है। वे एक ऐसे व्यक्ति की कहानी सुनाना पसंद करते थे जिसने बहुत धन कमाया, जिसका बेटा धन का इतना लालची हो गया कि वह अपने पिता के पास बंदूक लेकर उसमें से कुछ धन मांगने आया। तब पिता ने कहा,

"यह सब ले।"

मैंने अमेरिका में बार-बार देखा था कि कैसे पैसा परिवारों में कितनी मुसीबतें खड़ी कर देता है और एक धनी पिता और उसके बच्चों के बीच कितना लालच और कड़वाहट पैदा हो सकती है—सब कुछ पैसे के लिए। हालाँकि मेरे मन में अपने पिता के लिए ऐसा भाव नहीं था, लेकिन मैं इस बात से अनजान नहीं था कि एक दिन उनकी मृत्यु के बाद मुझे बहुत सारा धन विरासत में मिलेगा। फिर एक दिन महाराजजी ने मुझे अपने पास बुलाया और पूछा, “तुम्हारे पिता के पास बहुत धन है?”

जी हां, महाराजजी।

“क्या वह इसे तुम्हारे भरोसे छोड़ने जा रहा है?”

“इसका एक हिस्सा वह मेरे लिए छोड़ जाएगा।” मुझे अपने पिता के उस गर्व की याद आई जब उन्हें अपने पिता की असमय मृत्यु के कारण हुई अपनी पिछली आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था, और उन्होंने आर्थिक सुरक्षा कैसे बनाई थी ताकि उनके किसी भी बच्चे को कभी भी उन कठिनाइयों का सामना न करना पड़े जिनका सामना उन्होंने किया था।

आपको अपनी विरासत स्वीकार नहीं करनी है।

मैंने तो कभी इस बारे में सोचा भी नहीं था। यह जानकर कि मैं इस पैसे का निजी इस्तेमाल नहीं कर पाऊँगी, मुझे बहुत अच्छा लगा। हालाँकि मैंने अपने पिता को कभी नहीं बताया कि मैं उनकी विरासत में अपना हिस्सा नहीं लूँगी, फिर भी हमारे बीच कुछ बदल गया और उनका मुझ पर भरोसा बढ़ता ही गया। आखिरकार उन्होंने मुझे अपना अधिकार पत्र दे दिया और मुझे अपनी संपत्ति का कार्यकारी बना दिया। उनके निधन के बाद मुझे उनके द्वारा मेरे लिए निर्धारित हिस्से को छोड़ना बहुत आसान लगा। (आर.डी.)

धन के प्रति आसक्ति ईश्वर में आस्था की कमी है।

महाराजजी ने जे के भाई से कहा कि वह अपनी सारी संपत्ति दान कर दे। जे के भाई ने कहा, "नहीं महाराजजी, मेरे परिवार का क्या होगा?"

महाराजजी ने कहा, “तुम्हें इससे भी बहुत कुछ मिलेगा। सब कुछ मुझे दे दो। सब कुछ मुझे दे दो।”

कभी-कभी महाराजजी हल्द्वानी को संदेश भेजकर जे के भाई से रेल टिकट मंगवाते थे, लेकिन भाई टिकट न लाने के लिए छिप जाता था। अंत में महाराजजी ने कहा, “मैं जे पर कृपा कर रहा हूँ। तुम लालची हो। अब तुम्हें इसका फल भुगतना पड़ेगा।” उस समय जे गरीब था और बाकी सभी भाई अमीर थे। लेकिन अब जे की आर्थिक स्थिति अच्छी है और उस एक भाई का कारोबार ठप हो गया है और उसके पास कुछ भी नहीं बचा है।

पैसा चिंताएं लाता है।

पहले के वर्षों में महाराजजी एक साधु के साथ भ्रमण करते थे। साधु धन-संपत्ति को सहेजने लगे और उन्होंने कुछ धन अपने एक भक्त को सौंप दिया। महाराजजी उस भक्त के पास गए और उसे समझाया कि वह आधी राशि अपनी पुत्री के दहेज में दे दे। यह सुनकर साधु महाराजजी से क्रोधित हो गए। तब महाराजजी ने कहा, “तुम अपना ही नुकसान कर रहे हो। यह सब त्याग दो।” साधु को समझ आ गया कि वह वास्तव में फंस गए हैं, और उन्होंने एक बड़ी आग लगाई और अपना सारा सामान जला दिया। महाराजजी ने उनके बारे में कहा कि वे एक अच्छे संन्यासी थे।

राम

एक दिन जब मैं महाराजजी और एक अनुवादक के साथ अकेला था, महाराजजी मुझे धन के बारे में चेतावनी दे रहे थे। “गृहस्थ के लिए धन ठीक है, लेकिन योगी के लिए यह सबसे बुरा है। धन तुम्हारा शत्रु है। तुम्हें धन को हाथ नहीं लगाना चाहिए।”

मैंने उनसे पूछा कि क्या दैनिक जरूरतों के लिए पर्याप्त धन रखना ठीक नहीं है? उन्होंने कहा कि यह ठीक है: "अपनी जरूरतों के लिए जितना आवश्यक हो उतना ही धन रखो और बाकी को बांट दो।" खैर, इस निर्देश ने मुझे वह सारी स्वतंत्रता दे दी जिसकी मुझे जरूरत थी, क्योंकि आखिर "जरूरतों" को कौन परिभाषित करता है?

कुछ ही देर में महाराजजी मेरी पैसों की उपलब्धता के बारे में हमारी पिछली बातचीत पर लौट आए।

पैसा आपका दुश्मन है। आपको इसे छूना नहीं चाहिए।

“लेकिन महाराज जी, क्या दैनिक आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त धन रखना ठीक नहीं है?”

लेकिन इस बार उन्होंने उत्तर दिया, “नहीं! धन किसी संत के माध्यम से नहीं, बल्कि उनके चारों ओर घूमना चाहिए।” उन्होंने इस खामी को भर दिया था।

उस रात जब मैं होटल लौटा तो मैंने सोचा कि इन नए निर्देशों के लिए कुछ कार्रवाई की आवश्यकता है, कम से कम पैसों के साथ कुछ प्रयोग शुरू करने की, इसलिए मैंने कुछ समय के लिए सचमुच पैसों को न छूने का फैसला किया। जेब में पैसे न होने से, जब भी मैं जेब में हाथ डालता, तो पैसों के इस्तेमाल के प्रति सचेत होने का मौका मिलता। लेकिन दूसरी ओर, मैंने सोचा, मैं आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भर नहीं होना चाहता था। ज्यादातर भारतीय और न ही ज्यादातर पश्चिमी लोग ऐसा कर सकते थे। इसलिए, पहले प्रयोग के तौर पर, मैंने अपने सारे पैसे एक पश्चिमी व्यक्ति को सौंप दिए, और वह मेरा "बैग मैन" बन गया। वह बस का किराया वगैरह देता था। हालांकि मैं समझता था कि यह महाराजजी के निर्देश की भावना के विपरीत था, लेकिन कम से कम यह नियम के अक्षरशः पालन करता था, "आपको पैसे नहीं छूने चाहिए।" बेशक, मैं जानता था कि महाराजजी का मतलब कुछ और था। वर्षों से उनके निर्देश के फलस्वरूप, मैं अभी भी शारीरिक रूप से पैसों का लेन-देन करता हूँ, लेकिन मैंने अपने मन से पैसों को कम से कम "छूना" सीख लिया है। (आर.डी.)

एक संत कभी पैसा स्वीकार नहीं करता।

जब एक परिवार के बेटे की सगाई तय हुई, तो वे महाराजजी के लिए मिठाई लेकर आए। महाराजजी ने कहा, “मुझे तुम्हारी ही याद आ रही थी। अच्छा हुआ तुम आ गए। तो तुम्हारे बेटे की सगाई हो गई और तुम्हें ससुराल वालों से पैसे भी मिल गए। चाचा-चाची को सौ-सौ रुपये मिले। मेरा क्या? मुझे भी सौ रुपये मिलेंगे?”

राम

मैंने महाराजजी का नाम पहली बार लगभग दस साल पहले कानपुर में सुना था। लोग कहते थे कि वे बहुत ही उच्च कोटि के महात्मा हैं और उन्हें सब कुछ पता है। एक मित्र ने महाराजजी के दर्शन के बारे में बताया: “मैंने उन्हें देखा है। उनके हाथों में कोई शक्ति या कोई अलौकिक सा साया है। इसी से उन्हें सब कुछ पता चलता है। यह कोई आध्यात्मिक शक्ति नहीं है, बल्कि कोई अलौकिक सा साया है।”

कुछ प्रभावशाली व्यापारी महाराजजी के पास गए और उन्होंने उन्हें एक विशेष प्रकार का सामान खरीदने और बेचने के लिए कहा। एक ही दिन में तीनों ने पच्चीस-तीस हजार रुपये कमा लिए। उन्हें लगा कि अगर वे महाराजजी के पास रहेंगे, तो वे उन्हें बाजार की स्थिति के बारे में बता देंगे। वे उनके पास गए और उन्होंने पूछा, "क्या तुमने कुछ पैसे कमाए?" प्रत्येक ने अपनी कमाई बताई और फिर महाराजजी से आगे के निर्देश मांगे।

महाराजजी ने एक भक्त से कहा, “अगर सब लोग पैसे के लिए आएँगे तो क्या होगा? ये कानपुर के उद्योगपति तो बुरे हैं। ये मुझे परेशान करेंगे।” फिर महाराजजी ने एक से कहा, “ठीक है। तुम्हारे पास तीस हज़ार रुपये हैं। कल मेरे लिए तीन हज़ार रुपये ले आना।” दूसरे से उन्होंने कहा, “तुम पंद्रह सौ रुपये ले आना।” तीसरे से उन्होंने कहा, “तुम बारह सौ रुपये ले आना।” सब मान गए लेकिन कभी वापस नहीं आए, क्योंकि उन्हें लगा कि महाराजजी भ्रष्ट हैं। महाराजजी को पैसों की चिंता नहीं थी, बल्कि वे अपना जीवन उन सट्टेबाजों से मुक्त करना चाहते थे। चौथे

व्यक्ति, जो मेरा रिश्तेदार था, से महाराजजी ने नौ सौ रुपये लाने को कहा। अगले दिन वह व्यक्ति वापस आया। महाराजजी ने पूछा, “क्या तुम पैसे लाए?”

“नहीं, महाराजजी, मैं इसे नहीं लाया हूँ,” उसने उत्तर दिया।

"क्यों?"

“महाराज जी, मैं यहां कुछ लेने आया हूं, कुछ देने नहीं।”

“अरे, तुम तो लेने आए हो, देने नहीं। ठीक है, चलो। मुझे पैसे नहीं चाहिए। बाकी लोग न आएं।” मेरा रिश्तेदार भक्त बन गया।

राम

एक बार नेपाल की रानी आईं, क्योंकि उनके पति महाराजजी के बहुत बड़े भक्त थे। उन्होंने महाराजजी को बहुत सी चीजें भेंट कीं, लेकिन महाराजजी ने कहा, “नहीं, इन्हें लोगों में बाँट दीजिए।” उन्होंने मुझे पकड़कर रानी के बारे में कहा, “वहाँ बहुत धन है। क्या हम उसमें से कुछ ले लें?”

मैंने कहा, "हाँ।" हम दोनों हँस पड़े। उनका हास्यबोध ऐसा ही था। आमतौर पर लोग केवल यही बताते हैं कि महाराजजी कभी पैसों को हाथ नहीं लगाते।

महाराजजी ने एक बार कहा था, “जो पैसा तुम कमाते हो, वह ईमानदारी से कमाया हुआ होना चाहिए। तुम क्या चाहते हो—मुझे बदनाम करना चाहते हो?”

राम

मंदिर में दर्शन करने आए एक साधु ने महाराजजी को मंदिर रखने और संपत्ति से आसक्ति रखने के लिए फटकारा। वह महाराजजी के साथ तंबू पर बैठ गया और बहुत उग्र हो गया। महाराजजी ने चुपचाप उसकी बात सुनी और वहाँ मौजूद भक्तों को शांत रखा। थोड़ी देर बाद साधु शिव पूजा में प्रयुक्त एक विशेष पत्थर, शालिग्राम लेकर आया। महाराजजी ने साधु से कहा, "क्या तुम इसे मुझे दोगे?"

“लेकिन महाराज जी, मुझे यह अपनी पूजा के लिए चाहिए।”

फिर साधु के इस आरोप को हवा देते हुए कि महाराजजी भौतिकवादी हैं, महाराजजी ने कहा, "क्या तुम इसे मुझे बेचोगे?"

“अरे नहीं,” साधु ने कहा। लेकिन महाराजजी ने आखिरकार साधु को चालीस रुपये में उसे बेचने के लिए मना लिया। और लेन-देन हो गया।

तब महाराजजी ने कहा, "मुझे अपना पैसा दो।"

साधु ने चालीस रुपये निकाले और अनिच्छा से महाराजजी को देते हुए लगातार कहते रहे कि उनके पास बस इतना ही पैसा है, तो वे कैसे गुजारा करेंगे? महाराजजी ने रुपये के नोट लिए और उन्हें सामने जल रही अंगीठी में फेंक दिया। नोट जलकर भस्म हो गए। साधु बहुत दुखी हुए और महाराजजी को पैसे जलाने के लिए फटकार लगाई और कहा कि अब वे भूखे मरेंगे, इत्यादि।

इस पर महाराजजी ने कहा, “अरे, मुझे पता ही नहीं था कि तुम्हें पैसों से इतना लगाव है।” और इतना कहकर उन्होंने एक चिमटा लिया, आग में हाथ डाला और नए, बिना जले हुए रुपये के नोट आग से निकालने लगे, जब तक कि उन्होंने सारे रुपये साधु को वापस नहीं कर दिए। इसके बाद साधु महाराजजी की थाली में नहीं बैठे, बल्कि उनके चरणों में बैठ गए।

दुनिया का सारा पैसा मेरा है। यहां तक कि अमेरिका का पैसा भी।

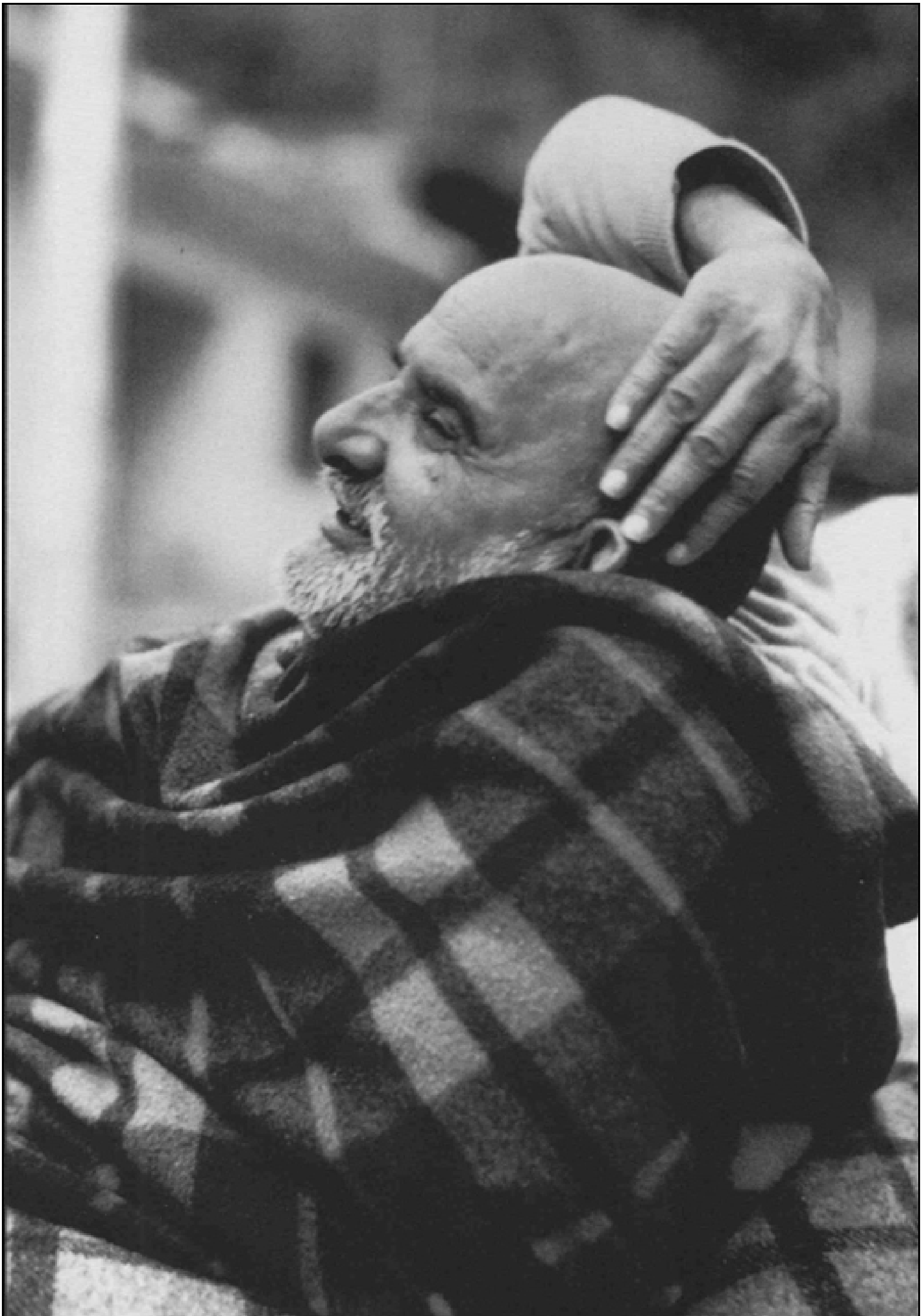

दवाओं के बारे में

भारत में चरस के उपयोग की एक लंबी परंपरा रही है। चिलम में तंबाकू मिलाकर पी जाने वाली चरस का उपयोग लाखों घुमंतू साधुओं में से एक बड़ा हिस्सा करता है। भगवान शिव के अनुयायियों के लिए, धूम्रपान धार्मिक अनुष्ठान का एक हिस्सा है। वहीं, अन्य भक्तिभावियों के लिए, इसका उपयोग भक्तिमय अनुष्ठानों की भावनात्मक तीव्रता को बढ़ाने के लिए किया जाता है।

अपने प्रारंभिक वर्षों में, जब महाराजजी एक घुमंतू साधु थे, तो निःसंदेह वे अन्य साधुओं के साथ जंगल में कई अग्नि-आग के चारों ओर बैठते थे और संभवतः स्वयं भी चरस का सेवन करते थे। और अपने बाद के वर्षों में, यद्यपि उन्होंने स्वयं ऐसी चीजों का सेवन नहीं किया, फिर भी वे उनका समर्थन करते थे। कई बार उन्होंने साधुओं को चरस या आर्सेनिक (एक अन्य पदार्थ जिसका उपयोग साधु बहुत कम मात्रा में करते हैं) प्राप्त करने में सहायता की। हालाँकि, वे गृहस्थों (अर्थात परिवार वाले) द्वारा हशीश के उपयोग को लेकर कड़ा रुख अपनाते थे, अक्सर उन्हें अपशब्द कहते थे, या कम से कम इस विषय पर उनका मज़ाक उड़ाते और लगातार उकसाते रहते थे। उनका कहना था कि इससे वे अपने दायित्वों को भूल जाते हैं। पश्चिमी लोगों के लिए, उन्होंने आम तौर पर चेतना को बदलने के साधन के रूप में हशीश और अफीम जैसी दवाओं के उपयोग को हतोत्साहित किया ("भोजन सबसे अच्छा नशा है," "प्रेम सबसे अच्छी दवा है।") हालांकि, कुछ पश्चिमी लोगों के लिए जो वास्तव में घुमंतू साधु के त्यागी जीवन का अनुसरण कर रहे थे और जो भक्ति के लिए हशीश पीने के आदी थे, उन्होंने इसके उपयोग को हतोत्साहित नहीं किया।

जबकि चरस भारत का मूल उत्पाद था, एलएसडी नहीं। चूंकि कई पश्चिमी लोगों ने एलएसडी के सेवन से आध्यात्मिक जागृति का अनुभव किया था, इसलिए महाराजजी और एलएसडी का कभी न कभी मिलना अपरिहार्य था। और इस मुलाकात ने छह वर्षों की अवधि में अनेक लीलाओं को जन्म दिया।

महाराजजी जानते थे कि मैं सिगरेट पीता हूँ; उन्हें सब कुछ पता है। लेकिन महाराजजी ने मुझे कभी यह आदत छोड़ने के लिए नहीं कहा, कभी यह नहीं कहा कि यह बुरी आदत है, कभी इसके बारे में कुछ नहीं कहा।

राम

कभी-कभी मैं और दूसरे बाबा मंदिर के नीचे मेरे कमरे में चिलम पीते रहते थे। अगर महाराज जी आते, तो कभी भी हमारे कमरे में नहीं आते जब हम चिलम पी रहे होते। कभी-कभी वे दरवाजे के पास से गुजरते और अपने साथ मौजूद किसी से ज़ोर से बुदबुदाते, "उन कमीनों (शाब्दिक रूप से, "दामादों") को जाने दो!" और आगे बढ़ जाते।

राम

महाराजजी मेरे लिए चरस भी जुटाते थे। अगर कोई व्यक्ति महाराजजी के दर्शन के लिए आता, तो महाराजजी उससे कहते कि उसके पास जो भी चरस हो, वह मुझे दे दे। इस तरह महाराजजी ने अनेकों लोगों की मनोकामनाएँ पूरी कीं। चाहे चरस हो, पैसा हो, मिठाई हो—जो

भी उन्हें चाहिए होता—महाराजजी ही उनके लिए उसे उपलब्ध कराते थे।

राम

कैंची में अक्सर ऐसा होता था कि अगर कोई साधु जो चिलम-बाबा होता था, दर्शन के लिए आता था तो महाराजजी उसे आश्रम के पीछे मेरे साथ धूम्रपान करने के लिए भेज देते थे।

राम

मैंने महाराजजी को अपने हाथों से लोगों को हशीश देते हुए देखा है।

> जब लोग एक साथ हशीश का सेवन करते हैं तो वे सब कुछ भूल जाते हैं—परिवार, कर्तव्य—और वे सोचते हैं कि दूसरा व्यक्ति उनका सबसे करीबी भाई है।
>
> हशीश सेहत के लिए हानिकारक है। यह कामवासना, क्रोध, लोभ और आसक्ति पैदा करती है। यह हृदय और सांस के लिए भी हानिकारक है।
>
> आपको भगवान शिव की तरह हशीश का सेवन केवल ईश्वर के साथ रहने के लिए करना चाहिए। हशीश का सेवन आवश्यक नहीं है। इससे आपको कोई लाभ नहीं होता। इसका आनंद क्षणिक होता है और यह हृदय के लिए हानिकारक है। ईश्वर के प्रति भक्ति एक ऐसी लत है जो शाश्वत होती है।

अपने आरंभिक दिनों में, महाराजजी अक्सर अलीगढ़ शहर के बाहर स्थित एक साधु के धूनी (खुली आग) पर जाते थे। यह साधु चरस और गांजा के साथ-साथ अन्य नशीले पदार्थों का भी सेवन करता था। एक दिन उसने महाराजजी को एक नया नशा दिखाया और कहा कि इससे अत्यंत तीव्र और आनंददायक नशा होता है। उसने महाराजजी को थोड़ी सी मात्रा देते हुए चेतावनी दी कि इसकी बहुत थोड़ी मात्रा ही पर्याप्त है, लेकिन महाराजजी ने पूरी मात्रा निगल ली। कुछ ही क्षणों में महाराजजी बेहोश होकर गिर पड़े। साधु को अधिक मात्रा लेने का उपाय पता था—चार किलो दूध—और जब बाजार से दूध लाया गया, तो उसने उसे महाराजजी के गले में डाल दिया। महाराजजी को होश आया और वे उठ बैठे। साधु को अपने सामने बैठा देखकर महाराजजी ने क्रोध में आकर उसे घूंसा मार दिया। “तुमने मुझे मारने की कोशिश की! इसने मुझे जहर दिया! धिक्कार है! दुष्ट व्यक्ति!” वे चिल्लाते हुए भाग गए।

राम

एन बाबा नाम का एक साधु, जो आमतौर पर बागेश्वर के पार हिमनदी की ओर रहता था, महाराजजी को अपना गुरु मानता था और कभी-कभी उनसे मिलने जाता था। महाराजजी उन्हें अपने पलंग पर जगह देते थे, लेकिन साधु हमेशा ज़मीन पर बैठते थे। साधु ठंड से बचने के लिए आर्सेनिक खाते थे। पाँच-छह साल पहले, बाबा मिलने आए थे और महाराजजी ने उनसे पूछा, “एन, तुम क्या खाते हो?” साधु ने जवाब दिया कि वह आर्सेनिक खाते हैं। महाराजजी ने कहा, “देखते हैं।” साधु ने अपने थैले से इतना आर्सेनिक निकाला जिससे दो लोगों की जान जा सकती थी। महाराजजी ने उसे झट से उठाया और पूरा खा लिया। सब लोग चौंक गए, लेकिन महाराजजी

ने सिर्फ एक गिलास दूध माँगा। उन पर कोई असर नहीं हुआ।

राम

एक दिन महाराजजी गंगा के किनारे अकेले टहल रहे थे। वहाँ उनकी मुलाकात कुछ साधुओं की छोटी-छोटी कुटियाओं से हुई। उन्होंने उनसे पूछा कि वे कौन हैं, कहाँ रहते हैं, क्या खाते हैं और कहाँ खाते हैं। महाराजजी ने बताया कि वे बेघर हैं, जहाँ भी जगह मिलती है वहीं ठहर जाते हैं और जब भोजन उपलब्ध होता है तभी खा लेते हैं। उन्होंने महाराजजी को अपने साथ कुछ समय बिताने के लिए कहा। महाराजजी ने पूछा, “क्या आप मुझे भोजन कराएँगे?” साधुओं ने कहा कि वे ज़रूर कराएँगे, इसलिए वे कुछ देर उनके साथ बैठे रहे। एक साधु आया और सबके लिए चिलम बनाने लगा। चिलम सबको दी गई, और जब महाराजजी को चिलम दी गई तो वे बहुत अपशब्द बोलने लगे, उन्हें निकम्मा और पाखंडी कहने लगे और उन पर महाराजजी को बर्बाद करने और खुद को बर्बाद करने का आरोप लगाने लगे। फिर वे गुस्से में वहाँ से चले गए। कुछ देर बाद एक और साधु कुटिया में आया और उनसे पूछा कि क्या वे महाराजजी को पहचान नहीं पाए? वे किस तरह के साधु हैं जो अपने सामने आए सिद्ध महात्मा को भी नहीं पहचान सकते? वे बुदबुदाए, "उसके बर्ताव को देखकर हम उसे कैसे पहचान सकते थे!"

राम

कुछ पश्चिमी लोगों का कर्म कुछ और ही था, क्योंकि वे हशीश की तस्करी में शामिल थे। जब महाराजजी को इस बात का पता चला, तो उन्होंने उन्हें एक जटिल तस्करी अभियान में फंसा दिया, जिसके चलते उन्हें लंबे समय तक मंदिर से और इस प्रकार उनकी उपस्थिति से दूर रहना पड़ा।

इस उद्यम से प्राप्त धन का उपयोग धर्मार्थ कार्यों के लिए किया जाना था। अपने निजी लाभ के लिए किए गए कार्यों के फल को अब ईश्वर को अर्पित करना उनके लिए एक सशक्त सबक था, जिसे उन्होंने सराहा। हालांकि, महाराजजी के आसपास की सभाओं से बहिष्कृत किए जाने से वे बहुत दुखी थे।

अपने गुरु द्वारा ऐसी गतिविधियों का समर्थन और प्रोत्साहन देने से उन्हें अच्छे और बुरे के अपने सिद्धांतों पर गहराई से पुनर्विचार करना पड़ा। उनके शामिल होने से उन्हें इस कार्य में और भी अधिक साहस आ गया, क्योंकि उन्हें लगा कि उनकी सुरक्षा में वे पकड़े नहीं जा सकते। हालांकि, जब उन्हें यह एहसास हुआ कि महाराजजी का कर्म में हस्तक्षेप करना हमेशा से उनका तरीका नहीं रहा है, और हो सकता है कि जेल जाना उनका ही कर्म हो, तो उनका वह अनूठा उत्साह गायब हो गया। जब तक उन्होंने यह परियोजना पूरी की, तब तक वे इन अवैध गतिविधियों से पूरी तरह ऊब चुके थे।

राम

1967 में जब मैं पहली बार भारत आया, तो अपने साथ एलएसडी की आपूर्ति लेकर आया था, इस उम्मीद में कि मुझे कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाएगा जो पश्चिम में हमारे मुकाबले इन पदार्थों के बारे में अधिक जानता हो। महाराजजी से मिलने के कुछ दिनों बाद मेरे मन में यह विचार आया कि उनसे पूछना सबसे उचित रहेगा। यह विचार आने के अगले ही दिन मुझे उनके पास बुलाया गया और उन्होंने तुरंत मुझसे पूछा, "क्या आपका कोई प्रश्न है?"

बेशक, उनके सामने होना इतना शक्तिशाली अनुभव था कि मैं पिछली रात अपने मन में चल रहे सवाल को पूरी तरह भूल गया था। इसलिए मैंने मूर्खतापूर्वक कहा, "नहीं, महाराज जी, मेरा कोई सवाल नहीं है।"

वह चिढ़कर बोला, "दवा कहाँ है?"

मैं असमंजस में था, लेकिन भगवान दास ने सुझाव दिया, "शायद उनका मतलब एलएसडी से है।" मैंने पूछा और महाराजजी ने सिर हिलाया। एलएसडी की बोतल कार में थी और मुझे उसे लाने के लिए भेजा गया।

जब मैं लौटा तो मैंने गोलियों की शीशी अपने हाथ में निकाल ली। एलएसडी के अलावा उसमें कई और गोलियां भी थीं - दस्त, बुखार, नींद की गोली, इत्यादि। उसने हर गोली के बारे में पूछा।

उन्होंने पूछा कि क्या इनसे शक्तियां मिलती हैं। उस समय मुझे समझ नहीं आया और मैंने सोचा कि "शक्तियों" से शायद उनका मतलब शारीरिक शक्ति है। मैंने कहा, "नहीं।" बाद में, ज़ाहिर है, मुझे समझ आया कि उन्होंने जिस शब्द "सिद्धियों" का इस्तेमाल किया था, उसका अर्थ मानसिक शक्तियां होता है। फिर उन्होंने एलएसडी के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाया। मैंने उनकी हथेली पर एक गोली रख दी। इनमें से प्रत्येक गोली लगभग तीन सौ माइक्रोग्राम शुद्ध एलएसडी की थी—एक वयस्क के लिए पर्याप्त मात्रा। उन्होंने और मांगने का इशारा किया, इसलिए मैंने उनके हाथ में दूसरी गोली रख दी—छह सौ माइक्रोग्राम। उन्होंने फिर इशारा किया और मैंने एक और गोली रख दी, जिससे कुल मात्रा नौ सौ माइक्रोग्राम हो गई—निश्चित रूप से यह शुरुआती लोगों के लिए नहीं थी। फिर उन्होंने सारी गोलियां मुंह में डाल लीं। मेरी प्रतिक्रिया सदमे और एक सामाजिक वैज्ञानिक की उत्सुकता का मिश्रण थी, जो यह देखने के लिए उत्सुक था कि आगे क्या होगा।

उन्होंने मुझे एक घंटे तक रुकने की इजाजत दी—और कुछ नहीं हुआ। बिलकुल कुछ नहीं। वे बस मुझ पर हंसते रहे।

यह सब कुछ बहुत तेज़ी से और अप्रत्याशित रूप से हुआ था। जब मैं 1968 में संयुक्त राज्य अमेरिका लौटा, तो मैंने कई लोगों को इस एसिड के अनुभव के बारे में बताया। लेकिन मेरे मन में एक गहरा संदेह बना रहा कि शायद वह मुझे बहला रहा था और उसने गोलियां अपने कंधे के ऊपर से फेंकी थीं या उन्हें छिपा लिया था, क्योंकि मैंने वास्तव में उन्हें उसके मुंह में जाते हुए नहीं देखा था।

तीन साल बाद, जब मैं भारत वापस आया, तो एक दिन उसने मुझसे पूछा, "क्या आपने पिछली बार जब आप भारत में थे तब मुझे दवा दी थी?"

"हाँ।"

“क्या मैंने इसे लिया था?” उसने पूछा। (अरे, मेरा संदेह यहीं स्पष्ट हो गया!)

मुझे लगता है तुमने किया।

"क्या हुआ?"

"कुछ नहीं।"

“ओह! जाओ!” और उन्होंने मुझे शाम के लिए विदा कर दिया।

अगली सुबह मुझे उनके कमरे के सामने वाले बरामदे में बुलाया गया, जहाँ वे सुबह के समय एक गद्दे पर बैठते थे। उन्होंने पूछा, "क्या तुम्हारे पास वह दवा और है?"

संयोगवश, मेरे पास "बस ज़रूरत पड़ने पर" के लिए थोड़ी मात्रा में एलएसडी थी, और जाहिर तौर पर यही वह चीज़ थी। "हाँ।"

“ले लो,” उसने कहा। तो मैंने ले लिया। बोतल में तीन सौ माइक्रोग्राम की पाँच गोलियाँ थीं। एक गोली टूटी हुई थी। मैंने उन्हें अपनी हथेली पर रखा और उसे दे दिया। उसने चार साबुत गोलियाँ ले लीं। फिर, एक-एक करके, बहुत स्पष्ट और जानबूझकर, उसने एक-एक गोली अपने मुँह में डाली और निगल ली—मेरे एक और अनकहे विचार का जवाब मिल गया।

जैसे ही उसने आखिरी गोली निगली, उसने पूछा, "क्या मैं पानी ले सकता हूँ?"

"हाँ।"

"गर्म या ठंडे?"

"कोई फर्क नहीं पड़ता कि।"

वह पानी के लिए चिल्लाने लगा और जब पानी लाया गया तो उसने एक कप पानी पी लिया।

फिर उन्होंने पूछा, "कार्रवाई करने में कितना समय लगेगा?"

"बीस मिनट से लेकर एक घंटे तक का समय लग सकता है।"

उन्होंने एक बुजुर्ग व्यक्ति को बुलाया, जो लंबे समय से उनके भक्त थे और जिनके पास घड़ी थी। महाराजजी ने उस व्यक्ति की कलाई पकड़ी और बार-बार उसे ऊपर उठाकर घड़ी दिखाई। फिर उन्होंने पूछा, "क्या इससे मैं पागल हो जाऊंगा?"

यह मुझे इतना अजीब लगा कि मैं केवल उस मजाक में शामिल होने के अलावा और कुछ नहीं कर सका जो मुझे हास्यास्पद लग रहा था।

तो मैंने कहा, "शायद।"

फिर हम इंतज़ार करने लगे। कुछ देर बाद उसने कंबल अपने चेहरे पर खींच लिया, और थोड़ी देर बाद जब वह बाहर आया तो उसकी आँखें घूम रही थीं, मुँह खुला हुआ था और वह बिल्कुल पागल लग रहा था। मैं परेशान हो गई। आखिर क्या हो रहा था? क्या मैंने उसकी शक्तियों को गलत समझा था? आखिर वह एक बूढ़ा आदमी था (हालाँकि उसकी उम्र कितनी थी, यह मुझे नहीं पता था), और मैंने उसे बारह सौ माइक्रोग्राम लेने दिया था। शायद पिछली बार उसने दवा फेंक दी थी और फिर उसने मेरे मन की बात पढ़ ली थी और मुझे यह साबित करने की कोशिश कर रहा था कि वह ऐसा कर सकता है, यह जाने बिना कि वह "दवा" वास्तव में कितनी शक्तिशाली थी। अपराधबोध और चिंता मुझ पर हावी हो गई। लेकिन जब मैंने उसे दोबारा देखा तो वह बिल्कुल सामान्य था और घड़ी देख रहा था।

एक घंटे बाद यह स्पष्ट हो गया कि कुछ भी नहीं हुआ था। उसकी प्रतिक्रियाएँ पूरी तरह बनावटी थीं। फिर उसने पूछा, "क्या तुम्हारे पास इससे भी ज़्यादा असरदार कोई दवा है?" मेरे पास नहीं थी। तब उसने कहा, "ये दवाएँ बहुत पहले कुल्लू घाटी में इस्तेमाल होती थीं। लेकिन योगियों ने वह ज्ञान खो दिया है। इनका इस्तेमाल उपवास के साथ किया जाता था। अब कोई नहीं जानता। इन्हें लेने पर भी कोई असर न हो, इसके लिए मन को पूरी तरह से ईश्वर पर केंद्रित

करना ज़रूरी है। दूसरे लोग तो इसे लेने से डरते हैं। कई संत भी इसे नहीं लेते।" और उसने बात यहीं खत्म कर दी। (आर.डी.)

जब मैंने उनसे पूछा कि क्या मुझे दोबारा एलएसडी लेनी चाहिए, तो उन्होंने कहा, “इसे गर्म जलवायु में नहीं लेना चाहिए। यदि आप किसी ठंडी और शांत जगह पर हों, अकेले हों और आपका मन ईश्वर की ओर लगा हो, तो आप योगी औषधि का सेवन कर सकते हैं।” (आर.डी.)

> एलएसडी दुनिया के लिए तो अच्छी है, लेकिन आध्यात्मिक नहीं।
> एलएसडी आपको कमरे में आकर ईसा मसीह को प्रणाम करने की अनुमति देता है, लेकिन दो घंटे बाद आपको वहां से निकलना पड़ता है। सबसे अच्छी दवा ईसा मसीह से प्रेम करना है।
> एलएसडी सच्ची समाधि नहीं है।

एक बार एक पश्चिमी नागरिक ने मुझसे अनुवाद करने को कहा। वह महाराजजी से पूछना चाहता था कि वह अमेरिका में अपने दोस्त की मदद कैसे कर सकता है। उसका दोस्त कई बार एलएसडी लेने के कारण बहुत भ्रमित था। महाराजजी ने कहा कि दोस्त से कहो कि वह हमेशा भगवान को याद रखे।

मैं अपने साथ एक ऐसे लड़के की तस्वीर लाया था जिसकी अमेरिका में रहस्यमय परिस्थितियों में मृत्यु हो गई थी। 1968 में वह मुझसे मिलने न्यू हैम्पशायर आया था और योग के मेरे पहले छात्रों में से एक बन गया था। वह हर हफ्ते आता था और भारत में मैंने जो कुछ भी सीखा था, उसे उसने तुरंत आत्मसात कर लिया था। मैं उसे आगे के प्रशिक्षण के लिए हरि दास के पास भेजना चाहता था, लेकिन उसने अपनी साधना जारी रखने के लिए एरिजोना की एक गुफा में रहने को प्राथमिकता दी। मैंने उसे अपनी क्षमता के अनुसार सब कुछ सिखाया था, लेकिन वह मुझे पत्र लिखता था और 1968/69 की सर्दियों के दौरान हर कुछ महीनों में मुझसे संपर्क करता रहता था।

कुछ समय तक उससे कोई संपर्क नहीं हुआ और बाद में पता चला कि उसकी गुफा में मृत्यु हो गई थी। उसकी माँ ने मुझे उसकी डायरी की आखिरी पंक्तियाँ दिखाईं, जो बहुत ही असामान्य थीं। मुझे संदेह हुआ कि डायरी की आखिरी पंक्ति उसने एलएसडी के प्रभाव में लिखी थी। कहानी यह थी कि वह मृत पाया गया था और उसकी नाक से खून बह रहा था और दीवार पर खून के धब्बे थे। शायद वह प्राणायाम (योगिक श्वास अभ्यास) कर रहा था और उसकी कोई रक्त वाहिका फट गई थी। पंक्तियाँ इस प्रकार थीं:

रमण महर्षि और मेरे गुरु दोनों ही मेरी महा समाधि में मेरा मार्गदर्शन कर रहे हैं... चिंता मत करो... मैं असीम आनंद में हूँ... और भीतर से तुम्हारा मार्गदर्शन करूँगा... राम दास को लिखो और उन्हें खुशखबरी दो कि मुझे अब साधना करने की आवश्यकता नहीं है... मैं वहाँ हूँ... प्रेम,

प्रेम... मुझे पता है कि क्या हो रहा है, गुरु भी मेरे साथ भीतर हैं... जान लो कि मैंने यीशु के साथ पूर्णतः एकात्म होकर शरीर त्याग दिया है... यीशु मेरे साथ हैं। मैं उनके हृदय में हूँ... गुरु के साथ।

मैंने उसकी माँ से वादा किया था कि अगली बार जब मैं महाराजजी से मिलूंगा तो उनके बेटे के बारे में पूछूंगा। उचित समय पर मैंने उसकी हाई स्कूल की स्नातक की तस्वीर निकाली और महाराजजी को सौंप दी। उन्होंने उसे ध्यान से देखा और फिर कहा, "वह अपने शरीर में नहीं है।"

“यह सही है, महाराज जी।”

"दवा लेने से उनकी मृत्यु हो गई।"

“अहा, मुझे यही लगा था।” (इससे मुझे यह समझ आया कि वह वास्तव में सच्ची समाधि में नहीं गया था, बल्कि शायद उसने एलएसडी के प्रभाव में प्राणायाम किया था।)

लेकिन फिर महाराजजी, मानो मेरी शंकाओं को समझते हुए, बोले, “नहीं, सब ठीक है। उनका पुनर्जन्म नहीं होगा। उन्होंने अपना कार्य पूरा कर लिया है। अब वे ईसा मसीह के साथ एक हो गए हैं। वे तुमसे बहुत प्रेम करते थे। वे तुम्हारे लिए रोए थे।” महाराजजी कुछ देर चुप रहे और फिर बोले, “तुम्हें उनकी माँ से कहना चाहिए कि उन्हें चिंता नहीं करनी चाहिए। वे ईसा मसीह के साथ हैं। वे उनकी रक्षा कर रहे हैं। उन्होंने अपना कार्य पूरा कर लिया है।” (महाराजजी ने डायरी के शब्दों को हूबहू उद्धृत किया था, और उन्होंने मुझे दिखाया था कि कुछ परिस्थितियों में एलएसडी ईश्वर के पास लौटने का माध्यम हो सकता है।) फिर महाराजजी आँखें बंद करके चुपचाप बैठ गए। वह क्षण अत्यंत शक्तिशाली था। (आर.डी.)

राम

एक सुबह हममें से कुछ लोगों ने, जिन्होंने एसिड लिया था, आश्रम में जल्दी घुसने और आगे की सीटें पाने का फैसला किया। इसलिए हम सब आलू के खेतों से होते हुए, नाले को पार करते हुए और दीवार के उस पार चले गए। हमने "सीताराम!" (सीता और राम को प्रणाम) के बीच सुबह स्नान किया, अपने साफ-सुथरे कपड़े पहने और टकेट के सामने अपनी आगे की सीटें ले लीं। हमने एकांतवास किया, ध्यान लगाया (या महाराजजी के आने की प्रतीक्षा करते समय जो भी किया जाता है)। हम सब कतार में बैठे थे, नशे में चूर; मैं टकेट के एक छोटे से कोने पर बैठा था। अचानक दरवाजा ज़ोर से खुला—धड़ाम—और महाराजजी एक बिल्कुल नए साइकेडेलिक कंबल में लिपटे हुए थे, जो उन्हें एक भक्त ने दिया था। किसी को उठने का समय ही नहीं मिला। वे अचानक वहाँ आ गए, एक तारे की तरह टिमटिमाते हुए। सब उठने की कोशिश कर रहे थे और वे लात मारते हुए रास्ता बनाते हुए बेंच पर बैठ गए और हम सब को अनसुना कर दिया।

वह बस वहीं बैठा रहा, कभी-कभार किसी को देखता, फिर आकाश की ओर देखने लगता। लेकिन वह बारी-बारी से सबको परखता रहा, कभी-कभी तो बस एक पल के लिए। यह सिलसिला करीब दस मिनट तक चला। वह जल्दी बाहर आ गया था, और जब आश्रम के बाकी लोगों को पता चला कि वह बाहर है और वे दौड़कर आए, तो वह तुरंत अपने छोटे से कमरे में लौट गया।

राम

जब हम उसके साथ नशे की हालत में होते थे, तो वह दृश्य मेरे लिए सचमुच अवर्णनीय होता

था। उसे वहाँ बैठे, देखते और बातें करते देखना ऐसा लगता था मानो वहाँ कोई हो ही नहीं। मानो कोई न होकर किसी के होने का नाटक कर रहा हो! वह सुबह (जिसका वर्णन ऊपर एक अन्य भक्त ने किया है) अविश्वसनीय रूप से आनंदमय थी; पूरा दिन वैसा ही था।

राम

उस एसिड ट्रिप के दौरान, डी ने महाराजजी के लिए एक नया कंबल लाया था—नीला, पीला, लाल और हरा। मेरे पास उस रंगीन कंबल की एक तस्वीर है। बहुत से लोग एसिड के नशे में चूर थे, मेज के चारों ओर बैठे उनके कमरे से बाहर आने का इंतज़ार कर रहे थे। जब वे बाहर आए तो लगभग मेज पर ही उछल पड़े, उनमें इतनी ऊर्जा थी। वे बाहर आए! वे वहाँ थे! उन्होंने सामने की पंक्ति में बैठी एक महिला की छाती में कोहनी मारी और पूछा, "क्या तुम्हें एलएसडी पसंद है?" यह उनका पहला शब्द था। वे हंसने लगे, और जल्द ही सब लोग हंसने लगे। फिर वे गंभीर हो गए। सब लोग रोने लगे। ऐसा लग रहा था जैसे वे हमें चिढ़ा रहे हों। एक समय ऐसा आया जब सब लोग रो रहे थे, और उन्होंने कहा, "ये सब रोना क्या है? मैं रोना बर्दाश्त नहीं कर सकता। ये सब रोना बंद करो!"

एलएसडी से जुड़ी एक नाटकीय घटना ने महाराजजी के भारतीय भक्तों की भावनाओं को घोर आहत कर दिया। एक पश्चिमी युवक ने एलएसडी का सेवन किया था और वह केवल शॉल ओढ़े मंदिर आया था। जब महाराजजी दो भक्तों का हाथ थामे चल रहे थे, तभी वह युवक पीछे से आया और उन्हें गले लगाने का प्रयास किया। जैसे ही उसने ऐसा करने के लिए अपने हाथ ऊपर उठाए, उसकी शॉल भक्तों के सिर को ढक गई और उसी क्षण युवक का नग्न शरीर भी प्रकट हो गया। यह घटना, जो देखने वाले को शायद शर्मनाक लगती, युवक के लिए बिल्कुल अलग थी, जैसा कि उसके और घटना के समय उपस्थित एक अन्य भक्त के बीच हुई बातचीत से स्पष्ट होता है।

एस: खैर, आपको पता ही है कि उस दिन आपकी यात्रा के दौरान मेरा अनुभव यही था कि मैंने आपको महाराजजी को पीछे से पकड़ते हुए देखा...

आर: हां, मैं उसे चूमना चाहती थी। मैं उसे गले लगाना और चूमना चाहती थी।

एस: और महाराजजी हंस रहे थे। तुमने दादाजी का चेहरा, और महाराजजी के साथ चल रहे बाकी लोगों का भी, अपने लाल कंबल से ढक दिया था, और पीछे से उन्हें पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया था। तुम कंबल के नीचे नग्न थीं। महाराजजी खिलखिलाते हुए, मुस्कुराते हुए, अपना सिर हिला रहे थे। जब वे अकेले अपने कमरे में चले गए, तो तुम सफाईकर्मी को प्रणाम करने चली गईं।

आर: वो आश्रम का सबसे नीच आदमी था और मेरे बाहर निकलते समय वो वहीं खड़ा था। मैं इतना तुच्छ था कि मेरा कोई शरीर भी नहीं था। और ये आदमी तो मानो भगवान था! गंदी झाड़ू लिए वहाँ खड़ा, उसके पास कुछ भी नहीं था—और मुझे उसे प्रणाम करना पड़ा। सफाईकर्मी की उम्र लगभग बारह साल थी, आप उसे कभी देख भी नहीं पाते। वो हमेशा वहीं रहता था, लेकिन असल में वो अदृश्य था।

एस: जब ये सब चल रहा था, महाराजजी अपने कमरे में अकेले बंद थे, लेकिन खूब हंस रहे थे। मैं संयोग से खिड़की के ठीक पास था। महाराजजी हम सबसे पूछ रहे थे, “क्या हुआ? ये ऐसे

क्यों हैं? इन्होंने क्या किया?" मैंने कहा, "महाराजजी, मुझे नहीं पता।" तब महाराजजी ने कहा, "इतनी जलेबी खा ली।" फिर उन्होंने एलएसडी के बारे में बात शुरू की और खिड़की के बाहर खड़े हम सभी से पूछने लगे, "क्या आप इसे लेते हैं? क्या आप इसे लेते हैं? क्या आप इसे लेते हैं?" एक पश्चिमी व्यक्ति ने गर्व से कहा, "हां, मैं लेता हूं।"

फिर खबर आई कि आपने कुछ भी नहीं पहना है। कुछ देर तक सन्नाटा छा गया। फिर, जब हम सब महाराजजी की ओर देख रहे थे, तो वे अपनी खिड़की की जाली से सटकर खड़े हो गए, एक भारतीय भक्त की ओर सीधे देखते हुए बोले, "नग्न!" चौंके हुए भक्त ने अपने गुप्तांगों पर हाथ रख लिए और थोड़ा झुकते हुए कहा, "महाराजजी!"

आप बाहर बैठे सबके साथ गा रहे थे। दादाजी ने बाहर देखा और बोले, "देखो, ये रहा! ये वही है!" महाराजजी ने देखा और कहा, "मुझे नहीं पता। मुझे नहीं लगता। मुझे नहीं लगता कि ये वही है।" यह सिलसिला काफी देर तक चलता रहा। दादाजी कहते, "मुझे पता है, ये वही है। मुझे पूरा यकीन है कि ये वही है।" महाराजजी आपको पहचान ही नहीं पा रहे थे। आखिरकार, लगभग बीस मिनट बाद, महाराजजी ने कहा, "अच्छा, शायद ये वही है।" और फिर उन्होंने आपको बुलाया और जाने को कहा।

आर: जी हाँ। इसका अनुवाद इस प्रकार हुआ, "महाराज जी कहते हैं कि तुम दुष्ट हो, और तुम्हें तुरंत यहाँ से चले जाना चाहिए।" मैंने कहा, "ठीक है, महाराज जी," लेकिन मुझे नहीं लगता कि इससे उन्हें कोई ठेस पहुँची होगी। उस दिन मैंने उन्हें शुरू से अंत तक अत्यंत प्रेममय पाया। जब मुझे बाहर ले जाया जा रहा था—मैं चल नहीं सकती थी, मेरे पैर नहीं थे—मैं पूर्ण आनंद में थी। मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मुझे देवदूत उठा रहे हों। मेरे चारों ओर इतना प्रेम था कि मुझे कोई भ्रम नहीं हुआ।

एस: एसिड के असर से उबरने के लगभग एक महीने बाद आप पहली बार आश्रम लौटे। धोती और बनियान पहने हुए आप आए और सत्संग में शामिल हो गए, खिड़की के बाहर बैठकर गीत गाने लगे।

आर: मुझे नहीं पता उन्होंने मुझे क्या कहा, क्योंकि उस समय मेरी हिंदी बहुत कमजोर थी। वो मुझे हमेशा दादा कहकर बुलाते थे। बदमाश जैसा ही कुछ, लेकिन थोड़ा अलग। उन्होंने कहा, "बेवकूफ! जाओ!" और यह सुनकर मैं बुरी तरह हिल गया। मुझे बहुत दुख हुआ। ऐसा लगा जैसे मेरे सबसे बड़े प्रेमी ने मुझे ठुकरा दिया हो; यह बहुत दर्दनाक था। मैं आश्रम से लड़खड़ाते हुए बाहर निकला, यह सोचते हुए, "वो मेरे साथ ऐसा नहीं कर सकते। मैं लाखों बार वापस आऊंगा।" लेकिन इस घटना ने मेरे अंदर खुद को बदलने की इच्छा जगा दी। मुझे उन चीजों के लिए पछतावा होने लगा जो मैंने दो साल की उम्र में की थीं। मुझे अपने बुरे बर्ताव पर इतना पछतावा हुआ कि मैंने उनका प्यार वापस पाने का पक्का इरादा कर लिया।

जब मैं लामा गोविंदा के दर्शन करने के बाद आखिरकार अंदर आई, तो मैं अनाता के साथ आई थी। (यह महाराजजी के निधन से कुछ ही समय पहले की बात है।) सभी लोग आसपास बैठे थे और वे दर्शन दे रहे थे। मुझे बहुत डर लग रहा था कि वे मुझे बाहर निकाल देंगे, लेकिन मैं बहुत शांत दिखाई दी। उन्होंने सीधे मेरी ओर देखा और पूछा, "क्या तुम इसके साथ आई हो?" मैंने कहा, "हाँ।" और उन्होंने कहा, "तुम लामा गोविंदा से आई हो।" "ठीक है।" फिर उन्होंने पूछा,

"कितने समय से?" और उन्होंने अपनी आँखें घुमाईं और दूसरी ओर देखने लगे—और अचानक वे घूमे और सीधे मेरी ओर देखकर बोले, "जाओ!" और तभी मेरे ठीक पीछे खड़ा एक आदमी उछलकर भाग गया! मुझे एहसास हुआ कि उसने मेरे सिर के ऊपर से ही चिल्ला दिया था। फिर उन्होंने मेरी ओर देखा और हँसे! मुझे माफ़ कर दिया गया। उसके बाद उन्होंने कई बार मेरी ओर देखा और बस हँसते रहे। यह सचमुच आनंदमय था!

इस घटना के बाद महाराजजी कहने लगे, “एलएसडी लेने से इंसान नग्न हो जाता है और नाचने लगता है।” उन्होंने कैंची आश्रम के पीछे हम सबको इकट्ठा किया। हम सब एक बड़े घेरे में बैठे थे; वहाँ लगभग पैंतीस पश्चिमी लोग थे। महाराजजी बारी-बारी से एक-एक व्यक्ति के पास गए, उनका नाम लेकर पूछा, “क्या आपने कभी एलएसडी ली है?” और सभी ने कहा, “जी महाराजजी।” हर एक ने। (दरअसल, उस समूह में केवल एक ही व्यक्ति था जिसने एलएसडी नहीं ली थी—एक फ्रांसीसी जो कुछ समय इज़राइल में रहा था।) महाराजजी ने कुछ देर तक इस बारे में सोचा। वे बस वहीं बैठे रहे, इस पर ध्यान लगाते रहे।

उसी दिन बाद में चार युवक आश्रम आए। वे अभी-अभी आए थे। महाराजजी ने कहा, “डॉक्टर!” मैं दफ्तर में गया और उन्होंने कहा, “चार युवक आए हैं। द्वार पर जाओ और उन्हें आश्रम से बाहर निकाल दो, क्योंकि उन्होंने एलएसडी ली है।” मैं आश्रम के द्वार पर गया और मैंने कहा, “नमस्कार। क्या आप लोगों ने गलती से भी एलएसडी ली है?”

उन चारों ने कहा, "नहीं, हमने कभी एलएसडी नहीं ली है।"

और मैंने कहा, “माफ़ कीजिए। मुझे जाकर देखने दीजिए।” मैंने उन्हें द्वार पर ही रोक लिया और महाराजजी से मिलने चला गया। “महाराजजी, इन्होंने कभी एलएसडी नहीं ली है।”

उन्होंने कहा, “जाओ उन्हें आश्रम से बाहर निकाल दो। उन्होंने एलएसडी ले ली है।”

मैं वापस गया और उनसे दोबारा पूछा। मैंने कहा, “महाराज जी कहते हैं कि आप अंदर नहीं आ सकते। आपको आश्रम छोड़ना होगा। आपने एलएसडी ली है।” उन्होंने बहुत ज़ोरदार बहस की। उन्होंने कहा कि उन्होंने कभी एलएसडी नहीं ली। मैं महाराज जी के पास वापस गया और उनके लिए विनती की। मैंने कहा, “महाराज जी, हम सबने बहुत एलएसडी ली है और सच में, मैंने तो काफी ली है! हम सबने काफी एलएसडी ली है।”

और उन्होंने कहा, “उन चारों लड़कों ने एलएसडी ले ली है। जाओ उन्हें आश्रम से बाहर निकाल दो। यह मेरा आदेश है!” तो मैं गया और उन्हें आश्रम से बाहर निकाल दिया। वे फिर कभी वापस नहीं आए। मुझे उस घटना के बारे में कुछ भी समझ नहीं आया!

एक बार केके को एलएसडी लेने की इच्छा हुई, लेकिन उसने महाराजजी से अनुमति लेना उचित समझा। जब उसने महाराजजी से यह सवाल पूछा, तो महाराजजी ने जवाब दिया, "क्या? क्या तुम्हारे दिमाग में कुछ गड़बड़ है?"

ध्यान और सेवा के बारे में

ध्यान

महाराज जी अक्सर ध्यान के महत्व के बारे में आध्यात्मिक अभ्यास के रूप में बात करते थे, और वे स्वयं भी अधिकांश समय ध्यानमग्न प्रतीत होते थे, फिर भी उनकी उपस्थिति में हममें से अधिकांश के लिए ध्यान करना कठिन होता था। लेकिन जब हम ध्यान कर पाते थे, तो उसके परिणाम वास्तव में अद्भुत होते थे।

> सांसारिक लोग बाहर की ओर जाते हैं, लेकिन आपको कछुए की तरह अपने भीतर जाना होगा, अपने खोल के अंदर सिमट जाना होगा।
>
> ध्यान करना अच्छा है। एकाग्रता और वैराग्य से मन शुद्ध हो जाता है। एक बिंदु पर ध्यान करो, तुम्हें ईश्वर का ज्ञान हो जाएगा।
>
> अपने मन को सांसारिक बातों से मुक्त करो। यदि तुम अपने मन को वश में नहीं कर सकते, तो ईश्वर को कैसे प्राप्त करोगे?

महाराजजी कभी-कभी कहते थे, “मुझे क्या पता? इंग्लैंड तो बहुत दूर है।” लेकिन कभी-कभी वे इंग्लैंड के बारे में ऐसे बात करते थे मानो वे वहाँ जा चुके हों। एम ने उनसे उस शक्ति का एक अंश माँगा जिससे महाराजजी इंग्लैंड और उससे भी आगे तक देख पाते थे। महाराजजी हँसे और बोले, “नहीं। धीरे-धीरे और अभ्यास से तुम वह शक्ति प्राप्त कर सकते हो। यह असंभव नहीं है; नियमित साधना और रास्ते में आने वाली हर कठिनाई को सहन करने से यह संभव है।”

महाराजजी के निर्देशानुसार एम ने पूजा और ध्यान करना शुरू किया। महाराजजी ने उन्हें एक मंत्र दिया था और कहा था कि वे जैसे चाहें वैसे शुरू कर सकते हैं; इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। कुछ समय बाद, जब एम और महाराजजी घोड़े से खींची जाने वाली गाड़ी में यात्रा कर रहे थे, तब एम ने महाराजजी से ध्यान के दौरान भटकते मन के बारे में पूछा: “यह एक बिंदु पर स्थिर नहीं होता; अनेक विचार आते रहते हैं। मुझे क्या करना चाहिए?” तभी अचानक एक छोटा बच्चा सड़क पार कर रहा था और सारथी ने लगाम खींचकर घोड़े को ठीक समय पर रोक दिया और बच्चे की जान बच गई। महाराजजी ने लगाम पकड़े सारथी की ओर इशारा करते हुए कहा, “ऐसे ही। मन इधर-उधर भटकता रहता है, इसलिए तुम्हें हमेशा उसे एक बिंदु पर लाने का प्रयास करना चाहिए। निरंतर अभ्यास से उसे एकाग्र करना चाहिए, फिर वह स्वतः ही उस बिंदु पर आ जाएगा जिस पर तुम ध्यान करना चाहते हो। अंततः, वर्षों के बाद, मन शांत हो जाता है।”

राम

एक बार उन्होंने मुझे कैंची में अपने "कार्यालय" में बुलाया और मुझे अपने साथ पलंग पर बैठने को कहा। उन दिनों मेरी धारणा यह थी कि ध्यान "कुछ खास" होता है, और मैं गुरु के साथ था। मैंने सोचा, अब ध्यान करने का समय है, सचमुच "एकाग्र होने" का। शब्दों से नहीं, बल्कि, कहें तो, प्रतिक्रिया न देकर, महाराजजी ध्यान की इन गलत धारणाओं को तोड़ते गए। एक-एक करके, वे धारणाएँ दूर होती गईं, यहाँ तक कि अंत में कुछ भी शेष नहीं रहा और मैं बस वहाँ बैठा

रहा, कुछ भी दिव्य महसूस नहीं कर रहा था, केवल खालीपन। उस क्षण, जैसे ही मुझे यह समझ आया, उन्होंने मुझे जाओ (जाओ) का पाठ किया।

राम

जब वह आपसे बात कर रहा था, तब वह पूरी तरह ध्यान में लीन था। आपको बस यही महसूस हो रहा था।

राम

जब महाराजजी हमारे साथ बैठे, तो हम देख सकते थे कि वे समाधि की गहरी अवस्था में थे। सिर हिलाते ही वे किसी दूर स्थान में लीन हो जाते; फिर सिर हिलाते ही वे वापस लौट आते। हमें हमेशा उनके बारे में यही अनुभूति होती थी कि वे कहीं भी हो सकते हैं। यही हमने देखा; भले ही उन्होंने स्वयं को पूरी तरह छिपा लिया था, फिर भी हम इसे देखे बिना नहीं रह सके।

राम

एक बार हम आश्रम के पिछले हिस्से में थे, जब दिन भर का काम खत्म हो चुका था। आसमान बेहद खूबसूरत था—लाल और बैंगनी रंग का। महाराजजी निश्चित रूप से समाधि में थे। यह मौन समाधि नहीं थी, लेकिन किसी न किसी प्रकार की समाधि तो थी ही। पीछे की ओर झुकते हुए उन्होंने कहा, "क्या अमेरिका में भी ऐसे आसमान होते हैं?" और, किसी तरह, मुझे लगा कि अमेरिका लौटने पर इस पल से मेरा कुछ न कुछ संबंध जरूर होगा। आज मुझे यही बात याद आई।

राम

एक बार के.के. ने मुझे और उनके चचेरे भाई एम.एल. को शाम को कैंची जाने के लिए आमंत्रित किया। वहाँ हमें महाराजजी के निर्देशानुसार आगामी पर्व के अनुष्ठान के लिए खरीदे गए कुछ दीपक और सामान पहुँचाने थे। यह अवसर मेरे लिए अत्यंत प्रसन्नता का कारण बना, क्योंकि महाराजजी की उपस्थिति में मुझे कभी भी शाम को द्वार बंद होने के बाद कैंची मंदिर में रहने की अनुमति नहीं मिली थी।

शाम ढल रही थी और चारों ओर सन्नाटा पसरा हुआ था। जब हम पहुँचे, महाराजजी अपने बाहरी तंबू पर अकेले बैठे थे। एमएल और मैं उनके पास बैठ गए, जबकि केके हमारे लाए हुए सामान को रखने में व्यस्त हो गया। आज पहली बार कोई हंसी-मजाक या बातचीत नहीं हो रही थी। यही वह अवसर था जिसकी मुझे वास्तव में बहुत चाह थी—महाराजजी की उपस्थिति में ध्यान करने का अवसर—क्योंकि महाराजजी के आसपास शब्दों और सेबों का जो निरंतर नाटक चलता रहता था, वह सारी चेतना को भौतिक तल पर ही केंद्रित रखता था। यद्यपि अन्य लोकों में उनसे मिलने की तीव्र इच्छा हमेशा से प्रबल और निरंतर बनी रहती थी, लेकिन जब यह नाटक चल रहा होता था, तो मुझमें इसे पूरी तरह से अनदेखा करने और अपने मन को भीतर की ओर, आज्ञा (तीसरे नेत्र) पर इस प्रकार केंद्रित करने का अनुशासन नहीं होता था कि चेतना अन्य लोकों तक पहुँच सके।

अब सब शांत था; यही अवसर था। मैं पद्मासन में बैठ गया और अपना ध्यान अपने माथे पर केंद्रित किया। लगभग तुरंत ही मैं गहरी ध्यान अवस्था में लीन हो गया और भौतिक जगत से विमुख होने का आभास हुआ। इस समय मुझे हल्का-सा अहसास हुआ कि महाराजजी अचानक

एक करवट लेट गए थे और खर्राटे ले रहे थे। मुझे एक हल्की सी हैरानी हुई, क्योंकि उनकी स्थिति देखकर स्पष्ट लग रहा था कि वे सो नहीं रहे थे। हालांकि, इस पर विचार करने का समय नहीं था, क्योंकि अचानक ही मेरा शरीर ऊर्जा के तीव्र और शक्तिशाली झटकों से हिल उठा, जिससे मेरे दांत सचमुच कांपने लगे। कंपन की तीव्रता बढ़ती गई और माथे पर से ध्यान हटकर कांपते हुए शरीर पर चला गया। तुरंत ही महाराजजी उठ बैठे, एमएल की ओर मुड़े और बोले, "राम दास से पूछो कि स्टीवन कितना पैसा कमाता है।"

मैंने बहुत दूर से वे शब्द सुने और एमएल का जवाब भी सुना कि वे मुझे परेशान नहीं करना चाहते क्योंकि मैं ध्यान कर रहा था। फिर भी, महाराजजी ने ज़िद की और एमएल ने धीरे से मेरा घुटना हिलाया। मुझे अपने भीतर "नीचे आने" में बहुत प्रतिरोध महसूस हुआ और मैंने बस इतना नीचे आने की कोशिश की कि मैं जवाब दे सकूँ, "तीस हज़ार प्रति वर्ष," इस उम्मीद में कि मुझे वापस "ऊपर" जाने की अनुमति मिल जाएगी। लेकिन एक बार नीचे आते ही, अनुभव समाप्त हो गया। फिर भी, यह मुझे यह दिखाने के लिए पर्याप्त था कि मेरे मन का अनुशासन उन विशाल ऊर्जाओं के साथ काम करने के लिए पर्याप्त नहीं था जो महाराजजी केवल एक खर्राटे से मुझमें उत्पन्न कर सकते थे।

कुछ ही देर बाद हम “जाओ” हो गए। मंदिर के कोने पर पहुँचकर मैंने पीछे मुड़कर देखा। वहाँ अँधेरे में महाराजजी अपनी चादर ओढ़े, मूर्ति की तरह स्थिर बैठे थे। उस क्षण उनमें कुछ अलौकिक सा भाव था। वो गर्मजोशी भरे अंतरंग क्षणों वाले महाराजजी नहीं थे; वो कैलाश पर्वत पर शाश्वत ध्यान में विराजमान शिव थे। महाराजजी का यही वो रूप था, जो हिमालय की तरह विशाल और निर्वैयक्तिक प्रतीत होता था, और मेरे भीतर एक गहरी और मासूमियत भरी जगह को छू गया। यही वो शक्ति थी जिसने मुझे अपनी ओर खींचा। ये प्रेम से परे प्रेम था। (आर.डी.)

> कुंडलिनी जागरण के लिए ध्यान करें। ईश्वर के बारे में सोचें; यह तुरंत ऊपर उठ जाएगी।
> ईश्वर के दर्शन के लिए विशेष दृष्टि होनी चाहिए। अन्यथा आप इस सदमे को सहन नहीं कर पाएंगे।

जब मैं छोटा बच्चा था, तो वह मेरे सिर को अपने कंबल से ढक देते थे। मुझे एक अजीब सी सिहरन होती थी—सिर से पैर तक मैं कांप उठता था। आप इसे अनुभूति कह सकते हैं, लेकिन अनुभूति उस अनुभूति के लिए एक छोटा सा शब्द है। मैं उस आनंद को शब्दों में बयान नहीं कर सकता।

राम

एक माँ चित्रकूट जाने की इच्छा जता रही थी। महाराजजी ने कहा, "तुम चित्रकूट जाना चाहती हो?" और उन्होंने उसका हाथ पकड़ लिया। देखते ही देखते वह चित्रकूट पहुँच गई। फिर मंदिर में वापस आकर वह आठ घंटे तक बेहोशी की हालत में रही।

राम

मेले में, जब महाराजजी ने पहली बार गुरुदत्त शर्मा को समाधि में विसर्जित किया, तो उन्हें उन पर सावधानीपूर्वक नजर रखनी पड़ी, क्योंकि वे इतनी परमानंद की स्थिति में थे कि उन्हें डर था कि वे आग में गिर जाएंगे।

राम

जब मैं उसे नहला रही थी तो मैंने अपना हाथ उसके सिर पर रखा और मेरा पूरा शरीर बिजली से भर गया।

राम

जागेश्वर जाते समय हम अल्मोड़ा में रुके और महाराजजी ने मुझे ध्यान करने को कहा। मुझे उड़ने का अहसास हुआ और बेहोश होने से पहले कैलाश पर्वत का ख्याल आया। कुछ समय बाद मैं होश में आया और हम आगे बढ़ गए। बाद में मेरी पत्नी और अन्य लोगों ने बताया कि उन्होंने महाराजजी और मुझे उसी समय दिल्ली में देखा था। वे हैरान थे कि हम इतनी जल्दी क्यों चले गए।

राम

हमारे आश्रम में अपनी एक यात्रा के दौरान, महाराजजी ने अपने एक भक्त को ध्यान करने के लिए कहा। भक्त बैठ गया और तुरंत समाधि में लीन हो गया। महाराजजी ने आश्रमवासियों से उसकी आँखों में देखने और उसे जगाने के लिए कहा। उन्होंने कोशिश की, लेकिन वे सफल नहीं हुए, क्योंकि वह पत्थर की तरह स्थिर था। दस-पंद्रह मिनट बाद, महाराजजी ने भक्त की ओर मुड़कर ज़ोर से पुकारा, “उठो! उठो!” तुरंत ही, भक्त ने अपनी आँखें खोलीं और उठ गया। महाराजजी ने उसे छुआ तक नहीं था। बाद में महाराजजी ने आश्रम के स्वामियों से पूछा, “क्या आप ध्यान में बैठते हैं? क्या आप इस तरह बैठ सकते हैं?”

राम

महाराजजी की एकाग्रता और ध्यान सिखाने की विधि अनोखी थी। जैसे ही आपको थोड़ा सा भी आनंद महसूस होने लगता, वे तुरंत आपको समाधि से बाहर निकाल देते थे। एक बार मैंने उनसे पूछा कि उन्होंने मेरी समाधि क्यों रोक दी, तो उन्होंने उत्तर दिया कि मन की अपनी सीमाएँ होती हैं, मैं एक भौतिक शरीर में हूँ, और ये सब चीजें धीरे-धीरे ही प्राप्त होती हैं—वरना मैं पागल हो जाऊँगा। वे शरीर की क्षमता को समझते थे।

राम

महाराजजी ने मुझे अपनी उपस्थिति में कभी भी अपने ऊपर ध्यान लगाने की अनुमति नहीं दी। आज भी, अगर मैं उन पर ध्यान केंद्रित करने की कोशिश करता हूँ, तो सबसे बड़ी शरारत भी मेरे ध्यान को भंग कर देती है। लेकिन मुझे आनंद की कोई कमी नहीं है।

राम

महाराजजी अक्सर हमारे ध्यान के प्रयासों में बाधा डालते थे। कई बार जब हम वहाँ बैठे होते, कोई ध्यान करना शुरू कर देता और महाराजजी अपने दो "ध्यान बिगाड़ने वालों" को भेज देते। एक उनका ड्राइवर था और दूसरा ड्राइवर का एक छोटा दोस्त। वे उन्हें लोगों को ध्यान से विचलित करने के लिए भेजते थे। एक बार हम सब वहाँ बैठे थे और उन्होंने कहा, "ठीक है, ध्यान करो," और लगभग एक मिनट बाद ही वे चुटकुले सुनाने लगे और सबको चुप करा दिया। एक बार महाराजजी ने हमें अपने दफ्तर में बुलाया और गाने को कहा। हमने गाना शुरू किया लेकिन किसी को भी उसमें रुचि नहीं थी, इसलिए थोड़ी देर बाद गाना बंद हो गया, और फिर उन्होंने दूसरे कमरे से चिल्लाकर कहा, "गाते रहो।" हमने फिर से गाना शुरू किया और फिर से बंद हो

गया, और उन्होंने चिल्लाकर कहा, "गाते रहो।" और आखिरकार लगभग तीन घंटे बाद गाना सबको पसंद आने लगा और बहुत अच्छा हो गया। जब गाना खत्म हुआ तो सब लोग स्वाभाविक रूप से ध्यान में लीन हो गए, और जैसे ही ऐसा हुआ, हमने दूसरे कमरे से सुना, "खाना खा लो," और हम सबको दूसरे कमरे में ले जाया गया। हम उस ध्यानमग्न स्थान को कभी भी मजबूती से पकड़ नहीं पाए।

मैं ध्यान को बहुत महत्व देता था, इसलिए जब मुझे पता चला कि सार ध्यान के एक शिक्षक हिमालय के एक छोटे से दूरस्थ गाँव कौसानी में वर्षा ऋतु बिताने वाले हैं, तो मैंने तीन अन्य पश्चिमी लोगों के साथ मिलकर एक शांत, गहन ग्रीष्मकालीन अभ्यास के लिए विस्तृत योजना बनाई। जब मैंने महाराजजी को अपनी योजनाओं के बारे में बताया, तो उन्होंने केवल इतना कहा, "यदि आप चाहें।" फिर उन्होंने कहा, "जाओ! मैं तुम्हें बुलाऊँगा।"

कौसानी का घर एकदम सही था, और हम बड़े आनंद से वहाँ बस गए, मानो हमारी ग्रीष्मकालीन ध्यान साधना की कल्पना पूरी होने वाली थी। हमने शौचालय खोदा, बारी-बारी से पानी लाने और खाना पकाने का काम किया, हिमालय के निहारते रहे और अपने गुरु अनागोरिका मुनिंद्रा के आने का इंतज़ार करने लगे।

दूसरे सप्ताह की शुरुआत में हमें पता चला कि कुछ पश्चिमी लोग गाँव में आ गए हैं और नीचे एक छोटे से होटल में ठहरे हुए हैं। हम सब इस बात पर सहमत थे कि उन्हें हमारे घर पर नहीं बुलाया जाना चाहिए, क्योंकि हमें इस जगह को उस काम के लिए सुरक्षित रखना था जो हम मुनींद्र के आने के साथ शुरू करेंगे। लेकिन पश्चिमी लोग कौसानी आते रहे और उन्हें पहाड़ की चोटी पर न आने से ज़रा भी खुशी नहीं हुई। आख़िरकार, महाराजजी ने ही तो उन्हें आने के लिए कहा था। उन्होंने कहा था, “कौसानी में राम दास के साथ रहो। वह तो शुरुआती कोर्स है। राम दास के लिए नहीं।”

मुझे बहुत गुस्सा आया। महाराजजी जानते थे कि हम अकेले रहना चाहते हैं, फिर भी उन्होंने जानबूझकर बीस लोगों को भेज दिया था। हमने तय किया कि चाहे कुछ भी हो जाए, हम अपनी मूल योजना पर कायम रहेंगे!

लेकिन हमने महाराजजी की लीला की व्यापकता को कम आँका था, क्योंकि दूसरे सप्ताह के शुक्रवार को मुनिंद्रा का एक पत्र आया: “बोधगया में मुझे कुछ प्रशासनिक कार्यों को निपटाना है, इसलिए मैं इस ग्रीष्म ऋतु में कौसानी नहीं आ पाऊँगा।” बस, हमारा सपना टूट गया। ध्यान में शांतिपूर्वक ग्रीष्म ऋतु बिताने का सपना टूटते ही, हम गाँव में आए अन्य पश्चिमी लोगों के साथ घाटी के उस पार स्थित एक आश्रम में चले गए और वहाँ हमने एक सार्थक और गहन ग्रीष्मकालीन आश्रम अनुभव प्राप्त किया।

ग्रीष्म ऋतु के अंत में, महाराजजी के बुलावे पर हम कैंची लौट आए। जब हम उनके दर्शन के लिए उनके सामने आए, तो वे हंस रहे थे। उन्होंने कहा, “राम दास गुरुजी, राम दास गुरुजी। बौद्ध गुरुजी कभी आए ही नहीं। राम दास गुरुजी, राम दास गुरुजी,” और वे खिलखिलाते हुए मेरी दाढ़ी खींचने लगे। इसमें कोई शक नहीं कि ग्रीष्म ऋतु की घटनाएँ महज़ हमारी योजनाओं की आकस्मिक गड़बड़ी नहीं थीं। इसमें किसी का हाथ था। (आर.डी.)

२१७

महाराजजी ने मुझे एकांत में रहने और कम बोलने का निर्देश दिया था। उन्होंने मुझे अपनी आज्ञा पर ध्यान केंद्रित करने और उनका स्मरण करने के लिए भी कहा था; इसलिए एक ग्रीष्म ऋतु में जब हम कौसानी में थे, जो महाराजजी के निवास स्थान से लगभग पचास मील दूर था, मैं पाँच दिनों तक अपने कमरे में अकेला रहा और उपवास किया। मेरे पास महाराजजी की कई तस्वीरें थीं।

इस साधना की शुरुआत करते हुए मैंने महाभारत से पांडव भाइयों की एक कहानी पढ़ी, जिनमें अर्जुन सबसे कुशल थे। कथा के अनुसार, दोनों भाई अर्जुन की कुशलता से ईर्ष्या करते थे और उन्होंने अपने गुरु से पूछा कि वह उनसे इतना निपुण क्यों है। गुरु ने कहा, "इसमें कुछ खास नहीं है। बस वह तुमसे ज़्यादा निपुणता चाहता है।" इसे समझाने के लिए गुरु ने उन्हें अपने धनुष-बाण से एक पक्षी की आँख में तीर मारने का काम दिया। अर्जुन ने यह काम आसानी से कर लिया। इसके बाद गुरु ने प्रत्येक भाई से पूछा कि उन्होंने क्या देखा। एक ने उस पेड़ का वर्णन किया जिस पर पक्षी बैठा था; दूसरे ने पक्षी और उसके रंग का वर्णन किया। जब अर्जुन से पूछा गया, तो उन्होंने कहा, "मुझे एक पक्षी की आँख दिखाई दे रही है।"

मैं महाराजजी को उसी तरह देखना चाहता था जैसे अर्जुन ने उस पक्षी की आँख देखी थी। मुझे बस महाराजजी को अपना ध्यान केंद्र बनाना था, क्योंकि महाराजजी पर ध्यान केंद्रित करने से आँख, मन और हृदय तीनों एक साथ एकाग्र हो जाते थे। एक-दो दिन बाद, महाराजजी की तस्वीरों का महत्व कम होता चला गया और मैंने उन्हें हटा दिया; फिर भी मुझे कमरे में महाराजजी की उपस्थिति का अहसास होता रहा। चौथे दिन तक मुझे उनका इतना करीब से अहसास हुआ कि मानो वे मेरे ठीक पीछे खड़े हों।

उपवास ने मुझे भावनात्मक रूप से बहुत संवेदनशील बना दिया था, इसलिए जब मुझे यह महसूस होने लगा कि वे अब मेरे पीछे नहीं हैं और कमरे में मौजूद नहीं हैं, तो मैं बहुत परेशान हो गई। तब मुझे एहसास हुआ कि यह अनुपस्थिति महाराजजी की एक अलग सत्ता के रूप में थी; क्योंकि उन ध्यानपूर्ण दिनों के दौरान जो हुआ था, वह यह था कि महाराजजी धीरे-धीरे मेरे करीब आते गए, यहाँ तक कि मेरे भीतर समा गए। मैंने अकेलापन महसूस किया; अकेलापन नहीं, बस अकेलापन। यह शक्ति, स्पष्टता और परिपूर्णता का एहसास था, लेकिन साथ ही ध्वनियों की उपस्थिति में भी एकाकीपन और मौन का भी। यह कुछ ऐसा था जैसे मैं पृथ्वी पर अंतिम व्यक्ति हूँ। जब मैं अंततः कमरे से बाहर निकली और फिर से लोगों के बीच थी, तो यह भावना धीरे-धीरे मुझसे दूर हो गई; लेकिन अब मैं जानती थी कि महाराजजी में विलीन होने के मार्ग में ही मेरी मुक्ति निहित है। (आर.डी.)

कुंडलिनी नाभि के नीचे स्थित होती है। गुरु की कृपा से, गुरु के कोमल, सरल स्पर्श से इसे ऊपर उठाया जा सकता है।

सेवा

जब महाराजजी से पूछा गया कि वे इतने सारे बदमाशों से क्यों घिरे रहते हैं, तो उन्होंने कहा, "केवल बीमार लोग ही डॉक्टर के पास जाते हैं।" और एक अनुभवी और भरोसेमंद पारिवारिक चिकित्सक की तरह, महाराजजी अपने भक्तों के लिए दिन-रात उपलब्ध रहते थे और घर-घर

जाकर उनका इलाज करते थे। इस प्रकार महाराजजी का स्वयं का व्यवहार उस साधना का आदर्श उदाहरण था जिसे वे अपने भक्तों में सबसे अधिक प्रोत्साहित करते थे: निस्वार्थ प्रेमपूर्ण सेवा। उनके भक्तों में सबसे अधिक संख्या गृहस्थों की थी, जिनके लिए महाराजजी आमतौर पर कठोर तपस्या, गहन ध्यान साधना या जटिल अनुष्ठानों को प्रोत्साहित नहीं करते थे। बल्कि, वे हमें कर्म योग की ओर मार्गदर्शन करते थे, जो जीवन को समर्पित सेवा के रूप में जीकर ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग है। इस तरह महाराजजी रामायण, भगवद गीता और बाइबल जैसे महान भक्ति ग्रंथों की शिक्षाओं का प्रतिबिंब थे। लेकिन महाराजजी ने यह स्पष्ट कर दिया कि केवल परिश्रम ही सार नहीं है। बल्कि, यह ईश्वर के स्मरण के साथ किया गया कार्य है; अर्थात्, ईश्वर की कृपा की उपस्थिति में प्रेम से किया गया कार्य।

एक व्यक्ति आश्रम में इतनी मेहनत करता था कि उसे महाराजजी के दर्शन का अवसर लगभग कभी नहीं मिलता था। लेकिन एक शाम ऐसा हुआ कि एक-एक करके सभी भक्त चले गए और महाराजजी अपनी कुर्सी पर अकेले रह गए। तब वह व्यक्ति महाराजजी के पास जाकर बैठ गया। महाराजजी आश्चर्यचकित प्रतीत हुए, क्योंकि उस व्यक्ति को दर्शन करने का समय ही नहीं मिलता था। इसलिए महाराजजी ने उससे कहा, "तुम्हें क्या चाहिए?"

उस व्यक्ति ने केवल इतना ही उत्तर दिया, "आत्मज्ञान (स्वयं का ज्ञान)।"

महाराजजी ने उत्तर दिया, "सभी की सेवा ही आत्म-ज्ञान है।"

राम

महाराजजी कभी-कभी हृदय को शुद्ध करने के बारे में गीता का उद्धरण देते थे: "गीता कहती है कि आप कर्म के माध्यम से एकाग्रता प्राप्त कर सकते हैं, और फिर आपको अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है।"

> **गरीबों की सेवा करो और ईश्वर को याद रखो। ऐसा करने से तुम मसीह के साथ एक हो जाओगे।**

“क्या महाराजजी ने आपको कोई विशेष शिक्षा दी?”

इस पर ब्रह्मचारी बाबा ने मधुर मुस्कान के साथ कहा, "उन्होंने मुझे सेवा करना सिखाया।"

उसके बाद हम सब कुछ देर तक चुप रहे।

राम

महाराजजी ने एचसी से पूछा कि उनके विचार में मनुष्य संसार में कैसे सफल होता है। एचसी ने कहा, लगन और ईमानदारी से किए गए परिश्रम से। महाराजजी ने इसका खंडन करते हुए कहा कि ईश्वर की कृपा भी आवश्यक है। ईश्वर की कृपा के बिना कोई भी परिश्रम सफल नहीं हो सकता।

राम

एक बार मैंने महाराजजी से पूछा कि मनुष्य के लिए हर समय भगवान का स्मरण करना कैसे संभव है। उन्होंने मुझे नारद (स्वर्गिक ऋषि) और कसाई की कहानी सुनाई: विष्णु (भगवान के एक रूप) हमेशा कसाई की स्तुति करते थे और नारद को आश्चर्य होता था कि ऐसा क्यों है, क्योंकि कसाई हमेशा व्यस्त रहता था और नारद चौबीसों घंटे विष्णु की स्तुति करते थे। विष्णु ने नारद को तेल से लबालब भरा कटोरा बिना एक बूंद गिराए पहाड़ की चोटी तक ले जाने का काम

दिया। काम पूरा होने पर, विष्णु ने पूछा कि नारद ने कितनी बार विष्णु का स्मरण किया। नारद ने पूछा कि यह कैसे संभव होगा, क्योंकि उन्हें कटोरा ले जाने और पहाड़ पर चढ़ने पर ध्यान केंद्रित करना था। विष्णु ने नारद को कसाई के पास भेजा और कसाई ने कहा कि काम करते समय वह हमेशा भगवान का स्मरण करता रहता है।

महाराजजी ने तब कहा, “तुम्हें जो भी बाहरी कार्य करना हो, वह करो; परन्तु अपने मन को इस प्रकार प्रशिक्षित करो कि तुम्हारे अवचेतन मन में ईश्वर की स्मृति बनी रहे।”

महाराजजी अक्सर मुझे अकेले रहने, लोगों से कम मेलजोल रखने और साथ ही लोगों की सेवा और उन्हें भोजन कराने का निर्देश देते थे। एक बार मैं अपने कमरे में ही था क्योंकि उन्होंने कहा था कि मुझे अकेले खाना खाना चाहिए और दूसरों के साथ समय नहीं बिताना चाहिए। उस रात एक पश्चिमी दंपति का झगड़ा हो गया, और बाद में महाराजजी ने मेरी ओर देखते हुए उनसे पूछा, “राम दास कहाँ थे? वह तुम्हारी मदद करने के लिए वहाँ क्यों नहीं थे?” (आर.डी.)

मैंने महाराजजी से अपनी साधना के बारे में पूछा, और उन्होंने कहा, “मनुष्यों की सेवा करना ही मोक्ष का एकमात्र मार्ग है। तुम्हें ध्यान या पूजा करने की आवश्यकता नहीं है। सभी प्राणियों की सेवा करो।”

जो कोई भी ईश्वर के लिए काम करता है, उसका काम अपने आप पूरा हो जाएगा।
कर्म ही ईश्वर है। कर्म ही उपासना है।
मन को हमेशा काम में लगा रहना चाहिए।

महाराज जी, मैं ईश्वर को कैसे जान सकता हूँ?

लोगों की सेवा करो।

महाराज जी, मैं ज्ञान कैसे प्राप्त कर सकता हूँ?

लोगों को खाना खिलाओ।

महाराजजी, मैं कुंडलिनी कैसे बढ़ा सकता हूँ?

लोगों की सेवा करो और उन्हें भोजन कराओ।

महाराजजी ने हमें ईश्वर के साथ रहने के मार्ग के रूप में सेवा के सच्चे आनंद से परिचित कराया। यह देखना रोचक है कि हमारे आस-पास के लोग हमारी कितनी आलोचना करते हैं क्योंकि वे यह नहीं समझ पाते कि हम इतनी मेहनत और इतने आनंद के साथ क्यों काम करते हैं।

महाराजजी आपको अपना कार्य करने का सौभाग्य प्रदान करते हैं।

राज

एक भक्त ने कहा, "महाराजजी की सेवा करने का अवसर मिलना सम्मान की बात है।"

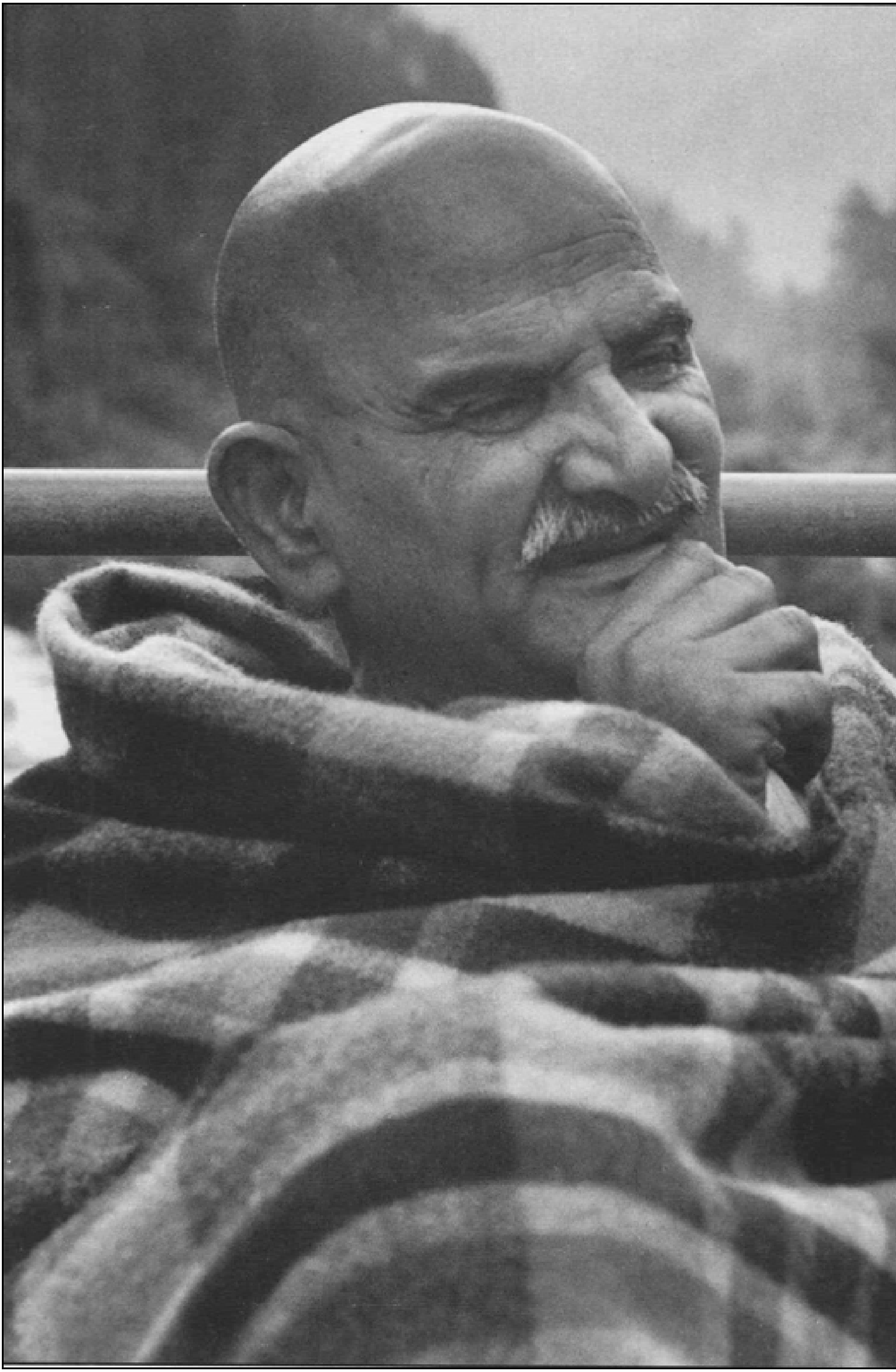

फोटो: बलराम दास

क्रोध और प्रेम के बारे में

दुर्व्यवहार का उस्ताद

महाराजजी क्रोध से ग्रस्त हम लोगों के प्रति अनेक प्रकार से प्रतिक्रिया देते थे; और उन सभी तरीकों से अंततः क्रोध सतह पर आ जाता था और हमें उसे मुक्त करने में सहायता मिलती थी। कभी-कभी कोई भक्त महाराजजी के निरंतर अपशब्दों का शिकार हो जाता था। ये अपशब्द, साथ ही अंतर्निहित प्रेम, सबसे छिपे और गहरे क्रोध के लिए भी रामबाण साबित होते थे। दूसरों के लिए ऐसा लगता था मानो महाराजजी के आसपास ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती थीं जो क्रोध को एक बुरी तरह से सूजे हुए फोड़े की तरह सतह पर ला देती थीं। और ठीक सही समय पर, महाराजजी क्रोध को शांत करने के लिए आवश्यक शब्द या नज़र से वहाँ मौजूद होते थे—और उपचार के बाद आत्मा को शांत करने के लिए आवश्यक दूध का प्याला देते थे।

दो वर्षों तक, महाराजजी ने दादा से मंदिर प्रबंधन के हिस्से के रूप में कई ऐसे काम करवाए जिनसे वे घर पर परहेज करते थे। और इस दौरान, महाराजजी सुबह से शाम तक उनके सामने और उनकी पीठ पीछे उन्हें खरी-खोटी सुनाते रहे। इस प्रशिक्षण के दौरान दादा ने अपने क्रोध पर काबू पाना सीख लिया। दो साल बाद महाराजजी ने दादा की पत्नी से पूछा कि क्या अब उन्हें गुस्सा आता है, तो उन्होंने जवाब दिया, बहुत ही कम।

राम

महाराजजी ने दादा से कहा कि अगर वह दादा की पत्नी होतीं तो उन्हें बहुत पहले ही घर से निकाल देतीं।

राम

महाराजजी ने दादा की ओर मुड़कर कहा, “तुम मूर्ख हो।” दादा ने सहमति जताई। फिर महाराजजी ने कहा, “तुम मूर्ख नहीं हो।” दादा ने भी सहमति व्यक्त की।

राम

महाराजजी द्वारा दादा के साथ किए गए दुर्व्यवहार के प्रति उनके दार्शनिक दृष्टिकोण का पता उनके बीच हुई बातचीत से चलता है। पास ही लगातार गोलियों की आवाज आ रही थी और महाराजजी ने पूछा, "यह क्या है?"

दादा ने उत्तर दिया, "वे तो बस खाली गोलियां चला रहे हैं, बाबा।"

“रिक्त स्थानों से आपका क्या मतलब है?” महाराजजी ने पूछा।

“यही तो आप करते हैं, महाराजजी,” दादा ने उत्तर दिया।

“ओह,” महाराजजी ने कहा, “मैं भी खाली गोलियां चलाता रहता हूँ,” उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक कहा।

राम

“दादा कला के उस्ताद हैं,” महाराजजी ने कहा।

दादा ने जवाब दिया, "और तुम गाली देने में माहिर हो।"

जब महाराजजी का व्यवहार इतना खराब हो गया कि उनकी माताएं रोने लगीं, तो उन्होंने उनसे कहा, "यदि तुम मेरी गालियों को सुनने की शक्ति रखती हो, तभी तुम दुनिया का सामना

कर सकती हो।"

जो व्यक्ति मेरे करीब है, उसे डांट पड़ सकती है।
एक संत कभी क्रोधित नहीं होता।
मैं सपने में भी तुमसे नाराज़ नहीं हो सकता।

एक दिन जब हम पश्चिमी लोगों को मंदिर परिसर के पिछले हिस्से में भेज दिया गया था, जैसा कि दिन के समय अक्सर होता था, तो मैंने (भावनात्मक कारणों से) उस इमारत की ऊपरी मंजिल पर जाने का फैसला किया जिसमें मैं 1967 में रहता था और अपने पुराने कमरे में बैठ गया। इस कमरे की एक खिड़की दीवार के उस पार मंदिर के सामने वाले हिस्से की ओर खुलती थी, जो पीछे से दिखाई नहीं देता था। जब मैं यूं ही इन खिड़कियों में से एक से बाहर देख रहा था, तो मेरी नज़र एक ऐसे दृश्य पर पड़ी जिसने मुझे खिड़की पर ही स्तब्ध कर दिया, लेकिन साथ ही मुझे पीछे हटना पड़ा ताकि बाहर से कोई मुझे देख न सके।

नीचे, महाराजजी के कमरे की खिड़की पर, मंदिर में काम करने वाला और अक्सर हमारा अनुवादक बनने वाला एक भक्त फूट-फूटकर रो रहा था। ज़ाहिर है, वह महाराजजी से बात कर रहा था। फिर वह उठा और आँसू बहाते हुए मंदिर के पिछले हिस्से की ओर चला गया। उसके नज़र से ओझल होते ही, महाराजजी अपने दरवाज़े पर प्रकट हुए और आँगन में आ गए। वे किसी पागल शेर या हाथी की तरह खड़े थे, और हालाँकि मैं उन्हें सुन नहीं पा रहा था, यह स्पष्ट था कि वे बहुत गुस्से में चिल्ला रहे थे और इधर-उधर घूम रहे थे। सामने के आँगन में सभी लोग सहमे हुए लग रहे थे। यह मुझे धार्मिक नहीं लगा। आख़िरकार, महाराजजी ने मुझसे विशेष रूप से कहा था कि एक संत कभी क्रोधित नहीं होता।

मेरे मन में विश्वासघात का भाव उमड़ आया, क्योंकि महाराजजी स्पष्ट रूप से क्रोधित थे। तो वे भी संत नहीं थे। ये किस तरह के गुरु थे? कहते कुछ थे और करते कुछ और थे। मैं स्वयं क्रोधित हो गया और 1967 के बाद पहली बार महाराजजी के प्रति मेरा हृदय ठंडा पड़ गया; और मेरे मन में यह विचार आया कि शायद मुझे महाराजजी को छोड़कर अकेले ही आगे बढ़ना होगा। मैं गहरे निराश होकर लड़खड़ाते हुए नीचे लौटा और दूसरों के साथ बैठ गया, लेकिन कुछ नहीं बोला। बाद में मुझे पता चला कि उस दृश्य के तुरंत बाद, महाराजजी अपने कमरे में वापस गए, दादा को बुलाया और बहुत ही सहज लहजे में पूछा, "क्या रामदास ने मुझे क्रोधित होते देखा?" दादा ने कहा कि उन्हें ऐसा नहीं लगता। लेकिन महाराजजी ने जोर देकर कहा कि मैंने देखा था और उन्हें एक संदेश देकर वापस भेज दिया।

जब दादाजी ने मुझे उदास बैठे देखा तो उन्होंने कहा, "महाराजजी जानना चाहते हैं कि क्या तुमने उन्हें गुस्सा होते देखा है।"

"हां," मैंने कहा।

"ठीक है, उन्होंने कहा कि अगर आपके कोई सवाल हों तो उनके जवाब बाद में दिए जाएंगे।" और वे चले गए।

कुछ देर बाद रोता हुआ भक्त हाथ में थैला लिए हुए आया और हमें बताया कि उसे मंदिर से निकाल दिया गया है। बाद में हमें पता चला कि उसने भंडारगृह में चालीस पौंड आलू खराब कर दिए थे। उसने नम आँखों से अलविदा कहा और चला गया। यह आदमी कोई खास काबिल नहीं

था, और हालाँकि वह शिष्ट था, पर एक तरह से परेशानी भी था। आम तौर पर मुझे उसके जाने से कोई दुख नहीं होता, क्योंकि वह लगातार पश्चिमी लोगों को खुश करने की कोशिश करता रहता था। लेकिन इन परिस्थितियों में, मुझे अचानक उस लाचार का साथ देने की तीव्र इच्छा हुई। मैं उठा और उसके पीछे-पीछे मंदिर के सामने तक गया। बिना बुलाए सामने जाना ही एक तरह का विद्रोह था। और जब वह उदास भक्त मंदिर के द्वार से बाहर जा रहा था, तो मैं जानबूझकर उसके पास गया, उसे गले लगाया और उसे कुछ पैसे और दिल्ली में अपने पते का एक नोट दिया, अगर उसे किसी चीज की जरूरत हो। फिर उसके जाने के बाद मैं चुनौती भरे अंदाज में मंदिर से वापस चला गया, जैसे फिल्म 'हाई नून' के किसी टकराव वाले दृश्य में होता है। सबको समझ आ गया कि मैं महाराजजी के खिलाफ हो गया हूँ।

सारा दिन मैं इंतज़ार करता रहा, पर कोई स्पष्टीकरण नहीं मिला। हमेशा की तरह, हमें आखिरी बस के जाने से कुछ मिनट पहले तक मंदिर के सामने नहीं बुलाया गया। उस समय एक दंपत्ति वैवाहिक समस्याओं से जूझ रहे थे, और महाराजजी ने उनसे सीधे बात की। उन्होंने कहा कि उन्हें एक-दूसरे में ईश्वर को देखना चाहिए और अपना क्रोध त्याग देना चाहिए। मैंने मन ही मन उस दृश्य को याद करके चिढ़ महसूस की जो मैंने अभी-अभी देखा था। फिर उन्होंने कबीर के शब्दों को दोहराया: "दूसरे व्यक्ति के साथ जो चाहे करो, पर उसे कभी अपने हृदय से मत निकालो," और बोलते हुए उन्होंने सीधे और ज़ोर से मेरी ओर देखा। वे शब्द मेरे हृदय में उतर गए और एक पल में मुझे वे उस विवाहित दंपत्ति पर, भक्त के प्रति महाराजजी के व्यवहार पर और उस दृश्य पर मेरी अपनी प्रतिक्रियाओं पर लागू होते हुए सुनाई दिए। एक बार फिर मैं उस भावुक नाटक में उलझ गया था और भ्रम को - और उसके पीछे छिपे प्रेम को - भूल गया था। उन्होंने इस घटना के बारे में और कुछ नहीं कहा, जिससे उनकी कही हुई बातें और भी अधिक प्रभावशाली हो गईं। (आर.डी.)

राम

कभी-कभी महाराजजी का व्यवहार मुझे रामकृष्ण द्वारा सुनाई गई एक कहानी की याद दिलाता है, जिसमें एक संत ने एक सांप से कहा कि वह किसी को काटे नहीं, बल्कि सभी से प्रेम करे। सांप मान गया। लेकिन फिर कई लोगों ने सांप पर चीजें फेंकीं। संत ने सांप को बुरी तरह घायल पाया। संत ने कहा, "मैंने तो फुफकारने से मना नहीं किया था।"

राम

मुझे महाराजजी पर बहुत गुस्सा आ रहा था क्योंकि मैं उनके बार-बार यह कहने से तंग आ चुकी थी कि मैं अच्छी हूँ। मैं उनके "बहुत अच्छा" शब्दों से बहुत परेशान हो गई थी। एक बार तो वे दस मिनट तक एक आदमी की तारीफ करते रहे कि मैं कितनी अच्छी हूँ, और मैं बस उठकर चली गई। मेरे जाते समय मुझे उनकी "बहुत अच्छा" की आवाज़ मंत्र की तरह सुनाई दे रही थी।

मैं वापस जाकर हवन के पास बैठ गई, और थोड़ी देर बाद महाराजजी वहाँ आए और मुझे अपने पास बुलाया। मैं अब भी गुस्से में थी। मैं सोच रही थी, “ये मुझे अकेला क्यों नहीं छोड़ देते; मैं यहाँ अकेले बैठना चाहती हूँ!” लेकिन फिर भी मैं उनके पास चली गई। और उन्होंने कहा, “अरे नहीं। ये गुस्से में हैं। इन्हें दूध पीना होगा।” तो उन्होंने दूध मंगवाया और मुझे पीना पड़ा।

राम

जब भी मुझे बहुत गुस्सा आता था, महाराजजी किसी को मेरे लिए गर्म दूध, मिठाई या इलायची के दाने चबाने के लिए भेज देते थे। उनका कहना था कि इन चीजों से गुस्सा शांत हो जाता है।

राम

एक बार महाराजजी के मंदिर में मुझे बहुत गुस्सा आया। मेरा ज़्यादातर गुस्सा मेरे साथी पश्चिमी श्रद्धालुओं पर था। हालाँकि शायद गुस्से के कुछ वाजिब कारण थे, लेकिन दो हफ़्तों के अंत तक जिस हद तक गुस्सा बढ़ गया था, वह मेरे लिए भी हैरानी की बात थी। उसी समय मैं मंदिर पैदल चलकर गया और देर से पहुँचा।

सभी पश्चिमी लोग आश्रम के प्रांगण में, महाराजजी के सामने वाली ओर, बरामदे में हमेशा की तरह एक पंक्ति में बैठे थे। यहाँ से वे प्रसाद (इस मामले में दोपहर का भोजन) ग्रहण करते हुए महाराजजी को दूर से देख सकते थे। जब मैं पहुँचा और बैठ गया, तो एक पश्चिमी व्यक्ति मेरे लिए बचाकर रखा हुआ भोजन पत्तों की थाली में लेकर आया। और उसी क्षण मेरा क्रोध फूट पड़ा और मैंने पत्ते की थाली उठाकर फेंक दी। प्रांगण के दूसरी ओर से महाराजजी यह सब देख रहे थे।

लगभग तुरंत ही मुझे उनके सामने बुलाया गया, और मैं आंगन पार करके उनके सामने घुटने टेककर बैठ गया।

“क्या कोई बात आपको परेशान कर रही है?” उसने पूछा।

“हाँ,” मैंने सभी पश्चिमी लोगों की ओर देखते हुए कहा। “मुझे अधर्म (वे व्यवहार जो लोगों को ईश्वर से दूर ले जाते हैं) बिल्कुल बर्दाश्त नहीं होता। मुझे उनमें (पश्चिमी लोगों की ओर इशारा करते हुए) यह बर्दाश्त नहीं होता, और मुझमें भी नहीं। वास्तव में, मुझे आपके सिवा कोई भी पसंद नहीं।” और जब मैंने उनकी ओर देखा, तो मुझे लगा कि मेरी आत्मा के इस अंधकार में वही मेरे एकमात्र सुरक्षित आश्रय हैं, और मैं रोने लगी। नहीं, सिर्फ रोना ही नहीं, बल्कि फूट-फूट कर विलाप करना। महाराजजी ने मेरे सिर पर ज़ोर से थपथपाया और दूध मंगवाया, और जब आँसुओं के बीच से मेरी नज़र हटी, तो मैंने देखा कि वे भी रो रहे थे।

उन्होंने मुझे दूध पिलाया और पूछा कि क्या मैं उनसे प्यार करती हूँ। मैंने उन्हें यकीन दिलाया कि मैं करती हूँ। फिर, जब मैंने खुद को थोड़ा संभाला, तो वे मेरे करीब आए और बोले, "मैंने तुमसे कहा था कि सबको प्यार करो।"

“जी हां, महाराजजी, लेकिन आपने ही तो मुझे सच बोलने को कहा था। और सच यह है कि मैं सबको प्यार नहीं करता।” फिर महाराजजी और करीब आ गए, मानो हम आमने-सामने हों, और उन्होंने कहा, “सबको प्यार करो और सच बोलो।”

उनके कहे शब्दों से यह स्पष्ट हो गया कि क्या होने वाला है। एक क्षण के लिए मेरे मन में एक ताबूत की छवि उभरी—जो स्पष्ट रूप से मेरी मृत्यु का प्रतीक थी—लेकिन उसका आकार मेरे शरीर से बिल्कुल अलग था। ऐसा लग रहा था मानो वह उस बातचीत का प्रतीक हो जिसमें मैं यह कह रहा था कि मैं जो खुद को समझता हूँ, वह हर किसी से प्रेम नहीं कर सकता और न ही सच बोल सकता है, और महाराजजी कह रहे थे, “जब तुम वह बनना छोड़ दोगे जो तुम खुद को समझते हो, तब तुम यह बन जाओगे। जब तुम मरोगे, तब तुम्हारा पुनर्जन्म होगा और तुम हर किसी से प्रेम करोगे और सच बोलोगे।”

फिर उन्होंने कहा, "कभी-कभी सबसे तीव्र क्रोध ही सबसे प्रबल प्रेम को दर्शाता है।"

आंगन के उस पार उन पश्चिमी लोगों को देखते हुए, जिनके प्रति मेरे मन में अहंकार और क्रोध भरा भाव था, मैंने अचानक महसूस किया कि क्रोध तो एक स्तर पर था, लेकिन ठीक उसके नीचे, उससे थोड़ा गहरे स्तर पर, असीम प्रेम था—संबंध के दो ऐसे स्तर जिनमें कोई कह सकता है, “मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, पर तुम्हें पसंद नहीं करता।” और यदि महाराजजी के निर्देशों का पालन करना था—और इसमें कोई संदेह नहीं था कि उनका पालन किया जाना था, क्योंकि वे अच्छे या बुरे समय में मेरे गुरु थे—तो प्रेम के लिए क्रोध को त्यागना ही होगा।

तब महाराजजी ने मुझे एक प्रस्ताव दिया: “भगवान को देखने के लिए तुम्हें क्रोध रहित दर्पण को चमकाना होगा। यदि तुम प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा क्रोध त्यागोगे, तो मैं तुम्हारी सहायता करूंगा।” यह प्रस्ताव मुझे अत्यंत उचित लगा। मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। और उन्होंने अपना वादा बखूबी निभाया है।

उस दिन को अब तेईस साल हो चुके हैं। अशुद्धियाँ उतनी जल्दी दूर नहीं हुईं जितनी मैं चाहता था, लेकिन धीरे-धीरे, बहुत धीरे-धीरे, वे दूर हो रही हैं। (आर.डी.)

एक बार आश्रम में एक अन्य भक्त पर मुझे बहुत गुस्सा आया, और मैं सीधे महाराजजी के पास मदद के लिए गया, जो सड़क किनारे एक पत्थर पर बैठे थे। मैं उनके सामने घुटने टेककर उनके चरणों में सिर रख दिया। उन्होंने अपना हाथ मेरे सिर पर रखा और पूरे दर्शन के दौरान मुझे उसी स्थिति में बैठाए रखा। जब जाने का समय हुआ, तो उन्होंने मुझे उठने में मदद की। मेरे घुटनों पर खुरदरी बजरी के कारण गहरे निशान पड़ गए थे, जिस पर मैं बैठा था। मुझे पूरे समय इसका एहसास नहीं हुआ था। मेरा गुस्सा शांत हो गया था।

> क्षमा सबसे बड़ा हथियार है, क्योंकि इस तरह से सुसज्जित संत अविचलित रहता है। वह क्रोध को तुरंत त्याग सकता है।

एक बार एक युवक आया और महाराजजी ने उससे पूछा कि वह कैसा है, तो उसने कहा, “ओह, महाराजजी, मैंने क्रोध पर विजय प्राप्त कर ली है।” महाराजजी ने कहा, “वाह, बहुत बढ़िया!” और उसकी प्रशंसा करते रहे।

उस समय वहाँ एक और व्यक्ति मौजूद था जो कई वर्षों से महाराजजी से अपने घर आने का अनुरोध कर रहा था, लेकिन महाराजजी कभी नहीं आए थे क्योंकि उस लड़के के पिता साधुओं या संतों में विश्वास नहीं करते थे। लेकिन अब महाराजजी ने उस लड़के की ओर मुड़कर कहा, "क्या तुम अब भी चाहते हो कि मैं तुम्हारे घर आऊँ?"

लड़के ने कहा, “जी हाँ, लेकिन मुझे अपने पिता से बात करने दीजिए।” महाराजजी ने कहा, “जाओ, फिर हम सब आएँगे।” इस यात्रा का मतलब यह होगा कि घर में सम्मान का स्थान महाराजजी को दिया जाएगा, इसलिए पिता को कहीं और बैठना पड़ेगा।

अंत में, सभी लोग चले गए और महाराजजी लड़के के पिता की कुटिया पर बैठ गए। फिर महाराजजी झुके और पिता की आँखों में देखते हुए बोले, "आप एक महान संत हैं।" लेकिन हिंदी में उन्होंने बहुत ही निजी रूप धारण किया था, जो केवल घनिष्ठ मित्रों और निम्न जाति के लोगों के लिए ही प्रयोग किया जाता है। इसलिए बूढ़े पिता के लिए उस रूप का प्रयोग करना वास्तव में

अपमानजनक था। बूढ़ा व्यक्ति नाराज़ हो गया, लेकिन उसने खुद को संभाला। कुछ समय बीतने के बाद महाराजजी फिर झुके और बोले, "आप एक महान संत हैं।" इस बार पिता का चेहरा लाल हो गया था और वे उत्तेजित हो रहे थे, लेकिन फिर भी उन्होंने खुद पर नियंत्रण रखा। कुछ मिनट और बीतने के बाद महाराजजी फिर झुके और वही बात दोहराई। इस बार पिता पूरी तरह आपा खो बैठे। वे उठे और महाराजजी पर चिल्लाने लगे, "आप कोई संत नहीं हैं, आप बस आते हैं और लोगों का खाना खाते हैं, उनके बिस्तरों पर कब्जा करते हैं, और आप पाखंडी हैं।"

इस पर, क्रोध पर काबू पा चुके उस युवक ने उछलकर अपने पैरों पर खड़ा होकर पिता का कॉलर पकड़ लिया और उन्हें हिलाते हुए कहने लगा, "चुप रहो, तुम्हें नहीं पता कि तुम किससे बात कर रहे हो। वह एक महान संत हैं; अगर तुम चुप नहीं हुए तो मैं तुम्हें मार डालूंगा।"

इस पर महाराजजी उठे, व्याकुल होकर चारों ओर देखा और बोले, “क्या बात है, क्या बात है, क्या वे मुझे यहाँ नहीं चाहते? हमें चले जाना चाहिए—वे मुझे यहाँ नहीं चाहते।” इसलिए वे उठे और बाहर जाने लगे, और जाते समय उन्होंने उस युवक की ओर मुड़कर कहा, “क्रोध पर काबू पाना बहुत मुश्किल है। कुछ महान संत भी क्रोध पर काबू नहीं पा पाते।”

उस व्यक्ति ने कहा, "लेकिन महाराज जी, वह आपको गाली दे रहा था।"

“हाँ, वह मुझे गाली दे रहा था। तुम क्यों गुस्सा थी?”

दिल की भाषा

महाराजजी को रामायण का सुंदरकांड अध्याय जोर से पढ़वाना बहुत पसंद था। कथा में एक जगह सीता (पत्नी और भक्त) के लिए राम (पति और भगवान) का संदेश आता है, जिनसे सीता का वियोग हो चुका है। राम अपनी उस पीड़ा को बयां कर रहे हैं जो उन्हें इतनी पवित्र भक्त से बिछड़ने के कारण हो रही है: “कहने से कुछ हद तक पीड़ा कम हो जाती है; पर मैं किससे कहूँ? क्योंकि कोई है जो समझेगा नहीं। हे प्रिय, प्रेम के उस बंधन की सच्चाई जो हम दोनों को बांधता है, केवल मेरी आत्मा को ही ज्ञात है; और मेरी आत्मा सदा तुम्हारे साथ ही रहती है। यही मेरे प्रेम का सार है।” जब यह अध्याय पढ़ा जाता था, महाराजजी की आँखों से आँसू बहने लगते थे और अक्सर वे परमानंद की अवस्था में लीन हो जाते थे।

महाराजजी से हमारा जुड़ाव उनके प्रेम के इसी गुण से था। सेबों के बीच, दयालुता के भावों में, हंसी-मजाक में, उनके आने-जाने में, उनके द्वारा की गई गालियों में, हर जगह प्रेम ही प्रेम था। कभी-कभार ही वे प्रेम की बातें करते थे, लेकिन वे स्वयं प्रेम थे।

एक भक्त ने कहा, "वह हमारे दिलों की भाषा जानता है।"

राम

महाराजजी कबीर की यह कहावत अक्सर दोहराते थे: "कपड़े को रंगना आसान है, लेकिन दिल को रंगना मुश्किल है।"

राम

कैंची में एक शाम, मैं और एक अन्य भक्त महाराजजी के साथ बैठे थे। दूसरा भक्त महाराजजी को नीरस स्वर में अखबार पढ़कर सुना रहा था। मैंने मन ही मन सोचा, “महाराजजी, आप इस उबाऊ व्यक्ति को कैसे सहन कर रहे हैं? आप इसे क्यों बर्दाश्त करते हैं?” धीरे-धीरे, मेरे भीतर एक अद्भुत प्रेम उमड़ने लगा, इतना गहरा कि मुझे लगा जैसे मेरा हृदय फट जाएगा।

तभी महाराजजी ने अपना हाथ मेरे सिर पर रखा और वह अनुभूति रुक गई। जब मैंने उसे फिर से महसूस करने की कोशिश की, तो मैं नहीं कर सका। मैंने महाराजजी की ओर देखा और वे करुणा से भरे हुए मुझ पर मुस्कुरा रहे थे। मुझे रोने का मन हुआ।

दिल कभी बूढ़ा नहीं होता।

मेरी दिली इच्छा थी कि महाराजजी मेरे घर आएं, लेकिन मैं उनसे पूछने में टालमटोल करती रही। मैंने दादाजी को अपनी यह इच्छा बताई थी, उम्मीद थी कि वे महाराजजी को आमंत्रित करने में मेरी मदद करेंगे। कुछ ही हफ्ते पहले मेरी महाराजजी से पहली मुलाकात हुई थी। एक दिन मैं खिड़की के बाहर खड़ी थी, जहाँ महाराजजी थे, तभी उन्होंने मुझे अंदर बुलाया। कमरे में सिर्फ वे और दादाजी थे। जैसे ही मैं अंदर गई, मुझे लगा जैसे मैं चेतना की किसी दूसरी अवस्था में पहुँच गई हूँ और मुझे अपने हृदय चक्र के क्षेत्र में एक गहरा खुलापन महसूस हुआ—लेकिन वह एक गहरी, खाली काली छाया जैसा था। मैं अपनी आँखों से मुश्किल से देख पा रही थी और कानों से मुश्किल से सुन पा रही थी, और मुझे यकीन है कि मेरा मुँह खुला रह गया था। मेरी आँखें पलकें झपकाए बिना ही बंद हो गईं।

दोनों बातें कर रहे थे। महाराजजी मेरी ओर देखते और दादा से बात करते, और दादा उनकी बातों का अनुवाद करते। महाराजजी कह रहे थे कि वे मुझसे मिलने नहीं आ सकते क्योंकि जिस गाँव में मैं ठहरी थी, वहाँ के सभी लोग बहुत दुष्ट थे और उनके मन में उनके लिए कोई प्रेम नहीं था। फिर उन्होंने मुझे कमरे से बाहर भेज दिया। बाद में, जब मैं अपनी सामान्य चेतना में लौटी, तो मुझे ऐसा लगा जैसे महाराजजी का मतलब यह था कि वे मेरे हृदय में नहीं आ सकते, क्योंकि वह सांसारिक इच्छाओं से भरा हुआ था और उसमें उनके लिए प्रेम का कोई स्थान नहीं था—और उस दर्शन के फलस्वरूप, उन्होंने मेरे हृदय को शुद्ध कर दिया ताकि वे वास्तव में उसमें प्रवेश कर सकें।

अपने हृदय के दर्पण को साफ करो और तुम्हें ईश्वर के दर्शन होंगे।

अगर कोई आपको दुख पहुंचाए, तो भी उसे प्यार दें। किसी को दिल से निकाल देना सबसे बुरी सजा है। आपको हर किसी से ईश्वर के समान प्रेम करना चाहिए और एक दूसरे से भी प्रेम करना चाहिए। अगर आप एक दूसरे से प्रेम नहीं कर सकते, तो आप अपना लक्ष्य हासिल नहीं कर सकते।

भक्ति के माध्यम से भी कुंभक (श्वास रोकना) प्राप्त किया जा सकता है। जब भावना चरम पर पहुँचती है, तो श्वास रुक जाती है और मन एकाग्र हो जाता है।

मुझे इस दुनिया में किसी से भी ऐसी शांति और प्यार नहीं मिला, न माँ से, न पिता से, न पत्नी से, न किसी और से। असाधारण।

कभी किसी के दिल को चोट मत पहुँचाओ।

एक संत का हृदय मक्खन की तरह पिघलता है। नहीं, यह

> मक्खन से भी कहीं अधिक पिघलता है। मक्खन तो आग के पास रखने पर ही पिघलता है, लेकिन एक संत का हृदय किसी और के हृदय के आग के पास आने पर ही पिघल जाता है।
>
> —महाराजी कबीर के शब्दों को उद्धृत करते हुए

जब एक भक्त से महाराजजी की कुछ कहानियां सुनाने के लिए कहा गया, तो उसने कहा, "मैं उनके साथ थोड़े समय (अट्ठाईस वर्ष) से ही रहा हूँ, इसलिए मुझे कोई कहानियां नहीं पता। तो मैं क्या बता सकता हूँ? मैं बस इतना जानता हूँ कि उन्होंने मेरे परिवार को एक विशेष प्रकार का प्रेम दिया, जो शब्दों और रूपों से परे होने के कारण व्यक्त नहीं किया जा सकता।"

राम

"तुम मुझसे प्रेम क्यों करती हो?" महाराजजी ने एक महिला से पूछा।

"मुझे नहीं पता, महाराजजी।"

महाराजजी ने अपना प्रश्न बार-बार दोहराया। अंत में उन्होंने कहा, "तुम मुझसे प्रेम करते हो क्योंकि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।"

राम

एक भक्त ने पूछा, "क्या एक-दूसरे के प्रति हमारा प्रेम आपके प्रति हमारे प्रेम में बाधक बनेगा?"

महाराजजी ने उत्तर दिया, "यदि प्रेम शुद्ध है, तो वह किसी भी चीज में बाधा नहीं डालता।"

राम

महाराजजी की एक पश्चिमी भक्त उत्तर भारत के प्रसिद्ध और सम्मानित संत देवरिया बाबा के दर्शन करने गई। जब वह भक्त महाराजजी के पास लौटी, तो उसने उन्हें बताया कि संत ने कहा था कि महाराजजी प्रेम के अवतार हैं।

"अरे, वह दुष्ट व्यक्ति! उसे क्या पता? वह खुद को क्या समझता है?" महाराजजी ने प्रशंसा के जवाब में चिल्लाकर कहा।

राम

एक भक्त ने कहा, "महाराज जी प्रेम के साक्षात अवतार थे। कोई धर्म नहीं, केवल प्रेम।"

> प्यार सबसे शक्तिशाली औषधि है। यह बिजली से भी अधिक शक्तिशाली है।

एक श्रद्धालु ने पूछा, "यदि हमें अंधकार या विरह का अनुभव हो तो हमें क्या करना चाहिए?"

"यदि तुम ईश्वर से पर्याप्त प्रेम रखते हो, तो कोई वियोग नहीं रहेगा," महाराजजी ने उत्तर दिया। "यदि तुम सभी से प्रेम करते हो, तो कोई राक्षस नहीं हो सकता।"

> सभी मनुष्यों से ईश्वर के समान प्रेम करो, भले ही वे तुम्हें दुख पहुंचाएं या शर्मिंदा करें। गांधी और ईसा मसीह के समान बनो।

"क्या होगा यदि आप ईश्वर से प्रेम करने से अधिक उससे डरते हों?" एक भक्त ने पूछा।

"ईश्वर का भय भी एक प्रकार का प्रेम ही है," महाराजजी ने उत्तर दिया।

> अगर मैं इतना दयालु न होता तो मैं एक महान संत बन सकता

था।

मुझे अपने दिल में रखें।

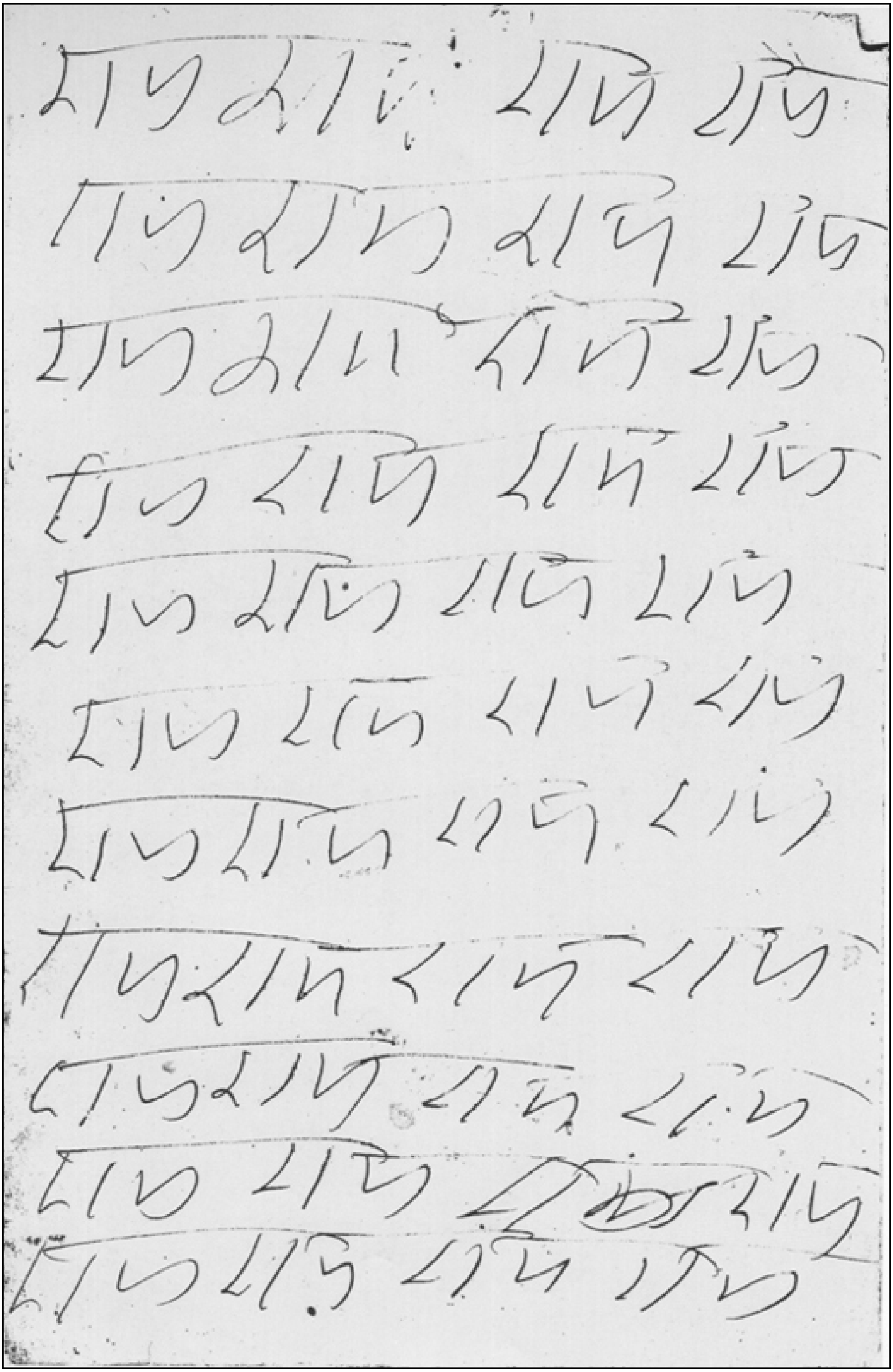

महाराजजी की डायरी से उनके मेढ़े

स्रोत: एम.एल. साह

हवा की तरह

महाराज जी निरंतर गतिशील थे—एक शहर से दूसरे शहर, एक घर से दूसरे घर, एक कमरे से दूसरे कमरे, एक स्थान से दूसरे स्थान पर। अपने जीवन के अंतिम वर्षों तक वे निरंतर गतिमान रहे। नदी की तरह। या जैसा कि वे स्वयं कहते थे, “मैं हवा के समान हूँ। मुझे कोई रोक नहीं सकता।”

महाराजजी को पकड़ना नामुमकिन था। भागने में वे बहुत चालाक थे। जब महाराजजी किसी समूह में होते और निकलना चाहते, तो वे कहते कि उन्हें शौचालय जाना है और भाग जाते। बाद में हम पुराने भक्तों को उनकी ये चाल समझ आ गई और उन्हें नई-नई चालें ढूंढनी पड़ीं।

राम

मुझे लगता है कि मैं उनके साथ रहते हुए हर पल रोती, हँसती और गाती रही। मैंने उन्हें 1965 में सात-आठ बार देखा, लेकिन कभी भी एक दिन से ज़्यादा नहीं रुकी और हमेशा अलग-अलग जगहों पर। उनका व्यवहार उस समय अलग था। वे कलकत्ता से उत्तरी भारत में आते-जाते रहते थे, लेकिन किसी भक्त की मर्सिडीज़ में रात के अंधेरे में चोर की तरह निकल जाते थे। वे कभी भी कहीं ज़्यादा देर नहीं रुकते थे।

राम

जब भी महाराजजी गाड़ी से उतरते, उनकी आँखें बेहद खुली और चमकीली होतीं। सब कहते थे कि गाड़ी में सफर करते समय वे बहुत चौकस रहते थे, खिड़की से आधा बाहर झुककर हर चीज़ को देखते रहते थे। और जब गाड़ी से उतरते, तो उनकी आँखें पूरी तरह खुली होतीं और वे चारों ओर हर चीज़ को देखते रहते। मुझे याद है दादाजी एक बार महाराजजी के साथ गाड़ी की यात्रा के बारे में हँसते हुए बता रहे थे। दादाजी ने बताया कि महाराजजी एक बच्चे की तरह लगातार बोलते ही रहते थे, हर बात जानना चाहते थे, हर सवाल पूछते रहते थे। आपको उन्हें पूरी तरह से ध्यान देना पड़ता था। और वे रास्ते भर ड्राइवर को एक-एक करके निर्देश देते रहते थे: "दाएँ मुड़ो, बाएँ मुड़ो, घूम जाओ, वापस जाओ।"

राम

हम ट्रेन पकड़ने के लिए लगभग दो घंटे पहले निकल गए। फिर भी, वे कहते रहे, “ओह, हमें देर हो जाएगी, हमें देर हो जाएगी! हमें पहले निकलना चाहिए था!” महाराजजी लगातार इसी तरह बोल रहे थे—“ओह, देर हो गई, देर हो गई—देर हो गई, देर हो गई!” इस बार तो वे सचमुच बहुत परेशान थे। सब लोग वहाँ बैठे थे, कुछ बोल नहीं पा रहे थे। महाराजजी कह रहे थे, “हमें टिकट पहले ले लेने चाहिए थे। हम ट्रेन में नहीं चढ़ पाएंगे…।” यह बहुत मज़ेदार था! हम लगभग डेढ़ घंटा पहले पहुँच गए।

राम

हाई कोर्ट ने बताया कि लंबी ट्रेन यात्राओं के दौरान जब माताएं महाराजजी के साथ सफर करती थीं, तो वे अक्सर उनके आसपास बैठती थीं। महाराजजी कभी-कभी निजी डिब्बे के फर्श पर बैठ जाते थे और वे ट्रेन की खड़खड़ाहट की ताल में घंटों तक जप करती रहती थीं। एक पसंदीदा जप (जिसे मैंने आज भी एक माताजी को काम करते हुए सुना है) कबीर का है: “दीना

बंधु, दीना नाथ, मेरे दोरे तेरे हाथ (दयालु मित्र, दयालु प्रभु, मेरी कठपुतली की डोर आपके हाथ में है)।"

राम

ट्रेन में महाराजजी हमारे ठीक बगल वाले कमरे में थे। करीब तीन बजे वे हमारे दरवाजे पर ज़ोर-ज़ोर से दस्तक देने लगे, दोनों मुट्ठियों से उसे पीटते हुए। मैं तुरंत समझ गया कि वे महाराजजी ही हैं। मैं उछलकर उठा और दरवाजा खोला तो देखा कि महाराजजी वहाँ खड़े थे, एक हाथ दरवाजे के किनारे पर और दूसरा हाथ कमर पर रखे हुए। उन्होंने कहा, "क्या समय हो गया?" हमारे उतरने का समय लगभग हो चुका था (सुबह 3:30 बजे)। मथुरा स्टेशन पर सब लोग ज़मीन पर सो रहे थे, और जैसे ही हम सोए हुए लोगों के बीच पहुँचे, महाराजजी ने कहा, "सब सो रहे हैं। सब सो रहे हैं।" वे बार-बार इधर-उधर देखते हुए यही दोहरा रहे थे। "क्यों? सब क्यों सो रहे हैं?"

शिव चरण ने कहा, "बाबा, सुबह के 3:30 बज रहे हैं। बहुत देर हो गई है...।"

मैं सोच रहा था, खैर, हम सब सो रहे हैं, आप जानते ही हैं कैसा होता है। भ्रम में सो रहे हैं। यह एक खूबसूरत पल था। खासकर उनका हमें जगाना बेहद खूबसूरत था। ऐसा मेरे साथ सिर्फ एक ही बार हुआ था। महाराज जी आपको "चलो चलें!" कहकर जगाते हैं।

राम

महाराजजी अक्सर एक गंतव्य के लिए टिकट खरीदते थे और यह जानते हुए कि भक्त पहले ही सूचना भेज देंगे, उस गंतव्य से पहले वाले स्टेशन पर उतर जाते थे। महाराजजी आनंदमयी माँ के बारे में, जो एक अन्य महान संत थीं जिनका यात्रा कार्यक्रम प्रकाशित होता था और जिनके आसपास हमेशा भीड़ रहती थी, कहते थे, "उनके भक्त उनके साथ जो करते हैं वह भयानक है, उन्हें आठ द्वारों के भीतर कैद करके रखते हैं," उनका तात्पर्य उस तरीके से था जिससे वे उन्हें अपने प्रेम का बंदी बनाकर रखते थे।

राम

महाराजजी गंगा की तरह हैं: यह हरिद्वार की ओर बहती है और वहाँ एक तीर्थस्थल बनाया जाता है, लेकिन नदी को तीर्थस्थल से कोई लेना-देना नहीं होता। वह बस बहती रहती है। इलाहाबाद में भी यही हाल है, और बनारस में भी...

राम

महाराजजी बरेली में थे, तभी एक भक्त ने उन्हें बताया कि उसे कुछ दिनों के लिए व्यापार के सिलसिले में इंग्लैंड जाना है और उसने महाराजजी से साथ चलने का अनुरोध किया। महाराजजी ने कहा, "चलिए!" वे हवाई जहाज से गए और एक अच्छे होटल में तीन दिन बिताए। तीन दिन बाद, महाराजजी ने तुरंत भारत लौटने पर जोर दिया। भक्त ने कहा कि उसका काम अभी खत्म नहीं हुआ है। उसे केवल दो दिन और चाहिए। महाराजजी ने कहा, "नहीं, चलिए चलते हैं।" तभी एक टेलीग्राम आया जिसमें बताया गया कि भक्त की पत्नी बहुत बीमार है। वे उसी रात रवाना हो गए। बाद में, जब उनसे यात्रा के बारे में पूछा जाता, तो महाराजजी हंसते हुए कहते, "मैं गया था। मैंने दूध पिया और फल खाए।"

राम

एक बार महाराजजी अपने एक भक्त, सऊदी अरब में भारतीय राजदूत के साथ हज यात्रा पर गए थे। हज यात्रा मक्का स्थित मुसलमानों के पवित्र तीर्थस्थल की यात्रा थी। वे भारत से राजधानी जेद्दाह के लिए हवाई जहाज से रवाना हुए और भारतीय दूतावास में ठहरे। वहाँ से उन्होंने इस्लाम के पवित्र स्थलों का दर्शन किया। महाराजजी ने बाद में बताया कि जब कुछ मुसलमानों को पता चला कि वे गैर-मुस्लिम हैं, तो उन्होंने उनकी पिटाई की। उन्होंने कहा, "फिर मैं तुरंत वापस आ गया।"

राम

भारत-तिब्बत सीमा पर तैनात एक गार्ड ने एक बार कहा था कि महाराजजी सीमा पार करके तिब्बत गए थे और फिर वापस आ गए थे।

राम

कौन कह सकता है कि वह इन जगहों पर क्यों जाता है या वहां क्या करता है?

राम

नैनीताल के होटल में मुझे बहुत सुकून मिल गया था। मेरी एक छोटी सी "गुफा" थी— सबसे ऊपरी मंजिल पर एक छोटा सा कमरा, जहाँ मैंने भारतीय प्रिंट और धार्मिक कैलेंडर की तस्वीरों, कुछ किताबों, मोमबत्तियों, अगरबत्ती और हीटर के साथ एक आरामदायक ठिकाना बना लिया था, जिसमें मैं कई महीनों तक रहने की सोच रहा था। लेकिन जब आखिरकार सब कुछ एकदम सही हो गया, तो महाराजजी का फरमान आया: "राम दास से कहो कि अब वह चले जाएं। उन्हें एक जगह पर इतने दिन नहीं रुकना चाहिए। वह फिर लौट सकते हैं।" अगले दिन हम दिल्ली के लिए रवाना हो गए।

कभी-कभी वो कहते थे, “सारा ब्रह्मांड ही तुम्हारा घर है।” और “सब तुम्हारे परिवार हैं।” एक बार जब हम उनके साथ रहना चाहते थे, तो उन्होंने कहा, “तुम्हें यहाँ रहने की ज़रूरत नहीं है। प्रकाश हर जगह है।” (आर.डी.)

> एक साधु के लिए एक ही स्थान पर रहना कष्टदायी होता है। एक गतिशील योगी और एक गतिशील नदी: अशुद्धियाँ, तलछट और गंदगी कभी वहाँ नहीं ठहर सकतीं। यदि मैं यहाँ रहूँगा, तो आसक्ति उत्पन्न हो जाएगी।

कैंची के बनने से पहले, महाराजजी अक्सर नैनीताल आते थे। वे अक्सर सरकारी मकान में हमारे घर आते थे, या तो गाड़ी से या पालकी से। पूरा परिवार, पड़ोसी और नैनीताल के कई श्रद्धालु इकट्ठा होते थे। महाराजजी भोजन करते और फिर चले जाते। जब भी वे आते, एक तरह का भंडारा होता था। खाना तैयार होता था और लोग मिठाई-मिठाई लाते थे। उन दिनों वे हमेशा घूमते रहते थे, कभी नैनीताल में, कभी भोवाली में, कभी यहाँ, कभी वहाँ। लोग हमेशा उनके पीछे-पीछे चलते थे, उन्हें घर ले जाने के लिए।

राम

महाराजजी अजमेर में मेरे पिता के घर आए। उन्होंने कहा, “मुझे एक धोती दो। मुझे गर्म पानी चाहिए, और मुझे दाल और चपाती चाहिए। मैं इन्हें तुम्हारी रसोई में खा लूँगा।”

राम

श्रीमती सोनी की महाराजजी से पहली मुलाकात तब हुई जब उनकी उम्र लगभग चौबीस वर्ष थी। वह बहुत शर्मीली थीं। महाराजजी एक पड़ोसी के घर पर थे, और जब वह उनके दर्शन के लिए गईं तो अपने तीन छोटे बच्चों को भी साथ ले गईं। जैसे ही वह अंदर आईं, महाराजजी ने कहा, "मैं तुम्हारे घर जा रहा हूँ।" वह चुप रहीं। मन ही मन वह नहीं चाहती थीं कि वह आएं, क्योंकि वह बहुत शर्मीली थीं। अन्य महिलाओं ने उन्हें समझाया कि लोग उनसे अपने घर आने की विनती करते हैं, लेकिन वह नहीं आते, और यहाँ वह उनके घर आने के लिए कह रहे हैं। फिर भी, वह नहीं चाहती थीं कि वह आएं। अंत में महाराजजी ने कहा, "उठो! चलो चलें!" और वह उनके घर चले गए। सौभाग्य से उस दिन कोई त्योहार था, और उन्होंने पारंपरिक भोजन तैयार किया था। महाराजजी ने सब कुछ खाया।

राम

यात्राओं के बारे में बात करते हुए, आर ने बताया कि महाराजजी दक्षिण की यात्रा के दौरान अक्सर चुपके से भक्तों से मिलने चले जाते थे। उन्होंने कहा कि महाराजजी कभी भी उनके बारे में बात नहीं करते थे। “उनके भक्त हर जगह हैं। आप नहीं जान सकते कि वे कितने हैं और कहाँ-कहाँ हैं।”

राम

मेरी पहली मुलाकात महाराजजी से लगभग सन् 1930 में हुई थी, जब मैं स्कूली छात्र था। मेरे पिताजी महाराजजी के परम भक्त थे। महाराजजी अयोध्या के पास फैजाबाद में हमारे परिवार से मिलने आए थे। पिताजी की सेवानिवृत्ति के बाद, मैं जेलों का पुलिस अधीक्षक बन गया। महाराजजी जहाँ भी मेरी पोस्टिंग होती, वहाँ आते थे—आगरा, बरेली, कानपुर, लखनऊ आदि। हमारे घर में एक कमरा हमेशा महाराजजी के लिए खाली रखा जाता था। सन् 1930 से महाराजजी के रूप-रंग में मुझे कोई खास बदलाव नहीं दिखा। हम उनके पसंदीदा व्यंजन—लौकी (कद्दू) सब्जी, मूंग दाल—रोज बनाते थे, इस उम्मीद में कि वे आएँगे। जब महाराजजी नहीं आते थे, तो हम उसे ही उनका प्रसाद मान लेते थे।

राम

पच्चीस वर्षों से अधिक समय तक महाराजजी लखनऊ स्थित हमारे घर आते रहे। वे साल में कम से कम एक बार, कुछ घंटों या कुछ हफ्तों के लिए अवश्य आते थे। वे हमारे परिवार में सभी के लिए गुरु और दादाजी के समान थे। सभी बच्चे उनके मार्गदर्शन में पले-बढ़े। वे उन्हें अपने बच्चों की तरह मानते थे, और बच्चे भी उनके प्रति बहुत स्नेह रखते थे।

राम

महाराजजी को किसी घर ले जाना बहुत सुखद अनुभव था। उन्होंने घर में किसी की भी उपेक्षा नहीं की; वे बच्चों के साथ खेलते थे।

राम

मैंने उनसे पूछा कि महाराजजी के साथ एक बच्चे के रूप में रहना कैसा लगता था। उन्होंने उत्तर दिया, “ओह, वे स्वयं बच्चे जैसे बन गए थे। यह बहुत अद्भुत था। मैं उनके लिए दूध लाती थी और उनके पैर दबाती थी। मैं बस वहीं टक्के के पास बैठी रहती थी। हमें कभी पता नहीं होता

था कि वे हमारे घर कब आएंगे या कब जाएंगे। वे बस आ जाते थे। कभी-कभी वे आधी रात को चले जाते थे, और इसलिए, सुबह हम उनके कमरे में देखते थे और वह खाली होता था—सिवाय वहाँ बैठे भक्तों के।” और वे हँस पड़ीं, खासकर जब उन्होंने वहाँ प्रतीक्षा कर रहे भक्तों के बारे में सोचा।

राम

महाराजजी शायद ही कभी किसी एक जगह पर कुछ घंटों से ज़्यादा रुकते थे। कभी-कभी भक्त उन्हें रात भर या कुछ दिनों तक रुकने के लिए ज़ोर देते थे और वे मान जाते थे। जब वे अंततः उस जगह से निकलते, तो राहत की गहरी साँस लेते और कहते, “ओह, मैं जेल से बाहर आ गया।” एक बार महाराजजी एक भक्त के घर में छह दिन तक रुके। जब वे वहाँ से निकले तो उन्होंने कहा, “ओह, आज तो कामवासना ने मुझे आज़ाद कर दिया। उस भक्त ने तो मुझे सलाखों के पीछे बंद कर रखा था।”

राम

एक बार हमने महाराजजी को अपने घर आने का निमंत्रण दिया, और उन्होंने आने का वादा किया। हमने घर को सजाया-संवारा, साफ-सफाई की और उनके आगमन के लिए प्रसाद समेत सभी विशेष चीजें सजा कर रखीं। पाँच दिन तक हम उनका इंतज़ार करते रहे, पर वे नहीं आए। बाद में जब हम उनसे दोबारा मिले, तो हमने पूछा कि वे क्यों नहीं आए, तो उन्होंने कहा, "मेरा मन नहीं था।"

राम

एक व्यक्ति ने महाराजजी से कहा, “आप वर्षों से मेरे घर आने का वादा करते रहे हैं, लेकिन आप कभी नहीं आए। अब मैं आपसे मिलने नहीं आऊंगा, क्योंकि आप मेरे घर नहीं आएंगे।”

महाराजजी ने कहा, “अरे, मुझे समझ नहीं आया! यह आपका घर है। मैंने सोचा था कि यह मेरा घर है, इसलिए मुझे आने की जरूरत नहीं है।”

राम

1937 में महाराजजी एक भक्त परिवार के घर आए। वे कुछ देर बरामदे में चहलकदमी करते रहे, फिर परिवार के मुखिया के दफ्तर वाले बड़े कमरे में गए। उन्होंने दफ्तर खाली करने को कहा, “आप कोई दूसरा कमरा ले लीजिए—यह कमरा मेरे लिए छोड़ दीजिए।” वे तीन से चार महीने तक उसी कमरे में रहे, सुबह और शाम सिर्फ एक घंटे के लिए बाहर आते थे। उन्होंने किसी को भी अंदर आने की इजाजत नहीं दी।

राम

महाराजजी दिन-रात किसी भी समय अचानक किसी भक्त के घर प्रकट हो जाते थे। एक बार 1940 के दशक की शुरुआत में, आधी रात को वे एक भक्त के घर का दरवाजा जोर-जोर से खटखटाने लगे। उन्होंने घर के मुखिया को जगाया और बताया कि दूसरे भक्त उनका पीछा कर रहे हैं। वे उन्हें चैन से नहीं बैठने दे रहे थे, इसलिए वे शरण मांग रहे थे। मुखिया ने कहा, "मैं आपकी क्या मदद कर सकता हूँ? जैसे ही उन्हें आपकी याद आएगी, वे यहाँ आ जाएँगे।"

“सब ठीक हो जाएगा,” महाराजजी ने कहा। “मैं तुम्हारे पलंग के नीचे छिप जाता हूँ। दरवाजे और खिड़कियाँ बंद कर दो, मुझे एक चटाई और कंबल दे दो, और जब वे आएँ तो कहना कि

तुमने मुझे नहीं देखा।" उस आदमी ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था, और जब वे आए तो उसने उन्हें जगाने के लिए खूब खरी-खोटी सुनाई, और फिर गुस्से में उन्हें भगा दिया। महाराजजी उस आदमी के पलंग के नीचे सो गए, चादर को फर्श तक खींचकर खुद को छिपा लिया। वह आदमी सुबह 4:00 बजे जागा, और महाराजजी को न देखकर उसने एक कमरे में और फिर दूसरे कमरे में देखा। हालाँकि दरवाजे और खिड़कियाँ अभी भी बंद थीं, महाराजजी कहीं नहीं मिले। बाद में उसे पता चला कि महाराजजी उसी घर में लौट आए थे जहाँ से वे पिछली रात भागे थे। बंद दरवाजों और खिड़कियों के बारे में महाराजजी ने केवल इतना कहा, "ओह, मैं तुम्हें परेशान नहीं करना चाहता था।"

राम

महाराजजी अपने अनुयायियों से छिपने के लिए अक्सर शॉर्टकट और जंगल के रास्तों का सहारा लेते थे। इस इलाके में शायद ही कोई पुलिया ऐसी बची हो जिसके नीचे से उन्होंने रात का कुछ हिस्सा न गुजारा हो, खासकर गेठिया और भूमियाधर के बीच की पुलियाएं, क्योंकि वे हर रात नैनीताल से गेठिया भाग जाते थे। उनका आना-जाना लगा रहता था। वे कहीं भी भक्त बना लेते थे और कोई भी उनका भक्त बन जाता था—इस कला में वे माहिर थे—लेकिन जब जाने का समय आता, तो वे अपने नए भक्त को वहीं छोड़ जाते थे।

राम

भूमिधर में, सबके सो जाने के बाद, महाराजजी सड़क पर जाकर दो-तीन लोगों के साथ बीच में बैठ जाते थे। जैसे ही बाकी लोग जागते, वे भी उनके साथ शामिल हो जाते। फिर महाराजजी उनसे एक ट्रक रुकवाते और उसमें बैठकर कुछ मील आगे तक लिफ्ट ले लेते, और यह सिलसिला फिर से शुरू हो जाता।

राम

ब्रह्मचारी बाबा कुमाऊं पहाड़ियों में महाराजजी के कारनामों को याद करने लगे। भूमिधर मंदिर के नीचे बैठे हुए हम सब सामने फैले विशाल दृश्य में उन्होंने उत्साहपूर्वक इशारे करते हुए कई जगहों की ओर इशारा किया। वे तेज़ी से एक के बाद एक वर्णन करते हुए बोले: "यह वही वृक्ष है जिसके नीचे वे मंदिर बनने से पहले बैठते थे। यह किसी दरबार जैसा था। बहुत से लोग उनसे मिलने आते थे। हम इन पहाड़ियों पर घूमते रहते थे, कभी एक जगह पर ज़्यादा देर नहीं रुकते थे। महाराजजी कहीं भी सो जाते थे। वे सड़क के किनारे सीमेंट के खंभों पर लेटकर सो जाते थे और मुझे जागते रहने को कहते थे। अगर मैं ज़रा भी सो जाता, तो वे तुरंत मुझे डांटते और फिर सो जाते। यह सिलसिला कई दिनों तक चलता रहता था। वे मुझे सोने नहीं देते थे और हम हर जगह घूमते रहते थे। वे जहाँ भी जाते, बहुत से लोग उनके पीछे-पीछे चलने लगते। माताएँ जब भी संभव होता, आती थीं। माताओं के कारण कई भोज होते थे।"

राम

मुझे उस घर में अंदर का कमरा दिया गया था जहाँ महाराजजी और मैं गए हुए थे। देर शाम महाराजजी ने उस घर के बुजुर्ग दंपति से कहा, "आप एक नौजवान को अंदर क्यों सोने दे रहे हैं? आपको कैसे पता कि वे कैसे होते हैं? आजकल नौजवानों पर भरोसा नहीं किया जा सकता।" इसलिए उन्होंने मुझे आखिरकार बाहर के कमरे में भेज दिया। लगभग दो घंटे बाद महाराजजी

आए और मुझे जगाते हुए बोले, “हमें चुपचाप जाना चाहिए ताकि वे जाग न जाएँ।” उन्होंने समझाया कि इसीलिए उन्होंने मुझे बाहर के कमरे में भेजा था। महाराजजी दरवाजे खुले रखने पर जोर देते थे, ताकि वे चरमराहट न करें।

हम अंधेरे में हाथ पकड़कर सड़क पर चल पड़े। हम एक चौराहे पर पहुँचे जहाँ एक रिक्शावाला सो रहा था। महाराजजी ने उसे मीठी-मीठी बातें करके रिक्शा में बिठाने के लिए मनाने की कोशिश की, लेकिन रिक्शावाले ने मना कर दिया। कुछ समझाने-बुझाने के बाद वह मान गया, और फिर महाराजजी ने एक-एक आना करके किराए को लेकर मोलभाव शुरू किया। आखिरकार रिक्शावाले ने छब्बीस आने में सवारी करने के लिए सहमति दे दी। इसमें कम से कम बीस मिनट लगे। अंत में महाराजजी ने मुझे नीचे उतरने और इंतजार करने के लिए कहा, जबकि वे और रिक्शावाला आगे चले गए। महाराजजी किसी घर गए और फिर वापस आकर रिक्शावाले से हमें ट्रेन तक छोड़ने के लिए कहा, जो हमारे पहुँचते ही चलने के लिए तैयार थी। स्टेशन पर महाराजजी ने रिक्शावाले को अपना कंबल, एक लोटा और बीस-तीस रुपये दिए। रिक्शावाला रोने लगा।

राम

महाराजजी पहाड़ियों में एक जगह से दूसरी जगह जा रहे थे, तभी अल्मोड़ा के एक भक्त ने उन्हें ढूंढ लिया। उसने बताया कि महाराजजी बहुत दिनों से उनके यहाँ नहीं गए थे, और अब जब वे मिल गए हैं, तो वह उन्हें इतनी आसानी से जाने नहीं देगा। वह महाराजजी को अपने घर ले गया, उन्हें खाना खिलाया और ऊपर के कमरे में ठहराया, और कहा कि वह महाराजजी को रात भर घर में बंद रखेगा ताकि वे भाग न जाएँ। परिवार के सो जाने के बाद, महाराजजी ने जेबी से कहा, "चलो चलें!" महाराजजी ने जेबी से अपनी धोती उतारने को कहा और उसका एक सिरा घर से बांधकर दूसरा खिड़की से बाहर फेंकने को कहा। पहले महाराजजी, फिर जेबी, नीचे उतरे और भाग गए। शहर के बाहर उन्हें एक छोटी सी झोपड़ी मिली जिसमें एक छोटा सा दीपक जल रहा था। महाराजजी ने दरवाजा खटखटाया और एक बूढ़ी औरत ने दरवाजा खोला और महाराजजी के देर से आने पर उन्हें कोसने लगी। उसने कहा कि वह घंटों से उनका इंतजार कर रही थी और उस समय तक खाना तैयार था। महाराजजी अंदर गए और खाना खाया।

राम

आप देख सकते हैं कि वह एक घुमक्कड़ था। वह घूमता-फिरता रहता था... वह भक्तों से मिलने जाता था। आप उसके पास नहीं जाते, वह खुद आपके पास आता था।

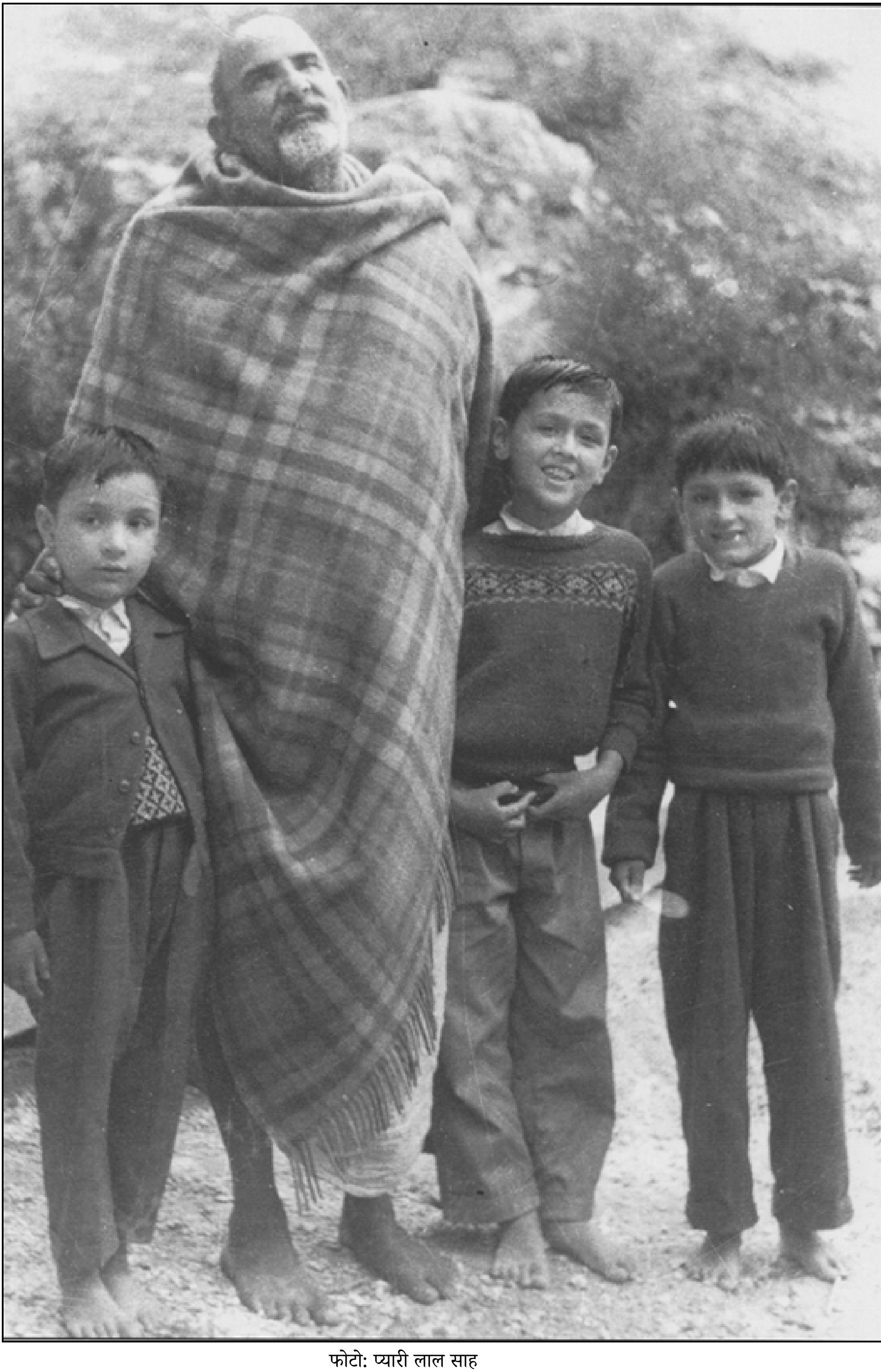

फोटो: प्यारी लाल साह

पारिवारिक व्यक्ति

हालांकि वे लगातार यात्रा करते रहते थे, महाराजजी कई मायनों में एक पारिवारिक व्यक्ति थे, हालांकि सर्वप्रथम वे ईश्वर के परिवार से ही जुड़े हुए थे।

> **ईश्वर के परिवार में सभी महिलाएं माता और बहनें हैं, और सभी पुरुष पिता और भाई हैं।**
> **यह पूरा ब्रह्मांड ही आपका घर है। सब आपके परिवार के सदस्य हैं।**

महाराजजी जिस तरह से ऐसी बातें कहते थे, उससे अक्सर यह आभास होता था कि पुनर्जन्म को भलीभांति समझने वाले वे व्यक्ति जन्म-जन्मांतर के बीच हमारे आपसी संबंधों के बारे में हमें एक शाब्दिक सत्य बता रहे हैं।

सांसारिक स्तर पर, महाराजजी विशेष रूप से भारतीय भक्तों के लिए दादाजी के समान थे। और इसी कारण वे अक्सर पारिवारिक मामलों पर सलाह देते थे। इस सलाह का सार स्पष्ट रूप से परिवार को मजबूत बनाए रखना था, जिसके लिए परिवार में सभी की भूमिका का उचित सम्मान करना आवश्यक था।

> **एक पत्नी को अपने पति की सेवा करके ही ईश्वर की सेवा करनी चाहिए।**

महाराजजी अक्सर महिलाओं को वफादार और धैर्यवान रहने की सलाह देते थे, उनका मानना था कि यही चीज़ें विवाह को बचाए रखती हैं, चाहे पुरुष अच्छा हो या बुरा। उदाहरण के लिए, एक धनी परिवार अपनी आधुनिक बेटी को लेकर आया, जिसने पैंट सूट पहना हुआ था (भारत में यह आम बात नहीं थी), और जिसने अपने पति को छोड़ दिया था। महाराजजी ने सबके सामने कहा, “हाँ, वह गलत था, लेकिन तुम्हें इतना अधीर और इतना क्रोधित नहीं होना चाहिए था।” महाराजजी उस युवती पर बहुत सख्त थे। उनका मानना था कि अगर सांस्कृतिक परिवर्तन इस तरह हुए कि महिलाएं परिवार को एक साथ नहीं रख पाईं, तो सब कुछ नष्ट हो जाएगा। उन्होंने कहा, “इसीलिए हमारे यहाँ तलाक नहीं होते।”

> **यदि महिलाएं अपने पतियों के प्रति वफादार हों तो वे योगियों से भी श्रेष्ठ हैं।**

“तुम्हें अपने बूढ़े पिता की ज़रा भी परवाह नहीं है,” महाराजजी ने एक भक्त से कहा। “तुम्हें रोज़ अपने पिता के लिए मिठाई ले जानी चाहिए। अगर किसी के माता-पिता हों, तो उसे किसी भगवान की ज़रूरत नहीं होती। मूर्ति की पूजा करना आसान है, लेकिन जब मूर्ति जवाब दे तो मुश्किल हो जाता है।” फिर उन्होंने उस भक्त को कान पकड़ने को कहा (यह भारतीय रीति-रिवाज है, जैसे “कसम खाओ”) और उससे वादा करवाया कि वह रोज़ अपने पिता की सेवा करेगा और उनके लिए मिठाई लाएगा। अगली शाम पिता महाराजजी के पास आए। “यह क्या है?” महाराजजी ने कहा, “तुम्हारा बेटा तुमसे प्यार करता है, तुम्हारी सेवा करता है, और तुम उसके लिए कुछ नहीं करते। तुम्हें अपने बेटे के लिए नया कपड़ा बनवाना चाहिए। वह तुम्हारा भक्त है।”

राम

महाराजजी ने कहा कि माताएं भगवान के समान हैं, और उन्होंने उन्हें इस रूप में इसलिए बनाया ताकि वे स्वयं को साझा कर सकें, क्योंकि केवल भगवान और माता ही सभी दोषों को क्षमा कर सकते हैं।

राम

(पश्चिमी भक्तों में से एक की माता ने भारत का दौरा किया और उनसे पूछा गया कि महाराजजी के साथ उनका अनुभव कैसा रहा।)

मुझे ऐसा लगा कि मेरी एक खास "श्रेष्ठता" है। मेरी ज़िंदगी में "श्रेष्ठता" शब्द इतना नकारात्मक है कि मैं इसे इस्तेमाल करना पसंद नहीं करती, लेकिन शायद यह मुझ पर लागू होता है। माँ होने के नाते मुझे एक तरह का सम्मान मिला, जो मुझे महाराजजी से मिला। मुझे यह सम्मान किसी और से कभी नहीं मिला था, खासकर अमेरिका में तो बिल्कुल नहीं। यह बहुत अच्छा लगा।

मुझे पता है कि महाराजजी कृष्णदास की माता को भी उतना ही सम्मान देते थे। मातृत्व की पवित्रता पर जोर दिया गया था। सभी स्त्रियाँ माता होती हैं। बौद्धिक रूप से मैंने महसूस किया है कि अच्छी माताएँ भी होती हैं और बुरी माताएँ भी, और किसी को जन्म देना अपने आप में कोई बड़ी बात नहीं है। फिर भी, उनके मामले में यह भावना सही थी।

राम

अगर मेरी मां ने अपने सिर पर कपड़ा नहीं ओढ़ा होता, तो महाराजजी कहते, "नहीं मां। यह तरीका ठीक नहीं है," और वे उनका कपड़ा ठीक कर देते।

राम

अक्सर मैं बूढ़ी महिलाओं को महाराजजी को सीधे भोजन कराते हुए देखता था। उन्होंने कहा, "मैं पुरुषों को भोजन करा सकता हूँ, लेकिन मुझे भोजन महिलाओं द्वारा ही कराया जाना चाहिए क्योंकि सभी महिलाएं माता हैं।"

राम

“तुम अपनी पत्नी से नाराज़ हो। तुम अपनी पत्नी के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते। वह लक्ष्मी है! तुम्हें उसके साथ इतना बुरा व्यवहार नहीं करना चाहिए,” महाराजजी ने एक भक्त से कहा।

राम

महाराजजी के दामाद कैंची दर्शन करने गए, लेकिन महाराजजी ने उनसे बात नहीं की। अंत में उन्होंने पूछा, “मेरी बेटी कहाँ है? आप अकेले पहाड़ों का आनंद लेने आए हैं। वापस जाइए और मेरी बेटी को ले आइए!” दामाद चले गए और बाद में अपनी पत्नी के साथ लौटे।
भारतीय युवाओं के साथ उनका रिश्ता एक दादाजी जैसा प्रतीत होता था, जो सांसारिक मामलों में मार्गदर्शन करते हुए भी उनकी आत्मा को छूते थे।

महाराजजी मेरे कमरे में आकर बैठ जाते थे, और मैं कभी वहां नहीं जाता था क्योंकि मुझे डर था कि वह सब कुछ बता देंगे और मैं नहीं चाहता था कि मेरे माता-पिता को पता चले।

राम

जब के महाराजजी के साथ होती थी, तो वह एक बच्चे की तरह खेलती थी। हालांकि वह उनके प्रति प्रेम और श्रद्धा रखती थी, फिर भी महाराजजी उसे डांटते हुए कहते थे, "तुम किताब नहीं पढ़ती, फिर स्कूल में कम नंबर आने पर मुझसे नाराज़ हो जाती हो।"

राम

महाराजजी ने एक विद्यार्थी को परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए प्रतिदिन अपनी माता की पूजा करने की सलाह दी। विद्यार्थी ने ऐसा नहीं किया; और न ही वह परीक्षा उत्तीर्ण कर पाया।

राम

एक माता के पुत्र ने बताया कि महाराजजी ने बचपन में उन्हें आध्यात्मिक मार्गदर्शन के बजाय सांसारिक मार्गदर्शन दिया। उन्होंने कहा कि उस समय उन्हें आध्यात्मिक बातों में कोई रुचि नहीं थी, लेकिन अब उनके मन में कुछ आध्यात्मिक भावनाएँ जागृत होती हैं और वे अक्सर महाराजजी को याद करते हैं।

राम

कुछ विद्यार्थी आए और महाराजजी को भावहीन निगाहों से देखते हुए जाने लगे। महाराजजी ने उन्हें पुकारा और कहा, “तुम अपने तरीके से आनंद ले रहे हो, और मैं अपने तरीके से।” यद्यपि वे मंदिर छोड़ना चाहते थे, फिर भी जाने से हिचकिचा रहे थे। वे असमंजस में इधर-उधर भटकते रहे। कुछ समय बाद वे फिर दर्शन के लिए लौटे। अब उनके चेहरे अधिक सौम्य और जीवंत थे। हृदय पर उनका प्रभाव कितना सूक्ष्म था!

युवा पुरुष शेरों के समान होते हैं।

जब मैं नौ या दस साल की थी, तब महाराजजी हल्द्वानी स्थित हमारे घर पर कुछ समय के लिए रुके थे। जब भी मैं घर आती, वे कहते, “मेरी बेटी आ गई है, मेरी बेटी आ गई है।” जिस दिन वे गए, मैं बहुत उदास थी; उन्होंने मेरी तरफ देखा तक नहीं। उस रात मैं इतनी परेशान थी कि खाना भी नहीं खा पाई। सुबह चार बजे दरवाजे पर दस्तक हुई। माँ ने देखा कि महाराजजी हैं और उन्हें अंदर आने दिया। उन्होंने माँ से कहा, “मैं सिर्फ अपनी बेटी के लिए वापस आया हूँ। तुम्हारे पास चार चपातियाँ और कुछ सब्जियाँ हैं जो उसने नहीं खाईं। इन्हें ले आओ, हम साथ मिलकर खाएँगे।”

राम

एक बूढ़े व्यक्ति को पहली बार महाराजजी के पास लाया गया, लेकिन वह आना नहीं चाहता था। अंदर आते ही महाराजजी ने कहा, “अपने बेटे को इतना मत मारो। इससे उसमें कोई सुधार नहीं होगा।” दरअसल, वह अपने बेटे को बहुत पीटता था। यह बात सिर्फ उसकी पत्नी को पता थी, और महाराजजी से जाने के बाद उसने अपनी पत्नी को बताने के लिए खूब डांटा। पर उसने बताया नहीं था। जब वह अपने बेटे को थप्पड़ मारने जाता, तो एक बार मारता और फिर खुद को ही थप्पड़ मार लेता। यह सिलसिला तब तक चलता रहा जब तक उसका चेहरा काला-नीला नहीं पड़ गया। उसके बाद उसने अपने बेटे को पीटना बंद कर दिया।

अपने बच्चों के साथ रहने वाले बुजुर्गों से महाराजजी अक्सर कहते थे: “मौन! नौन! कौन!” जिसका अर्थ है “चुप रहो” (अर्थात, बड़बड़ाओ मत या शिकायत मत करो); “नमक” (अर्थात, खामोशी से रहो या किसी की गलती मत निकालो या इस तरह के फैसले मत सुनाओ, जैसे कि

"खाने में नमक कम है"); और "कोने में रहो" (पारिवारिक मामलों में दखल मत दो। दुनिया से अलग रहो और एक कोने में रहो)।

महाराजजी अक्सर विवाह संपन्न कराने वाले की भूमिका निभाते थे। जो कुछ लोग पहले से ही ईश्वर से विवाहित प्रतीत होते थे, उनकी वे रक्षा करते थे और उन्हें माता-पिता के विवाह के दबाव से बचाते थे। लेकिन अधिकांश लोगों के लिए, वे उन्हें प्रोत्साहित करते थे और यहाँ तक कि उन्हें जबरदस्ती वैवाहिक जीवन में धकेल देते थे।

राबू ने कहा कि वह शादी नहीं करेगा, लेकिन जब महाराजजी ने उसे बताया कि उन्होंने इस लड़की को उसके लिए पांच साल से बचाकर रखा था, तो राबू ने उससे शादी कर ली।

राम

माँ के बेटों में से एक शादी न करने पर अड़ा हुआ था, इसलिए माँ ने महाराजजी से मदद मांगी। महाराजजी पुल पर बेटे से मिले और उसके सिर पर कंबल ओढ़ाते हुए कहा, "उसकी शादी हो जाएगी। अब वह तैयार है।" और उसकी शादी हो गई।

राम

एक बार महाराजजी ने एक भक्त से अपनी पड़ोसी को बुलाने को कहा। वह एक डॉक्टर थीं, एक ईसाई महिला जिनके पति का निधन हो गया था और वे तीन छोटी बेटियों को छोड़कर चली गई थीं। जैसे ही वह कमरे में आईं, महाराजजी ने कहा, "तुम्हारी बेटी की अभी तक शादी नहीं हुई? केरल में तुम्हें एक योग्य युवक मिला? उसका परिवार बीस हजार रुपये मांग रहा है? तुम बीस हजार रुपये नहीं दे सकतीं।" उन्होंने कहा कि ऐसा ही है। अगले दिन महाराजजी ने उन्हें फिर बुलाया। "अब तुम्हें जाना चाहिए। लड़के के परिवार से फिर बात करो। वे पैसे नहीं मांगेंगे। उन्हें जो कुछ भी तुम दे सकती हो, दे दो। वे स्वीकार कर लेंगे।" वह केरल गईं। लड़के के पिता ने समझाया कि पैसा महत्वपूर्ण नहीं है, वे अपने बेटे के लिए एक अच्छी पत्नी चाहते हैं, और लड़की के लिए न्यूनतम खर्च पर शादी तय कर दी गई।

राम

एक पारंपरिक भारतीय महिला और उसकी बेटी, दोनों स्पष्ट रूप से परेशान थीं, महाराजजी से अकेले में मिलने के लिए इंतज़ार कर रही थीं। लेकिन जैसे ही वे पहुँचीं, महाराजजी ने सबके सामने कहा, "देखो, उसे सांवले वाले से शादी कर लेनी चाहिए क्योंकि वह सुंदर नहीं है। तुम्हारी बेटी सुंदर नहीं है और अगर कोई सुंदर न दिखने वाली किसी सुंदर पुरुष से शादी करती है, तो उसकी नज़रें हमेशा दूसरों पर रहेंगी। उसे सांवले वाले से ही शादी करने दो।" वहाँ मौजूद एक अन्य भक्त एमएस को उन महिलाओं के लिए इतनी शर्मिंदगी हुई कि उसने मन ही मन कहा, "हे महाराजजी!"

राम

मेरी चाची के चेहरे पर चेचक के निशान थे और वे दिखने में सुंदर नहीं थीं। वे दुखी थीं क्योंकि उनकी शादी नहीं हुई थी। महाराजजी ने उन्हें गले लगाते हुए कहा, "तुम मेरी हो।" आनंद से भर उठीं और उन्होंने शादी करने की इच्छा ही छोड़ दी। फिर एक महीने बाद उनकी सगाई एक बहुत अच्छे आदमी से हो गई।

राम

जवानी में ही मैंने शादी न करने का व्रत ले लिया था, उस दिन से जब मेरी चाची, जिन्होंने मुझे पाला-पोसा था, का देहांत हुआ था। मेरे परिवार ने मेरी शादी करवाने की बहुत कोशिश की, पर मैं अपनी बात पर अड़ी रही। जब मैं पच्चीस से तीस साल की उम्र के बीच थी, तो महाराजजी मुझसे कहते थे कि शादी मत करो और लोगों को बताते थे कि मुझे टीबी या कैंसर है और मैं मरने वाली हूँ। तीस साल की उम्र में महाराजजी ने मुझसे पूछा, “क्या तुम शादी करना चाहती हो?”

“नहीं,” मैंने उत्तर दिया। महाराजजी ने मेरी कमीज़ की तारीफ़ की और उसे माँग लिया। उन्होंने पूछा कि कॉलेज शुरू करने से पहले मेरे पास किस तरह की कमीज़ें थीं, और मैंने जवाब दिया कि मेरे पास केवल एक पुरानी, फटी हुई कमीज़ थी, लेकिन उससे काम चल जाता था। महाराजजी ने फिर पूछा कि अब मेरे पास कितनी हैं, और मैंने कहा बारह। जब उन्होंने पूछा कि मेरे पास इतनी सारी क्यों हैं, तो मैंने जवाब दिया कि सरकारी स्कूल में शिक्षक होने के नाते मुझे एक निश्चित ड्रेस कोड का पालन करना पड़ता है, वरना मुझे नौकरी से निकाल दिया जाएगा। महाराजजी ने कहा, “नहीं, नहीं, यह बात नहीं है। अब तुम शादी करना चाहते हो। एक कमीज़ से ही काम चल सकता था। अगर मैं तुमसे शादी करने को कहूँ, तो तुम क्या करोगे?” मैंने उनसे कहा, उस स्थिति में मुझे शादी करनी ही पड़ेगी, लेकिन ज़िम्मेदारी महाराजजी की होगी। आठ दिनों तक महाराजजी मेरी शादी के लिए ज़ोर देते रहे।

आठवें दिन सुबह महाराजजी ट्रेन पकड़ने के लिए निकल पड़े। स्टेशन जाते समय, वे सड़क से हटकर एक युवती के घर की ओर मुड़े और मुझे अपने साथ अंदर आने का इशारा किया। वहाँ कीर्तन चल रहा था और महाराजजी पूजा कक्ष में बैठे थे। मुझे और उस युवती को अंदर बुलाया गया। महाराजजी ने मुझसे पूछा कि क्या मैं इस लड़की से शादी करूँगा, लेकिन मैंने इनकार कर दिया। महाराजजी ने कहा, "अगर मैं तुमसे कहूँ तो?" मैंने जवाब दिया कि यह ज़िम्मेदारी महाराजजी की होगी। पहले महाराजजी ने कहा, "मैं नहीं करूँगा।" फिर उन्होंने कहा, "ठीक है, ठीक है। मैं ही शादी करवा दूँगा!" उन्होंने हमारे माथे पर तिलक लगाया और कहा, "लो, मैंने तुम्हारी शादी करवा दी! क्या तुम इसे स्वीकार करते हो?"

बाद में महाराजजी ने कहा, “यह मत सोचो कि यह मैंने या तुमने किया है। भगवान अपनी लीला अपने तरीके से खेलते हैं। इसमें न मेरी कोई भूमिका है, न तुम्हारी। यह होना ही था!” मेरी पत्नी और मैं पच्चीस वर्षों से अधिक समय से बहुत खुश हैं।

राम

एक दिन सिद्धि मां ने महाराजजी के एक पुराने भक्त की विवाह लीला का वर्णन किया। जिस दिन उस व्यक्ति का विवाह हुआ (जिसका प्रबंध महाराजजी ने किया था और उस व्यक्ति के विरोध के बावजूद उन्होंने इस पर जोर दिया था), वह व्यक्ति महाराजजी के सामने बैठा रहा और उन्हें छोड़ने को तैयार नहीं था। लेकिन महाराजजी ने इतनी दृढ़ता दिखाई कि अंततः उस व्यक्ति को ले जाया गया, दूल्हे के वस्त्र पहनाए गए और घोड़े पर बिठाकर दुल्हन के घर ले जाया गया। जब वह जंगल से गुजर रहा था, तो उसने महाराजजी को वहाँ घूमते हुए देखा और वह अपने घोड़े से कूदकर उनके पास दौड़ा। महाराजजी ने उसे फिर से वापस लौटने और विवाह संपन्न कराने के लिए विवश किया। (वह व्यक्ति, जिसके बच्चों का अब विवाह हो रहा है, बताता है कि यह विवाह उसके लिए एक आध्यात्मिक वरदान था और इसने उसे कई गलतफहमियों से

मुक्ति दिलाई। वह कहता है कि विवाह के बाद ही उसकी साधना सही मायने में शुरू हुई।)

यह कहानी सुनकर एक अन्य भक्त ने एक ऐसे व्यक्ति की कहानी सुनाई जिसका विवाह पहले से तय था। विवाह के दिन दूल्हे का जुलूस कैंची से गुजरा। दूल्हे ने देखा कि महाराजजी वहाँ मौजूद हैं, इसलिए वह आगे बढ़ने से पहले उनका आशीर्वाद लेने के इरादे से रुक गया। लेकिन उसे आश्चर्य हुआ कि महाराजजी ने उसे रोक लिया और दुल्हन के घर जाने से इनकार कर दिया। और उस व्यक्ति का विवाह कभी नहीं हुआ।

हालांकि महाराजजी भारतीय विवाहों के प्रति औपचारिक और पारंपरिक दृष्टिकोण रखते थे, फिर भी वे अपने पश्चिमी भक्तों के विवाह संबंधी रीति-रिवाजों में व्यापक सांस्कृतिक अंतर को स्पष्ट रूप से समझते थे। कुछ भक्तों को वे लगातार विवाह करने के लिए प्रेरित करते रहे, बार-बार उनसे पूछते रहे और उन्हें जीवनसाथी के रूप में एक के बाद एक कई विकल्प देते रहे। कुछ मामलों में तो उन्होंने दो अपेक्षाकृत अजनबी लोगों को लिया और घोषणा कर दी कि अब उनका विवाह हो गया है या उन्हें विवाह कर लेना चाहिए।

कभी-कभी महाराजजी दो संभावित दूल्हों से किसी विशेष विवाह के बारे में इतनी बातें करते थे कि वे मानसिक रूप से उस रिश्ते को तयशुदा मान लेते थे। फिर महाराजजी उस विषय का ज़िक्र तक नहीं करते थे और विवाह नहीं होता था। कभी-कभी, जब ऐसा कोई निर्धारित विवाह सफल नहीं होता था, तो वे उसे तुरंत भंग कर देते थे।

महाराजजी ने मुझसे तीन बार पूछा कि क्या मैं शादी करना चाहती हूँ। पहली बार इयान के साथ। हर शाम दर्शन के बाद हम उस खूबसूरत कैंची घाटी में दो मील पैदल चलकर निंगलाट में अपने घरों तक जाते थे। इयान इतना आध्यात्मिक व्यक्तित्व था कि जब मैं उसके साथ होती थी तो सब कुछ जादुई लगता था—गुलाब और पंखों वाली परियाँ। एक रात जब इयान मेरे घर आया तो वहाँ का वातावरण कामुक ऊर्जा से भरा हुआ था। मैंने उसे ठुकरा दिया क्योंकि यह न तो सही समय था और न ही सही जगह। लेकिन उसके जाने के बाद मेरा पूरा शरीर इच्छा से भर गया। मैं बस वहीं लेटी रही और महाराजजी के बारे में सोचने की कोशिश करती रही। अगली सुबह जैसे ही मैं दर्शन के लिए मंदिर में दाखिल हुई, महाराजजी ने मुझे तुरंत उस कमरे में बुलाया जहाँ वे दादा के साथ बैठे थे। महाराजजी ने मुझसे पूछा, "क्या तुम शादी करना चाहती हो?"

मैंने कहा, "नहीं।"

उन्होंने कहा, "क्या तुम इयान से शादी करना चाहती हो?"

“नहीं, नहीं।” मैं भयभीत नहीं थी; मेरे मन में कोई संदेह ही नहीं था। मैंने इस दर्शन और पिछली रात के बीच कोई संबंध जोड़ा ही नहीं था। शायद कोई संबंध था ही नहीं। लेकिन जब महाराजजी मुझसे पूछ रहे थे, तो उन्होंने मुझे गहराई से देखा, मानो मेरे पूरे अस्तित्व का अध्ययन कर रहे हों, और फिर वे दादा की ओर मुड़े और बोले, “यह बहुत अच्छी है।” और फिर उन्होंने मेरे सिर पर एक थपकी दी और कहा, “तुम बहुत अच्छी हो। शादी मत करना, जाओ।” मैं उठने लगी, तभी उन्होंने कहा, “बैठ जाओ।” उन्होंने मेरे सिर पर फिर एक थपकी दी और फिर कहा, “तुम बहुत अच्छी हो। शादी मत करना, जाओ,” और मेरे जाने से पहले एक बार फिर यही कहा।

दूसरी बार उन्होंने मुझसे शादी के बारे में तब पूछा जब मैं कार्लोस विश्वनाथ के साथ वृंदावन से कैंची तक लिफ्ट लेकर आई थी। यह रात भर का सफर था और हम किसी रेलवे स्टेशन के

प्लेटफार्म पर सोए थे। कैंची पहुँचते ही महाराजजी मुझे सीधे अपने कमरे में ले गए और पूछा, “क्या तुम विश्वनाथ से शादी करना चाहती हो?” एक बार फिर, मेरे मन में कोई शंका नहीं थी।

तो महाराजजी ने कहा, "अच्छा, अच्छा। शादी मत करो, जाओ।"

तीसरी बार ऐसा तब हुआ जब एक अन्य भक्त ने मजाक में महाराजजी से कहा, "सरस्वती की अभी शादी नहीं हुई है। आपने अभी तक उसकी शादी नहीं करवाई है। आपको उसकी शादी रवि दास (माइकल) से करवा देनी चाहिए।"

महाराजजी ने कहा, “अच्छा? बहुत बढ़िया। उसे यहाँ लाओ।” जब मैं वहाँ पहुँची तो उन्होंने मुझसे पूछा, “क्या तुम रवि दास से शादी करना चाहती हो?” भक्त हँसने लगा।

मैंने कहा, “लेकिन महाराज जी, वो तो मेरे पिता समान हैं।” तो महाराज जी ने कहा, “अच्छा, बहुत बढ़िया। शादी मत करना,” और मुझे वापस भेज दिया। फिर उन्होंने रवि दास को बुलाया और उनसे भी मेरे बारे में वही सवाल पूछा। रवि दास का जवाब था, “महाराज जी, मैं तो सिर्फ आपसे ही शादी करना चाहता हूँ।”

राम

महाराजजी मुझसे बार-बार पूछते थे कि क्या मैं शादी करना चाहती हूँ। मैं हर बार यही जवाब देती थी कि मैं सिर्फ उन्हीं से शादी करना चाहती हूँ। तब वे कहते थे, "लेकिन अगर तुम मुझसे शादी करोगी तो अपनी इच्छाएँ कैसे पूरी करोगी?"

राम

उन दिनों हमारे यहाँ एक कहावत प्रचलित थी: "अपनी प्रेमिका को महाराजजी से मिलने मत लाओ, क्योंकि वे तुम्हारी शादी करवा सकते हैं।"

राम

महाराजजी के पहले दर्शन के दौरान, मैं अपने एक पुराने दोस्त के साथ अंदर गया, जिसे मैं अमेरिका में जानता था। जैसे ही हम द्वार के पास पहुँचे, मेरा दोस्त डर गया और बोला, "मैं तुम्हारे साथ अंदर नहीं जा सकता। हमें अकेले ही अंदर जाना होगा। कहीं वो हमारी शादी न करवा दें।"

राम

जब महाराजजी ने जम्मू और कश्मीर का विवाह कराया, तो उन्होंने उनसे कहा कि विवाह कोई उत्सव मनाने की बात नहीं है। उन्होंने कहा कि विवाह का अर्थ है पैरों से संसार के बंधन में बंध जाना।

महाराजजी एक अलग ही स्तर पर पारिवारिक व्यक्ति थे, हालांकि उनके अधिकांश भक्तों को उनके जीवनकाल में इसके बारे में पता नहीं चला और जब पता चला तो उन्होंने इस पर विश्वास नहीं किया। ऐसा कहा जाता है कि आठ वर्ष की आयु में उनकी सगाई हो गई थी, जिसके बाद वे साधु बनने के लिए घर से भाग गए थे। हालांकि वे कभी घर नहीं लौटे, लेकिन जिस स्त्री से उनकी बचपन में सगाई हुई थी, उसने बहुत तपस्या की और प्रार्थना की कि वे लौट आएं ताकि उसका जीवन पूर्ण हो सके। वे कुछ समय के लिए लौटे और उनके साथ दो संतानें हुईं, हालांकि वे कभी भी गृहस्थ के रूप में परिवार के साथ नहीं रहे। फिर भी, परिवार, जिसमें अब कई पोते-पोतियां शामिल हैं, बताते हैं कि महाराजजी हमेशा उनकी भौतिक सुख-सुविधाओं का ध्यान रखते थे और पिता और गृहस्थ के रूप में अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए हमेशा उपस्थित रहते

थे। वे सभी उन्हें सर्वप्रथम अपना गुरु मानते हैं।

फोटो: रॉय बोनी

अनुग्रह का स्पर्श

भारत में जहाँ वृद्धावस्था के लिए कोई सामाजिक सुरक्षा नहीं है, वहाँ पुत्र ही व्यक्ति का सहारा होते हैं। जब एक पुरुष और एक स्त्री का विवाह होता है, तो पत्नी पति के घर में रहने आती है, ताकि पति अपने परिवार के साथ रह सके। इसी कारण महाराजजी के पास संतान प्राप्ति की चाह रखने वाले अनेक लोग आते थे, विशेषकर पुत्र प्राप्ति की। महाराजजी को बांझ को संतानोत्पत्ति योग्य बनाने और संतान का लिंग निर्धारण करने में सक्षम माना जाता था। वे अक्सर हस्तक्षेप नहीं करते थे, परन्तु कभी-कभी ऐसा वरदान देते थे जिसे महान वरदान माना जाता था।

जब मैंने और मेरी पत्नी ने अपना परिवार शुरू किया, तो हमारी तीन बेटियाँ हुईं। मुझे इससे कोई चिंता नहीं थी, लेकिन मेरी माँ पोते के लिए बहुत चिंतित थीं। महाराजजी ने मुझे बताया कि मुझे पुत्र होगा। मैंने कहा कि मुझे पुत्र की इच्छा नहीं है, तो उन्होंने कहा, "तुम्हें पुत्र की इच्छा नहीं है, लेकिन तुम्हारी माँ को है। अब तुम्हारे पुत्र होंगे। बहुत सारे पुत्र। यदि तुम पुत्र चाहोगे, तो तुम्हें पुत्र होंगे। यदि तुम चाहोगे, तो तुम्हारे पुत्र ही पुत्र होंगे।" जब मेरी पत्नी लगभग सात महीने की गर्भवती थीं, तब महाराजजी कैंची में थे और उन्होंने कहा, "अरे, सिद्धि माँ! शिव सिंह को पुत्र हुआ है! वहाँ पुत्र का जन्म हुआ है।" लेकिन तब तक उनका जन्म नहीं हुआ था। दो महीने बाद हमारे पुत्र का जन्म हुआ। हमने उन्हें महाराजजी की गोद में रखा और कहा, "महाराजजी, यह आपका फल है।"

उन्होंने बालक को आशीर्वाद दिया और कहा, "अब तुम्हारे पुत्र होंगे। ईश्वर के राज्य में पुत्रों की कोई कमी नहीं है। अब तुम पुत्र ही पुत्र उत्पन्न करोगे। अब पुत्र नहीं, केवल पुत्र ही पुत्र।"

राम

कृपा प्राप्त करने के लिए आस्था होना आवश्यक नहीं है। एक बार महाराजजी ने पूर्वी उत्तर प्रदेश से कैंची आए एक पर्यटक दंपति से कहा, "आपकी तीन बेटियाँ हैं। आप एक पुत्र चाहते हैं। ठीक है। मेरे लिए दस बोरी आटा ले आइए।"

"महाराज जी, मैं इसे कैसे भेजूं? मैं बहुत दूर से आता हूँ।"

मुझे पता है आप बहुत दूर से आ रहे हैं। हल्द्वानी में इस दुकान पर जाइए, वे इसका इंतजाम कर देंगे।

वह आदमी दुकान गया और दस बोरी आटा भिजवाने का इंतज़ाम किया। कुल खर्च इतना था कि उसके पास घर लौटने के लिए सिर्फ़ पेट्रोल और कुछ खर्चों के लिए ही पैसे बचे। बाद में उनका एक बेटा हुआ।

राम

एक वकील और उनकी पत्नी, जिनके कोई संतान नहीं थी, महाराजजी से मदद मांगने आए। महाराजजी ने उन्हें एक अमरूद दिया और कहा कि इसे अपनी पत्नी को दे दो, तो उन्हें संतान हो जाएगी। उस व्यक्ति ने सोचा कि उसके भाई के पाँच बच्चे तो मानो उसके अपने ही हों। भला उसे बच्चों की क्या ज़रूरत थी? इसलिए उसने अमरूद को अपनी पूजा की मेज़ पर रख दिया। एक महीने बाद उसने वह अमरूद, जो बिल्कुल सही सलामत था, अपने एक ऐसे मित्र को दे दिया, जिनके भी कोई संतान नहीं थी। दंपति ने उसे खाया और अब उनके तीन बच्चे हैं।

राम

एक निःसंतान व्यक्ति महाराजजी के पास आया, जिन्होंने कहा, “तुम मंदिर में एक कुआँ बनवा लो, तुम्हें संतान होगी।” और ऐसा ही हुआ। मैं उस व्यक्ति के पुत्र से मिला, जिसके अब दो पुत्र हैं। महाराजजी ने पिता से कहा था, “तुम एक कुआँ बनवा लो, तुम्हारी नाव चलती रहेगी,” जिसका अर्थ था कि वंश चलता रहेगा।

राम

एक बार एक ड्राइवर महाराजजी को कुछ श्रद्धालुओं से मिलने नैनीताल ले जा रहा था। जब एक खड़ी पहाड़ी आई, तो ड्राइवर मन ही मन सोचने लगा कि क्या उसे गाड़ी को ज़्यादा तेज़ी से चलाना चाहिए ताकि वह पहाड़ी पर चढ़ सके। वह गाड़ी को नुकसान नहीं पहुँचाना चाहता था, लेकिन चूंकि महाराजजी आगे की सीट पर बैठे थे, इसलिए उसने कोशिश करने का फैसला किया। जब वे पहुँचे, तो महाराजजी ने कहा, "तुम्हारे कोई बच्चे नहीं हैं।"

नहीं, महाराजजी।

"आप कितने वर्ष से शादीशुदा हैं?"

“उन्नीस साल।”

“लो, ये सेब खाओ। तुम्हें बच्चा होगा।”

दस महीने बाद उनकी पत्नी ने एक बेटे को जन्म दिया। ड्राइवर ने कहा, "इतनी छोटी सी बात के लिए महाराज जी इतना बड़ा काम करते थे।"

लेकिन महाराजजी की कृपा केवल बच्चों तक ही सीमित नहीं थी। उनके स्पर्श से स्वास्थ्य लाभ होता था, आर्थिक समृद्धि आती थी और आध्यात्मिक विकास भी होता था।

एक बेहद बीमार रिश्तेदार, एक छोटा लड़का जो पहले काफी तंदुरुस्त था, अस्पताल में भर्ती कराया गया था। उसकी हालत इतनी बिगड़ गई कि डॉक्टरों ने उसकी जान बचाने की उम्मीद छोड़ दी। जब महाराजजी अस्पताल के कमरे में आए, तो उन्होंने लड़के के सिर को छुआ और कुछ देर उसके साथ रहे। अस्पताल के कर्मचारी और मरीज महाराजजी के दर्शन के लिए इकट्ठा हुए थे, इसलिए महाराजजी ने प्रसाद बांटा और कैंची के लिए रवाना हो गए। लड़का तुरंत ठीक होने लगा। यह उसके लिए मानो दूसरा जन्म था।

राम

जे के भाई ने कहा, “हम कीर्तन कर रहे थे और हमें उम्मीद थी कि अत्यधिक शराब पीने वाला जे आकर महाराजजी से झगड़ा करेगा। वह महाराजजी की ओर दौड़ता हुआ आया और महाराजजी के पहले स्पर्श से ही उसमें बदलाव आ गया। उसने शराब पीना छोड़ दिया और तब से उसने शराब नहीं पी है, और यह कुछ साल पहले की बात है।”

राम

श्रीमती पी ने कहा, “मैं किसी गुरु से मिलने नहीं जाना चाहती थी, इसलिए मैंने सोचा कि मैं सिर्फ तस्वीरें लेने जाऊंगी, लेकिन जब मैं वहाँ पहुँची तो देखा कि दरवाजा खुला ही नहीं था। बाद में किसी ने मुझे बताया कि मैं दरवाजे के सामने इधर-उधर घूमूँ और महाराज जी उसे खोल देंगे। अचानक महाराज जी ने दरवाजा खोला और कहा, “चले जाओ!”

मैंने जवाब दिया, "मैं नहीं जा रहा हूँ।"

"अरे बाप रे, तुम तो बड़ी जिद्दी औरत हो। तुम्हें क्या चाहिए?"

मैंने जवाब दिया कि मुझे एक फोटो चाहिए। उन्होंने कहा ठीक है, लेकिन मैंने कहा, "नहीं, आपको बाहर आना होगा। कमरे में बहुत अंधेरा है।"

महाराजजी ने उत्तर दिया, "तस्वीर तो आ ही जाएगी।" मैंने उनसे बहस की, और महाराजजी ने फिर कहा, "तुम बहुत जिद्दी हो। क्या तुम डॉक्टर बनना चाहते हो?"

मैंने कहा, "सपने में भी मैं डॉक्टर नहीं बन सकती, क्योंकि मैं एक बहुत ही घटिया छात्रा हूँ।"

फिर महाराजजी ने मेरे सिर पर स्पर्श किया और कुछ मंत्र बोले। इसके कुछ ही समय बाद, मुझे मेडिकल कॉलेज में दाखिला मिल गया जहाँ मैंने सर्वोच्च अंक प्राप्त किए।

राम

एक व्यक्ति आश्रम में ठहरा हुआ था जिसकी पत्नी का हाल ही में देहांत हो गया था और उसका व्यापार भी बर्बाद हो गया था। महाराजजी ने उस दुखी व्यक्ति को बुलाया और उससे बांसुरी बजाने को कहा। उस व्यक्ति ने "रघुपति राघव राजा राम" की बांसुरी बजाई और महाराजजी आँखों से आँसू बहाते हुए वहीं बैठे रहे। महाराजजी उस व्यक्ति को अकेले एक कमरे में ले गए और जब वह बाहर आया तो बहुत प्रसन्न था। उसने बताया कि महाराजजी ने उसके सिर पर पैर रखा था। महाराजजी ने एक भक्त से कहा कि वह उस व्यक्ति को कुछ पैसे देकर घर भेज दे। तब से महाराजजी के आशीर्वाद से ही वह व्यक्ति और उसका परिवार जीवनयापन कर रहा है।

राम

सन् 1968 में एक दिन महाराजजी ने संदेश भेजा कि हम नौ लोग लैंड रोवर में घूमने जा रहे हैं। एक सेब के बाग में रुकने के बाद, हम पहाड़ों में वन विभाग के स्वामित्व वाले एक विश्राम गृह में गए। वहाँ के नौकरों को हमारी उम्मीद थी और महाराजजी को देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए। महाराजजी तुरंत इमारत के अंदर चले गए, जो देखने में एक बड़े कमरे जैसी लग रही थी, और गुरुदत्त शर्मा भी उनके साथ अंदर गए। हम सब बाहर लॉन में बैठ गए, तभी गुरुदत्त ने मुझे बुलाया। मैं दौड़कर अंदर गया और देखा कि महाराजजी एक टके पर बैठे हैं। मैं उनके चरणों में घुटने टेककर बैठ गया। वहाँ केवल हम तीनों ही मौजूद थे। महाराजजी ने मुझे ध्यान से देखा, फिर एक पल के लिए अपनी आँखें बंद कीं और कहा, "तुम अमेरिका में बहुतों को हँसाते हो।"

मैंने अपने व्याख्यान देने के अंदाज़ के बारे में सोचा, जिसमें हास्य का भरपूर इस्तेमाल होता था, और मैंने जवाब दिया, "हाँ, मुझे लगता है ऐसा ही है।" "आपको बच्चों को खाना खिलाना पसंद है।"

(हम्म। यह तो अजीब सवाल था।) मुझे लोगों के लिए खाना बनाना अच्छा लगता है और मुझे बच्चे भी बहुत पसंद हैं, इसलिए मैंने कहा, "हाँ, मुझे लगता है ऐसा ही है।"

फिर उसने मेरी ओर हाथ बढ़ाया और मेरे माथे पर तीन बार थपथपाया।

मुझे जो अगली बात याद है, वह यह है कि गुरुदत्त शर्मा मेरा हाथ पकड़कर मुझे दरवाजे से बाहर ले जा रहे थे और बाहर की रोशनी बहुत तेज थी। कुछ मिनट बाद हम सब वापस लैंड रोवर में बैठ गए और मंदिर लौट आए।

यह सब क्या था? क्या यह कोई दीक्षा थी? मेरे साथ क्या हुआ था? मुझे रामकृष्ण द्वारा

विवेकानंद की छाती पर पैर रखकर उन्हें समाधि में विसर्जित करने की कहानी याद आई, जब तक कि विवेकानंद ने यह नहीं कहा, "लेकिन मेरे परिवार का क्या होगा?"—क्योंकि वे तो उन पर ही निर्भर थे। उसी क्षण रामकृष्ण ने अपना पैर हटा लिया और विवेकानंद सामान्य चेतना में लौट आए।

क्या यह भी वैसी ही कोई घटना थी? कई महीनों बाद, अमेरिका में मुझे लिखे एक पत्र में हरि दास ने कहा, “उस दिन तुम बहुत भावुक थे। जब तुम बाहर आए, तो तुम्हारी आँखों से आंसू बह रहे थे।” मुझे यह बात बिल्कुल याद नहीं है।

तब से लेकर अब तक, मैंने कई भक्तों से उस घटना के बारे में पूछा है, लेकिन मुझे कभी कोई स्पष्ट उत्तर नहीं मिला। कुछ ने कहा कि यह वरदान था; दूसरों ने बताया कि महाराजजी महत्वपूर्ण दीक्षाओं को इस तरह छिपाकर रखते थे कि मानो कुछ हुआ ही न हो। एक अन्य भक्त ने मुझे बताया कि गुरुजी स्पर्श मात्र से ही भक्त की कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत कर सकते थे। मामला अभी भी स्पष्ट नहीं है। उस समय तो इससे मेरी उलझन और बढ़ गई थी—लेकिन यही महाराजजी का तरीका था। (आर.डी.)

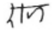

मैं अमेरिका में शिक्षा दे रहा था, लेकिन मुझे महसूस हो रहा था कि मेरी अशुद्धियाँ मेरे शिक्षण को दूषित कर रही हैं। इसलिए जब मैं 1971 में महाराजजी के समक्ष आया, तो मैंने उनसे प्रार्थना की कि वे मुझे इतना शुद्ध कर दें कि मैं पश्चिम में धर्म का प्रचार करने में उनकी सेवा कर सकूँ। उस समय उन्होंने मेरे सिर पर एक थपकी दी और कहा, "तुम शुद्ध हो जाओगे।" यह मेरे लिए एक वरदान जैसा लगा और मैंने इसे स्वीकार कर लिया। लेकिन कुछ महीनों बाद, जब मैं अभी भी भारत में था, तब भी मुझे अपनी अशुद्धियों का एहसास होता रहा और अक्सर मैं उनसे अभिभूत हो जाता था। इसलिए मैंने फिर से महाराजजी से मुझे शुद्ध करने की प्रार्थना की। उस समय उन्होंने मुझे ध्यान से देखा और कहा, "मुझे कोई अशुद्धि नहीं दिखती।"

उनका ऐसा कहना अच्छा था—आखिरकार, वे तो हर किसी में ईश्वर को देखते थे—लेकिन मैं संतुष्ट नहीं थी। मैं पवित्रता का अनुभव करना चाहती थी। खैर, मैंने शिकायत करना जारी रखा। फिर एक दिन मुझे एक पिछले कमरे में बुलाया गया, जहाँ मैं पहले कभी नहीं गई थी, जहाँ महाराजजी रात में रहते थे। महाराजजी अपने बिस्तर पर थे और एस. एल. साह, जो रामायण के एक महान छात्र थे और मेरे गहरे मित्र और भरोसेमंद गुरु बन गए थे, भी वहाँ मौजूद थे। महाराजजी ने मुझसे पूछा कि मैं क्या चाहती हूँ, और मैंने कहा कि मैं बस इतनी पवित्र होना चाहती हूँ कि उनकी सेवा कर सकूँ।

फिर वे कंबल के नीचे चले गए। कंबल के नीचे कुछ अजीब हलचलें हुईं और फिर खर्राटे की आवाज़ आई। मुझे गहरी शांति और जिज्ञासा दोनों का अनुभव हुआ। फिर वे कंबल के नीचे से बाहर आए और मेरे सिर पर थपथपाते हुए बोले, "तुम ठीक हो जाओगे।" बाद में एसएल ने बताया कि महाराजजी कंबल के नीचे मुद्राएँ कर रहे थे।

उस घटना से कुछ समय पहले, महाराजजी ने केके से मेरे बारे में कहा था, "मैं उसके लिए कुछ करने वाला हूँ।" शायद यह भी एक अप्रत्यक्ष दीक्षा का संकेत था। किसी को पता नहीं चला; महाराजजी ने कुछ नहीं कहा; और मुझे अब भी अशुद्धता का एहसास हो रहा था।

महाराजजी के साथ बिताए आखिरी दिन मैंने कहा, "महाराजजी, आपने मुझसे वादा किया था कि मैं पश्चिम में काम करने के लिए पर्याप्त रूप से पवित्र हो जाऊंगी, लेकिन मुझे ऐसा महसूस नहीं होता।"

महाराजजी ने उस बात पर थोड़ी दिलचस्पी दिखाई, फिर अपने हाथ में पकड़े हुए एक आम मुझे देते हुए कहा, "लो, इसे खाओ।"

मैंने अक्सर महाराजजी के बारे में सुना था कि वे लोगों को वरदान देते हैं, कभी-कभी फल के रूप में। मौका मिलते ही मैं शौचालय में जाकर आम खा गया ताकि मुझे इसे किसी के साथ साझा न करना पड़े। मैंने सोचा कि क्या मैं बीज को बचाकर रख लूँ ताकि मुझे और आम के वरदान मिल सकें, लेकिन अंत में मैंने उस योजना को यह सोचकर छोड़ दिया कि यह बहुत चालाकी भरा विचार है।

उस दिन को बीते बीस साल से अधिक हो चुके हैं, और धीरे-धीरे, बहुत धीरे-धीरे, अशुद्धियाँ दूर होती जा रही हैं। (आर.डी.)

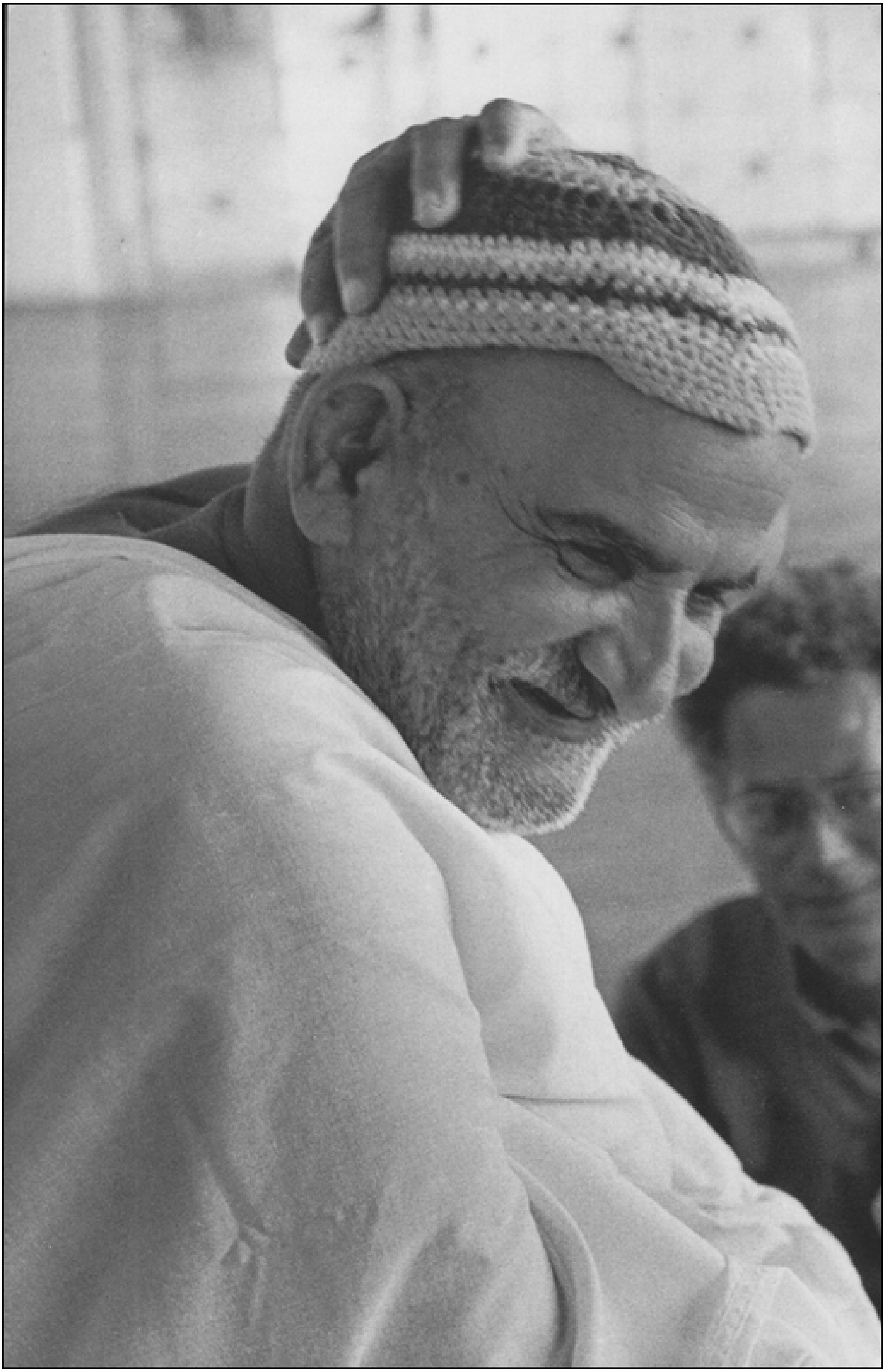

कृष्ण नाटक

यह बात एक साथ आश्चर्यजनक और स्पष्ट दोनों लगती है कि महाराजजी का पुरुषों और महिलाओं के साथ संबंध बिल्कुल अलग था। पुरुषों के साथ वे समय बिताते, गपशप करते, डांटते और मार्गदर्शन करते थे—एक मित्र, पिता और ऋषि की तरह। वहीं दूसरी ओर, महिलाओं के साथ इन भूमिकाओं के अलावा, वे अक्सर कृष्ण जैसी भूमिकाएँ निभाते हुए दिखाई देते थे, जैसे कि एक बालक, साथी और प्रेमी। महाराजजी के इस तरह के व्यवहार से भक्तों में कुछ हैरानी और भ्रम की स्थिति पैदा हुई और साथ ही उन लोगों की आलोचना का भी कारण बना जो महाराजजी को पसंद नहीं करते थे या उन पर भरोसा नहीं करते थे। लेकिन जो महिला भक्त इस तरह से महाराजजी के साथ सीधे तौर पर जुड़ी हुई थीं, उनके लिए उनके ये कार्य ईश्वर तक पहुँचने का एक उत्प्रेरक साबित हुए।

महिलाओं के साथ

एक बार जब महाराजजी एक कमरे में प्रवेश कर रहे थे, तो माताएँ दरवाजे के पीछे छिप गईं ताकि वे उन्हें देख न सकें। उन्होंने कहा, “वे कहाँ हैं? वे मुझे कैसे छोड़ सकती हैं? वे मुझे कैसे छोड़ सकती हैं? वे मुझे नहीं छोड़ सकतीं। मैं कैसे जी पाऊँगा? मैं उनके बिना कैसे रह पाऊँगा?” वे मोजा पहनने की कोशिश कर रहे थे। अंत में, उन्हें इतनी दया आई कि वे दौड़कर उनके पास आ गईं।

राम

जब महाराजजी चेतना के दूसरे स्तर पर जाकर वापस आते थे, तो माताएँ उनसे ऐसे मज़ाक करती थीं जैसे कोई पिता काम से घर लौटकर आता है: "महाराजजी, आप हमारे लिए क्या लाए हैं?"

राम

कई माताएं दर्शन के लिए मंदिर गईं, लेकिन उन्होंने देखा कि महाराजजी और एक पुरुष भक्त कांटेदार तार की बाड़ के पीछे बैठे हैं। महाराजजी ने उनसे कहा, “अरे, तुम औरतें कहती हो कि बाबा कुछ भी नहीं हैं और केवल स्त्रियां ही उनके पैर रगड़ती हैं, लेकिन अब देखो तुम तार के पीछे नहीं जा सकतीं।” वह पुरुष महाराजजी के पैर रगड़ रहा था और रामायण का एक श्लोक सुनाने लगा। एक माता ने उसके गीत का उत्तर रामायण के एक और श्लोक से दिया। इससे महाराजजी प्रसन्न हुए और उन्होंने उन्हें पास आने को कहा। तब माता ने कहा, “आप हमारे लिए मानव रूप में अवतार लेकर संसार में आए हैं!”

राम

एक व्यक्ति ने कहा, “मेरी पत्नी बस महाराजजी के साथ बैठकर समय बिताना चाहती थी। वह बात नहीं करना चाहती थी। वह बहुत शर्मीली थी।”

राम

आर की पत्नी महाराजजी और उनके प्रति अपनी भावनाओं के बारे में बात करने में बहुत हिचकिचाती थीं। लेकिन उनके चेहरे पर स्नेह का भाव था, और वे अपनी आँखों और हल्के इशारों से टिप्पणियों का जवाब देती थीं। जब उनसे पूछा गया कि क्या महाराजजी कभी उन्हें अपने बच्चे

जैसे लगे, तो उनका चेहरा विशेष रूप से स्नेहपूर्ण हो गया और उन्होंने मुस्कुराते हुए सिर हिलाया।

राम

हम बाहर बैठे होते और महाराजजी मेरे हाथों को कंबल के नीचे खींच लेते और मुझसे अपने पैरों की मालिश करवाते, मानो मुझे कंबल के नीचे खींच ही रहे हों। मुझे उन्हें छूना अच्छा लगता था, लेकिन मुझे यह नहीं पता था कि महाराजजी को छूने में कितनी हद तक जाया जा सकता है। मैं उनके पैरों और पिंडलियों की मालिश कर रही होती, और वे मेरा हाथ पकड़कर मेरी जांघ तक खींच लेते। तो मैं थोड़ी देर उनकी जांघों की मालिश करती और फिर मेरे हाथ अपने आप उनकी पिंडलियों की तरफ जाने लगते, क्योंकि अचानक मैं चारों ओर देखती और पाती कि सब लोग मुझे घूर रहे हैं। कोई भारतीय महिला हांफ रही होती, और मुझे बहुत शर्म आती, इसलिए मैं फिर से उनके पैरों की मालिश करने लगती। तभी उनका हाथ नीचे आता और मेरा हाथ पकड़कर मुझे फिर से ऊपर खींच लेता।

वह अक्सर मेरे साथ यह रहस्यमयी रस्म निभाता था। और अगर मैं इसे खुद को समझाने की कोशिश करता, तो जैसे ही मेरे मन में यह विचार आता, वह मेरी तरफ मुड़कर चिल्लाता, "नहीं!" और फिर अपनी बातचीत जारी रखता।

राम

एक भारतीय विधवा, जिसके कोई संतान नहीं थी, महाराजजी के पास आई और इस बात से चिंतित थी कि उसकी देखभाल कौन करेगा। महाराजजी ने कहा, “माँ, मैं तुम्हारा बच्चा बनूँगा।” वह उसे बच्चे की तरह मानने लगी और फिर उसने कहा, “तुम्हें पता है, हरिखान बाबा स्त्रियों का दूध पीते थे। मैं तुम्हारी गोद में बैठूँगा।” और वह उसकी गोद में बैठ गया। वह इतना हल्का और छोटा था, बिल्कुल एक बच्चे की तरह। उसने उसके स्तनों का दूध पिया और दूध बहने लगा, जबकि वह पैंसठ वर्ष की थी। इतना दूध निकला कि एक गिलास भर गया। उसके बाद उसे कभी संतानहीनता का खलल नहीं पड़ा।

राम

मुझे महाराजजी से बहुत डर लगता था और उनके साथ एक अजीब सी असहजता महसूस होती थी। मैं सही काम करना तो चाहती थी, लेकिन डरती भी थी कि मुझे पता ही नहीं चलेगा कि सही क्या है। एक दिन उन्होंने मुझे कैंची में अपने कमरे में बुलाया। (ज़ाहिर है, ऐसा हमेशा उन्हीं दिनों होता था जब इसकी सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती थी।) उन्होंने मुझे दरवाज़े बंद करने को कहा। वे टक्क पर बैठे थे, मैं ज़मीन पर बैठी थी, और वे मुझे गले लगाने के लिए झुके। मैंने भी उन्हें गले लगाने के लिए हाथ बढ़ाया, लेकिन वे चाहते थे कि मैं और करीब आ जाऊं। उन्होंने कहा, "और करीब आओ, और करीब आओ, तुम अभी काफी करीब नहीं हो।" और उन्होंने मुझे ज़मीन से उठाकर टक्क पर अपनी बाहों में भर लिया। उन्होंने अपनी बाहों और कंबल को मेरे चारों ओर लपेट लिया। उन्होंने मुझे अपने कंबल और अपने पूरे अस्तित्व से ढक लिया। उन्होंने मुझे पूरी तरह से अपने अंदर समा लिया! मैं पिघल गई—मेरे सारे डर, सब कुछ महाराजजी के सागर में विलीन हो गया। मैं अपने शरीर से पूरी तरह बाहर निकल गई, पूरी तरह से उनमें डूब गई। तो इस तरह उन्होंने मेरे सारे सवालों का जवाब दिया: सिर्फ एक गले लगाने से!

राम

मैं महाराजजी के सामने घुटने टेककर बैठी थी, तभी उन्होंने मेरी साड़ी पकड़ ली और उसे खींचने लगे। फिर उन्होंने मेरे स्तनों को पकड़ लिया और "माँ, माँ" कहने लगे। मुझे पहली बार ऐसा महसूस हुआ जैसे मैं वासना से मुक्त एक अंतरंग क्रिया का अनुभव कर रही हूँ।

राम

गुरुओं के महिलाओं के साथ दुराचार करने की कहानियां प्रचलित हैं। लेकिन महाराजजी के आसपास एक ऐसी पवित्रता का अनुभव होता था कि लोग मुझे उनके द्वारा किए गए किसी भी कार्य के बारे में बता सकते थे, और इससे उन पर मेरा अटूट विश्वास कभी नहीं डिगा। यह स्पष्ट था कि उन्हें किसी चीज की आवश्यकता नहीं थी; उनकी अपनी कोई इच्छा नहीं थी।

मुझे लगता है कि वह उन महिलाओं के साथ भी ऐसे काम करता था जिनकी यौन जीवनशैली सामान्य नहीं थी। अब पीछे मुड़कर देखने पर ऐसा लगता है कि यह उनके लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य था।

राम

हम महाराजजी के सामने गा रहे थे और मैं उनकी बांह सहला रही थी, तभी अचानक मेरे मन में उनके बारे में एक कामुक विचार आया। मैं शर्मिंदा हो गई, क्योंकि वे मेरी आंखों में देख रहे थे। इसलिए मैंने तुरंत उनकी बांह सहलाना बंद कर दिया और अपनी उंगली से अपनी बांह पर हिंदी में 'राम' बार-बार लिखने लगी—और इस दौरान भी उनकी निगाहें मुझ पर टिकी रहीं। उसी क्षण वह विचार गायब हो गया। महाराजजी ने तभी हाथ बढ़ाकर मेरी नाक में पहनी हुई नथ को धीरे से खींचा, मेरा सिर एक तरफ घुमाया और पास खड़े एक भारतीय को मेरी नथ की ओर इशारा करते हुए कहा, "देखो, यह बहुत अच्छी है।"

राम

महाराजजी ने मुझे कैंची आश्रम के छोटे से कमरे में बुलाया और अपने साथ टक्के पर बैठने को कहा। फिर वे मुझे “माँ, माँ” कहकर पुकारने लगे और मुझसे आधे अंग्रेज़ी, आधे हिंदी में कहने लगे, “मेरी माँ, मेरी माँ।” ऐसा करते हुए मुझे ऐसा लगा मानो मेरी आँखों के सामने उनका शरीर किसी डायपर पहने बच्चे के आकार का हो गया हो। मैंने उन्हें अपनी बाहों में उठाया और एक बच्चे की तरह झुलाया।

राम

मैं ज़मीन पर बैठा महाराजजी को देख रहा था और वे अपनी कुटिया पर बैठे मुझे देख रहे थे। तभी उन्होंने मुझसे इस तरह बात करना शुरू किया कि मुझे उनकी हर बात पूरी तरह समझ आ रही थी। फिर उन्होंने कुटिया पर ज़ोर से हाथ पटका, क्योंकि वे चाहते थे कि मैं उनके साथ वहीं बैठ जाऊं। मैं सोच रहा था कि कहाँ बैठूं। उनके साथ कुटिया पर कैसे बैठा जाए? उन्होंने कुटिया पर ज़ोर से हाथ पटका, तो मैं थोड़ा खिसक गया और फिर मैंने सोचा, चलो देखते हैं, और मैं उनके ठीक सामने पालथी मारकर बैठ गया। मुझे उनकी हर बात समझ आ रही थी, लेकिन जैसे ही मेरा दिमाग चलने लगता, स्वाभाविक रूप से मुझे कुछ भी समझ नहीं आता।

फिर उसने मेरी हथेलियों को चूमा, मुझे पकड़ा और अपनी ओर खींचकर गले लगा लिया। वही मशहूर आलिंगन। फिर ऐसा लगा जैसे मैं उसकी आँखों से देख रही हूँ। मुझे कमरे में सब कुछ दिखाई दे रहा था, यहाँ तक कि मेरे पीछे का सब कुछ भी। ऐसा लग रहा था जैसे मैं उसके

भीतर बैठी हूँ, पूरी तरह से उसके भीतर समाई हुई हूँ। पता नहीं हम कितनी देर तक वहाँ रहे।

राम

महाराजजी एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जिनसे मैं मिला, जो आपको मुक्त कराने के लिए कुछ भी करने को तैयार रहते थे। ऐसा नहीं था कि उन्हें अपनी छवि बनाए रखनी थी; उनकी शिक्षा किसी भी रूप या संरचना से परे थी। बाकी सभी गुरु या तो हिंदू हैं, या बौद्ध, या कुछ और, लेकिन महाराजजी ऐसे नहीं थे।

राम

महाराजजी के देह त्यागने से ठीक पहले एक वृद्धा अपने बच्चों और नाती-पोतों के साथ मंदिर आईं। उन्होंने महाराजजी के सिर पर हाथ रखकर उन्हें दीर्घायु का आशीर्वाद दिया। उन्होंने संस्कृत में दो बार कहा, "आपकी आयु लंबी हो।"

महाराजजी रो रहे थे। “क्या तुमने सुना उसने क्या कहा, क्या तुमने सुना उसने क्या कहा?” उनकी खुशी किसी बच्चे जैसी थी।

पुरुषों के साथ

महाराजजी अक्सर पुरुष भक्तों से महिलाओं के बारे में बात करते थे। कई विरोधाभासी कथनों के माध्यम से वे एक अत्यंत सूक्ष्म शिक्षा को प्रकट करने का प्रयास करते प्रतीत होते थे।

उन्होंने मुझसे अचानक ही एक ऐसा सवाल पूछा जो ब्रह्मांडीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण था, और वह था, "औरत क्या होती है?"

> ईसा मसीह और हनुमान जी सभी महिलाओं को माँ के रूप में देखते थे। ईश्वर को जानने के लिए माँ को समझना आवश्यक है।

लड़कियों के लिए बन रहे एक स्कूल के बारे में महाराजजी ने टिप्पणी की, "लड़कियों को शिक्षित करो और वे समाज को शिक्षित करेंगी।"

एक ओर, उन्होंने कहा:

> सभी महिलाओं को माँ के रूप में देखो, उनकी सेवा अपनी माँ की तरह करो। जब तुम पूरी दुनिया को माँ के रूप में देखोगे, तो अहंकार दूर हो जाएगा।
>
> एक पवित्र स्त्री सौ योगियों से श्रेष्ठ होती है। स्त्रियाँ ईश्वर के प्रति प्रेम करने के लिए अधिक खुली होती हैं।
>
> ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है, लेकिन यह एक ही स्त्री के साथ रहकर भी संभव है। एक पवित्र स्त्री सती (पत्नी) आपको पल भर में ईश्वर के पास ले जा सकती है।

वहीं दूसरी ओर उन्होंने यह भी कहा:

> महिलाएं और सोना ईश्वर तक पहुंचने के मार्ग में बाधा हैं।
>
> औरत एक नागिन है; तुम्हें उसे छूना भी नहीं चाहिए।

शायद यह "अगर जूता फिट बैठता है तो..." वाली बात थी।

एक बार एक भक्त ने यह भावना व्यक्त की कि इतनी आकर्षक महिलाओं का आसपास होना शर्मनाक है, और महाराजजी ने उत्तर दिया, "आपकी दृष्टि दोषरहित होनी चाहिए।"

राम

विश्वविद्यालय में जब महाराजजी एक भक्त के कमरे में आए और दीवार पर एक पिनअप कैलेंडर देखा तो वह शर्मिंदा हो गया। महाराजजी ने पूछा कि वह कौन है, तो भक्त ने कहा, "कोई नहीं," और तस्वीर को दीवार की ओर घुमाने लगा। लेकिन महाराजजी ने उसे रोकते हुए कहा, "वह एक माँ हैं। उनका अपमान मत करो।"

राम

भारत में रहने के दौरान मेरे मन में लगभग कोई यौन विचार नहीं आए। ऐसा नहीं था कि मैं उन्हें दबा रही थी; बस उस समय वे मेरे लिए प्रासंगिक नहीं थे। होटल लौटने पर मैं दूसरे लोगों के साथ ज्यादा समय नहीं बिताती थी। मुझे महिलाओं में कोई खास भाव नहीं दिखता था, हालांकि शायद कुछ पुरुषों को दिखता हो।

मुझे याद नहीं कि महाराजजी ने पुरुषों को वैसी शिक्षाएँ दी हों जैसी उन्होंने महिलाओं को दीं। मुझे किसी प्रत्यक्ष यौन शिक्षा का भी उल्लेख नहीं है। वे अक्सर महिलाओं और सोने के बारे में बात करते थे; कि कामवासना विष है, और योगियों के लिए सबसे बड़े विषों में से एक कामवासना ही है।

जब मैं अपने साथ यात्रा कर रहे एक व्यक्ति के साथ प्रेम संबंध में थी, तब महाराजजी ने इसे तुरंत समाप्त कर दिया। प्रेम संबंध समाप्त होने के बाद जब हम उनसे पहली बार मिले, तो महाराजजी ने हमें ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए कहा।

राम

चूंकि मैं हिंदी बोलता था, इसलिए हम अक्सर इधर-उधर की बातें करते थे, जैसे आमने-सामने बैठकर बातें करते हैं। और अक्सर वो मुझे तस्वीरें लेने देते थे। कभी-कभी तो वो झुककर मुझे गले लगा लेते थे, मानो किसी दिव्य आलिंगन में।

राम

एक सुबह, दूसरे भक्त के साथ शारीरिक संबंध बनाने के बाद, हम महाराजजी के साथ थे। इतनी जल्दी महाराजजी के साथ होने की उम्मीद न होने के कारण, इन दोनों घटनाओं के अचानक घटित होने से मुझे बहुत अपराधबोध हुआ। महाराजजी ने उस दूसरे व्यक्ति की ओर इशारा करते हुए मुझसे कहा, “तुम उसे अपना सर्वश्रेष्ठ उपदेश दे रहे हो।” फिर उन्होंने हमें ब्रह्मचर्य का पालन करने को कहा और दूसरे विषयों पर बात करने लगे। मैं असमंजस में पड़ गया। (आर.डी.)

राम

सभी मंदिरों में, विवाहित जोड़ों को छोड़कर, महिलाएं और पुरुष अलग-अलग सोते थे। एक रात महाराजजी ने एक विवाहित जोड़े और एक अविवाहित पुरुष और महिला को हमारे द्वारा कभी-कभी उपयोग किए जाने वाले दो कमरों वाले अतिथि गृह में ठहराया। मुझे लगा कि पश्चिमी लोग मंदिर की इस नीति की सराहना करेंगे, जिसमें महिलाएं एक कमरे में और पुरुष दूसरे कमरे में सोते थे। (उस समय मैं पश्चिमी लोगों के व्यवहार के लिए खुद को जिम्मेदार महसूस कर रहा

था।) अगली सुबह मुझे पता चला कि प्रत्येक कमरे में एक पुरुष और एक महिला सोए थे। मुझे उन पर गुस्सा आया और मैंने उनसे कहा कि वे इस संस्कृति के प्रति असंवेदनशील हैं। हम सभी को तुरंत महाराजजी के पास बुलाया गया, जिन्होंने पूछा कि सभी कैसे सोए, और अतिथि गृह में ठहरे लोगों की ओर मुड़कर उन्होंने पूछा कि कौन किस कमरे में सोया था। उन्होंने बताया और महाराजजी ने बस इतना कहा, "बहुत अच्छा।"

महाराजजी ने कई बार दोहराया, “राम दास को स्त्रियों को स्पर्श नहीं करना चाहिए। राम दास के लिए स्त्रियाँ साँप के समान हैं।” जाहिर है, वे इस बात से भलीभांति अवगत थे कि मैं, व्यक्तिगत रूप से, सभी स्त्रियों को दिव्य माँ के रूप में नहीं देख सकता; वास्तव में, स्त्रियों के प्रति मेरे अपने भय ने ही मुझे पुरुषों के साथ संबंध बनाने के लिए प्रेरित किया था। उनकी चेतावनी इस मामले में कोई सहायक नहीं रही।

लेकिन उनका सबसे कड़ा उपदेश, जिसे वे बार-बार दोहराते थे और उंगली उठाकर इशारा करते थे, था, “राम दास, कंचनकामिनी (सोना और स्त्रियाँ)।” हर बार जब महाराजजी यह वाक्य कहते थे—जो साहित्य में और रामकृष्ण जैसे अन्य संतों द्वारा अक्सर लोगों को कामवासना और धन के प्रति आसक्ति के खतरों से आगाह करने के लिए प्रयोग किया जाता है—मैं उन तरीकों पर विचार करता था जिनसे मैं अब भी उन इच्छाओं से चिपका हुआ था। और यद्यपि वे इच्छाएँ मेरे भीतर बहुत गहरी थीं, यह स्पष्ट था कि वे ज्ञान की इच्छा से टकराने वाली थीं और देर-सवेर उन्हें हारना ही था। लेकिन मुझे लगता है कि मैं (है?) एक मठ के मठाधीश की तरह था जो प्रार्थना करता है, “हे भगवान, मुझे इच्छाओं से मुक्त कर दो ताकि मैं रेगिस्तान के संतों की तरह हो सकूँ—लेकिन अभी नहीं।” मैं कामवासना और धन के साथ थोड़ा और खेलना चाहता था।

लेकिन महाराजजी नहीं माने। अक्सर मुझे दिन में कई बार मंदिर परिसर के पीछे से बुलाया जाता था। हर बार मैं महाराजजी के सामने घुटने टेकता और वे मेरी ओर देखकर "कंचनकामिनी" कहते और फिर मुझे वापस भेज देते। ऐसा लगता था मानो वे मुझे किसी खास बात की चेतावनी दे रहे हों, लेकिन उस समय मैंने इसे आगे बढ़ने की एक सामान्य सलाह समझा। मैंने कामवासना के बंधनों से खुद को मुक्त करने के कई तरीके आजमाए। मैंने विभिन्न अनुष्ठानों में कामवासना को अग्नि में अर्पित किया और कई धार्मिक उपमाओं के माध्यम से ईश्वर से इस आसक्ति को दूर करने की प्रार्थना की। लेकिन जाहिर तौर पर मैं मुक्त होने के लिए तैयार नहीं था, क्योंकि इन इच्छाओं से आसक्ति बनी रही।

1974 में मेरी मुलाकात एक महिला आध्यात्मिक गुरु से हुई, जिन्होंने मुझे समझाया कि महाराजजी ने उन्हें (आध्यात्मिक रूप से) मेरे आंतरिक कार्य में सहायता करने के लिए भेजा है। हमारे साथ किए गए अधिकांश कार्य यौन तांत्रिक अभ्यासों में परिवर्तित हो गए। इससे मुझे उन इच्छाओं के बंधनों को ढीला करने में बहुत मदद मिली जिनसे मैं जूझ रहा था।

हमारे साथ काम करने के दौरान, ऐसा लग रहा था कि उसे अपने शरीर में स्थिर रहने में कठिनाई हो रही है। उसकी चेतना बार-बार भटक रही थी। चूंकि यह सुझाव दिया गया था कि कीमती धातु सोना उसे स्थिर रखने में मदद करेगा, इसलिए मैंने उसके लिए सोने का कंगन और अंगूठी खरीदने का फैसला किया। आभूषण की दुकान में ही मुझे महाराजजी की "स्त्री और सोना" के बारे में बार-बार दी गई चेतावनी याद आई। इसके कुछ ही समय बाद, मुझे लगा कि इस

संबंध के माध्यम से महिलाओं के प्रति मेरा बहुत सारा भय दूर हो गया है, जिससे कामवासना के प्रति मेरा लगाव कम हो गया और मैं अपनी आध्यात्मिक यात्रा पर आगे बढ़ सका, और मैंने उन शिक्षाओं को छोड़ दिया। ऐसा लगा जैसे महाराजजी की कृपा मुझे इस स्त्री तक ले आई थी, और उन्हीं की कृपा से मैंने उसे छोड़ दिया। (आर.डी.)

राम

एक बार महाराजजी हमारे घर आए थे, जब एक मूर्तिकार हमारे घर में ठहरे हुए थे। बैठक कक्ष में चारों ओर नग्न आकृतियों की विशाल मूर्तियाँ और चित्र रखे हुए थे। मुझे थोड़ी चिंता थी कि महाराजजी को शायद ये पसंद न आएँ और मैं चाहती थी कि वे सीधे शयनकक्ष में चले जाएँ, लेकिन वे सोफे पर बैठ गए, चारों ओर देखा और हर चीज़ की प्रशंसा की। उन्होंने कहा, “कितने अद्भुत! ये बहुत अच्छे हैं।” वे एक पारखी की तरह बातें करने लगे, जिससे मुझे इतना सुकून मिला कि मैं नग्नता के बारे में सब कुछ भूल गई। उन्होंने कलाकृतियों की सराहना की, उनकी प्रशंसा की और उनके बारे में प्रश्न पूछे। “लकड़ी कहाँ से आती है? आप इसे कैसे बनाते हैं? आप इसे किस समय बनाते हैं?”, इत्यादि। महाराजजी किसी भी स्थिति में सहज हो जाते थे।

यौन ऊर्जा में ईश्वर की रचना करने की शक्ति है। यदि आप इस ऊर्जा को बढ़ाते हैं, तो आप ब्रह्म को अनुभव कर सकते हैं और उससे मिल सकते हैं।

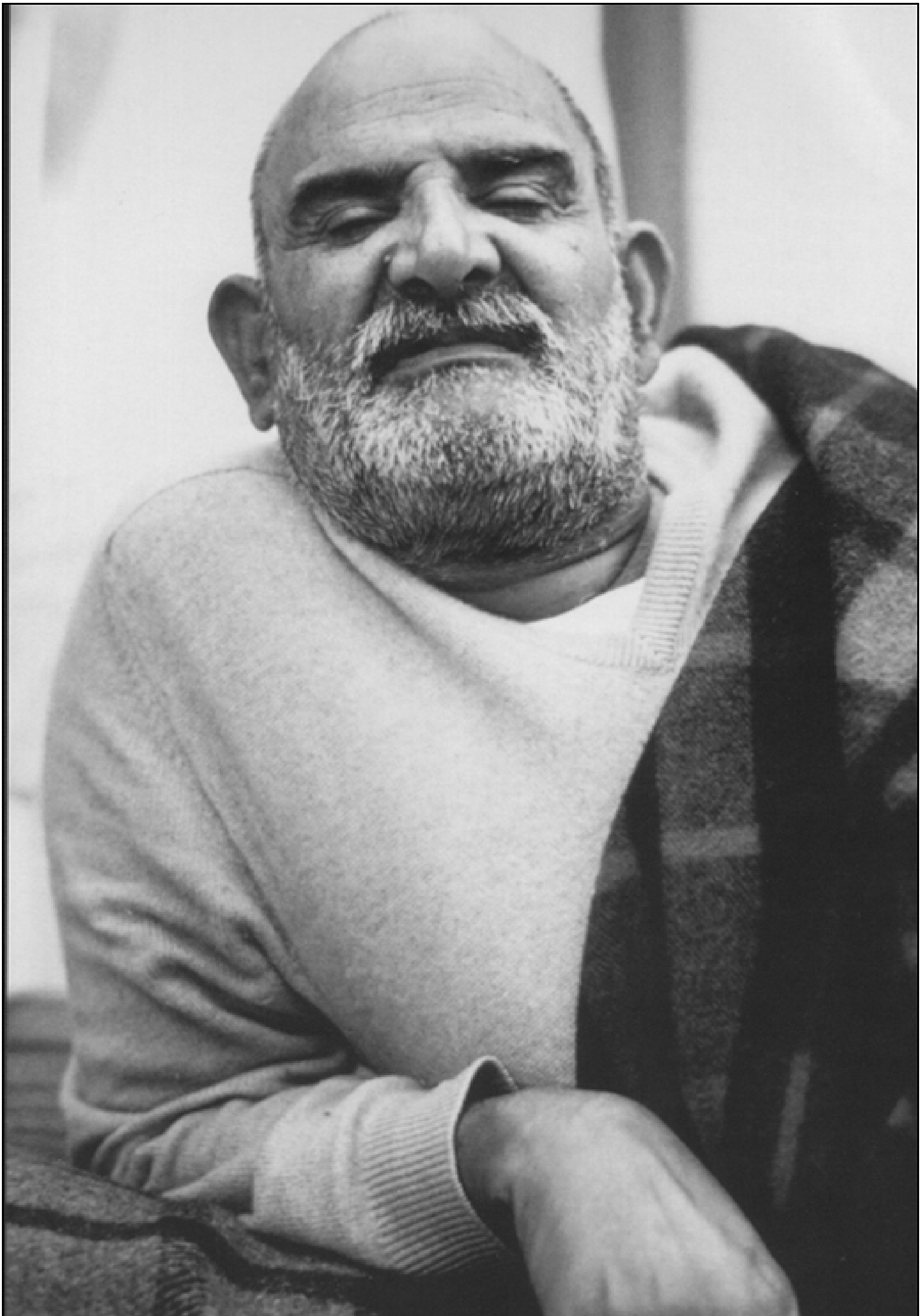

इसे दिल्ली ले जाओ

गुरु और भक्त के बीच का अत्यंत सूक्ष्म संबंध आस्था पर बहुत हद तक निर्भर करता है। भक्त की गुरु में जितनी गहरी आस्था और विश्वास होता है, गुरु के माध्यम से भक्त में आध्यात्मिक गुण उतनी ही आसानी से जागृत होते हैं।

आध्यात्मिक साहित्य में, सच्चे समर्पण को उस समर्पण के रूप में वर्णित किया गया है जो वास्तव में समर्पण नहीं है। अर्थात्, व्यक्ति किसी गुरु जैसी पद्धति के प्रति आस्था और विश्वास के माध्यम से तभी खुलता है जब ऐसी आस्था उसके अंतर्मन में सत्य से प्रतिध्वनित होती है। तब ऐसे खुलने की तत्परता उत्पन्न होती है। यदि व्यक्ति केवल बुद्धि या भावना में ही लीन है, तो समर्पण का कोई भी कार्य अहंकार का ही एक और कार्य है और गलत निर्णय के आधार पर इसके भयानक परिणाम हो सकते हैं। इसलिए व्यक्ति गुरु के प्रति समर्पण का चुनाव नहीं कर सकता। परन्तु जब भक्त और गुरु अंतर्मन में मिल जाते हैं, तब ऐसा समर्पण वास्तव में किसी दूसरे व्यक्ति के प्रति समर्पण नहीं होता, बल्कि अपने ही दैवीय स्वरूप के प्रति समर्पण होता है।

महाराजजी के भक्तों द्वारा सुनाई जाने वाली एक कहानी में एक अन्य संत, सोमबारी महाराज का जिक्र है, जिन्हें महाराजजी बहुत सम्मान देते थे और जो उनसे पहले के समय में रहते थे।

ऐसा लगता है कि उन्होंने अपने एक भक्त को दो आलू दिए और उसे दोनों खाने का निर्देश दिया। निर्देश बहुत सख्त थे। वह व्यक्ति नदी के किनारे गया और एक आलू खाने लगा। कुछ ही देर बाद एक बहुत गरीब बूढ़ा आदमी आया और दूसरा आलू मांगते हुए बोला, "आपके पास भोजन है और मेरे पास कुछ नहीं।" भक्त मना नहीं कर सका और उसने दूसरा आलू उसे दे दिया। जब वह लौटा, तो सोमबारी महाराज ने उसे आदेश का पालन न करने के लिए खूब खरी-खोटी सुनाई। उनका भाषण इस बात पर समाप्त हुआ, "तो दूसरा आलू खाना तुम्हारा भाग्य नहीं था (शायद भाग्य से बढ़कर, नियति)।" बाद में वह आदमी संसार में बहुत सफल हुआ, लेकिन जीवन के अपने अंतिम आध्यात्मिक प्रयासों में सफल नहीं हो सका—क्योंकि वही दूसरा आलू उसके लिए घातक साबित हुआ।

ऐसी कहानी, जो दान और गुरु के प्रति समर्पण के बीच टकराव को दर्शाती प्रतीत होती है, वास्तव में एक कठिन शिक्षा है। हालांकि, अंततः हमें स्वयं दान बनने के लिए सचेत दान की भावना का त्याग करना सीखना होगा।

महाराजजी के प्रति भारतीय भक्तों की पूर्ण आस्था और समर्पण से जुड़ी कुछ कहानियाँ सचमुच विस्मयकारी हैं, और उनकी आस्था में आई कुछ असफलताएँ भी उतनी ही विस्मयकारी हैं। महाराजजी ने हम भक्तों के लिए इसे आसान नहीं बनाया, क्योंकि वे लगातार अपने बारे में संदेह के बीज बोते रहे ताकि हमारे भीतर पनप रही थोड़ी-बहुत आस्था को भी भंग कर सकें। फिर भी, हमने देखा कि कैसे हमारे संदेह धीरे-धीरे गहरे विश्वास में परिवर्तित होते गए। ऐसा प्रतीत होता था कि वे हमें उस अनुभूति की ओर ले जा रहे हैं, जिसे रमण महर्षि ने एक बार व्यक्त किया था, कि "ईश्वर, गुरु और आत्मा एक हैं।" इस प्रकार हमने पाया कि महाराजजी पर विश्वास और उनके प्रति खुलापन हमें अपने भीतर के गहरे भाग और स्वयं में गहरी आस्था की ओर ले

जाता है।

महाराजजी ने संदेह के बीज बोए

मुझे याद है एक बार मैं महाराजजी के पास एक नए पश्चिमी व्यक्ति को लेकर आया था, जिसे मैं पसंद करता था और चाहता था कि महाराजजी उसे प्रभावित करें—यानी मैं चाहता था कि महाराजजी अपने कुछ खास करतब दिखाएँ। महाराजजी ने उसकी ओर देखा और कहा, "तुम कनाडा से आए हो?"

"नहीं, महाराजजी। मैं संयुक्त राज्य अमेरिका से आया हूँ।"

महाराजजी ने मानो उसे सही जगह पर बिठा दिया हो, सिर हिलाते हुए कहा, "तुम्हारी तीन बहनें हैं।"

"नहीं, महाराजजी, मैं इकलौती संतान हूँ।"

तब तक मैं बहुत असहज महसूस करने लगा था। लेकिन महाराजजी ने अपना रवैया नहीं बदला, उन्होंने उससे उसकी यात्रा और उसके काम के बारे में गलत सवाल पूछे और फिर हमें जाने के लिए कह दिया। जाते समय उस व्यक्ति ने मेरी तरफ देखा और थोड़ी दया भाव से कहा, "मुझे यकीन है कि आपके गुरु बहुत अच्छे हैं।" वह फिर कभी नहीं लौटा। (आर.डी.)

हम सन् 1972 की शरद ऋतु में दिल्ली में भारत के वन विभाग के महानिरीक्षक के घर पर थे, जो महाराजजी के लंबे समय से भक्त थे। कई लोग आ-जा रहे थे, जिनमें एक महिला भी थी जिसका लहजा थोड़ा अभिमानी था। जब वह आई तो उसने महाराजजी को प्रणाम किया और फिर बोली, "आपको याद है ना; हम फलां-फलां के घर पर मिले थे।"

महाराजजी: "एह (क्या)?" उलझन भरी नज़रों से देखते हुए।

महिला: "ओह, महाराज जी, आपने ये-वो कहा था। आपको याद होगा।"

महाराजजी: "क्या?"

वह महिला नाराज़ थी क्योंकि वह अपने महत्वपूर्ण मित्रों के साथ आई थी और स्पष्ट रूप से उन्हें प्रभावित करने की कोशिश कर रही थी। अंततः वह और उसके साथी चले गए। महाराजजी तुरंत उठ बैठे और हमें उस महिला के पिता, दादा, वैवाहिक स्थिति और जीवनी के बारे में बताया।

महाराजजी ने अपने परिवार के साथ आए उन्नीस वर्षीय लड़के से कहा, "तुम असफल हो गए, तुम असफल हो गए।"

"नहीं, महाराज जी! मैं फेल नहीं हुआ! मुझे दूसरा स्थान मिला है।"

"तुम असफल हो गए। क्या तुम्हें लगता है कि दूसरा मौका भी काफी है?"

फिर महाराजजी ने कहा, "नहीं, तुम फेल नहीं हुए, तुम्हें प्रथम स्थान मिला है, लेकिन तुम इसके लायक नहीं हो। तुम इसलिए फेल हो रहे हो क्योंकि पढ़ाई करने के बजाय तुम अपने माता-पिता से बहुत ज्यादा बहस करते हो, और तुम इसके लायक नहीं हो, फिर भी तुम्हें प्रथम स्थान मिला है। लेकिन अब से तुम्हें जरूर पढ़ाई करनी चाहिए।"

महाराजजी बहुत कठोर थे। श्रीमती सोनी, जिनकी ये सहेलियाँ थीं, बहुत शर्मिंदा थीं क्योंकि उन्हें पता था कि परिणाम पहले ही अखबार में छप चुके हैं और लड़के को दूसरा स्थान मिला है

और यही अंतिम परिणाम हैं। अपने गुरु से (दिखने में) गलती हो जाना किसी यातना से कम नहीं। परिवार के सभी लोग महाराजजी को एक अच्छे इंसान समझते थे, लेकिन लड़का खुद उनके प्रति तिरस्कार का भाव रखता था। श्री सोनी ने लड़के और उसके माता-पिता को घर ले जाने के लिए एक ड्राइवर भेजा, और जब ड्राइवर लौटा तो उसके पास एक नोट था जिसमें लिखा था कि असंभव हो गया है: चार परीक्षा प्रश्नपत्र वापस मंगा लिए गए थे और लड़के के प्रश्नपत्र की दोबारा जाँच की गई थी - उसे प्रथम स्थान मिला था।

राम

महाराजजी ने एक बार मुझसे कहा, “एक बहुत ही उच्च कोटि की महिला, जो तुमसे बहुत प्रेम करती है, भारत आ रही है।” मैंने इस बारे में सोचा और मेरी उलझन बढ़ती गई, क्योंकि एकमात्र उच्च कोटि की महिला जिसे मैं जानता था जो मुझसे प्रेम करती थी, वह कैरोलीन थी, जिसके साथ मैं भारत आने से पहले रह रहा था, और निश्चित रूप से वह ऐसी यात्रा की योजना नहीं बना रही थी। और कोई नहीं थी। इसका क्या अर्थ हो सकता है? क्या महाराजजी भी गलती कर सकते थे? क्या उन्होंने बस एक भूल कर दी थी? 1970 में जाकर यह मामला सुलझा, जब कैरोलीन ने स्वीकार किया कि वास्तव में वह 1968 में मेरे भारत में रहने के दौरान भारत आई थी, लेकिन वह वास्तुकला का अध्ययन करने के लिए मंदिरों में गई थी और मुझे परेशान नहीं करना चाहती थी। (आर.डी.)

राम

सन् 1971 में भारत की अपनी दूसरी यात्रा के दौरान मेरी मुलाकात इलाहाबाद में महाराजजी से हुई थी। कुछ दिनों बाद उन्होंने हमें दिल्ली भेज दिया। जब हम विदा हो रहे थे, महाराजजी ने मुझसे बहुत धीमी आवाज़ में कहा, “मैं तुमसे वृंदावन में मिलूंगा।” उन्होंने समय नहीं बताया और मैंने पूछा भी नहीं। आख़िरकार, अगर उन्होंने कहा था कि वे मुझसे वृंदावन में मिलेंगे, तो वे मुझसे वृंदावन में ही मिलेंगे।

हमने दिल्ली में लगभग एक सप्ताह बिताया और फिर दक्षिण में शिव मंदिरों की तीर्थयात्रा पर जाने का फैसला किया। इस यात्रा में हमें वृंदावन से होकर गुजरना था, जहाँ हम महाराजजी के दर्शन कर उनका आशीर्वाद प्राप्त कर सकते थे।

हम दिल्ली से निकलकर मथुरा में रात रुके, ताकि अगले दिन वृंदावन में महाराजजी से मिल सकें। ढेर सारे फल और फूल लेकर हम सुबह-सुबह मंदिर पहुँचे। पुजारी ने बताया कि महाराजजी वहाँ नहीं हैं और उनके आने का समय भी पता नहीं है। महाराजजी की अनिश्चितता के बारे में जानते हुए भी मुझे निराशा हुई, क्योंकि उन्होंने कहा था, "मैं तुमसे वृंदावन में मिलूँगा।" और मुझे पता था कि जब हम अप्रैल में दक्षिण से लौटेंगे, तब तक महाराजजी संभवतः पहाड़ों में होंगे, क्योंकि वृंदावन जिस मैदानी इलाके में स्थित है, वहाँ असहनीय गर्मी पड़ रही होगी। उनका मतलब क्या रहा होगा?

उस सुबह मंदिर में मैं बैठी कुछ बुजुर्ग महिलाओं को लगातार "हरे कृष्ण, हरे राम" का जाप करते हुए सुन रही थी, जो वहाँ सुबह से लेकर देर शाम तक सुनाई देता था। तभी एक छोटी चिड़िया ऊपर से उड़ी और उसने तिनके का एक टुकड़ा गिरा दिया, जो मेरी गोद में आ गिरा। शायद वह महाराजजी थे और मुझे कोई उपहार दे रहे थे। या शायद मैं एक बार फिर व्यर्थ ही

उम्मीद की किरण ढूंढ रही थी।

हनुमान जी की मूर्ति के समक्ष फल और फूल अर्पित करने के बाद हम आगे बढ़े और तीर्थयात्रा के अंत में उत्तर दिशा की ओर चल दिए। यात्रा के दौरान मार्ग को लेकर काफी चर्चा हुई: नैनीताल जाने के लिए तो सीधा रास्ता था; लेकिन वृंदावन होकर जाना अधिक घुमावदार था, जिसमें एक दिन अतिरिक्त लग जाता। अप्रैल का महीना चल रहा था और संभवतः महाराजजी पहाड़ों में ही होंगे। लेकिन उन्होंने वृंदावन में मुझसे मिलने का वादा किया था और दक्षिण की ओर जाते समय जब वे वहां नहीं मिले तो मुझे अभी भी उस निराशा का अनुभव हुआ था। मैं सीधे पहाड़ों की ओर जाने के पक्ष में था, लेकिन मेरी बात नहीं मानी गई और हम वृंदावन की ओर चल पड़े।

हमने फिर मथुरा में रात बिताई और अगली सुबह फल और फूल लेकर आए, हालांकि इस बार थोड़ी कम मात्रा में, क्योंकि हमें उनके मिलने की उम्मीद बहुत कम थी। हमने बाज़ार में कुछ देर रुककर ताज़े फलों का रस पिया और अंत में लगभग साढ़े आठ बजे मंदिर की ओर चल पड़े। जब हम वहाँ पहुँचे तो वह सुनसान और वीरान लग रहा था। हमने मुख्य द्वार के सामने गाड़ी खड़ी की और अंदर गए। पुजारी ने हमारा स्वागत किया। उन्हें प्रणाम करने के बाद हमने पूछा कि क्या महाराजजी यहाँ हैं।

“ओह, नहीं,” उन्होंने उत्तर दिया, “महाराज जी कई हफ्तों से यहाँ नहीं आए हैं। वे शायद अभी पहाड़ों में होंगे। वे यहाँ नहीं हैं।” हम सबका दिल बैठ गया, लेकिन हमने हनुमान जी को फल और फूल अर्पित किए, और मंदिर में पाँच मिनट से भी कम समय बिताने के बाद हम जल्दी से कार की ओर वापस चल दिए, यह सोचकर कि अगर हम बिना रुके गाड़ी चलाते रहे तो शाम तक नैनीताल पहुँच जाएँगे। जैसे ही हम कार के दरवाजे बंद कर रहे थे, एक छोटी सी फिएट सेडान तेज़ी से सड़क पर आई और हमारे बगल में आकर रुक गई। ड्राइवर कुछ जाना-पहचाना सा लग रहा था, और उसके बगल में महाराज जी बैठे थे, जो कार से उतरे और हमारी ओर ध्यान दिए बिना मंदिर में चले गए।

हम जल्दी से कार की ओर भागे तो देखा कि महाराजजी के अक्सर यात्रा साथी गुरुदत्त शर्मा पीछे बैठे हैं। शर्माजी आमतौर पर मिलनसार हैं, लेकिन महाराजजी के कामों के बारे में ज्यादा कुछ नहीं बताते, फिर भी हमने उनसे यह पता लगा लिया कि वे पिछली शाम किसी दूर शहर में थे। सुबह 2:00 बजे महाराजजी ने उन्हें और ड्राइवर को जगाया और कहा, “चलो, हमें जल्दी करनी चाहिए। हमें वृंदावन पहुंचना है।” वे पूरी रात गाड़ी चलाते रहे और सुबह करीब 7:00 बजे आगरा पहुंचे। फिर महाराजजी ने कहा, “हमारे पास अभी थोड़ा समय है। हम फलां-फलां से मिल सकते हैं।” और थोड़ी देर की मुलाकात के बाद, महाराजजी फिर से उन्हें वृंदावन के लिए रवाना कर दिया। आखिर उन्होंने मुझसे वृंदावन में मिलने का वादा किया था। (आर.डी.)

भक्तों की आस्था

मुझे महाराजजी मिल गए हैं, इसलिए मैं दूसरे संतों के पास नहीं जाता। मुझे किसी की जरूरत नहीं है।

राम

महाराजजी को याद रखने से आपको कोई नुकसान नहीं होगा। उन्हें भूलने से आपको भय

का सामना करना पड़ सकता है।

राम

महाराजजी कार में थे और वे एक पुल पर पहुँचे। दूसरी तरफ से गन्ने से लदी गाड़ियाँ खींचते हुए बैल आ रहे थे, जिन्होंने पुल को पूरी तरह से अवरुद्ध कर दिया था। चालक ने गाड़ी धीमी कर दी, लेकिन महाराजजी ने कहा, "तुम गाड़ी धीमी क्यों कर रहे हो?"

ड्राइवर ने जवाब दिया, "महाराज जी, मैं यहाँ से नहीं जा सकता।"

महाराजजी ने उससे कहा, “चलो!” ड्राइवर ने विरोध किया, और महाराजजी ने जवाब दिया, “आँखें बंद करो और चलो!” तो ड्राइवर ने अपनी आँखें बंद कर लीं और एक्सीलरेटर दबा दिया, और जब उसने आँखें खोलीं तो वे दूसरी तरफ थे।

राम

जो भी उनके पास आता, वे उस पर कृपा करते। यदि आपका विश्वास सच्चा होता, तो वे आपकी हर जरूरत पूरी करते।

राम

यह वही थे जिन्होंने मुझ पर आस्था थोपी, न कि मैंने इसे आत्मसात किया।

राम

एक दोपहर शिव सिंह कैंची से घर जाने वाले थे, लेकिन महाराजजी ने उन्हें मना कर दिया। अगले दिन भी उन्होंने मना किया, और तीसरे दिन भी। शिव सिंह ने पूछा, “दादाजी, मैं क्या करूँ? मेरा एक सेब के बाग का ठेका लंबित है। इसमें बहुत प्रतिस्पर्धा है। एक लाख रुपये का सौदा है। अगर मैं नहीं गया, तो मुझे बाग नहीं मिलेगा।” महाराजजी ने उन्हें पाँच-छह दिन कैंची में ही रोके रखा। शिव सिंह ने फिर दादाजी से कहा, “अब तो ठेका हाथ से निकल गया,” लेकिन महाराजजी को यह बात बताने की हिम्मत उनमें नहीं थी।

महाराजजी ने अंत में उसे फटकारा: “तुम इतने दिनों से घर से बाहर हो। तुम्हें जाकर कुछ काम करना चाहिए।” महाराजजी ने शिव सिंह को आवारागर्दी के लिए दोषी महसूस कराया। वह चला गया और चार दिन बाद प्रसन्न होकर लौटा। इस बीच, ओलावृष्टि हुई: कुछ नुकसान के कारण बाग की कीमत मूल कीमत से आधी हो गई, और शिव सिंह ने उसे खरीद लिया।

राम

यदि आपको किसी भी चीज की आवश्यकता हो, तो मनुष्य से मदद न मांगें; सीधे महाराजजी से मांगें। महाराजजी सब कुछ करेंगे।

यदि आपके पास पर्याप्त विश्वास है, तो आप धन और संपत्ति का त्याग कर सकते हैं।

मेरी भाभी जब ट्रेन से मिलने आई थीं, तो उन्होंने अपने पास बैठी महिलाओं से महाराजजी के बारे में बातें कीं। एक दक्षिण भारतीय महिला बहुत उत्साहित हो गई और उनसे मिलने के लिए उनके साथ घर आने की ज़िद करने लगी। वह एक बहुत ही रहस्यमयी और उच्च समाज की महिला थीं। उनका व्यवहार ऐसा था मानो वह हमारे परिवार की ही सदस्य हों और यहाँ तक कि वह मेरी पत्नी के कमरे में जाकर उनकी सुंदर साड़ियाँ दूसरी महिलाओं को देने के लिए ले जाती थीं। वह महिला लगभग सात दिन हमारे साथ रहीं, लेकिन महाराजजी तब तक नहीं आए थे,

इसलिए वह कैंची चली गईं। जब महाराजजी आखिरकार हमारे घर आए, तो वह उनके साथ थीं। नैनीताल के भक्तों और लखनऊ के भक्तों, जहाँ वह गई थीं, सभी ने शिकायत की कि उन्होंने उनके साथ गलत व्यवहार किया और उनकी कीमती चीजें छीन लीं। महाराजजी ने पूछा कि मैंने उन्हें अपने घर में क्यों रहने दिया। मैंने कहा कि महाराजजी ने उन्हें भेजा था। महाराजजी जिसे भी भेजते हैं, मेरे घर में उसका स्वागत है; मैं महाराजजी के मेहमानों को मना नहीं कर सकता। महाराजजी ने उन्हें भेजने से इनकार कर दिया। मैंने पलटकर कहा, "वह आपकी जानकारी के बिना कैसे आ सकती थीं?" (वह ऐसा कैसे कर सकती थी? महाराज जी सब जानते हैं, यह उनका घर है। बेशक उन्होंने ही उसे भेजा होगा!)

महाराजजी ने इस बात से इनकार नहीं किया, बल्कि इसके विपरीत कहा, "लेकिन उसने तो आपकी कीमती चीजें दान कर दीं!"

मैंने उत्तर दिया, “अगर वे अब हमारे पास नहीं हैं, तो वे इतने मूल्यवान, इतने आवश्यक कैसे हो सकते थे? वे निश्चित रूप से बेकार वस्तुएँ रही होंगी, वरना वे आज भी हमारे पास होतीं—क्या यह सच नहीं है?” महाराजजी चुप रहे। वे क्या कह सकते थे? अन्य भक्त इस बात से आश्चर्यचकित थे कि महाराजजी ने स्वीकार किया कि वे इन सभी बातों से अवगत हैं और इनके लिए उत्तरदायी हैं।

राम

एक बार मेरे दफ्तर में विभागीय परीक्षा थी। मैं तैंतालीस वर्ष का था और मुझे लगा कि अब परीक्षा देने के लिए मेरी उम्र बहुत ज़्यादा हो गई है, क्योंकि मैं अपने परिवार के सामने असफल नहीं होना चाहता था। पहला प्रश्नपत्र मैंने आधे मन से दिया और उसे बिगाड़ दिया। महाराजजी वहाँ नहीं थे। जब मैं परीक्षा देकर लौटा, तो सिद्धि माँ दादा के घर के बरामदे में खड़ी थीं, और मैं समझ गया कि महाराजजी आए हैं। मैं उनसे मिलने अंदर गया और कलम-पेंसिल उनके चरणों में रख दी। महाराजजी ने पूछा, “क्या तुम परीक्षा दे रहे हो?”

"हाँ।"

आप पास हो जाएंगे।

दूसरी परीक्षा से पहले हुब्बा और महाराजजी छत पर थे। मैंने उन्हें बताया कि मैं दूसरी परीक्षा दे रही हूँ। मैं रो रही थी। "तुम क्यों रो रही हो?" महाराजजी ने पूछा।

मुझे असफल होने का डर है।

महाराजजी ने हमें बिठाया और कहा, "तुम पास हो जाओगे।"

तब हुब्बा ने कहा, “जाओ। विश्वास रखो।”

लेकिन परीक्षा में पाँच प्रश्न थे और मैंने साढ़े चार प्रश्न गलत कर दिए। तीसरे प्रश्नपत्र के बाद मेरी मुलाकात महाराजजी से हुई। उन्होंने मुझसे पूछा कि मैंने कैसा किया। मैंने झूठ बोला, "बहुत अच्छा।" मैंने सोचा, "मैं उनसे झूठ कैसे बोल सकता हूँ?" तीन महीने बाद परिणाम आया और मैं उत्तीर्ण हो गया।

राम

एक व्यक्ति की आंख में एक फोड़ा हो गया था जो सर्जरी से भी ठीक नहीं हो सका, लेकिन बाद में उसने महाराजजी से कहा, "जब मैंने चंडीपाठ (मां के बारे में मंत्रों की एक पुस्तक) पढ़ी,

तो मेरी आंख अपने आप ठीक हो गई।"

महाराजजी ने अविश्वास जताते हुए माताओं और सभी से कहा, “क्या आप मानते हैं कि उन्होंने मात्र चंडीपाठ पढ़ा और फोड़ा ठीक हो गया? क्या आप इस पर विश्वास करते हैं? क्या यह संभव है? क्या ऐसा हो सकता है? माँ, आप क्या सोचती हैं?”

राम

पिछले कई वर्षों में महाराजजी ने मुझे बार-बार सिखाया है कि मुझे इस बात पर विश्वास रखना चाहिए कि वे मेरे हृदय के माध्यम से मेरा मार्गदर्शन करेंगे। मुझे केवल उस उच्चतर अंतर्ज्ञान को सुनना है। तभी मैं उन्हें सबसे अधिक महसूस कर पाता हूँ। यहाँ एक उदाहरण है कि उन्होंने मुझे यह कैसे सिखाया:

वृंदावन के साधुओं में एक सुंदर युवक साधु था जो थोड़ी-बहुत अंग्रेजी बोलता था और महाराजजी के कई पश्चिमी भक्तों से उसकी मित्रता थी। वह उन्हें शहर के आसपास तीर्थयात्रा पर ले जाता था, उन्हें एकांत मंदिर और विशेष पवित्र स्थान दिखाता था। शाम को कभी-कभी पश्चिमी भक्त उसके साथ जप करते थे।

मुझे बार-बार आमंत्रित किया गया, लेकिन मुझे भाग लेने की कोई इच्छा नहीं हुई; प्रतिदिन महाराजजी के निकट रहना ही मेरे लिए पर्याप्त था। बाकी समय मैं इधर-उधर घूमने और उनके तथा उस दिन की यात्रा में घटी घटनाओं के बारे में सोचने में ही संतुष्ट रहता था।

लेकिन वह युवा साधु मुझे लगातार संदेश भेजकर सभाओं में आमंत्रित करता रहा, जिसे मैं हर बार अस्वीकार करता रहा। एक शाम एक पश्चिमी व्यक्ति पत्तों से भरी थाली लेकर आया, जिसमें वह भोजन था जो साधु ने मेरे लिए भेजा था। इस तरह के ध्यान ने मुझे असहज कर दिया। मुझे उसके इरादों पर संदेह हुआ, और साथ ही मुझे उस पर अविश्वास करने के अपने इरादों पर भी संदेह हुआ। शायद मैं मन ही मन उससे प्रतिस्पर्धा कर रहा था।

कुछ समय बाद हम सबको इलाहाबाद जाने को कहा गया, जो लगभग दो सौ मील दूर था। वहाँ हमें एक भक्त के घर में ठहराया गया और हम प्रतिदिन महाराजजी से मिलने जाते थे, जो लगभग एक मील दूर दादा के घर में ठहरे हुए थे। एक बार हम तीनों रिक्शा से दादा के घर पहुँचे। घर के चारों ओर बाड़ लगी थी, जिसमें एक फाटक था और बाड़ के बाहर एक अकेला पेड़ था। जैसे ही हम वहाँ पहुँचे, वृंदावन का वह युवा साधु उस पेड़ के नीचे बैठा था। हम दोनों पश्चिमी लोग, जो उससे स्नेह करते थे, रिक्शा से उतरे, दौड़े और उसे प्रणाम किया। रिक्शा का किराया चुकाने के बाद मैं फाटक पर आया। उसी क्षण साधु उठ खड़ा हुआ और हमने एक-दूसरे को प्रणाम किया। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि वह फाटक के बाहर क्यों बैठा था। अगर वह महाराजजी से मिलने आया था तो वह बाकी लोगों के साथ अंदर क्यों नहीं बैठा था? शायद वह किसी ऐसे संप्रदाय का था जिसे घर में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। या शायद उसे अंदर आने के लिए आमंत्रित किया जाना आवश्यक था। अब जब वह खड़ा हो गया था, तो क्या मुझे उसे अंदर आने के लिए आमंत्रित करना चाहिए था? मैं उसे अनदेखा करके अंदर नहीं जा सकती थी और उसे वहीं नहीं छोड़ सकती थी। फिर भी मेरे मन में कुछ ऐसा था—वही बेचैनी जो मुझे वृंदावन में उसके बारे में हुई थी—जिसने मुझे उसे आमंत्रित करने से रोक रखा था। उसकी पवित्रता पर मेरे अविश्वास ने उसे महाराजजी के पास लाना मेरे लिए असंभव बना दिया था।

हम आमने-सामने खड़े थे और मैं असमंजस में डूबा हुआ था। तभी अचानक एक भारतीय व्यक्ति घर से निकला और बड़े आदर और प्रसन्नता से साधु का स्वागत करते हुए उन्हें अंदर ले गया। तुरंत ही मुझे यह आभास हुआ कि यह साधु वास्तव में पवित्र हैं और मेरी चुप्पी ही मेरी अशुद्धता है। इसलिए मैं चुपके से घर के अंदर चला गया और सामने वाले कमरे में बैठकर भारी मन से दूसरों के साथ गाने लगा। साधु कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। थोड़ी देर बाद मैंने उन्हें गायकों के बीच देखा और फिर वे दोबारा नहीं दिखे। मेरा हृदय अपराधबोध से भारी हो गया था कि मैंने अपनी प्रतिस्पर्धात्मकता या जो भी भावना थी, उसे दूसरों की अशुद्धता के सहज प्रतिबिंब के रूप में अपने भीतर प्रकट होने दिया।

फिर मुझे रसोई में बुलाया गया, जहाँ महाराजजी भारतीय भक्तों से घिरे बैठे थे। मैं उनके चरणों में गिर पड़ा और उन्होंने मेरे सिर पर एक प्रहार किया और भारतीयों से कहा, “राम दास अच्छी तरह बोलते हैं, अच्छे वक्ता हैं, लेकिन लोगों को नहीं समझते।” इन शब्दों का अनुवाद किया गया और मुझे एहसास हुआ कि महाराजजी बाहर हुए दृश्य को अनदेखा नहीं करने वाले थे। मैं केवल उनकी बात से सहमत हो सकता था और अपने अपराधबोध और अपवित्रता की भावनाओं में और अधिक डूबता चला गया। महाराजजी ने बार-बार वही बात दोहराई कि यद्यपि मैं अच्छी तरह बोल सकता हूँ, मैं दूसरों का पारखी नहीं हो सकता। सभी सहमत थे और मुझे प्रेम और दया से देख रहे थे। मैं बार-बार, पूरे मन से, उनकी बात से सहमत होता रहा। अंत में, जब महाराजजी ने उस क्षण का पूरा लाभ उठा लिया, तो उन्होंने कहा, “हाँ, वह लोगों को नहीं समझते। वह उस साधु को अंदर ले आते। और वह व्यक्ति पवित्र नहीं है—वह अपने भक्तों से कुछ चाहता है।” और इतना कहकर उन्होंने मेरे सिर पर एक ज़ोरदार प्रहार किया और खुशी से हँसे। मेरा सिर चकरा गया, और अपराधबोध, आत्मसंदेह और आत्मदया के बादलों के बीच से अचानक समझ का उज्ज्वल सूर्य प्रकट हुआ। महाराजजी अपने अनोखे अंदाज़ में मुझे बता रहे थे कि इस बार मैं सही था। वे मुझे अपने दिल पर भरोसा करना सिखा रहे थे। (आर.डी.)

भक्तों का समर्पण

महाराजजी रामायण की एक आयत अक्सर सुनाते थे, जिसमें राम एक भक्त से कहते हैं, “मित्र, तुम क्यों चिंतित हो? मेरे सामर्थ्य से अपने सभी विचार मुझे सौंप दो, और तुम्हारे सभी हित स्वयं निर्धारित हो जाएंगे।” उन्होंने नैनीताल से अंतिम विदाई के दिन यही आयत सुनाई थी।

राम

एक महत्वपूर्ण व्यक्ति महाराजजी से मिलने आया, लेकिन वित्त मंत्री के साथ बैठक होने के कारण वह बार-बार अपनी घड़ी देख रहा था। महाराजजी उसे टालते रहे, जिससे वह व्यक्ति और भी घबरा गया। अंततः, जब उसे लगा कि उसे निश्चित रूप से देर हो जाएगी, तो महाराजजी ने उसे जाने दिया। वह व्यक्ति तुरंत वहाँ पहुँचा, लेकिन उसे पता चला कि उसकी बैठक स्थगित हो चुकी है।

राम

आम तौर पर जब महाराजजी सात-आठ दिन मेरे घर पर रहते थे, तो दूसरे भक्त भी वहाँ होते थे, लेकिन उस रात कोई नहीं था। आधी रात हो चुकी थी और मैं थका हुआ था, लेकिन महाराजजी अभी भी बातें करना चाहते थे, इसलिए मैं उनके पैर दबा रहा था। तभी वे खर्राटे लेने

लगे। मुझे लगा कि वे सो गए हैं और मैंने अपने बिस्तर पर जाने का फैसला किया। मैं चुपचाप उठने लगा, तभी खर्राटों के बीच से उन्होंने कहा, “सूरज, तुम कहाँ जा रहे हो?” तो मैं फिर से बैठ गया। बार-बार वही हुआ। आखिरकार, मैंने सोने के बजाय पूरी रात यहीं रहने का निश्चय किया। उसी क्षण महाराजजी ने कहा, “सूरज, जाओ और सो जाओ।”

राम

एक बार मैं इस मन में लीन था कि महाराजजी जो भी कहेंगे, मैं साधना के रूप में वही करूंगा। उनके वचन का तुरंत पालन करूंगा! उस समय मैं कैंची के पीछे पहाड़ी पर रहता था। चूंकि वहां एक छोटा सा गांव था, वहां तक पहुंचने में बीस मिनट का सीधा रास्ता था, इसलिए मुझे हमेशा दर्शन जल्दी छोड़कर जाना पड़ता था ताकि अंधेरा होने से पहले उठ सकूं, जब सांप निकलते हैं। एक बार हम सब महाराजजी के चारों ओर बैठे थे, एक अद्भुत, प्रेमपूर्ण दर्शन में। बस अभी तक नहीं आई थी। तभी महाराजजी ने मेरी ओर मुड़कर कहा, "जाओ।" मैं पूरी तरह आज्ञाकारी था, फिर भी उजाला था; बाकी सब लोग वहीं थे, और वे मुझे तुरंत पहाड़ पर जाने के लिए कह रहे थे। उस दोपहर मुझे जाने में बहुत देर लगी, और वे मेरी इस परेशानी को मुस्कुराते हुए देख रहे थे।

राम

दादा के घर पर महाराजजी हम सबको अलग-अलग जगहों पर जाने के लिए कह रहे थे। मेरे सामने विश्वंभर बैठे थे, जिनके साथ मैंने भारत आने से पहले भी काफी यात्राएँ की थीं। महाराजजी ने विश्वंभर को बनारस जाने के लिए कहा। मैं वहाँ नहीं जाना चाहता था क्योंकि मैं कुछ समय अकेले बिताना चाहता था। लेकिन जब मैं उनके पास पहुँचा, तो महाराजजी ने कहा, “बनारस जाइए।”

मैंने कहा, "क्या मैं अयोध्या नहीं जा सकता?"

उन्होंने कहा, “नहीं, बनारस जाओ।” मैं इतना मूर्ख था कि मैंने सोचा कि मैं अयोध्या जा सकता हूँ, जबकि उन्होंने मुझे साफ़ मना किया था। मैं रेलवे स्टेशन गया और अयोध्या जाने वाली फैजाबाद एक्सप्रेस का टिकट लिया। मैंने सोचा कि चूंकि यह एक त्रिकोण जैसा है, तो मैं अयोध्या होते हुए बनारस जा सकता हूँ। मैंने दोपहर 3:00 बजे पटरी 10 पर आने वाली ट्रेन का टिकट लिया। मैं समय रहते पटरी 10 पर पहुँच गया, लेकिन जब शाम 4:00 बजे तक कोई ट्रेन नहीं आई, तो मैंने किसी से पूछने का फैसला किया। कंडक्टर ने बताया कि फैजाबाद एक्सप्रेस आज पटरी 8 पर आई थी; इसकी घोषणा हिंदी में की गई थी, जो मुझे नहीं आती। इसलिए मेरी ट्रेन छूट गई।

मैं वहीं खड़ा सोच रहा था कि आगे क्या करूँ, तभी मेरे पीछे एक ट्रेन आकर रुकी। मैंने पीछे मुड़कर देखा तो डिब्बों पर "बनारस एक्सप्रेस" लिखा था। तो मैं बनारस चला गया। बनारस काफी बड़ा शहर है, जिसमें बहुत सारे होटल हैं, लेकिन मैंने एक दोस्त की सलाह पर एक सस्ता होटल चुना और चेक-इन किया। कमरे में बैठे-बैठे ही मुझे किसी के चालीसा गाने की आवाज़ सुनाई दी। पता चला कि वो विश्वंभर थे। तो मैंने भी उनकी स्तुति की और हमने एक हफ़्ता साथ बिताया, इस दौरान हम बहुत करीब आ गए।

राम

हम दिल्ली में सोनी परिवार के घर पर आयोजित एक पार्टी में थे, जो महाराजजी के पुराने भक्त थे। श्री सोनी भारत के वन विभाग के प्रमुख थे, और पार्टी में न केवल भक्त बल्कि सरकार के लोग और परिवार के सदस्य भी मौजूद थे। यह एक पारंपरिक कॉकटेल पार्टी थी, और श्रीमती सोनी कैनपेस की एक ट्रे लेकर घूम रही थीं। जब वह मेरे पास आईं, तो उन्होंने कहा, "मुझे पिछली रात एक सपना आया और जब मैं उससे जागी तो मुझे पता चला कि महाराजजी चाहते हैं कि मैं आपको कुछ बताऊं।"

"हाँ?"

फिर अपनी गहरी, खूबसूरत आँखों से मेरी ओर देखते हुए, और कॉकटेल पार्टी के माहौल से बिल्कुल अलग लहजे में बोलते हुए, उन्होंने अत्यंत गंभीरता से कहा, “आप जानते हैं, महाराजजी पूर्ण समर्पण की मांग करते हैं।” एक क्षण बाद, मानो किसी सपने से जागते हुए, उन्होंने मधुरता से पूछा, “क्या आप इनमें से एक कैनपेस नहीं खाएँगे? ये विशेष रूप से स्वादिष्ट हैं।” और फिर वे चली गईं। (आर.डी.)

राम

हम पहाड़ों में कैंची में महाराजजी से मिलने गए थे। आठ साल पुरानी वीडब्ल्यू बस हर दिन बड़ी मेहनत कर रही थी, सुबह पश्चिमी श्रद्धालुओं को नैनीताल से नीचे कैंची तक और शाम को वापस ऊपर ले जाती थी। जल्द ही वीडब्ल्यू में श्रद्धालुओं की संख्या कम पड़ने लगी और कुछ को सार्वजनिक बस से जाना पड़ा, लेकिन फिर भी लगभग बीस लोग वीडब्ल्यू में या ऊपर लगे रैक पर किसी तरह जगह बना लेते थे, और वीडब्ल्यू अपनी मर्जी से चलती रहती थी। लेकिन एक दिन, भोवाली कस्बे में ही वीडब्ल्यू रुक गई। वह दोबारा स्टार्ट नहीं हुई। तो हमने उसे वहीं छोड़ दिया और अगले दिन महाराजजी को बताया। उन्होंने कहा, "इसे दिल्ली ले चलो।" दिल्ली तक, एक सौ नब्बे मील दूर? यह मुझे बेतुका लगा। क्या कोई स्थानीय मैकेनिक इसे ठीक नहीं कर सकता था? वे बस इतना ही कहते रहे, "इसे दिल्ली ले चलो।"

उस शाम नैनीताल लौटकर मैंने होटल के मालिक साह परिवार से बात की। वे एक मैकेनिक को जानते थे, और मैंने उसे कार देखने के लिए भेजा। एक दिन बाद उसने कार देखी, लेकिन वह स्टार्ट नहीं हुई। तो मैंने फिर महाराजजी को बताया और उन्होंने फिर से कहा, "इसे दिल्ली ले जाओ।" तब मैंने उन्हें बताया कि अल्मोड़ा में, जो तीस मील दूर है, एक जर्मन आर्थिक परियोजना चल रही है और वे वीडब्ल्यू कारें इस्तेमाल करते हैं और उनके पास एक मैकेनिक है। शायद मैं उसे यहाँ बुला सकूँ। महाराजजी ने फिर कहा, "इसे दिल्ली ले जाओ।"

मैंने अल्मोड़ा के लोगों को पत्र लिखकर जर्मन मरम्मत केंद्र से संपर्क करने को कहा। दो सप्ताह से अधिक समय तक पत्रों के आदान-प्रदान के बाद यह स्पष्ट हो गया कि किसी भी प्रलोभन से मैकेनिक भोवाली नहीं आएगा और अगर मैं उसे अल्मोड़ा ले भी जाऊं तो भी वे उसे देखने में रुचि नहीं रखते। मैंने महाराजजी को यह सब बताया, और आप उनकी प्रतिक्रिया का अनुमान लगा सकते हैं: "इसे दिल्ली ले जाओ।"

तो मैं फिर से नैनीताल के मैकेनिक के पास गया और उसने फिर से गाड़ी देखी। इस बार उसने गाड़ी को ठीक कर लिया और नैनीताल तक ले आया, लेकिन कस्बे के बाहरी इलाके में जाकर वह रुक गई और दोबारा चालू नहीं हो पाई। मैंने उत्साह से महाराजजी को इस प्रगति की

सूचना दी, लेकिन उनके निर्देश नहीं बदले थे।

गाड़ी खराब हुए अब चार हफ्ते से ज़्यादा हो चुके थे और यह साफ़ हो गया था कि नैनीताल का मैकेनिक उसे ठीक नहीं कर सकता। कोई और चारा न होने के कारण, उसे दिल्ली ले जाने का फ़ैसला किया गया। सिख ड्राइवरों के साथ एक ट्रक किराए पर लिया गया और गाड़ी को उसमें लाद दिया गया। कृष्णा दास को साथ लेकर वे दिल्ली के लिए रवाना हुए। कृष्णा दास ने सफ़र के रोंगटे खड़े कर देने वाले किस्से सुनाए—शराब पीने के किस्से, एक ट्रक से दूसरे ट्रक में गाड़ी को ले जाने के किस्से, और भी बहुत कुछ—लेकिन आख़िरकार गाड़ी दिल्ली में मैकेनिक के पास पहुँच गई। गाड़ी को ट्रक से उतारा गया और मैकेनिक पास आया, इंजन खोला, एक नज़र डाली, एक तार जोड़ा, और गाड़ी स्टार्ट हो गई और एकदम सही चलने लगी।

उसके बाद, मेरे आत्मसमर्पण न करने के भाव का पर्याय बन गया शब्द था, "इसे दिल्ली ले चलो।" (आर.डी.)

आत्मसमर्पण न करने का कर्मफल

जैसे किसी बच्चे को कोई काम न करने के लिए कहा जाता है, भले ही उसके परिणाम स्पष्ट हों, वैसे ही महाराजजी लोगों को इधर-उधर की बातें कहकर आगाह करते थे। लेकिन जब बच्चा वही काम करने पर अड़ा रहता था और उसके परिणाम भुगतने पड़ते थे, तो महाराजजी के भक्त अक्सर उनकी बातों को अनसुना कर देते थे और महाराजजी देखते रहते थे... और होने देते थे। कभी-कभी वे कहते थे, "मैंने तुम्हें पहले ही कहा था।"

एक बार महाराजजी ने मंदिर में अपने मित्र से मिलने आए एक व्यक्ति को फटकार लगाई और उसे अपने ट्रक में खाना लेकर तुरंत घर जाने को कहा। उस व्यक्ति को बुरा लगा क्योंकि उसे लगा कि महाराजजी उसका अपमान कर रहे हैं। रात काफी हो चुकी थी इसलिए वह मंदिर के बाहर अपने ट्रक में ही सो गया। जब वह घर लौटा तो उसने पाया कि रात में उसके घर में चोरी हो गई थी।

राम

जब महाराजजी और उनके कुछ अनुयायी एक महीने के लिए चित्रकूट के पवित्र नगर में ठहरे हुए थे, तो एक दिन वे उन्हें एक साधु की कुटिया में ले गए, जो एक दुर्लभ जंगली जड़ की बहुत कम मात्रा पर जीवन यापन करता था। वह कभी भोजन नहीं करता था। महाराजजी ने साधु से उस जड़ का एक टुकड़ा मांगा, और साधु ने उन्हें एक छोटा सा टुकड़ा दिया। महाराजजी ने पुकार कर कहा, “इतने कंजूस मत बनो। और दो। मुझे पता है तुम्हारे पास और है।” साधु ने उस बहुमूल्य जड़ के दो बड़े टुकड़े दिए। महाराजजी ने उन्हें कई छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़ दिया और एक को छोड़कर सभी भक्तों को एक-एक टुकड़ा दिया। उन्होंने उस भक्त से कहा कि यह जड़ उसे बहुत नुकसान पहुंचाएगी। उस भक्त ने महाराजजी के प्रसाद में से बस एक छोटा सा टुकड़ा मांगा, तो महाराजजी मान गए और उसे एक टुकड़ा दे दिया।

उसी शाम, महाराजजी और उनके भक्तों ने कीर्तन किया: “श्री राम जय राम, जय जय राम।” महाराजजी सबसे ऊँची आवाज़ में गा रहे थे। जिस भक्त को जड़ न खाने की चेतावनी दी गई थी, वह अचानक बीमार पड़ गया, समूह छोड़कर अपने कमरे में चला गया। थोड़ी देर बाद, महाराजजी भक्त के कमरे में आए, उसे उठाकर खड़ा किया और कीर्तन में वापस ले आए। वह

फिर से बीमार पड़ गया और अपने कमरे में लौट गया। महाराजजी फिर आए और उसे वापस ले आए। कीर्तन सुबह के शुरुआती घंटों तक चलता रहा। इस समय तक, अधिकांश भक्त सो चुके थे, लेकिन महाराजजी गाते रहे। अंत में महाराजजी ने बीमार भक्त को अपने कमरे में जाकर सोने की अनुमति दी। जब वह जागा, तो उसने महाराजजी को बिस्तर के पास बैठे पाया। “अब तुम ठीक हो? मैंने तुमसे जड़ न खाने को कहा था। जब मैं बीमार था, तुम पूरी रात सोए; जब तुम बीमार थे, मैं पूरी रात प्रार्थना करता रहा।”

राम

इलाहाबाद के कुंभ मेले में एक रात महाराजजी अपने तम्बू में दर्शन दे रहे थे। अगले दिन संगम में स्नान करने का सबसे शुभ समय था। महाराजजी के एक भक्त, जो एक पुलिस अधिकारी थे, को लाखों लोगों की सुरक्षा और भीड़ नियंत्रण का जिम्मा सौंपा गया था। उस रात वे महाराजजी के साथ थे, तभी अचानक महाराजजी उठे और बोले, "चलो चलते हैं।" देर रात वे महाराजजी को रेलवे स्टेशन ले गए, जहाँ उन्होंने पश्चिम की ओर जाने वाली ट्रेन का इंतजार किया। पुलिसकर्मी और अन्य लोगों ने महाराजजी को शुभ दिन वहीं रुकने के लिए मनाने की कोशिश की। महाराजजी ने मना कर दिया और उन्हें अगले दिन बहुत सावधान रहने को कहा, क्योंकि उस दिन एक भीषण आपदा आने वाली थी।

महाराजजी चले गए और लोग उनकी बातों को हल्के में लेकर वापस लौट गए। उस सुबह तड़के 4:00 बजे संगम पर हजारों लोग इस विशेष अवसर पर स्नान करने के लिए उमड़ पड़े थे। नाग बाबाओं (नग्न साधुओं) का जुलूस निकल रहा था, तभी पीछे से भीड़ आगे बढ़ने लगी और आगे खड़े लोग जुलूस के बैरियरों में फंस गए। भगदड़ में कई लोग मारे गए और घायल हुए।

राम

लखनऊ पहुँचकर महाराजजी ने कुछ भक्तों को शहर के दूसरे हिस्से में रहने वाले किसी व्यक्ति से मिलने के लिए अपने साथ चलने का सुझाव दिया। महाराजजी ने पैदल चलने का सुझाव दिया और वे तुरंत चल पड़े; लेकिन पहले मोड़ पर भक्तों ने एक घोड़ागाड़ी देखी और उस पर सवार होने का प्रस्ताव रखा। महाराजजी ने यह कहते हुए मना कर दिया, “मैं इस पर नहीं बैठूंगा।” भक्तों ने ज़िद की और तर्क दिया कि कोई और साधन उपलब्ध नहीं है और उनका गंतव्य बहुत दूर है। महाराजजी मान गए और पीछे की ओर मुंह करके सीट पर बैठ गए; ड्राइवर और दोनों भक्त आगे की सीट पर बैठ गए।

जैसे ही घोड़े को चलने के लिए उकसाया गया, वह अपने पिछले पैरों पर उछल पड़ा और गाड़ी का अगला हिस्सा ऊपर उठ गया। चूंकि महाराजजी पीछे बैठे थे, इसलिए वे आसानी से सड़क पर उतर गए। घोड़ा उछलता और लात मारता रहा, जिससे गाड़ी लगभग पलट गई और आगे की सीट पर बैठे यात्री दहशत में आ गए। महाराजजी ने उनसे कहा, “मैंने तुमसे कहा था कि हमें इस तांगे पर नहीं बैठना चाहिए। तुम चढ़ना चाहते थे। अब क्या तुम उतरना चाहते हो?”

राम

जून 1963 में गंज में महाराजजी से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जब उन्होंने मेरे बारे में पूछा, तो मैंने उन्हें बताया कि मैं ऋषिकेश से आ रहा हूँ और वृंदावन जा रहा हूँ। तब उन्होंने कहा, “तुम्हारे गुरुदेव तो वृंदावन के स्वामी के समान ही क्रीड़ा कर रहे हैं। लेकिन वे जल्द ही यह सब

बंद कर देंगे। तुम अपने गुरु को साक्षात भगवान समझते हो, है ना? अब वापस जाओ।" और उन्होंने मेरी यात्रा के लिए धन का प्रबंध किया, लेकिन मुझे पूरी तरह समझ नहीं आया। कई दिनों बाद ही मुझे एक अंग्रेजी अखबार से अपने परम गुरु के रोग के बारे में पता चला। मैं तुरंत ऋषिकेश वापस भागा, और मेरे पहुँचने के पखवाड़े भर के भीतर ही गुरुदेव ने महासमाधि प्राप्त कर ली। बाद में मुझे महाराजजी से मिलने का अवसर मिला, और उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैं समय पर आश्रम पहुँच गया था। और मैंने कृतज्ञतापूर्वक हाँ कहा।

राम

एचआर, जिनकी आंखों में मोतियाबिंद हो गया था, आनंदा मयी मां से मिलने गए, जिन्होंने उन्हें अलीगढ़ जाकर ऑपरेशन करवाने की सलाह दी। लेकिन जब वे लखनऊ में महाराजजी से मिले, तो उन्हें सीतापुर जाकर ऑपरेशन करवाने के लिए कहा गया। एचआर ने मां के निर्देशों का पालन किया, ऑपरेशन करवाया और दोनों आंखों की रोशनी खो दी। इसके बाद भी वे महाराजजी से मिलने आते रहे, जिन पर महाराजजी कहते, "जब मैंने तुम्हें सीतापुर जाने के लिए कहा था, तो तुम अलीगढ़ क्यों गए?"

राम

मेरी शादी के समय, मैं महाराजजी के पास गई और उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं वहाँ कैसे जाऊँगी। मैंने उन्हें बस से जाने का सुझाव दिया, लेकिन उन्होंने कहा, "नहीं, ट्रेन से जाओ।" मैं अपनी बात पर अड़ी रही, क्योंकि शादी का जुलूस था और सारी योजनाएँ बन चुकी थीं, इसलिए मैंने मना कर दिया। तब महाराजजी ने मुझसे बस का रूट पूछा। उन्होंने मुझसे रूट बदलने और रात वहीं रुकने का अनुरोध किया और सुबह निकलने का सही समय बताने को कहा। मैंने उनकी बात मानकर योजना का पालन किया, लेकिन फिर भी मैं बस से ही गई। बस यात्रा के दौरान, बस दो बार पलट गई, और हालाँकि अंदर धातु के ढीले बक्से इधर-उधर लुढ़क रहे थे, किसी को चोट नहीं आई। हम सभी को ड्राइवर की खिड़की से बाहर निकलना पड़ा। जब हम वापस लौटे, तो महाराजजी ने एक जीप भेजी और हमारा स्वागत किया।

राम

एक भक्त ने कहा, "अगर आप किसी संत की उपस्थिति में हैं, तो यह बहुत मुश्किल है। अगर आप उनकी अवज्ञा करते हैं, तो निश्चित रूप से कष्ट भोगना पड़ता है।"

राम

मुझे याद है एक दिन मैं महाराजजी के साथ था जब उन्हें बताया गया कि किसी ने उनके नाम का इस्तेमाल करके एक ऐसे स्कूल के लिए चंदा इकट्ठा किया है जो नेक काम नहीं था, और यह चंदा महाराजजी की अनुमति के बिना लिया गया था। उनकी प्रतिक्रिया मेरे मन में आज भी स्पष्ट रूप से अंकित है और तब से कई बार मुझे उससे जुड़ी तस्वीरें या बुरे सपने आते हैं। उन्होंने कहा, "मैं उसके खिलाफ कुछ नहीं करूंगा। लेकिन उसने जो किया है, उसके लिए वह युगों तक ब्रह्मांड में घूमता रहेगा।"

राम

महाराजजी की सेवा करने वाला एक व्यक्ति अहंकारी हो गया और उसने महाराजजी के कुछ भक्तों का अपमान किया। महाराजजी इतने क्रोधित हुए कि वे बस वहीं बैठे रहे और बंदर की

तरह गुर्राते रहे। उन्होंने उस व्यक्ति को अपने कार्यालय में बुलाया, और फिर लोगों ने देखा कि उस विशालकाय व्यक्ति को दरवाजे से बाहर फेंक दिया गया, जो पाँच फीट दूर एक पत्थर पर जा गिरा। भक्त आरती करने नहीं आया, जैसा कि वह पहले करता था। अगले दिन, महाराजजी सड़क पर थे जब एक कार गुजरी जिसमें वह पति-पत्नी बैठे थे। पत्नी ने प्रणाम किया लेकिन उसने उनकी ओर देखा तक नहीं। कहा जाता है कि महाराजजी ने दुखी होकर कहा, "वह अब कभी मेरे पास वापस नहीं आएगा।" बाद में वह व्यक्ति शराब पीने लगा।

राम

एक शिकारी ने महाराजजी का अपने दोस्तों के सामने मज़ाक उड़ाते हुए कहा था कि वह बाबा के लिए कुछ मांस ला सकता है, जबकि वह जानता था कि महाराजजी शाकाहारी हैं। बाद में, जब शिकारी के दोस्त महाराजजी के भक्त बन गए, तो शिकारी ने महाराजजी से मिलने की कोशिश की। लेकिन पाँच साल तक वह कभी भी सही समय पर सही जगह पर नहीं पहुँच पाया, जबकि उसकी पत्नी और बच्चे उनके दर्शन कर चुके थे। अंत में, महाराजजी के साथ रहने वाली एक माता ने हस्तक्षेप किया, और महाराजजी ने कहा, "ठीक है।" तब वह महाराजजी से मिलने में सफल हो गया।

राम

कई साल पहले, नीब करोरी गाँव में एक वार्षिक मेले में, एक बाबा क्रोधित हो गए और उन्होंने महाराजजी को श्राप दे दिया। महाराजजी ने लोटे से दूध की निरंतर धारा बहाकर उन्हें अपमानित किया था। बाबा के श्राप के फलस्वरूप अगले वर्ष गाँव में चक्रवात आया, और उसके बाद हर वर्ष तूफान आता रहा। लेकिन गाँववाले जानते थे कि यदि वे महाराजजी का नाम लें, तो कुछ भी बुरा नहीं होगा। कहा जाता है कि महाराजजी ने उस बाबा को श्राप दिया था: "ईश्वर तुम्हारी जीभ काटकर तुम्हें दंडित करेगा।" कुछ वर्षों बाद, वह फर्रुखाबाद में मृत पाया गया, उसकी जीभ कटी हुई थी।

राम

एक दिन नीब करोरी में एक व्यक्ति महाराजजी के पास यह शिकायत लेकर आया कि उसका कोई पुत्र नहीं है। उसने मंदिर बनवाने और कुआँ खुदवाने का वादा किया, और महाराजजी ने उसे ईश्वर का आशीर्वाद दिया। पुत्र के जन्म के बाद भी उस व्यक्ति ने कुछ नहीं किया। महाराजजी ने कहा, “इस मामले में मेरा क्या लेना-देना?” कुछ ही समय बाद, उस व्यक्ति का घर जलकर राख हो गया, जिससे उसकी सारी संपत्ति और धन नष्ट हो गया।

राम

जिस कस्बे में महाराजजी ठहरे हुए थे, वहाँ एक बूढ़ा व्यक्ति अंधा हो गया था। लोग महाराजजी से इलाज के बारे में बात कर रहे थे, और महाराजजी ने कहा, “समर्थ गुरु राम दास ने अपनी माताजी का अंधापन दूर किया था, लेकिन अब उनके जैसे संत नहीं रहे।” फिर महाराजजी ने एक अनार मंगवाया, उसे निचोड़ा और उसका रस पी लिया। इसके बाद उन्होंने अपना कंबल अपने चेहरे पर डाला और लोगों ने देखा कि कंबल के नीचे से उनकी दोनों आँखों से खून निकल रहा था। महाराजजी ने उस अंधे व्यक्ति से कहा कि यदि ईश्वर उनकी दृष्टि लौटा दे, तो उन्हें व्यापार छोड़कर अपना जीवन आध्यात्मिक साधना में लगा देना चाहिए। कुछ ही समय बाद उस

व्यक्ति की दृष्टि वापस आ गई।

डॉक्टर आए और उन्होंने आंखों की जांच की और कहा, "यह तो नामुमकिन है! ये किसने किया?" लोगों ने बताया कि ये महाराजजी ने किया है और डॉक्टर उन्हें ढूंढने के लिए रेलवे स्टेशन की ओर दौड़े। महाराजजी पहले से ही गाड़ी में सवार थे और डॉक्टर कूदकर अंदर गए और प्रणाम किया। महाराजजी बार-बार कह रहे थे, "ये वही डॉक्टर हैं जिन्होंने इस आदमी का अंधापन ठीक किया था। ये बहुत अच्छे डॉक्टर हैं, बहुत अच्छे डॉक्टर।" लेकिन तीन-चार महीने बाद, बूढ़ा आदमी खुद को रोक नहीं पाया और काम पर लौट गया और लगभग तुरंत ही उसकी दृष्टि फिर से चली गई।

राम

एक भारतीय श्रद्धालु के खाली घर में बड़ी संख्या में पश्चिमी लोग ठहरे हुए थे। हमने उस घर को पूरी तरह भर दिया था। हर दिन हम दादा के घर जाते, जहाँ महाराजजी ठहरे हुए थे; वहाँ हम उनसे मिलते और खूब भोजन, मिठाइयाँ और चाय पीते। लेकिन फिर महाराजजी ने हमसे मिलना बंद कर दिया। हम हर दिन दादा के घर जाते और भोजन करते; लेकिन महाराजजी के दर्शन के बिना, इसका आकर्षण खत्म हो गया था। हालाँकि मुझे उनके साथ रहना अच्छा लगता था, लेकिन मुझे अपने लिए इतना बुरा नहीं लगता था, पर कई पश्चिमी लोग अभी-अभी आए थे, और उनमें से कई तो अभी तक महाराजजी से मिले भी नहीं थे। वे दिन-रात हमारा पीछा करते, घर-घर जाते, लेकिन मुझे समझ आ रहा था कि जल्द ही वे इस खेल से ऊब जाएँगे और चले जाएँगे। लेकिन मैं कुछ नहीं कर सकता था।

फिर एक दिन मुझे महाराजजी के कमरे में बुलाया गया और कहा गया, "राम दास, सेनापति, कल शाम छह बजे तक किसी को भी यहाँ मत लाना।" मुझे आदेश मिल चुका था, और जब हम अपने कमरे में लौटे तो मैंने घोषणा की कि हम अगले दिन छह बजे तक महाराजजी के पास नहीं जाएँगे। अगली शाम सभी नए लोग और अधिकांश पुराने भक्त आदेशानुसार छह बजे पहुँच गए। हमने पाया कि कुछ पुराने भक्तों ने मेरे निर्देशों की अवहेलना की थी और वे चार बजे ही आ गए थे। इन लोगों को भोजन कराया गया था; लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होंने महाराजजी के साथ लंबा समय बिताया था। और जब हम छह बजे पहुँचे, तो भोजन होने के बावजूद हमें उनसे मिलने की अनुमति नहीं दी गई।

उस शाम देर से मुझे फिर महाराजजी से मिलने बुलाया गया। इस बार वे मुझसे नाराज़ लग रहे थे और बोले, "राम दास, आज तो लोग चार बजे ही आ गए थे। कल मैं नहीं चाहता कि कोई भी छह बजे तक आए।" जब हम अपने कमरे में लौटे तो मैंने उनकी इच्छाएँ उन्हें बता दीं, विशेष रूप से उन लोगों को जिन्होंने मेरी बात अनसुनी कर दी थी।

अगले दिन स्थिति और भी बदतर हो गई। न केवल वे उपद्रवी जो पहले चार बजे गए थे, बल्कि अब विद्रोह फैल रहा था और अन्य पुराने भक्त भी उनके साथ शामिल हो गए थे। मैं छह बजे नए भक्तों के साथ पहुँचा, जो अब भी मानते थे कि मेरे आदेशों का पालन किया जाना चाहिए, और कुछ पुराने भक्त भी मेरे साथ थे। और फिर से हमें उसी स्थिति का सामना करना पड़ा। जो समूह चार बजे गया था, उसे महाराजजी के दर्शन का लंबा समय मिला, और हमें एक पल भी नहीं मिला। मुझे गुस्सा आने लगा था।

अगले दिन ऐसा कोई निर्देश नहीं आया, और हम सब जल्दी आ गए, लेकिन हमें बैठक में ही गाने के लिए कहा गया जबकि महाराजजी रसोई में भारतीय भक्तों के साथ रहे। कुछ समय बाद खबर आई कि महाराजजी महिलाओं से मिलेंगे, और वे सब उनके दर्शन के लिए कमरे से बाहर दौड़ पड़ीं। कुछ समय बाद, जब हमें गाना जारी रखना था, खबर आई कि आधे पुरुषों को दर्शन के लिए आना है। बेशक, सभी जाना चाहते थे, लेकिन विनम्र और धर्मात्मा लोग और कुछ नए लोग मेरे साथ पीछे रह गए, और हम दूसरे कमरे में हो रही हंसी और बातचीत को ईर्ष्या से सुनते हुए धीरे-धीरे गाना गाते रहे।

फिर खबर आई कि महाराजजी उस शाम किसी और से नहीं मिलेंगे। इस मनमानी पर मुझे बहुत गुस्सा आया। कुछ नए भक्तों को, जिन्होंने इंतज़ार करने की कृपा की थी, दर्शन न मिलना घोर अन्यायपूर्ण लगा, और मैंने दादाजी से मिलकर अपनी नाराज़गी ज़ाहिर की। मेरा गुस्सा साफ झलक रहा था, और दादाजी ने कहा, "मुझे लगता है कि तुम्हें महाराजजी को खुद ही बता देना चाहिए।"

मैंने कहा, "मैं करूँगा।"

दादा महाराजजी के कमरे में गए और थोड़ी देर बाद मुझे भी अंदर बुलाया गया। वहाँ हम तीनों ही थे। महाराजजी ने मेरी तरफ देखा और पूछा, "क्या?"

मुझे पता था कि उन्हें मेरे मन की बात पता है, और मैं किसी तरह के खेल के मूड में नहीं थी, इसलिए मैंने कहा, "महाराज जी, आप मेरे दिल की बात जानते हैं।" लेकिन वे मुझसे स्पष्टीकरण मांगने से पीछे नहीं हटे, और उन्होंने बस दोहराया, "क्या?"

मैंने कहा, “महाराज जी, आप अन्याय कर रहे हैं।” और फिर मैंने उन्हें उन नए भक्तों के बारे में बताया जो उन्हें देख नहीं पा रहे थे। अपनी बात खत्म करने के बाद मैं घुटनों के बल बैठ गया और इंतज़ार करने लगा। शायद मुझे लगा कि मुझे स्पष्टीकरण मिलना चाहिए और मैं उसी का इंतज़ार कर रहा था। आखिर महाराज जी मेरे गुरु-मार्गदर्शिका में लिखे नियमों का पालन नहीं कर रहे थे।

उन्होंने मुझे हैरानी से देखा, दादा की ओर ऐसे देखा जैसे उन्हें कुछ समझ ही न आया हो, फिर आगे बढ़कर मेरी दाढ़ी को झटका दिया और बोले, "अरे, राम दास गुस्सा हैं।" बस इतना ही। फिर उन्होंने सीधे मेरी आँखों में देखा और हमारी निगाहें एक-दूसरे पर टिक गईं।

उन पलों में मुझे अपनी दुविधा स्पष्ट रूप से समझ आ गई। महाराजजी ने न तो "तर्कसंगत" व्यवहार किया था और न ही कम से कम "निष्पक्ष" तरीके से, और वे इसके लिए माफी भी नहीं मांग रहे थे। मेरे पास एक विकल्प था। मैं उठकर कमरे से बाहर जा सकता था और उन्हें छोड़ सकता था, इस स्थिति में मेरे पास मेरा धर्म तो होता—लेकिन कोई गुरु नहीं। या मैं उनकी अतार्किकता और अन्याय के आगे आत्मसमर्पण कर सकता था, यह जानते हुए कि वे जानते थे और मैं नहीं। मैंने सिर झुकाया, उनके चरणों में सिर रखा और फिर से आत्मसमर्पण कर दिया। (आर.डी.)

वीज़ा कर्म

पश्चिमी देशों के लोगों के लिए, महाराजजी के साथ हमारा समय अक्सर वीज़ा और परमिट के मामलों के इर्द-गिर्द ही घूमता था। लाखों भूखे लोगों से पहले से ही बोझिल देश में मेहमान होने के

नाते, हम जैसे कम बजट वाले आध्यात्मिक साधक पर्यटक आबादी का सबसे पसंदीदा हिस्सा नहीं थे। इसलिए हम हर तीन महीने में काफी समय दूरदराज के गांवों और शहरों में बिताते थे, ताकि ऐसे मित्रवत आव्रजन अधिकारियों को खोज सकें जो हमारे वीज़ा की अवधि बढ़ा दें।

महाराजजी अंतिम उपाय के रूप में मौजूद थे, जो जरूरत पड़ने पर हमें किसी भक्त के पास भेज देते थे, शायद किसी शहर के पुलिस प्रमुख या दिल्ली के किसी सरकारी मंत्री के पास, और रहस्यमय तरीके से वीज़ा का विस्तार हो जाता था... आमतौर पर। लेकिन कभी-कभी महाराजजी किसी भक्त को इधर-उधर भेज देते थे और कुछ भी काम नहीं आता था। इस तरह वीज़ा विभाग के कठोर प्रतिरोध के सामने महाराजजी पूरी तरह से बेअसर प्रतीत होते थे, और भक्त को या तो वापस अमेरिका भेज दिया जाता था या फिर नेपाल भेज दिया जाता था ताकि वह बाद में भारत में फिर से प्रवेश कर सके।

वीज़ा की इस प्रक्रिया ने सांसारिक और आध्यात्मिक राजाओं की सापेक्षिक शक्ति को लेकर संदेह और भ्रम को और बढ़ा दिया। हालाँकि, हममें से अधिकांश ने इसे महाराजजी द्वारा हमारी आसक्ति के साथ एक और खेल के रूप में देखा और एक ऐसी स्थिति के रूप में समझा जिसमें हमें समर्पण करना सीखना था।

जब मैंने उनसे वीज़ा के बारे में पूछा, तो उन्होंने पहले मुझे कानपुर जाने को कहा। फिर उन्होंने कहा, “नहीं, कानपुर मत जाओ। मथुरा जाओ। नहीं, लखनऊ जाओ।” उन्होंने लगभग दो मिनट में मुझे तीन अलग-अलग जगहों के नाम बता दिए। फिर उन्होंने कहा, “तुम कहीं भी जाओ, कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि वे तुम्हें वैसे भी बाहर निकाल देंगे”—और, ज़ाहिर है, उन्होंने ऐसा ही किया।

एक बार मुझे अपने वीज़ा की चिंता सताने लगी और मैंने महाराजजी से बार-बार पूछना शुरू कर दिया। वे “कार्यालय” में थे और दादाजी और मैं खिड़की से उनसे बात कर रहे थे। मैं बार-बार पूछ रहा था, “मैं कहाँ जाऊँ? वीज़ा की अवधि लगभग समाप्त हो चुकी है। मैं कहाँ जाऊँ? मैं क्या करूँ?” महाराजजी ने मुझे कुछ नहीं बताया, लेकिन जब मैं उनसे बार-बार पूछ रहा था, तो उन्होंने अपना सिर हाथों में थाम लिया। दादाजी यह सब देख रहे थे और उन्होंने मेरे कान में फुसफुसाकर कहा, “यहाँ से निकल जाओ। अभी तुरंत निकल जाओ वरना वे तुम्हें वापस अमेरिका भेज देंगे। खिड़की से दूर हट जाओ।”

बाद में, ज़ाहिर है, सब कुछ ठीक हो गया—यह उन चमत्कारिक कहानियों में से एक थी: वीज़ा की अवधि के आखिरी दिन ट्रेन छूटने से ठीक पहले मुझे उसमें बैठने का मौका मिला; वीज़ा कार्यालय में मुझे बताया गया कि वीज़ा का नवीनीकरण असंभव है; मैं फूट-फूटकर रोने लगी; और अधिकारी ने कहा, "एक चीज़ है जो मैं कर सकता हूँ।" मैं भारत में दो साल तक रही। जैसा कि ताओ ते चिंग में कहा गया है, "कार्य करते समय समय का ध्यान रखें।"

जब मैं महाराजजी आया तो मेरे वीजा की अवधि तीन महीने बढ़ चुकी थी। लेकिन सब कुछ सुचारू रूप से चलता रहा। मुझे वीजा कार्यालय से कोई समस्या नहीं हुई।

एक बार फिर वीडब्ल्यू बस के लिए छह महीने का परमिट बढ़ाने के लिए आवेदन करने का समय आ गया था। पिछली बसंत में जो पहला छह महीने का परमिट मुझे मिला था, वह डेढ़ हफ्ते की परेशानी और सैकड़ों डॉलर के खर्चे के बाद मिला था। अब वीडब्ल्यू बस थक चुकी थी, और मैं भी, और मैं बस इसे भारत सरकार को देना चाहता था। लेकिन महाराजजी मेरी बात सुनने को तैयार नहीं थे। मेरी भौतिक मोहभंग करते हुए, वे परमिट बढ़ाने पर अड़े रहे। इसलिए मैं वित्त मंत्रालय से उस कार को रखने के लिए लड़ रहा था जिसे मैं चाहता भी नहीं था। और उन्हें यह समझाना कि मैं अपने गुरु के आदेश पर ऐसा कर रहा हूँ, मुझे कोई सहानुभूतिपूर्ण श्रोता नहीं मिला। परमिट का विस्तार, जिसमें आम तौर पर कुछ दिन लगने चाहिए, लगभग तीन हफ्ते लग गए। इसके लिए कम से कम तेईस हस्ताक्षरों की आवश्यकता थी, जिनमें से अंतिम हस्ताक्षर स्वयं वित्त मंत्री के थे। इसका मतलब था कि प्रधानमंत्री के मंत्रिमंडल के एक सदस्य को व्यक्तिगत रूप से हस्ताक्षर करने पड़े ताकि मुझे उस खस्ताहाल 1964 वीडब्ल्यू बस को छह और महीनों के लिए रखने की अनुमति मिल सके। बेशक, यह उस शुल्क के अतिरिक्त था जिसका भुगतान करना आवश्यक था, जो अब तक कार के मूल्य के बराबर हो चुका था।

शुरुआती कुछ दिनों में, मैंने परमिट एक्सटेंशन पाने के लिए तर्क, दृढ़ता और "उचित क्रोध" जैसे तरीकों का इस्तेमाल किया। लेकिन इनमें से कुछ भी कारगर नहीं हुआ। एक बार, "अपने देश में किसी मेहमान के साथ ऐसा बर्ताव करना ठीक नहीं है" कहते हुए गुस्से में एक दफ्तर से बाहर निकलने के बाद, मैं अपने होटल वापस गया और महसूस किया कि इस तरह गुस्सा करने से मैंने एक मौका गंवा दिया, क्योंकि उस दफ्तर से बचने का कोई रास्ता नहीं था। इसलिए अगले दिन मुझे वापस जाकर माफी मांगनी पड़ी।

और ऐसा ही चलता रहा। कभी तो जिस व्यक्ति के हस्ताक्षर की आवश्यकता थी, वह कुछ दिनों के लिए अपने भतीजे की शादी में गया हुआ था; कभी आवेदन पत्र कहीं खो जाता, कभी कर पर सहमति नहीं बन पाती, कभी मुझे कार के मूल्य के दो स्वतंत्र आकलन की आवश्यकता होती... हर दिन दफ्तर जाना ज़रूरी था, वरना आवेदन उस विशाल नौकरशाही तंत्र में कहीं खो जाता, जो पहले से ही फर्श से छत तक फाइलों और कागजों के ढेर से बुरी तरह भरा हुआ था। दिल्ली से बाहर जाने का कोई रास्ता नहीं था।

संपत्ति के बारे में क्या ही ज्ञानवर्धक शिक्षा है! कार चाहे कितनी भी सुविधाजनक क्यों न हो, यह सब कुछ... कार-मम्मी के लायक नहीं थी। मुझे ऐसा लग रहा था जैसे महाराजजी मेरी “ईंटों के ढेर” पर हंस रहे हों।

हालांकि, इस सबमें एक दिलचस्प और अप्रत्याशित सीख छिपी थी। जब तक हमें कार के लिए मंजूरी नहीं मिली, हम एक बेहद पुराने, कुछ हद तक हिप्पी जैसे होटल में ठहरे हुए थे। शुरुआत में हम अपने बैकपैक से ही गुजारा कर रहे थे, हर दिन दिल्ली छोड़कर किसी "पवित्र स्थान" पर जाने की उम्मीद में। लेकिन जैसे-जैसे यह थका देने वाली प्रक्रिया आगे बढ़ती गई, हम वहां सहज महसूस करने लगे। दिल्ली से गुजरने वाले अधिक से अधिक पश्चिमी लोग हमारे कमरे में आने लगे, यहाँ तक कि हर दिन तीस या उससे अधिक लोगों का सत्संग होता था, जिसमें हम जप करते, ध्यान लगाते और आध्यात्मिक विषयों पर चर्चा करते थे। जल्द ही लोग भारतीय चादरें दीवारों पर टांगने लगे, तस्वीरें और फल भी लाने लगे। होटल के मालिक की पत्नी तो हमारे पूजा

के दीयों के लिए घी भी तैयार कर रही थी। आखिरकार हम आध्यात्मिक रूप से इतने मग्न हो गए कि अब यह मायने ही नहीं रखता था कि हम कभी दिल्ली छोड़ेंगे या नहीं। और इसी समय, मेरा वीजा आवेदन जमा हो गया, कार का परमिट मिल गया, और हम वृंदावन (आर.डी.) के लिए रवाना होने के लिए स्वतंत्र थे।

साधना

महाराजजी ने अपने आध्यात्मिक कार्य की शुरुआत बहुत कम उम्र में ही कर दी थी। उन्होंने एक भक्त को बताया कि सात-आठ साल की छोटी उम्र में वे स्कूल छोड़कर जंगल में तपस्या करने चले जाते थे। कुछ जानकारियों से पता चलता है कि उनका जन्म एक जमींदार परिवार में हुआ था जो पत्थर के घर में रहता था, लेकिन उन्होंने बहुत कम उम्र में ही अपने घर की सुरक्षा छोड़कर साधु के रूप में विचरण करना शुरू कर दिया था।

उन वर्षों में वे केवल एक धोती पहनकर यात्रा करते थे और टूटे हुए मिट्टी के घड़े के एक टुकड़े में अपना भोजन और पानी ले जाते थे, जिसे वे टोपी की तरह अपने सिर पर पहनते थे। उस समय उन्हें "हंडी वाला बाबा" के नाम से जाना जाता था।

कुछ समय बाद, उन्होंने अलीगढ़ और मानपुरी के पास समय बिताया, जहाँ वे जल में बैठकर आध्यात्मिक साधना करते थे। स्थानीय निवासी उन्हें तब "टिकोनिया वाला बाबा" के नाम से जानते थे। ("टिकोनिया" का अर्थ है त्रिभुजाकार जलाशय।) संभवतः इसी समय के आसपास उन्होंने नीब करोरी कस्बे में समय बिताना शुरू किया (जिससे बाद में उन्हें वह नाम मिला जिससे हम उन्हें जानते हैं)। वहाँ वे कुछ समय विभिन्न भूमिगत गुफाओं में रहे और कभी-कभी गर्मी के मौसम में बाहर आकर तेज धूप में अग्नि के घेरे में बैठते थे।

1930 के दशक तक वह हिमालय की तलहटी और उत्तरी मैदानों के गांवों में नियमित रूप से प्रकट होने लगे। शुरुआत में, वह बच्चों के साथ खेलते और फिर जंगल में गायब हो जाते। बाद में उन्होंने भारतीय गृहस्थों को उन्हें अपने घरों में भोजन देने की अनुमति देना शुरू कर दिया। इन लोगों ने उनमें एक असाधारण उपस्थिति को जल्दी ही पहचान लिया और उनकी आध्यात्मिक शक्ति और उपचार क्षमताओं के कारण उनका अनुसरण करने लगे।

उन्हें अक्सर हनुमान जी को समर्पित मंदिरों में जाते देखा जाता था; बाद में उन्होंने अपने भक्तों को ऐसे कई मंदिर बनवाने के लिए प्रेरित किया। वे निरंतर धार्मिक तीर्थयात्रा पर प्रतीत होते थे और दूसरों को भी भारत भर के पवित्र तीर्थ स्थलों की यात्रा करने के लिए प्रोत्साहित करते थे। हनुमान और राम के प्रति उनका विशेष लगाव इन नामों के बार-बार जाप और उनके द्वारा सुनाई और सुनाई जाने वाली कहानियों में झलकता था। राम और हनुमान जी के प्रति अपने विशेष लगाव के बावजूद, वे ईश्वर के सभी रूपों का सम्मान करते थे और पूजा के सभी रूपों में सच्ची भावना पाते थे। स्पष्ट है कि उन्होंने अपनी साधना के दौरान कठोर तपस्या की थी। फिर भी उन्होंने बाद में कहा कि ऐसी साधनाएँ आवश्यक नहीं हैं। वे ऐसी साधना करने वालों का सम्मान करते थे, लेकिन अधिकतर अपने भक्तों को लोगों को भोजन कराने और उनकी सेवा करने, धार्मिक जीवन जीने और सबसे बढ़कर, ईश्वर को याद करने और उनसे प्रेम करने के लिए प्रोत्साहित करते थे।

महाराजजी के साधना संबंधी निर्देश प्रत्येक भक्त के लिए विशेष रूप से तैयार किए गए थे।

एक बार मैंने ब्रह्मचारी बाबा से पूछा कि क्या महाराजजी ने उन्हें तपस्या सिखाई थी, और मैंने उन्हें उन तपस्याओं के उदाहरण दिए जो महाराजजी ने स्वयं की थीं, जैसे कि झील में गर्दन तक डूबकर बैठना और ग्रीष्म ऋतु की दोपहर में चार अग्नियों से घिरे हुए सूर्य के प्रकाश में बैठना।

ब्रह्मचारी बाबा ने तुरंत कहा, “नहीं। केवल साधारण चीजें जैसे विभिन्न योगासन, ध्यान और प्राणायाम।” कुछ और पूछताछ करने पर उन्होंने कहा, “महाराज जी ने मुझे मौन रहने को कहा था। मैं तीन साल तक मौन रहा। उसके बाद महाराज जी ने मुझे खड़े होकर तपस्या करने को कहा—अर्थात् मुझे कभी बैठना या लेटना नहीं था, बल्कि हमेशा खड़े रहना था। मैंने यह तपस्या भी तीन साल तक की। मैंने यह तपस्या भूमिधर में मंदिर परिसर बनने से पहले की थी। मेरे पास सोने के लिए शरीर को सहारा देने वाला एक विशेष यंत्र था। नींद आती तो मेरे पैर बहुत सूज जाते थे। महाराज जी ने मुझे फलाहारी रहने को भी कहा था (अनाज न खाने को, केवल फल और सब्जियां खाने को)। मैंने यह तपस्या लगभग आठ साल तक की।”

राम

महाराजजी से मिलने से कई साल पहले तक मैं खोज में भटकता रहा, इधर-उधर जाता रहा, तरह-तरह की पढ़ाई करता रहा। मैंने योग के कड़े नियमों का पालन करना शुरू किया—ब्रह्मचर्य, सुबह 3 बजे उठना, ठंडे पानी से स्नान, आसन और ध्यान। जब मैंने कॉफी और चाय छोड़ दी थी, उसी दौरान मेरी मुलाकात महाराजजी से हुई। हम सभी को चाय दी जा रही थी, और मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करूं। मैंने कुछ नहीं कहा, बस चाय का प्याला नहीं लिया, और महाराजजी मेरी ओर झुके और बोले, “क्या तुम चाय नहीं लोगे? चाय पी लो! तुम्हें चाय पीनी चाहिए। इस मौसम में यह तुम्हारे लिए अच्छी है! चाय पी लो!” तो मैंने चाय पी ली। उस एक प्याले चाय के साथ ही, वे सभी कड़े नियम और समय सारिणी धुल गईं! वे सब अर्थहीन और अनावश्यक लगने लगे; सच्चा काम इन सब से परे लगने लगा। अब मैं वही करता हूं जो अपने आप आता है।

राम

जब कुछ भक्तों ने उनसे हठ योग (ईश्वर से मिलन प्राप्त करने की शारीरिक विधि) के बारे में प्रश्न किया, तो महाराजजी ने उनसे कहा: “हठ योग तभी ठीक है जब आप कड़ाई से ब्रह्मचर्य का पालन करते हों। अन्यथा यह खतरनाक है। कुंडलिनी जागृत करने का यह कठिन मार्ग है। कुंडलिनी भक्ति और लोगों को भोजन कराने से जागृत हो सकती है। कुंडलिनी का प्रकट होना जरूरी नहीं कि बाहरी लक्षणों के रूप में ही हो; इसे शांतिपूर्वक जागृत किया जा सकता है।” एक अन्य भक्त से उन्होंने कहा, “यदि आप सिर के बल खड़े होने जा रहे हैं, तो मक्खन लें। यदि आप अशुद्ध भोजन करते हैं, तो शीर्षासन न करें। अशुद्ध भोजन मन पर प्रभाव डालता है और उसे प्रभावित करता है।”

राम

ऋषिकेश से कैंची आए कुछ पश्चिमी लोग हठ योग की पूरी विधि का अभ्यास करते थे, जिसमें धोती निगलना, नाक में धागा डालना आदि शामिल थे। महाराजजी ने उनसे इस तरह की कट्टरता को छोड़ने का आग्रह करते हुए कहा, "मैंने स्वयं ये सब किया है। यह सही तरीका नहीं है।"

> **योग कुछ भी नहीं है। आप इसके बिना भी बहुत कुछ हासिल कर सकते हैं।**

महाराजजी कहा करते थे कि जीवन के हर पहलू में समभाव रखने से ही आप उच्चतर मार्ग

पर पहुँचते हैं। वे कहते थे कि जो राक्षस वाम मार्ग का अनुसरण करते हैं, श्मशान घाटों पर मृत शरीरों का मांस और अन्य अपवित्र भोजन खाते हैं, यदि वे ईश्वर पर एकाग्रचित्त रहें तो वे भ्रष्ट नहीं होते। शारीरिक भ्रष्टता तो हो सकती है, लेकिन महत्वपूर्ण तो मानसिक अवस्था है।

> इच्छाओं के बल पर हठ योग कारगर नहीं होता। आज हठ योग को कोई ठीक से नहीं जानता। किताबों से इसका अभ्यास नहीं हो सकता। पहले लोग उपवास रखते थे और जड़ी-बूटियों का इस्तेमाल करते थे।

एक पश्चिमी भक्त संन्यास लेना चाहती थी, और महाराजजी ने उसे संन्यास की सभी सामग्री इकट्ठा करने का निर्देश दिया। उसने कपड़ा लिया, उसे नारंगी रंग में रंगवाया, और एक माला, चंदन का लेप और पत्थर प्राप्त किया। जब उसके पास सभी सामग्री आ गई और उसने भावनात्मक रूप से स्वयं को तैयार कर लिया, तब महाराजजी ने समारोह का ज़िक्र तक नहीं किया।

राम

महाराजजी के सामने गीता पढ़ते हुए एक भक्त रुका और महाराजजी से पूछा कि भगवान के दर्शन का सबसे तेज़ तरीका क्या है। महाराजजी हँसे और उस भक्त से पूछा कि क्या उसे तैरना आता है, तो उसने कहा कि हाँ। महाराजजी ने कहा कि अगर ऐसा है, तो उसे अपने हाथ-पैर बाँधकर बड़े-बड़े पत्थरों से खुद को बाँध लेना चाहिए और गहरे पानी में कूद जाना चाहिए। "तब तुम्हें तुरंत भगवान के दर्शन हो जाएँगे।" महाराजजी हँसे। फिर गंभीर होते हुए महाराजजी ने आगे कहा, "अर्जुन ने कभी भगवान को उस तरह नहीं देखा। मैंने भी कभी भगवान को नहीं देखा। उन्हें इन दो आँखों से नहीं देखा जा सकता। वर्षों के अभ्यास और परिश्रम के बाद ही आप उन्हें देखने की आशा कर सकते हैं।"

> जब कोई व्यक्ति छह महीने तक ध्यान में बैठने की अवस्था में पहुँच जाता है, तो उसे खाने, शौच या विश्राम की आवश्यकता नहीं रहती। सिर से शरीर पर अमृत की एक बूँद ही उसे जीवित रखती है। यदि कोई बाघ उस शरीर को खा जाए तो कोई परवाह नहीं, लेकिन जब शरीर में जीवन वापस आता है तभी पीड़ा होती है।

हम पश्चिमी लोग अपना दिन अपनी सामान्य गतिविधियों में बिताते थे—खाना, सोना, चाय पीना, गपशप करना और इधर-उधर घूमना। महाराजजी अक्सर मजाक में इन पाँच कामों को ही पश्चिमी भक्तों की खूबी बताते थे। वास्तव में हम ध्यान भी करते थे, पढ़ाई भी करते थे, कीर्तन भी गाते थे और कपड़े भी धोते थे।

हालांकि हममें से अधिकांश लोग महाराजजी को अपने गुरु के रूप में अपना संबंध मानते थे, फिर भी वे इसे शायद ही कभी स्वीकार करते थे। वे लगातार हमारी आंखों में धूल झोंकते रहे।

महाराजजी हमेशा मुझसे कहते थे कि दूसरे लोग मेरे गुरु हैं। पहले तो मैंने उनकी बात को गंभीरता से लिया। लेकिन अंत में मैं बस यही कहता, "महाराजजी, वे भले ही उपगुरु

(मार्गदर्शक) रहे हों, लेकिन आप मेरे सतगुरु (परम गुरु) हैं। आप मेरे गुरु हैं, चाहे आपको पसंद हो या न हो।” वे बस हंस देते थे। (आर.डी.)

“मुझे कैसे पता चलेगा कि कोई व्यक्ति मेरा गुरु है?” एक भक्त ने महाराजजी से पूछा। “क्या आपको लगता है कि वह (गुरु) आपको आध्यात्मिक रूप से हर तरह से परिपूर्ण कर सकते हैं? क्या आपको लगता है कि वे आपको सभी इच्छाओं, आसक्तियों आदि से मुक्त कर सकते हैं? क्या आपको लगता है कि वे आपको अंतिम मोक्ष की ओर ले जा सकते हैं?”

जब एक भक्त से पूछा गया कि वह महाराजजी से कैसे मिला, तो उसने मुस्कुराते हुए इस प्रकार उत्तर दिया:

एक बार मेले में मेरी मुलाकात एक बंगाली सज्जन से हुई, जिन्हें गंगा में स्नान करते समय हर बार बाबा के दर्शन होते थे और वे मेले में उसी बाबा को खोज रहे थे। उन्होंने मुझसे कहा, “वही मेरे गुरु हैं।” बंगाली ने बाबा का वर्णन किया और मैंने उन्हें महाराजजी की तस्वीर दिखाई। बंगाली ने कहा, “वही हैं।” कुछ समय बाद जब महाराजजी शहर में थे, तब उनकी मुलाकात तय हुई। बंगाली सज्जन महाराजजी के सामने आए और उनसे पूछा कि हम दोनों कब मिले थे। पहले तो महाराजजी ने कोई जवाब नहीं दिया। अंत में, कई बार पूछने के बाद, महाराजजी ने कहा, “हम अनगिनत जन्मों से साथ हैं।” बाद में, महाराजजी ने मुझसे पूछा, “क्या यह कहना सही था? क्या यह सच नहीं है?”

> अपने गुरु से भौतिक रूप से मिलना आवश्यक नहीं है। गुरु कोई बाहरी सत्ता नहीं हैं।
>
> गुरु चाहे जो भी हो—चाहे वह पागल हो या कोई साधारण व्यक्ति। एक बार जब आप उसे स्वीकार कर लेते हैं, तो वह देवताओं का देवता बन जाता है।

जब मैंने पहली बार महाराजजी को देखा, तो एक शिष्य उन्हें यहाँ लेकर आया था। मैं किसी बीमारी के लिए उनका आशीर्वाद लेने महाराजजी के पास आया था और मैंने कहा, "मैं आपको अपना गुरु बनाऊंगा!"

महाराजजी ने उत्तर दिया, “लेकिन मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूँ। भगवान की कृपा से तुम ठीक हो जाओगे। तुम्हारा स्वामी कोई और है।”

अगले दिन मैंने महाराजजी से पूछा कि मेरे गुरु कौन हैं, और कहा कि मैं उनसे मिलने के लिए उत्सुक हूं। मैंने उनसे कहा, "यदि आप मुझे स्वस्थ कर सकते हैं, तो आप ही मेरे गुरु होंगे।"

महाराजजी ने कहा, “नहीं। मैं तुम्हें स्वस्थ कर दूंगा। बस भगवान से प्रार्थना करो। तुम्हारे गुरु दूसरे हैं—स्वामी शिवानंद।” मैं ऋषिकेश गया और शिवानंद से मिला। मैंने उन्हें महाराजजी की कही बातें बताईं और शिवानंद ने मुझे अपना शिष्य स्वीकार कर लिया।

एक महान महात्मा थे जिन्होंने तीस वर्ष एक गुफा में सिंह मुद्रा (घुटनों के बल, कमर झुकाकर, जीभ बाहर निकालकर, आंखें तिरछी करके) में बिताए थे। जब मैंने उन्हें देखा तो मैंने उनसे कहा कि महाराजजी मेरे गुरु हैं। उन्होंने कहा कि महाराजजी एक महान महात्मा हैं, लेकिन

उन्होंने मुझे स्पष्ट कर दिया कि महाराजजी कभी शिष्य नहीं रखते। जब मैंने महाराजजी से पूछा कि क्या कोई साधु उनका शिष्य है, तो महाराजजी ने कहा, “तुम क्या बात कर रहे हो? बिलकुल नहीं। यह निजी मामला है। यह सिद्ध महात्मा बनने की अपनी ही तीव्र इच्छा का परिणाम है।”

राम

हालांकि वे यह स्वीकार नहीं करते थे कि वे हमारे गुरु हैं, लेकिन कभी-कभी वे कुछ ऐसा कह देते थे जिससे यह लगभग निश्चित हो जाता था। एक बार उन्होंने मुझसे कहा, "अजना चक्र में स्थिर रहो और केवल मेरा ध्यान करो।" (आर.डी.)

महाराज जी हमें बार-बार विशेष तीर्थयात्राओं पर भेजते थे। हमें अक्सर ऐसा लगता था मानो हमें बस "दूर" भेजा जा रहा हो, लेकिन शायद इसके पीछे कुछ और भी था। पवित्र स्थानों की तीर्थयात्राएँ अमेरिकी जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा नहीं रही हैं। कुछ ईसाई और यहूदी यरूशलेम गए हैं, और इस्लाम के कुछ अनुयायी मक्का की तीर्थयात्रा करते हैं। लेकिन हम अक्सर इन्हें "पवित्र स्थान" नहीं कहते, फिर भी हममें से कई लोगों को लिंकन मेमोरियल जैसे स्थानों और पहाड़ों और समुद्रों की यात्राओं से आध्यात्मिक पोषण प्राप्त हुआ है। भारत में, पवित्र मंदिरों और आध्यात्मिक शक्ति के महान स्थानों की तीर्थयात्राएँ हमेशा से सांस्कृतिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रही हैं। जिन लोगों के परिवार और नौकरी हैं और इसलिए वे आध्यात्मिक एकांतवास में नहीं रह सकते, उनके लिए आध्यात्मिक अभ्यास के सबसे सामान्य रूप दान-पुण्य करना और तीर्थयात्रा करना हैं। और महाराज जी ने अपने उदाहरण और उपदेशों के माध्यम से ऐसी तीर्थयात्राओं को बहुत प्रोत्साहित किया।

जब महाराजजी और दादा मेले के मैदान में टहल रहे थे, तब महाराजजी ने कहा, “हजारों वर्षों से संत यहाँ आते रहे हैं। दादा, मिट्टी लो और अपने सिर को छुओ।”

राम

हम महाराजजी के साथ चित्रकूट जा रहे थे। जैसे ही हम पवित्र स्थान की सीमा में दाखिल हुए, महाराजजी बैठ गए, चारों ओर देखा और बोले, “यही वह स्थान है जहाँ राम और सीता इधर-उधर विचरण करते थे।” सूखी ज़मीन पर थोड़ा आगे बढ़ने पर महाराजजी के पैर में एक काँटा चुभ गया। वे झुके और काँटा निकालते हुए बोले, “भगवान के पैरों में ऐसे कई काँटे चुभे होंगे।” उन्होंने यह बात इतने भावुक ढंग से कही कि वहाँ मौजूद सभी लोगों की आँखों में आँसू आ गए। यह एक छोटी सी घटना थी, लेकिन इतनी मार्मिक थी कि इसने सभी को बहुत गहराई से प्रभावित किया। बाद में, जब हम सब होश में आए, तो हम अपने आँसुओं पर हँस पड़े, यह समझ नहीं पा रहे थे कि ऐसा क्यों हुआ था।

राम

महाराजजी ने एक बार एक भक्त से कहा था कि पवित्र स्थानों पर अपने जूते जरूर उतारें क्योंकि इस प्रकार उस स्थान की ऊर्जा पैरों के माध्यम से ऊपर की ओर संचारित हो सकती है।

राम

महाराजजी से मिलने से पहले, मैंने कश्मीर की अमरनाथ गुफा की तीर्थयात्रा की थी। इस गुफा में बर्फ से बना एक शिवलिंग (शिव का लिंग प्रतीक) है, जिसका आकार चंद्रमा के चक्रों के अनुसार बदलता रहता है। माना जाता है कि यह गुफा सैकड़ों-हजारों साल पहले के एक युग की

है, जिसमें शिव और पार्वती (उनकी पत्नी) निवास करते थे। जब हम वहाँ पहुँचे तो बारिश हो रही थी, और दो दिन घोड़े पर चढ़ने के कारण मेरे शरीर में इतना दर्द था कि मुझे कुछ भी महसूस नहीं हुआ। बहुत बाद में, तीर्थयात्राओं के बारे में चर्चा करते हुए, महाराजजी ने मुझसे कहा:

“क्या आप अमरनाथ गुफा गए थे?”

जी हां, महाराजजी।

लेकिन आपको यह समझ नहीं आया।

नहीं, महाराजजी।

“तुम कर लोगे।” (आर.डी.)

राम

माताओं और कुछ भक्तों और सेवकों के साथ, महाराजजी ग्यारह दिनों तक अमरकंटक धर्मशाला में रहे। प्रत्येक सुबह नाश्ते के बाद, वे क्षेत्र के विभिन्न पवित्र स्थानों - मंदिर, कपिलधारा, दूधधारा, सोनमुदा आदि - के दर्शन करते थे। अक्सर वे जंगल में विचरण करते थे, और महाराजजी वहाँ एक गुफा में अकेले रहने वाले एक वृद्ध साधु से मिलने जाते थे। साधु की सफेद दाढ़ी, लंबे जटाधारी बाल और असाधारण रूप से लंबे नाखून थे। वे रोटियाँ बनाते थे और महाराजजी को अपने हाथों से खिलाते थे, साथ ही अपनी गाय का ताजा दूध भी पिलाते थे। महाराजजी ने सभी को नर्मदा माता के पवित्र जलाशय में स्नान करने का आदेश दिया। फिर उन्होंने अपने वस्त्र उतार दिए और एक भक्त का हाथ पकड़कर तीन बार पानी में डुबकी लगाई, और ऊपर आते हुए चिल्लाए, "बहुत ठंड है, बहुत ठंड है!"। उन्होंने तुरंत अपना कंबल वापस ओढ़ लिया।

महाराजजी ने नामों का इस्तेमाल करके हमें हमारे भीतर के गहरे अंतर्मन से अवगत कराया। पहले हम जोन, जेफ, जो, डैनी और बारबरा थे—और फिर हम संपूर्ण हिंदू देवमंडल बन गए।

पश्चिमी भक्तों के नामकरण में महाराजजी की लीलाओं का पुरुष और स्त्री-पुरुषों के प्रति भिन्न स्वरूप झलकता था। जहाँ कई पश्चिमी पुरुषों को दास (सेवक) नाम दिए गए थे, जैसे राम दास, कृष्ण दास, बलराम दास, वहीं जहाँ तक हमें ज्ञात है, किसी भी महिला को दासी नहीं कहा गया था। महाराजजी का हर कार्य अर्थहीन नहीं था, फिर भी इस सूक्ष्म भेद को समझना कठिन है।

महिलाओं को पुरुषों के समान ही सेवा कार्य करने का निर्देश दिया गया था, और चाहे उन्हें कोई भी नाम दिया गया हो, महाराजजी अक्सर प्रत्येक महिला को केवल "माँ" कहकर पुकारते थे। हमारी उम्र या परिस्थितियाँ चाहे जो भी हों, हम माताएँ बन गईं, वह भूमिका जिसमें हमेशा प्रेमपूर्ण सेवा समाहित रही है।

लेकिन शायद यही वह पहलू नहीं था जिस पर वह सबसे ज्यादा जोर देना चाहते थे; शायद हमें खुद को देवी के रूप में, उस शक्ति के रूप में देखने की सबसे ज्यादा जरूरत थी जिसकी पहली सेवा उसके स्वामी - जो कि ईश्वर है - के प्रति है।

राम

एक दिन जब मैं असमंजस में थी, तो मैंने शिकायत की कि महाराजजी मुझे अनदेखा कर रहे हैं और मुझे कभी नाम नहीं देंगे। बलराम बहुत उत्साहित हो गए और बोले, “अरे, उनसे पूछो,

उनसे पूछो। बहुत से लोग उनसे पूछते हैं। मैं तुम्हारे लिए उनसे पूछ लेता हूँ। यह तुम्हारे लिए उनके साथ रहने का अच्छा बहाना है, महाराजजी से बात करने का अच्छा बहाना है।” हालाँकि मुझे लगा कि मुझे उनके द्वारा नाम बताए जाने तक इंतजार करना चाहिए, फिर भी मैंने बलराम से कहा कि वे पहले पता लगा लें।

अगले ही दर्शन में महाराजजी ने कहा, “इसे नाम चाहिए।” मैं इतनी शर्मिंदा हुई कि मुझे नाम की बिल्कुल भी इच्छा नहीं रही—मैं बस भागकर छिप जाना चाहती थी। तभी महाराजजी ने मुझे नाम दिया और कहा, “रुक्मिणी!” उन्होंने यह नाम बहुत कठोर लहजे में कहा, और मुझे यह बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगा। यह ठीक नहीं था। मुझे लगा कि उन्होंने यह नाम स्वेच्छा से नहीं दिया, बल्कि मजबूरी में दिया है। मैं बहुत परेशान हो गई।

मैंने इसके बारे में किसी को नहीं बताया और कुछ दिनों तक मैं बहुत दुखी रही। महाराजजी ने मेरी उलझन को भांप लिया, मुझे कमरे में बुलाया, मेरी ओर देखा और बड़ी मधुरता से कहा, "मीरा, मीरा।" मैं पिघल गई। यह नाम मुझे संगीत जैसा लगा।

राम

जब उन्होंने मुझे मेरा नाम दिया, तो मुझे ऐसा लगा जैसे कोई कांटा चुभ गया हो। उस दिन मैं आत्मदया से भरी हुई थी और सत्संग में खुद को बेगाना महसूस कर रही थी। उन्होंने मुझे "प्रिया दास" नाम दिया, जिसका अर्थ है प्रिय सेवक। मुझे हमेशा लगता है कि यह नाम उस समय मेरी मनस्थिति के अनुरूप ही था।

राम

एक दिन हरि दास ने अपनी स्लेट पर लिखा कि महाराजजी ने मुझे राम दास नाम दिया है। मैंने पूछा कि क्या यह अच्छा है? उन्होंने कहा हाँ, यह हनुमान का नाम है और इसका अर्थ है "ईश्वर का सेवक"। तब से मुझे यह नाम अपने जीवन पथ की याद दिलाता है—कि मैं धीरे-धीरे इस नाम के अनुरूप ढल रहा हूँ। (आर.डी.)

राम

मैं हनुमान जी के पास अकेला खड़ा था, तभी महाराजजी मंदिर के कोने से प्रकट हुए। मेरे बगल में रेलिंग पर झुककर, मेरी ओर देखते हुए उन्होंने कहा, "जनरल महावीर सिंह," और फिर गायब हो गए। मैं दंग रह गया।

कुछ दिनों बाद एक सुबह हम सब सड़क पर थे, जहाँ फुटपाथ बहुत गर्म और चिपचिपा था। वह आकर बैठ गए, तो बाकी सब भी उनके बगल में बैठ गए और अपने साफ-सुथरे कपड़े पूरी तरह गंदे कर लिए—कई लोगों को इस बात की काफी चिंता हुई—और लोगों से बात करते-करते वे मुड़े और मेरी तरफ देखकर बोले, “तुम्हारा नाम क्या है?” मैंने थोड़ा झिझकते हुए जवाब दिया, “जनरल महावीर सिंह।” उन्होंने मेरी तरफ देखा, अपना सिर टेढ़ा किया और मुस्कुराए। फिर बोले, “नहीं! अब से, कृष्ण।” फिर वे एक पल रुके और बोले, “कृष्ण दास।”

महाराजजी के लिए ईश्वर का स्मरण करना और ईश्वर का नाम जपना राजसी तरीका था। ईश्वर सदा उनके निकट थे और बार-बार महाराजजी के होठों पर प्रकट होते थे।

आप जो सबसे अच्छी सेवा कर सकते हैं, वह है अपने विचारों को ईश्वर पर केंद्रित रखना। हर पल ईश्वर को याद रखें।

सब कुछ ईश्वर की इच्छा है, लेकिन माया आपको यह जानने से रोकती है कि यह सब ईश्वर की इच्छा है। उन्होंने हमें आंखें, कान, नाक, मुंह दिए हैं। लेकिन उन्होंने हमें ईश्वर को प्राप्त करने के लिए इनका उपयोग करने की बुद्धि भी दी है।

जिस प्रकार आप तिजोरी में पैसा रखते हैं, उसी प्रकार ईश्वर को अपने हृदय में रखें।

जो ईश्वर को जानता है, वह सब कुछ जानता है।

राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम

एक बार एक भक्त ने महाराजजी से पूछा कि उसे कौन सा मंत्र जपना चाहिए। महाराजजी ने दोहराया, “मन एकाग्र नहीं रह सकता। कोई भी मंत्र जपो—जियो, जपो।”

राम

महाराजजी ने मुझे मंत्र की परम सरलता और शक्ति का ज्ञान इस प्रकार कराया कि उन्होंने मुझे एक परिस्थिति में लीन कर दिया और फिर भगवान के नाम से मुझे उससे उबारा। ताकि मैं उनकी शिक्षा को न भूलूँ, वे मंत्र को तीन बार दोहराते थे। उदाहरण के लिए, एक सुबह जब मैं उनके सामने बैठकर उनके पैर की मालिश कर रहा था, अचानक मैं गहरे अवसाद और पश्चाताप में डूब गया। यह इतना अप्रत्याशित था कि मैं पूरी तरह से उसमें समा गया, न तो इसके कारण पर सवाल उठा पा रहा था, न ही इससे उबरने की कोशिश कर पा रहा था। तभी, मेरे भीतर से, मानो किसी और की वाणी हो, मैंने भगवान के नाम का शांत जाप सुना। अपनी हताशा में मैंने उस जाप को थाम लिया, और आश्चर्य की बात यह थी कि मेरा अवसाद दूर हो गया और सब कुछ पहले जैसा हो गया। मैं चुपचाप उनके पैर की मालिश करता रहा।

फिर एक बार फिर मैं गहरी पीड़ा में डूब गया और उसी में खो गया। एक बार फिर, जब भीतर से भगवान का नाम गूंजने लगा, तो मैंने उसे पकड़ लिया और मेरी उदासी दूर हो गई। इस अजीब घटना पर मैं मन ही मन हँसा, लेकिन फिर से गहरे दुख में डूब गया। इस बार, मैंने तुरंत मंत्र का सहारा लिया। मैंने मन की उस अवस्था से खुद को अलग कर लिया, क्योंकि वह एक गुजरते बादल की तरह थी। जब मैं मन में मंत्र दोहरा रहा था, तो मैंने महाराजजी की ओर देखा। वे मुस्कुरा रहे थे, मेरी ओर देखकर उनकी नज़रें चमक रही थीं। महाराजजी ने मुझे यौन विचारों से खुद को अलग रखने का तरीका सिखाने के लिए इसी मौन शिक्षण विधि का प्रयोग किया।

राम

सुबह करीब दस बजे एक आदमी मेरे घर आया और कहा कि महाराजजी मुझे गंगा से बुला रहे हैं। मैं तुरंत एक छोटे लड़के के साथ उन्हें ढूंढने निकल पड़ा। गंगा पर कुछ भक्तों ने बताया कि वे संगम की ओर टहलने गए हैं और दो घंटे से बाहर हैं—इतनी छोटी सैर के लिए इतना लंबा समय बहुत ज्यादा है। उन्होंने कहा कि वे मेरे घर लौट आए होंगे। मैंने कहा, “नहीं। उन्होंने मुझे यहाँ बुलाया है। वे यहीं होंगे।” कुछ देर बाद लड़के ने मुझसे विनती की कि मैं वापस लौट जाऊं; उसने दो बार ऐसा किया, और दोनों बार मैंने आगे बढ़ने पर जोर दिया। तीसरी बार मैं दुविधा में पड़ गया। न तो मैं आगे जा सकता था और न ही पीछे हट सकता था। लड़के की चिंता के कारण

मैं आगे नहीं बढ़ सका, और महाराजजी के दर्शन के कारण मैं पीछे नहीं हट सका। मैं असहाय खड़ा रहा।

तभी लड़के ने पुकारा, “देखो, वो रहे!” और महाराजजी गंगा में हमारे ठीक बगल में एक नाव में दो अन्य पुरुषों के साथ थे। नाव किनारे आई और महाराजजी उतरे और मुझसे पूरी कहानी के बारे में पूछताछ की, हर छोटी-बड़ी बात पूछी। फिर हम वहाँ गए जहाँ दूसरे भक्त खड़े थे। वहाँ पहुँचकर महाराजजी ने मुझे छोड़कर बाकी सभी को विदा कर दिया। उन्होंने मुझसे फिर से कहानी की हर छोटी-बड़ी बात पूछी—बुलावा मिलना, गंगा आना, खोज में चलना, लड़के की विनती—लेकिन इस बार महाराजजी ने ज़ोर देकर पूछा कि लड़के के साथ उस दुविधा भरे पल में मेरे मन में क्या चल रहा था। मैंने जवाब दिया, “मैं तो बस राम, राम ही कहने लगा था।”

तभी महाराजजी मेरे पास झुके और मेरे कान में फुसफुसाए, "बस राम का नाम लो और तुम्हारी सारी इच्छाएं पूरी हो जाएंगी।" उन्होंने यह सारी परिस्थिति मुझे यही सिखाने के लिए बनाई थी!

राम

मैं रात भर ध्यान में बैठकर राम का नाम जपती रहती थी। एक सुबह दर्शन के समय महाराजजी प्रसाद बाँट रहे थे। मुझे प्रसाद मिले इतना लंबा समय हो गया था कि मैंने लगभग उम्मीद ही छोड़ दी थी कि मुझे प्रसाद मिलेगा। कोई प्रसाद बाँट रहा था और उसने थोड़ा प्रसाद मेरी गोद में गिरा दिया। महाराजजी ने कहा, “इसे और दो, इसे और दो। इसे और मिलना चाहिए क्योंकि यह राम का नाम लेती है, यह राम का नाम लेती है। इसने राम का नाम लिया है।” मैं बहुत खुश हुई क्योंकि उन्हें पता था! उन्हें सचमुच पता था!

राम

जब मैं अठारह साल की थी, तो मैंने उनसे एक मंत्र माँगा। उन्होंने कहा, “क्या! मुझे इन मंत्रों के बारे में कुछ नहीं पता। मैं तो बस राम को जानती हूँ।” फिर मैंने उन्हें उनकी एक तस्वीर दी और उन्होंने उसके पीछे हर जगह “राम” लिख दिया। ऐसे व्यक्तिगत कार्य बहुत खास होते हैं। देखो! मैं इसे हमेशा अपने साथ रखती हूँ।

राम

उन्होंने मुझसे पहले मेरी पत्नी और बच्चों को मंत्र दिए। जब उन्होंने मुझे मंत्र दिया तो मैंने मन ही मन सोचा, मैं इसे ग्रहण नहीं करूँगा क्योंकि मैं इसके योग्य नहीं हूँ; मैं पापों से भरा हुआ हूँ।

राम

मेरे पास एक कमीज़ थी जिस पर सिहू ने बैंगनी धागे से कॉलर के चारों ओर राम राम राम लिखा था। मैं दुकान पर अकेला था और दोपहर के बीच में महाराजजी बाहर आए। उन्होंने मेरी कमीज़ देखी और उसे उठा लिया। “देखो इसे!” उन्होंने दर्शन के लिए आए कुछ भारतीयों से कहा। “देखो इसकी कमीज़ पर क्या है! इस पर राम राम राम राम राम राम लिखा है।” फिर उन्होंने भारतीयों को डांटते हुए कहा, “भारत उसके लिए वाकई बहुत अच्छा है! तुम लोगों को भारत क्यों पसंद नहीं है? देखो यह उसके लिए कितना अच्छा है! इस पर राम राम राम राम राम लिखा है। वह अमेरिका से इतनी दूर आया है! इस पर राम राम राम राम राम लिखा है। तुम्हें

भारत क्यों पसंद नहीं है?”

मैं उस घटना को बताने से खुद को रोक नहीं पा रही हूँ जब महाराजजी ने नाइमा और मुझे कैंची में पीछे की ओर जाने को कहा, जहाँ कुछ युवा नाग बाबा थे, और उन्हें पूर्ण दून्द प्रणाम करने को कहा। उस समय हम दोनों ने विशेष राम तिलक लगाया हुआ था। वहाँ लगभग पाँच साधु आग के चारों ओर बैठे चिलम पी रहे थे। बहुत धुआँ था और उनके नग्न शरीर—केवल लंगोटी पहने हुए—राख से ढके हुए थे। उन्होंने हमारी ओर बहुत कम ध्यान दिया, यहाँ तक कि जब मैंने दून्द प्रणाम किया तब भी। वे आपस में कह रहे थे कि आपको बस राम का नाम लेना है और आपको इस जीवन में कोई कठिनाई नहीं होगी। उनमें से एक ने गंगोत्री में गंगा के बर्फीले ठंडे पानी में डुबकी लगाने का उदाहरण दिया। आपको बस राम का नाम लेना था, और यह बिल्कुल भी कठिन नहीं था। सभी बाबाओं ने वही तिलक लगाया हुआ था जो मैंने लगाया हुआ था।

महाराजजी ने वृंदावन के बाज़ार से मालाएँ लाने के लिए एक बाबा को भेजा। उस बाबा ने एक भक्त को डांटते हुए कहा, “तुम बड़े घमंडी हो। मैंने मालाएँ खरीदीं और अब सोचते हो कि महाराजजी तुम्हें पहनाएँगे।” तब महाराजजी ने उस भक्त से कहा, “स्नान करो और पूजा करो।” फिर महाराजजी ने अपने हाथों से उस भक्त के सिर पर तिलक और चावल लगाए और उसके गले में माला पहना दी। भक्त ने कहा, “अब महाराजजी, आपको मुझे मंत्र बताना होगा।” महाराजजी ने उन्हें मंत्र बता दिया।

एक माँ थीं जो अपनी युवावस्था में आनंदमयी माँ की भक्त थीं। कुछ समय बाद, उनकी मुलाकात महाराजजी से हुई और वे उनके बहुत करीब आ गईं, लेकिन उन्हें यह समझ नहीं आ रहा था कि उनके गुरु कौन हैं। महाराजजी उनके सपने में आए और उन्हें एक मंत्र दिया। वे बिस्तर पर थीं और उन्हें उठकर उसे लिखना पड़ा। उन्होंने कहा, "यह माँ का मंत्र है।" बाद में, आनंदमयी माँ ने पुष्टि की कि यह सही मंत्र था।

अन्नपूर्णा महाराजजी से मंत्र दीक्षा प्राप्त करना चाहती थी। महाराजजी ने उसके लिए एक संपूर्ण समारोह आयोजित किया, जिसमें औपचारिक रूप से उसे दीक्षा दी गई: मंत्र, माला, सब कुछ।

महाराजजी के देह त्यागने के बाद एक भक्त ने तीन सपने देखे। पहले सपने में महाराजजी ने उसे एक मंत्र दिया। दूसरे सपने में उन्होंने उसे बताया कि श्वास लेते समय ओम (ब्रह्मांडीय अक्षर) का उच्चारण करते हुए मंत्र का उच्चारण कैसे करना है। तीसरे सपने में, जून के पर्व के बाद, उन्होंने कहा कि उसने बहुत मेहनत की है और अपनी क्षमता से अधिक काम किया है।

महाराजजी ने अपने अंतिम दो वर्षों में लंबा समय अपने कमरे में बिताया। वे हर समय अंदर

और बाहर, दोनों जगह भगवान का नाम सुनना चाहते थे। हम उनके साथ कमरे में समय बिताते थे। सबको लगता था कि हम सब खूब मजे कर रहे होंगे, लेकिन असल में वे ज्यादातर चुपचाप, आंखें बंद करके, बाहर गा रहे पश्चिमी लोगों के कीर्तन सुनते रहते थे। कभी-कभी वे आंखें खोलकर इधर-उधर देखते। “कुछ कहना है? कोई सवाल है?” वे हमसे पूछते। फिर वे एक बार फिर अपनी दूसरी दुनिया में खो जाते।

सन् 1973 में कृष्ण जयंती के अवसर पर सभी पश्चिमी वासियों ने उपवास रखा और कीर्तन किया। आधी रात को उन्होंने महाराजजी की आरती की। बंद खिड़की से महाराजजी उन्हें बार-बार "जाओ" कहते रहे। फिर भी वे वहीं रुके रहे और मधुर कीर्तन गाते रहे। अंत में उन्होंने खिड़की खोली और उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे। वे चुपचाप बैठे रहे और काफी देर तक सुनते रहे। तभी बारिश शुरू हो गई, मानो भगवान फूलों की वर्षा कर रहे हों—यह एक बहुत ही शुभ संकेत था।

> लोग रोटी लेने में तो जल्दी करते हैं, लेकिन भगवान का नाम लेने में देर करते हैं।

महाराजजी ने एक महीने तक प्रतिदिन मंदिर में एक पंडित से श्रीमद् भागवतम् (एक महान पवित्र ग्रंथ) का पाठ करवाया। मुझे समझ नहीं आता था कि वे क्या पाठ कर रहे हैं, लेकिन मैं अपने हृदय में पंडित की भक्ति को महसूस कर सकता था। वे बीच-बीच में कथा के साथ हरे कृष्ण मंत्र के कुछ स्वर भी दोहराते थे। महाराजजी ने मुझसे पूछा, "ये क्या कह रहे हैं?"

"महाराजजी, वह हरे कृष्ण, हरे राम कह रहे हैं।"

“आह!” महाराजजी प्रसन्न हुए। “राम दास ने सार सुन लिया है।” (आर.डी.)

दक्षिण भारत में एक स्वामी के साथ यात्रा के दौरान, उन्होंने मुझे एक अत्यंत शक्तिशाली शिव मंत्र की दीक्षा दी, जिसके बारे में उन्होंने कहा कि इससे मुझे अपार धन और अपार शक्ति प्राप्त होगी। मैं इससे बहुत प्रभावित हुआ और कई हफ्तों तक दिन-रात उस मंत्र का जाप करता रहा। मंत्र के फलस्वरूप, मैं अपने शरीर से बाहर यात्रा करने लगा। पाँच वर्ष पूर्व, महाराजजी ने मुझसे पूछा था कि क्या मैं उड़ना चाहता हूँ और भविष्यवाणी की थी कि मैं उड़ूँगा, और अब मैंने स्वयं को अपने शरीर से बाहर उड़ते हुए पाया। कभी-कभी मंत्र का जाप करते समय, मैं अपने शरीर से बाहर निकलकर एक अन्य लोक में पहुँच जाता था, जहाँ मेरी मुलाकात स्वामी से होती थी। एक महीने से अधिक समय तक ऐसा चलने के बाद, मैं सूरत की एक गुफा में ध्यान कर रहा था। लेकिन मैं मंत्र का जाप करना बंद नहीं कर सका। मुझे एक बार फिर अपने शरीर से बाहर ले जाया गया, लेकिन इस बार सूक्ष्म लोक में मुझे एक ऐसे कमरे में लाया गया जहाँ महाराजजी बैठे थे।

मैं बेहद प्रसन्न हुआ और दौड़कर उसके चरणों में जा गिरा। वह कंबल ओढ़े अपने बिस्तर पर बैठा था। फिर उसने कंबल को अपने चेहरे तक खींच लिया और मैंने उसे तीन बार फूँक मारते सुना, मानो मोमबत्ती बुझा रहा हो। हर फूँक के साथ, मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मेरा शरीर किसी पेट्रोल पंप पर हवा भरने वाले इनर ट्यूब की तरह फूल रहा हो। तीसरी बार हवा भरने के

बाद, दृश्य गायब हो गया और मैंने खुद को एक बार फिर गुफा में पाया... लेकिन मंत्र गायब हो गया था—इस अर्थ में नहीं कि मैं उसे याद नहीं कर पा रहा था, बल्कि इसलिए कि उसका प्रभाव खत्म हो गया था। अब वह मुझ पर हावी नहीं था; अब मुझे उसे दोहराने की कोई इच्छा नहीं थी।

महाराज जी ले गये थे। (आर.डी.)

राम

एक महिला भक्त बचपन से ही मंत्रों का जाप करती थी। महाराजजी के शरीर त्यागने से पंद्रह दिन पहले, उन्होंने उसे बुलाया और कहा, "यह एक नया मंत्र है। इसका जाप करो।"

“महाराज जी, अब मैं कैसे बदल सकता हूँ?”

उन्होंने कहा, "मेरे पैर छुओ।" तब से वह केवल इसी नए मंत्र का पालन करती आ रही हैं।

राम

सन् 1968 में जब मैं अमेरिका जा रहा था, हरि दास ने मुझे अपनी माला दी, जिस पर उन्होंने वर्षों तक काम किया था। माला के मनके बड़े और घिसने के कारण गहरे रंग के हो गए थे और पवित्र तुलसी के तने से बने थे। उस समय उन्होंने मुझे बताया कि महाराजजी ने उन्हें ये मनके कई साल पहले दिए थे। ओह, मैंने उन मनकों को कितना संजो कर रखा था! मैं उन्हें रोज़ पहनता था और रात को सोते समय भी उन्हें अपने साथ रखता था, क्योंकि वे श्री राम मंत्र की निरंतर याद दिलाते थे, जो कभी-कभी मेरे लिए जीवन रेखा की तरह था और मुझे उस आध्यात्मिक ऑक्सीजन से जोड़ता था जिसकी मुझे सख्त ज़रूरत थी।

फिर सन् 1971 में एक रात, जब मैं भारत लौटा, हममें से कुछ लोग हनुमानगढ़ मंदिर जा रहे थे, जो नैनीताल से लगभग एक मील दूर है। हम कैंची घूमने के दौरान नैनीताल में ठहरे हुए थे। हमारे पास कई ढोल और झांझ थे और हम साथ-साथ मंत्रोच्चार कर रहे थे। मैं झांझ बजा रहा था और शायद झांझ माला की डोरी में फंस गई और टूट गई। शाम का समय था और अंधेरे में मुझे पता ही नहीं चला कि एक-एक करके माला के मोती रास्ते में गिर रहे हैं। जब मुझे आखिरकार पता चला, तो पवित्र एक सौ आठ मोतियों में से बीस या उससे अधिक गायब थे। मैं बहुत दुखी हुआ और अगले दिन सड़क पर खोजबीन की, लेकिन मुझे एक भी मोती नहीं मिला।

मैंने पहले कभी इतने बड़े मनके नहीं देखे थे और मुझे ये भी नहीं पता था कि इन्हें कैसे बदलूँ, इसलिए मैंने महाराजजी से पूछा। पहले तो उन्होंने हरि दास को ये मनके देने से इनकार कर दिया, हालाँकि मुझे उनके इनकार पर यकीन नहीं हुआ; फिर उन्होंने कहा कि ये मनके वैसे भी किसी काम के नहीं थे। उन्होंने कहा कि मुझे अयोध्या में सीता राम बाबा से सही मनके मिल सकते हैं।

कई महीने पहले इलाहाबाद में महाराजजी ने मुझे सीता राम बाबा नामक एक संत से मिलने का निर्देश दिया था, जिनके बारे में मैंने पहले कभी नहीं सुना था। जाहिर तौर पर वह इस क्षण का पूर्वाभास था।

मैंने राम के राज्य की राजधानी अयोध्या की कभी यात्रा नहीं की थी, और गुरु के निर्देशों पर एक "विशेष" बाबा से "विशेष" माला प्राप्त करने का विचार मुझ जैसे आध्यात्मिक भौतिकवादी के लिए अत्यंत आनंददायक था।

एक ही दिन में मैं अयोध्या जाने वाली ट्रेन में सवार हो गया। वहाँ पहुँचते ही सबसे पहला

काम था सीता राम बाबा को ढूँढना। महाराजजी ने कहा था कि वे बूढ़े हैं, इसलिए उन्हें ढूँढना ज़्यादा मुश्किल नहीं होना चाहिए। लेकिन जब मैं टूटी-फूटी हिंदी में तांगे पर गलियों में भटक रहा था, तो यह इतना आसान नहीं था। कई घंटों बाद मुझे शहर से लगभग एक मील दूर एक घर का पता मिला। द्वार पर खड़ा बीस साल का एक युवक बोला कि सीता राम बाबा उसके मामा हैं, लेकिन वे विश्राम कर रहे हैं—शायद मैं बाद में आ सकता हूँ। लेकिन हनुमान जी की तरह मैं भी पीछे हटने वाला नहीं था और मैंने कहा कि मैं तब तक बाहर बैठा रहूँगा जब तक वे मुझे देख न लें। बाहर बहुत गर्मी थी, लेकिन मेरा इरादा पक्का था।

लगता है लड़के ने अपने चाचा को बता दिया था, क्योंकि कुछ ही मिनटों में मुझे अंदर बुलाया गया। सीता राम झूले पर लेटे हुए थे और सचमुच बहुत बूढ़े लग रहे थे। उनके भतीजे ने बताया कि उनकी उम्र एक सौ अट्ठाईस वर्ष थी और वे दिखने में भी उतने ही बूढ़े लग रहे थे। उनकी त्वचा पारदर्शी थी, हाथ कंकाल जैसे पतले थे और आवाज़ बिल्कुल धीमी थी। उन्होंने महाराजजी को जानने की बात स्वीकार की और कहा कि मैं सूर्यास्त के समय लौट सकता हूँ। मैं निराश था क्योंकि मैं माला लेकर महाराजजी के पास वापस जाने के लिए उत्सुक था, और ऐसा लग रहा था कि सीता राम मेरी मदद करने के लिए बहुत बूढ़े और कमज़ोर हो चुके हैं, लेकिन इंतज़ार करने के अलावा कोई चारा नहीं था।

तो मैंने अयोध्या में स्थित प्रसिद्ध हनुमान मूर्ति के दर्शन करने का निश्चय कर लिया। लेकिन जैसे ही तांगा गली में आगे बढ़ा और लगभग पचास मीटर चला, मैंने पीछे मुड़कर देखा तो सीता राम बाबा तांगे के पीछे दौड़ते हुए आ रहे थे। वे कूदकर तांगे पर चढ़ गए और बोले कि अब हम माला लाएंगे। मैं प्रसन्न तो हुआ, लेकिन साथ ही चिंतित भी था कि कहीं बूढ़े व्यक्ति के लिए सवारी बहुत कठिन न हो जाए। अब जब वे उठकर चलने लगे थे, तो वे पहले से अधिक मजबूत और ऊर्जावान प्रतीत हो रहे थे।

लेकिन अगली निराशा तब हुई जब हम उस दुकान पर पहुँचे जहाँ मनके मिलने थे। दुकान बंद थी। उसने कहा कि शाम को वापस आने के अलावा कोई चारा नहीं है, इसलिए हम उसके घर वापस जाने लगे। लेकिन सड़क पर लगभग सौ मीटर आगे हमें दुकानदार मिल गया, और सीता राम ने उसे दुकान पर वापस जाने के लिए मना लिया। दुकान पर पहुँचते ही मुझे लगा कि मंज़िल नज़दीक है। दुकानदार ने सीता राम बाबा को कई मालाएँ दिखाईं, लेकिन हर माला में, हालाँकि मुझे वे सुंदर लगीं, सीता राम बाबा ने उन्हें यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि वे "सही" नहीं हैं। फिर उन्होंने दुकानदार से काफ़ी देर तक बात की, जो अचानक उत्साहित हो गया और एक डेस्क के पास जाकर एक धूल भरे और अप्रयुक्त कोने में रखी एक छोटी सी दराज खोली। मैं रोमांचित हो गया, क्योंकि यह ठीक वैसा ही था जैसा सभी तंत्र-मंत्र की किताबों में लिखा था।

लेकिन जो मालाएं वह लेकर आया, वे सस्ती लग रही थीं, उन पर भड़कीले नारंगी या हरे रंग से रंगा हुआ था, और प्रत्येक माला पर सीता और राम के संस्कृत चिह्न बेढंगे तरीके से उकेरे गए थे। मैंने ऐसी सस्ती मालाएं कई जगहों पर देखी थीं और हमेशा उनसे मेरा मन हट जाता था। लेकिन सीता राम ने कहा कि ये ही "खास मालाएं" हैं, इसलिए मैंने लगभग पचास सेंट प्रति माला के हिसाब से तीन मालाएं खरीद लीं और मुस्कुरा दिया। फिर मैंने सीता राम को उनके घर छोड़ा, उन्हें धन्यवाद दिया, दोपहर की ट्रेन पकड़ी और अगली सुबह महाराजजी के चरणों में लौट

आया।

जब मैं वहाँ पहुँचा, तो महाराजजी ने माला के बारे में पूछा और मैंने उन्हें उनके सामने रख दिया। उन्होंने बस इतना कहा, "ये वो मालाएँ नहीं हैं। मुझे खुद तुम्हारे लिए लानी पड़ेंगी।" लेकिन उन्होंने कभी ऐसा नहीं किया। (आर.डी.)

भारत में रीति-रिवाजों ने आत्मा को सँजोने में हमेशा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। लेकिन अक्सर यही रीति-रिवाज उस आत्मा का दमन कर देते हैं जिसे संरक्षित करने के लिए वे बनाए गए हैं। महाराजजी के लिए, रीति-रिवाजों का सम्मान करना तो आवश्यक था ही, साथ ही उन्हें उचित परिप्रेक्ष्य में भी रखना था।

कैंची में अग्नि अनुष्ठान होना था, जिसमें महाराजजी मंदिर परिसर में उपस्थित थे। मैंने नौ दिनों तक चलने वाले पूरे अनुष्ठान में बैठने का फैसला किया, ताकि मैं अनुष्ठानों के प्रति अपनी पिछली प्रतिक्रियाओं (जो मुख्य रूप से नकारात्मक थीं) को मिटा सकूं और इस प्रक्रिया के लिए अपना हृदय खोल सकूं। क्योंकि अगर महाराजजी ही यह अनुष्ठान करवा रहे थे, तो इसके पीछे कोई अच्छा कारण जरूर होगा।

समारोह में मुख्य रूप से दो ब्राह्मण पुजारी और दो गृहस्थ शामिल थे, जो दोनों ही महाराजजी के पुराने भक्त थे। दिन धीरे-धीरे बीतते गए। आग के पास गर्मी थी, और उस दृश्य की एकरसता, गर्मी, थकान, तीव्रता और दृश्य की शक्ति ने धीरे-धीरे मुझे भावनात्मक रूप से खोल दिया, यहाँ तक कि मुझे ऐसा लगा जैसे वह इमारत एक अंतरिक्ष यान हो जो हम सभी को अपने भीतर ऊँचाई पर ले जा रही हो।

पहले छह दिनों तक महाराजजी कभी समारोह में उपस्थित नहीं हुए, लेकिन उन्हें इसकी प्रगति की निरंतर जानकारी मिलती रही। सातवें दिन, जब यह अनुष्ठान मेरे लिए सचमुच एक विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो गया था और मुझ पर गहरा प्रभाव डालने लगा था, तब वे अचानक परिसर के दूसरी ओर, जहाँ वे बैठे थे, से चिल्लाने लगे। ऐसा लगा जैसे वे किसी गृहस्थ को, जो इस अनुष्ठान में प्रमुख रूप से भाग ले रहा था, एक विचित्र और कर्कश स्वर में बुला रहे हों। लगभग पूरे सात दिनों से ये चारों व्यक्ति बिना रुके अनुष्ठान कर रहे थे और महाराजजी ने इस पूरी प्रक्रिया को बाधित कर दिया। बिना सोचे-समझे वह भक्त उठा और महाराजजी के पास चला गया। मेरा ध्यान भंग हो गया था, इसलिए मैं भी उसके पीछे-पीछे गया यह देखने के लिए कि महाराजजी ने उस व्यक्ति को समारोह से क्यों बुलाया था। मैंने देखा कि वह व्यक्ति प्रतिदिन मंदिर में भोजन करने आने वाले स्थानीय बच्चों को प्रसाद, पूरियों और आलू के छोटे-छोटे पैकेट बाँट रहा था। दर्जनों अन्य भक्त भी यह काम कर सकते थे, लेकिन महाराजजी ने इस व्यक्ति को बुलाया।

बाद में, मैं अभी भी असमंजस में था और महाराजजी के प्रति कुछ हद तक नाराज़ भी था क्योंकि उन्होंने मेरे लिए एक पवित्र अनुष्ठान बन चुके इस काम में बाधा डाली थी। मैंने उस व्यक्ति से बात की जिसे बुलाया गया था। उसने बस इतना कहा, "महाराजजी सभी रीति-रिवाजों से परे हैं।" (आर.डी.)

राम

हम एक यज्ञ में शामिल हुए थे, हालाँकि हम हमेशा इन सभी अनुष्ठानों से ऊपर महाराजजी

के दर्शन को प्राथमिकता देते थे, क्योंकि उनके दर्शन ही सबसे बड़ी पूजा है। लेकिन वे हमेशा हमसे कहते थे, "जाओ वहाँ, तुम शैतान, दुष्ट, परजीवी!" और वे जो वास्तव में चाहते थे, उसे करना हमारे लिए कठिन नहीं था। उन्होंने एक भक्त से पूछा कि क्या वह पूजा में बैठना चाहेंगे, और उस व्यक्ति ने कहा कि वह नहीं बैठना चाहेंगे। महाराजजी ने कहा, "तुम बड़े कंजूस हो। इतने सारे पंडित वहाँ हैं और तुम्हें लगता है कि तुम्हें उन्हें पैसे देने होंगे। नहीं! मैं उन्हें पैसे दूँगा।" इस बात से उस व्यक्ति का हृदय स्पर्श हुआ, और अगली सुबह वह यज्ञ में बैठ गया। "स्वाहा! स्वाहा!" के जाप के साथ अग्नि को आहुति दी जा रही थी।

"हप!" महाराजजी चिल्लाए, "इस स्वाहा, स्वाहा से उन्हें क्या लाभ होगा? बाहर जाओ और भोजन बाँटो! आग में चीजें फेंकने का क्या फायदा?"

राम

वे हमेशा सबके प्रति बहुत दयालु थे। हालाँकि वे कभी किसी को पूजा या अनुष्ठान करने के लिए नहीं कहते थे, लेकिन अगर यह उनकी आदत होती थी तो वे उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करते थे। मैं नियमित रूप से सुबह कुछ पूजा करती थी, लेकिन जब महाराजजी आते थे, तो उनकी सेवा करना ही मेरे लिए पूजा बन जाता था। लेकिन महाराजजी प्रतिदिन सुबह घर से निकलकर अन्य भक्तों के घर जाते थे या टहलने जाते थे, जिससे मुझे अपनी पूजा करने का समय मिल जाता था।

राम

मैं शिवरात्रि (भगवान शिव को सम्मान देने का दिन) के दिन और रात भर पूर्ण उपवास रखता था, पानी तक नहीं पीता था और सोता भी नहीं था। मैं पूरी रात भगवान शिव की पूजा करता रहता था। एक साल संयोग से, शिवरात्रि से एक दिन पहले महाराज जी नैनीताल आए और हम एक भक्त के घर गए, जिन्होंने महाराज जी के आगमन के लिए विशेष भोजन तैयार किया था। महाराज जी ने सबको खाने को कहा, और जब मैंने पूछा कि मैं क्यों नहीं खा रहा हूँ, तो मैंने कहा कि आज उपवास का दिन है। उन्होंने कहा, "उपवास क्यों? खाओ! खाओ!" मैंने उनसे कहा कि मैं उनकी अनुमति से ही खाऊँगा। उन्होंने कहा, "जी! खाओ!" फिर मैंने उनसे भोजन लिया। उन्होंने कहा, "अब तुम अपनी पूजा करो।" मैंने जाने के लिए उनका आशीर्वाद मांगा, लेकिन उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, यहीं करो—यहाँ, मेरे सामने।" मैंने अपनी पूजा शुरू की।

महाराजजी वहां बैठकर बातें करते रहे और लोग आते-जाते रहे। तीन-चार लोग, जिन्होंने पहले कभी ये प्रार्थनाएं नहीं पढ़ी थीं, इतने प्रभावित हुए कि वे भी पढ़ने लगे। महाराजजी ने मेरी ओर मुड़कर कहा, "अरे, तुम तो बस दिखावा कर रहे हो। उपवास और इन सब रीति-रिवाजों का क्या फायदा? भगवान तुम्हारे भीतर हैं। जब तक उनकी कृपा तुम्हारे भीतर नहीं होगी, तुम उन्हें याद नहीं कर पाओगे। उनकी कृपा है तो सब कुछ है। हमेशा उन्हें याद रखो और उन्हें पाने की कोशिश करो। और उनकी कृपा है तो..." फिर वे ढाई घंटे तक चुपचाप बैठे रहे। पूरा वातावरण ऊर्जा से भर गया था। हर साल मैं उस खास दिन को लेकर बहुत सतर्क रहता था, उपवास करता था, प्रार्थना करता था, आदि, लेकिन इस बार उन्होंने मेरा यह नियम तोड़ दिया।

कई बार वह मुझे पूजा नहीं करने देता था। मैंने उससे कहा कि अगर वह मुझे पूजा नहीं करने देगा तो मैं भी नहीं करूँगा, और पूजा पूरी होने तक खाना भी नहीं खाऊँगा। तब वह चिल्लाया,

"दरवाजा बंद कर, दुष्ट! अपनी पूजा पूरी कर! यह कैसी पूजा है और भगवान को परेशान करना क्या है? प्रार्थना और उपवास? क्या तुम एक पल के लिए भी भगवान को याद नहीं कर सकते? इस पूजा का क्या लाभ? मुझे समझ नहीं आता!"

मंदिर में हर सुबह और शाम को कुछ अनुष्ठान किए जाते थे जिनमें लाल रंग का लेप और चावल के दाने इस्तेमाल होते थे। अनुष्ठान के बाद पुजारी प्रत्येक व्यक्ति के माथे के बीचोंबीच थोड़ा सा लेप और चावल के कुछ दाने लगाते थे। बूढ़े पुजारी के लिए इस अनुष्ठान का सबसे महत्वपूर्ण क्षण महाराजजी के माथे पर तिलक लगाना होता था। महाराजजी पूरी प्रक्रिया के दौरान लोगों से बातें करते रहते थे और हमेशा की तरह, जैसे ही बूढ़े पुजारी पूरी गंभीरता और एकाग्रता से लेप लगाते, महाराजजी किसी और से बात करने के लिए अपना सिर घुमा लेते और लाल रंग का तिलक उनके पूरे माथे पर लग जाता। पुजारी महाराजजी को अनुष्ठान के दौरान कभी भी शांत नहीं बिठा पाते थे।

अग्नि अनुष्ठानों के समान ही पवित्र गंगा नदी में स्नान करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। महाराजजी ने इन अनुष्ठानों में भी बाधा डाली।

मेले में दो बुजुर्ग गंगा की ओर जा रहे थे। इस समय गंगा में स्नान करना बहुत पवित्र माना जाता है। महाराजजी ने कहा, "नहीं, यहीं स्नान कर लीजिए। हर जगह गंगा ही गंगा है।"

एक बार एक श्रद्धालु गंगा में स्नान करने जा रहा था, तभी उसकी मुलाकात महाराजजी से हुई। महाराजजी ने उसे बिना स्नान किए ही वापस भेज दिया और कहा, "गंगा में स्नान करने से श्रेष्ठ है लोगों की सेवा करना।"

> महाराज जी अक्सर कहते थे: "सारा कर्म प्रार्थना है। सारे वृक्ष मनोकामना पूर्ति करने वाले हैं। सारा जल गंगा है, सारी भूमि वाराणसी (बनारस का दूसरा नाम) है। सब कुछ से प्रेम करो।"

महाराजजी ने अनुष्ठानों के बारे में जो शिक्षाएँ दीं, उनकी अन्य शिक्षाओं की तरह, वे भी विरोधाभास से भरी थीं जो तर्क से परे थीं। वे अनुष्ठानों के उचित पालन को लेकर चिंतित प्रतीत होते थे, फिर भी वे स्वयं सभी नियमों का उल्लंघन करते थे। लेकिन जैसा कि एक भक्त ने कहा, "जब कोई काम होता था, तो वे अनुष्ठानों को एक तरफ रख देते थे, और काम पूरा होते ही वे आपको पूजा करने भेज देते थे।" लेकिन शायद उन्होंने अग्नि अनुष्ठान जैसी घटनाओं को इसलिए भी तोड़ा ताकि लोगों को यह दिखाया जा सके कि अनुष्ठान स्वयं वस्तु नहीं बल्कि आत्मा है: आत्मा से जुड़ने के लिए अनुष्ठान करें, लेकिन उसमें न उलझें।

दो बुजुर्ग थे, जिन्होंने परिवार पालन-पोषण और अपने कर्तव्य पूरे करने के बाद संन्यास ले लिया था और पैदल ही इधर-उधर भटक रहे थे। उन्होंने कैंची मंदिर में कई महीने बिताए और महाराजजी उन्हें हर सुबह कई घंटों तक सीता राम का जाप करवाते थे। जब उनके जाने का समय हुआ, तो महाराजजी ने उन्हें अपने सामने बुलाया और गुस्से में आकर आरती के दौरान मूर्तियों के सामने लोहे का पलंग बजाने पर उन्हें खूब खरी-खोटी सुनाई। (शास्त्रों में मंदिरों में लोहे का उपयोग वर्जित है।) महाराजजी ने उनसे कहा कि उन्हें शिष्ट व्यवहार करना नहीं आता, इसलिए

उन्होंने उन्हें मंदिर से बाहर निकाल दिया। जैसे ही वे जाने के लिए मुड़े, महाराजजी मुस्कुराए और ऊँची, मीठी आवाज़ में गाने लगे, "तुमने घंटा बजाया, और मैंने तुम्हें बाहर निकाल दिया।"

राम

एक व्यक्ति अपने बच्चे को महाराजजी का आशीर्वाद दिलाने के लिए लाया, लेकिन महाराजजी ने केवल बच्चे के सिर पर हाथ फेरा। वह व्यक्ति क्रोधित हो गया और कहने लगा कि वह चाहता है कि महाराजजी विधिपूर्वक आशीर्वाद दें। महाराजजी ने उत्तर दिया कि उन्हें वह विधि नहीं आती, उन्होंने बच्चे को आशीर्वाद दे दिया है, और यदि उस व्यक्ति को विधिपूर्वक आशीर्वाद चाहिए, तो उसे किसी ऐसे व्यक्ति के पास जाना होगा जो इसे जानता हो।

राम

एक बार पश्चिमी लोगों ने महाराजजी की भव्य पूजा की तैयारी कर ली थी और उनके चरणों को अमृत बनाने के लिए सभी उचित सामग्रियों से धोने की योजना बनाई थी। उन्होंने आपस में कार्य बाँट लिया था और वे इसके लिए बहुत उत्साहित थे। जब महाराजजी बाहर आए तो उन्होंने मोज़े पहने हुए थे। उन्होंने उन्हें मोज़ों की जगह अपनी तर्जनी उंगली से पूजा करने को कहा।

राम

जब महाराजजी का वृंदावन मंदिर बनकर तैयार हुआ, तो उन्होंने बी को वहाँ का पुजारी बनने को कहा। वह बालक ब्राह्मण नहीं था (जैसा कि परंपरा के अनुसार पुजारी होते हैं) और उसे पूजा-पाठ और अनुष्ठानों का कोई ज्ञान नहीं था। महाराजजी ने एक पंडित को बुलाया और उसे बालक को प्रार्थनाएँ सिखाने को कहा। फिर महाराजजी ने उसे बाज़ार से पवित्र धागा और तुलसी की माला लाने को कहा। महाराजजी ने उसे ये पहनाए और हनुमान जी की पूजा करने को कहा, और बताया कि अब वह एक सिद्ध पुजारी बन गया है।

एक दिन महाराजजी बाहर गए हुए थे, तभी मंदिर के निर्माता जे ने आकर बी से उसकी जाति, संस्कृत ज्ञान आदि के बारे में पूछताछ की। बी ने उत्तर दिया कि वह ब्राह्मण नहीं बल्कि ठाकुर (एक निचली हिंदू जाति) है। जे नाराज हो गया, तभी महाराजजी प्रकट हुए और उसे अपने पास बुला लिया। जे ने महाराजजी से शिकायत की, और फिर बड़े हॉल में कई लोगों के सामने इस पर चर्चा शुरू हो गई।

महाराजजी ने फिर बी से पूछा कि क्या वह संस्कृत जानता है; क्या वह भगवद् गीता पढ़ सकता है। बी ने कहा नहीं, और महाराजजी ने पलटकर कहा, "झूठ मत बोलो।" महाराजजी ने जे को बताया कि बी को गीता के अठारह अध्याय कंठस्थ हैं। तब जे ने ग्यारहवें और बारहवें अध्याय सुनने की इच्छा जताई। महाराजजी ने अपना कंबल बी के सिर पर डाल दिया और उसके सिर पर कुछ बार थपथपाया। फिर बी ने उत्तम संस्कृत में गीता का गायन शुरू किया, जिससे सभी ब्राह्मण प्रभावित हुए। जे भावुक हो गया और महाराजजी के चरणों में गिर पड़ा। बी डेढ़ वर्ष तक पुजारी रहा। यद्यपि उसने फिर कभी गीता का पाठ नहीं किया, फिर भी जब वह लड़का पूजा करता था तो वह ईश्वर के साथ इस कदर एकांत में होता था कि सभी को अत्यंत शांति प्राप्त होती थी। धर्म के रक्षक के रूप में, महाराजजी न केवल भक्तों को अनुष्ठानों में भटकने से बचाते थे, बल्कि जब भी उन्हें आध्यात्मिक छल, कपट और भौतिकवाद दिखाई देता था, तो वे तुरंत उसकी ओर ध्यान दिलाते थे।

एक बार मेले में, महाराजजी और एक भक्त एक साधु के पास से गुज़रे जो गहरी ध्यान मुद्रा में बैठे थे और उनके पास एक लोटा रखा था। महाराजजी ने कहा, “यह तो छल करने वाला है।” उन्होंने एक छोटे लड़के को साधु का लोटा चुराने को कहा। जैसे ही लड़के ने लोटा उठाया, साधु ध्यान से बाहर आ गए और उछल पड़े। महाराजजी ने लड़के पर चिल्लाते हुए कहा, “इसे छोड़ दो, छोड़ दो, वरना यह तुम्हें पीटेगा।”

राम

“चलो,” महाराजजी ने एक भक्त से कहा। “मैं तुम्हें एक बहुत बड़े महात्मा से मिलवाता हूँ। तुम्हें एक महान संत के दर्शन होंगे।” महाराजजी और भक्त कार से उस बाबा के आश्रम गए, और महाराजजी भक्त को भगवा रेशमी वस्त्र पहने और सिगरेट पीते एक युवक के पास ले गए। जब उस युवक ने महाराजजी को देखा, तो उसने अपनी सिगरेट फेंक दी और उन्हें प्रणाम किया। वे बैठ गए और साधु अपने कमरे में गया और एक बहुत ही कीमती कंबल ले आया। (महाराजजी ने एक पुराना, सादा कंबल ओढ़ा हुआ था।) साधु ने महाराजजी का कंबल हटाया और उन्हें नया कंबल ओढ़ा दिया।

“यह क्या है?” महाराजजी ने पूछा।

“यह एक नया कंबल है, बहुत सुंदर और महंगा। उस करोड़पति की माँ ने आकर मुझे यह दिया। महाराज जी, यह आपके लिए रखा गया था। लीजिए, यह बहुत ही बढ़िया कंबल है। इसे किसी को मत देना।”

महाराजजी ने उठने में एक पल भी नहीं लगाया। उन्होंने कीमती कंबल फेंक दिया और कहा, “तुम साधु हो? क्या कंबलों में कोई भेद हो सकता है? यह अच्छा है और यह बुरा? कंबल तो कंबल ही होता है!”

उन्होंने अपना पुराना कंबल उठाया और भक्त से कहा, “अरे, ये साधु हैं और इन्हें कंबलों में फर्क दिखता है। इन्हें इंसानों में क्या फर्क दिखता है?” महाराजजी बड़बड़ाते हुए गाड़ी की ओर चल दिए, “ये क्या है? हाप!” वे गाड़ी में बैठे और चले गए। महाराजजी आम साधुओं से बहुत अलग थे।

राम

एक भक्त कुछ बेईमान साधुओं का वर्णन कर रहा था। रोते हुए महाराजजी ने कहा, "देखो, इन्होंने धर्म के नाम पर क्या-क्या किया है।"

एक संत की आंखें हमेशा परम आत्मा पर टिकी रहती हैं। जिस क्षण उन्हें स्वयं का आभास हो जाता है, संतत्व खो जाता है।

एक व्यक्ति ने एक साधु को लगभग दो हजार रुपये उधार दिए, लेकिन वह वापस नहीं मिले। महाराजजी ने कहा, "जब आप किसी संत को पैसा उधार दें, तो उसे वापस मिलने की उम्मीद न करें।"

महाराजजी अक्सर कहते थे: "जिस प्रकार आप पानी को छानते हैं, उसी प्रकार गुरुओं का व्यावहारिक ज्ञान रखें।"

वी के चचेरे भाई के यहाँ लखनऊ के एक बड़े साधु ठहरे हुए थे, जो बहुत बुद्धिमान माने जाते थे और हथेली देखकर भविष्यवाणी करने में माहिर थे। वी ने साधु को अपना हाथ दिखाया,

जिन्होंने अच्छी बातें तो बताईं, लेकिन कहा कि उनका जीवन छोटा होगा, साठ से पैंसठ साल से ज़्यादा नहीं। वी खुश नहीं थे। बाद में महाराजजी ने उनसे पूछा कि क्या हुआ, और कहा, “झूठ मत बोलो, बताओ। तुम्हें लगता है कि तुम्हारी उम्र सिर्फ़ पैंसठ साल होगी। नहीं, नहीं। मैं तुम्हें बताता हूँ—पचासी साल से कम नहीं। जब भी साधु आएँ, उनका बहुत आदर करना और हो सके तो उन्हें भोजन कराना। लेकिन उनके साथ ज़्यादा मेलजोल मत रखना।”

राम

महाराजजी ने अपने शुरुआती दिनों के एक साथी के बारे में कहा: "वह इतने ऊंचे दर्जे के थे, फिर भी उनकी माया इतनी प्रबल थी।"

राम

कानपुर के पुलिस प्रमुख, जो महाराजजी के भक्त थे, एक दिन महाराजजी के पास एक बाबा की गिरफ्तारी का वारंट लेकर आए। बाबा भी महाराजजी के बहुत प्रिय थे और उन पर सेना से भाग जाने और कानपुर में अवैध धंधों में शामिल होने का आरोप था। महाराजजी ने पुलिस प्रमुख को वारंट तामील न करने को कहा। आखिर वह अब साधु थे और सेना से भागने के लिए उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया जाना चाहिए। बाद में महाराजजी ने बाबा को फटकारा: “ये क्या कर रहे हो? साधु होने का दिखावा करते हो और फिर भी ये धंधा कर रहे हो। छोड़ दो इसे।”

बाबा कानपुर छोड़कर नैनीताल चले गए, जहाँ महाराजजी भी जा रहे थे। अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व और सुरीली आवाज़ के बल पर बाबा ने जल्दी ही अपने अनुयायियों का एक समूह बना लिया और उनसे बहुत सारा धन इकट्ठा कर लिया। महाराजजी ने बाबा को अपने पास बुलाया और उन्हें फटकार लगाते हुए कहा कि वे सब कुछ छोड़कर भाग जाएँ, लेकिन बाबा धन और सत्ता का दुरुपयोग करते रहे। उन्होंने दो बार विवाह किया और दोनों से बच्चे पैदा करने के बाद भाग गए। उस समय तक महाराजजी उनके प्रति दयालु और सहानुभूतिपूर्ण थे और हमेशा पूछते रहते थे कि उनका स्वामी वाला काम कैसा चल रहा है। लेकिन इस बार महाराजजी ने उनकी व्यभिचारी गतिविधियों के लिए उन्हें फटकार लगाई और बाबा ने महाराजजी से नाता तोड़ लिया और फिर कभी वापस नहीं लौटे।

राम

दक्षिण की यात्रा करते हुए, महाराजजी और एस.एम. एक आश्रम में पहुँचे और अंदर जाकर उन्होंने एक पेड़ के नीचे कृष्ण की मूर्ति देखी, जिसकी ठीक से देखभाल नहीं हो रही थी। उन्होंने कहा, “आप यहीं रहिए, मैं जा रहा हूँ। मूर्ति साक्षात ईश्वर के समान है और उसके साथ वैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए—मैं ऐसी जगह नहीं रहना चाहता जहाँ कोई खुद को ईश्वर से श्रेष्ठ समझे।”

क्योंकि चारों ओर बहुत अधिक आध्यात्मिक धोखाधड़ी फैली हुई थी, इसलिए महाराजजी शुद्ध आत्मा वाले लोगों को पाकर प्रसन्न और सम्मानित महसूस करते थे।

एक भक्त ने बताया कि जब भी वे जीप में यात्रा करते हुए किसी मंदिर के पास से गुजरते थे, महाराजजी जीप रोककर प्रणाम करते थे, और वहां से गुजरने वाले प्रत्येक साधु के लिए महाराजजी अपने कंबल के नीचे हाथ जोड़कर प्रणाम करते थे।

राम

मैं कुछ स्वामियों को, जिनमें एक प्रसिद्ध गायक भी शामिल थे, वृंदावन में महाराजजी के दर्शन के लिए ले गया। उनके परिचय से पहले ही महाराजजी ने कहा, “मैं इन्हें जानता हूँ। इन्हें यहाँ बुलाइए। इन्हें चाय पीनी चाहिए। ये भजन गाना चाहते हैं।” मैंने महाराजजी को इस प्रसिद्ध दक्षिण भारतीय गायक के बारे में कभी नहीं बताया था, जिनके साथ पाँच दक्षिण भारतीय महिलाएँ थीं। महाराजजी ने चाय मंगवाई, फिर मुझे अकेले अपने कमरे में ले गए और बोले, “ये बहुत अच्छे गायक हैं। क्या इन्हें मेरे लिए गाने में कोई आपत्ति होगी? इनका गायन मुझे अत्यंत प्रसन्न करेगा। क्या इन्हें कीर्तन गाने में कोई आपत्ति होगी?”

मैंने जवाब दिया, "बाबा, आपके स्थान पर क्या परेशानी होगी?"

महाराजजी बाहर आए और स्वामी से गाने को कहा। स्वामी ने राधा (कृष्ण की प्रिय और भक्त) और कृष्ण के कुछ भजन गाए। स्वामी ने महाराजजी से एक गहरा जुड़ाव महसूस किया। महाराजजी ने कहा, “अब तुम थक गए हो। तुम यहाँ सांभर और रसम (दक्षिणी व्यंजन) खाओगे! माँ के यहाँ! तुम यहाँ खाना बनाओगे?” महाराजजी हँस पड़े। महिला को हिंदी समझ नहीं आती थी। “ज़ोर से बोलो! बताओ! क्या तुम यहाँ रोज़ खाना खाने आओगे? रोज़ सांभर, रसम।”

मैंने महाराजजी से कहा कि हम आश्रम में नहीं रुक सकते क्योंकि हम घूमना-फिरना चाहते हैं और वृंदावन के मंदिरों के दर्शन करना चाहते हैं।

“अच्छा! तो ऐसा करो—रोजाना यहाँ आओ और प्रसाद ग्रहण करो!”

हम प्रतिदिन महाराजजी से मिलने आते थे, और हर बार वे हमें प्रसाद से तृप्त करने का प्रयास करते थे। वे इस स्वामी का विशेष ध्यान रखते हुए कहते थे, “ये बहुत अच्छे महात्मा हैं। इस तरह के संत आपको कहीं नहीं मिलेंगे।”

राम

स्वामी शिवानंद भारत के महान संतों में गिने जाते थे। वे अपने पीछे कई शिष्य और ऋषिकेश में एक विशाल आश्रम छोड़ गए। महाराजजी कभी-कभी बिना बताए आश्रम आते थे। हर बार जब वे आते, कोई न कोई ऐसी घटना घटित होती जिसे आश्रम में लंबे समय तक याद रखा जाता था। कभी-कभी आश्रम के मुखिया महाराजजी के लिए अपने हाथों से भोजन तैयार करते थे। एक बार महाराजजी ने एक बहुत वृद्ध और आदरणीय स्वामी को बुलाया। ये स्वामी केवल महान शिवानंद की स्मृति का सम्मान करते थे और किसी और को प्रणाम भी नहीं करते थे। जैसे ही वे महाराजजी के पास आए, महाराजजी ने पुकारा, “वेद व्यास!! वेद व्यास आ गए हैं!” (वेद व्यास भारत के एक महान ऐतिहासिक संत हैं।) यह सुनकर स्वामी का पूरा व्यवहार बदल गया और उन्होंने महाराजजी के सामने पूर्ण दून्द प्रणाम किया। किसी गहरे अर्थ में उन्होंने एक-दूसरे को पहचान लिया।

महाराज जी परम संतों के प्रति अत्यंत श्रद्धा और प्रेम रखते थे। जब भी उन्हें इन संतों के बारे में बात करते सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता था, तो ऐसा लगता था मानो वे किसी घनिष्ठ और प्रेममय परिवार के सदस्यों के बारे में बात कर रहे हों। बोलते, याद करते या चिंतन करते समय उनकी आवाज़ की गुणवत्ता ही उस गहरे संबंध को व्यक्त कर देती थी। वे ईसा मसीह, रामकृष्ण, हरिखान बाबा, तैलंगा स्वामी, शिरडी साई बाबा, रमण महर्षि, नित्यानंद, आनंदमयी माँ, सोमबारी महाराज, देवरिया बाबा और शिवानंद जैसे संतों के बारे में इसी प्रकार बात करते थे।

महाराजजी को शिरडी साई बाबा की एक तस्वीर भेंट की गई और उनके चरणों में रख दी गई। महाराजजी तुरंत उठ बैठे और तस्वीर उठा ली। “यह यहाँ नहीं होनी चाहिए। वे बहुत अच्छे बाबा थे,” महाराजजी ने कहा और तस्वीर को अपने सिर के पास रख दिया।

राम

हिमालय में गंगोत्री की बर्फीली पहाड़ियों पर स्थायी रूप से रहने वाले गंगोत्री बाबा नाम के एक महान संत थे। महाराजजी उनके साथ जाया करते थे। यह कहना मुश्किल है कि कौन किसका भक्त था। एक सीमा के बाद संतों का व्यवहार समझ से परे हो जाता है।

राम

एक बार इलाहाबाद में, शंकराचार्य के समय के कुछ समय बाद स्थापित पांच सौ वर्ष पुराने गोरखनाथ संप्रदाय के प्रमुख महाराजजी से मिलने आए, और महाराजजी ने दादा और अन्य लोगों को उनके चरण स्पर्श करने को कहा। वह व्यक्ति अत्यंत विनम्र था और उसने कहा, "मैं संतों के संत के समक्ष उपस्थित हूँ और आप मुझे संत कहते हैं।"

राम

महाराजजी ने एक बार कहा था, “एक बार मैं रमण महर्षि के पास से गुजर रहा था। वे उठे और मेरे पीछे आने की कोशिश की, लेकिन मैं भाग गया।”

राम

महाराजजी ने कहा था कि मुझे कुंभ मेले में अकेले नहीं जाना चाहिए। मैं उनके साथ था, उनका कंबल पकड़े हुए था ताकि खो न जाऊं। एक फटेहाल आदमी महाराजजी के पास आया और बड़े आत्मीयता से उन्हें गले लगा लिया। वे दोनों एक-दूसरे का हाथ थामे नाचने लगे और बार-बार “लिलिरी” गीत गाने लगे। यह लगभग दो मिनट तक चला। मैंने महाराजजी को नाचते हुए सिर्फ एक ही बार देखा है। मैंने उस आदमी के पैर छूने की कोशिश की क्योंकि मैंने सुना था कि हनुमान और अन्य महान ऋषि मेले में आते हैं, लेकिन मैं उन्हें छू नहीं सका। मैं इतना आनंदित था कि छू भी नहीं पाया। फिर वह आदमी गायब हो गया। मुझे हमेशा इस बात का अफसोस रहेगा कि मैंने उन्हें छूने की हिम्मत नहीं की।

राम

महाराजजी बिहारीजी मंदिर से होते हुए पीछे के रास्ते से एक घर में गए, जहाँ उन्होंने भोजन माँगा। गली में कोई चिल्ला रहा था, “एक रोटी!” महाराजजी ने उसे अंदर बुलाया। वह एक साधु था जो दिन में केवल दो रोटी ही माँगता था। महाराजजी ने उससे पूछा, “तुम्हारी रोटी कहाँ है?” महाराजजी ने रोटी ली और खा ली। महाराजजी ने बताया कि वह व्यक्ति इराकी था जो चालीस साल पहले वृंदावन आया था, लेकिन वहाँ मौजूद भक्तों को वह इस दुनिया का नहीं लगा।

राम

एक बार एक साधु त्रिशूल लिए और राख से ढके हुए (जो शिव का प्रतीक है) मंदिर में आया। महाराजजी दौड़कर उसके पास गए और प्रणाम किया, और वह साधु गायब हो गया।

राम

एक बार एक आदमी देर रात मंदिर के द्वार पर लालटेन मांगने आया। दादाजी गए और उसे लालटेन दे दी क्योंकि उसकी गाड़ी खराब हो गई थी। फिर वह आदमी लालटेन लौटाने वापस

आया। अगले दिन महाराजजी ने पूछा, “क्या तुमने उसे मंदिर में भोजन के लिए बुलाया था?” उन्होंने नहीं बुलाया था। महाराजजी ने कहा, “अरे मूर्ख! क्या तुम नहीं जानते कि वह कौन था? वह सोमबारी महाराज (एक संत जिनका निधन बहुत पहले हो चुका है) थे।”

राम

केके भंडारे में खूब मेहनत करता था। बाद में महाराजजी ने उसे बताया कि उसे वहाँ सोमबारी महाराज के दर्शन हुए थे। केके को गुस्सा आया क्योंकि उसे इस बात का एहसास नहीं था। महाराजजी ने कहा, "तुम्हें क्या पता होना चाहिए?" और उसका गुस्सा गायब हो गया।

राम

महाराजजी एक माता के साथ वैष्णवी देवी की नई स्थापित मूर्ति को देखने गए, जो अभी भी पैकिंग बॉक्स में थी। केवल उसका चेहरा ही दिखाई दे रहा था। महाराजजी ने मूर्ति से बात की और माता ने स्पष्ट रूप से मूर्ति को पलक झपकाते हुए देखा। यही सच्ची प्रतिष्ठा है।

राम

राबू बीमार था और उसकी आवाज चली गई थी। महाराजजी ने उसे चार दिनों तक दुर्गा की देवी पूजा (ईश्वर के स्त्री रूप की आराधना) करने को कहा। जैसे ही अंतिम पंक्ति पढ़ी गई, महाराजजी ने खिड़की खोली और पुकार कर कहा, “मैंने माता (देवी दुर्गा) से कह दिया है और अब सब ठीक हो जाएगा।”

राम

महाराजजी का ईसा मसीह के प्रति प्रेम अलौकिक था। जब उनसे पूछा गया, “ईसा मसीह कौन थे?” तो महाराजजी ने उत्तर दिया:

> वह सभी प्राणियों के साथ एकरूप थे और संसार के सभी प्राणियों के प्रति उनका प्रेम असीम था। वह ईश्वर के साथ एकरूप थे।
>
> आपको मसीह की शिक्षाओं को स्वीकार करना चाहिए और उनका पालन करना चाहिए। मसीह ने कहा है कि एक छोटे बच्चे की तरह बनो—कभी भी ऐसा कुछ मत सोचो और न बोलो जिससे किसी को हानि पहुंचे।
>
> मेरे सिवा कोई भी मसीह में विश्वास नहीं करता।
>
> उन्हें सूली पर चढ़ाया गया ताकि उनकी आत्मा समस्त संसार में फैल सके। उन्होंने धर्म के लिए अपने शरीर का बलिदान दिया। वे कभी मरे नहीं, वे कभी मरे नहीं। वे आत्मा हैं, जो सबके हृदयों में निवास करते हैं।

आपको कभी पता नहीं चलता था कि किसी भक्त के कथन से क्या प्रतिक्रिया होगी। एक बार एक लड़का आया और उसने पूछा, "महाराज जी, क्या यीशु सचमुच क्रोधित होते थे?"

महाराजजी ने जैसे ही “यीशु” शब्द सुना, उनकी आँखों में आँसू आ गए। प्रश्न पूछे जाने के समय वे बैठे हुए थे, और उन्होंने अपनी कोहनी पर झुककर तीन बार अपने हृदय को छुआ, उनकी

आँखों से आँसू बह रहे थे। एक क्षण के लिए सन्नाटा छा गया। महाराजजी ने सभी के मन में ईसा मसीह की वास्तविकता को प्रकट किया और कहा, “ईसा मसीह कभी क्रोधित नहीं हुए। जब उन्हें सूली पर चढ़ाया गया, तब भी उनके मन में केवल प्रेम था। ईसा मसीह किसी भी चीज़ से आसक्त नहीं थे; उन्होंने अपना शरीर भी त्याग दिया।”

और उस समय सब लोग रो रहे थे—हमने ईसा मसीह के दुखभोग की पूरी कहानी सुन ली थी। और अचानक वह उठकर बैठ गया और बोला, "मन पलक झपकते ही लाखों मील का सफर तय कर सकता है—बुद्ध ने यह कहा था।"

राम

“ईसा मसीह को इतना बदनाम क्यों किया गया?” महाराजजी से पूछा गया।

“यही बात सभी संतों पर लागू होती है, लेकिन वे सभी में केवल प्रेम ही देखते हैं। तुम्हें बुराई न बोलनी चाहिए, न सुननी चाहिए और न देखनी चाहिए। तुम्हें हर जगह और हर किसी में प्रेम देखना चाहिए। सभी में अच्छाई देखो।”

राम

एक बार महाराजजी कैथोलिक प्रार्थना सभा में गए और वहाँ प्रसाद ग्रहण किया। क्रिसमस की सुबह महाराजजी, टी और बीडी तीनों लखनऊ में थे और उन्होंने यीशु की पूजा में जाने का फैसला किया। जैसे ही वे चर्च के पास पहुँचे, महाराजजी ने बीडी को पहले अंदर जाने को कहा (क्योंकि वह पश्चिमी मूल का था)। महाराजजी स्वाभाविक रूप से नंगे पैर थे, उन्होंने अपना कंबल और धोती ओढ़ी हुई थी। बीडी पवित्र जल के पात्र के सामने घुटने टेककर बैठ गया और वहाँ मौजूद किसी व्यक्ति ने उसके सिर पर जल छिड़का। टी और महाराजजी ने भी ऐसा ही किया। वे समारोह में शामिल हुए और जब पवित्र भोज का समय आया, तो उन्होंने अपने हाथों में पवित्र भोज ग्रहण किया।

राम

एक बार एक भक्त ने महाराजजी से पूछा कि ईसा मसीह कैसे ध्यान करते थे। महाराजजी उठकर बैठ गए और कुछ देर के लिए अपनी आँखें बंद कर लीं। चुपचाप बैठे-बैठे उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। तब महाराजजी ने कहा, “वे प्रेम के सागर में विलीन हो गए थे।”

महाराज जी ने परंपरा या वंश की परवाह किए बिना, आत्मा की पवित्रता का सम्मान किया। वे हमें व्यक्तिगत भिन्नताओं की चिंताओं से दूर, औपचारिकताओं से परे, अपने बार-बार दोहराए जाने वाले कथन, "सब एक!" के माध्यम से वापस लाते रहे।

> सभी धर्म एक समान हैं। सभी धर्म ईश्वर तक ले जाते हैं। ईश्वर सर्वव्यापी है... हम सभी में एक ही रक्त बहता है, हाथ, पैर, हृदय, सब एक समान हैं। कोई भेद मत देखो, सबको एक समान समझो।
>
> आपको प्रेम के द्वारा शिव का आदर करना चाहिए। राम और शिव एक ही हैं। राम ने शिव की पूजा की, शिव ने राम की पूजा की, वे एक ही हैं।

व्यक्तिगत भिन्नताओं और कर्म के आधार पर शिक्षा देना छल है। सबको एक समान देखो। भेद-भाव देखने से ईश्वर का अनुभव नहीं हो सकता। अपने भीतर प्रेम खोजना सीखो।

एक मुस्लिम श्रद्धालु ने महाराजजी को अपने घर पर आयोजित एक धार्मिक उत्सव में आमंत्रित किया। पूरा परिवार और उनके कई मित्र सूफी गीत गाने और कुरान का पाठ सुनने के लिए एकत्रित हुए। कई मुस्लिम मुल्ला (पुजारी) और विद्वान भी उत्सव में अनुष्ठान करने और शास्त्रों का पाठ करने के लिए उपस्थित थे। जब महाराजजी पहुंचे, तो श्रद्धालु उन्हें विद्वानों के सामने सम्मान के स्थान पर ले गए। विद्वानों ने तुरंत गाना बंद कर दिया और मेजबान से शिकायत की। उन्होंने कहा कि वे एक हिंदू की उपस्थिति में अनुष्ठान जारी नहीं रख सकते। महाराजजी ने उनके पूर्वाग्रह और संकीर्ण सोच के लिए उन्हें फटकारा। उन्होंने कुरान और कुछ महान सूफी कवि-संतों के कथनों से सभी धर्मों की एकता का वर्णन किया। महाराजजी ने प्रसाद मांगा। प्रसाद मिलने पर उन्होंने विद्वानों को भोजन, मिठाई और धन वितरित किया। प्रसन्न होकर उन्होंने अपना जप शुरू किया। महाराजजी कई घंटों तक उनके साथ "ला इल अहा एल इल अल्लाह हू" का जाप करते रहे।

ईश्वर की उपासना करने का सर्वोत्तम तरीका हर रूप में है। आपको सभी को स्वीकार करना चाहिए और उनमें प्रभु को देखना चाहिए। संत होने की इसके अलावा कोई आवश्यकता नहीं है।

हर कोई मेरे चेहरे का प्रतिबिंब है।

हनुमान

भारत के सभी पवित्र ग्रंथों में, महाराजजी को रामायण सबसे अधिक प्रिय थी। और रामायण के भीतर, उन्हें विशेष रूप से "सुंदरकांड" नामक अध्याय बहुत पसंद था।

लखनऊ में एक बूढ़ा आदमी अक्सर महाराजजी से मिलने आता था, और महाराजजी उससे रामायण का एक अंश सुनाने को कहते थे। "यह भाग गाओ! वह भाग गाओ जहाँ..." इत्यादि। वह आदमी गाता और महाराजजी अपना भोजन करते। महाराजजी कभी नाक नहीं सिकोड़ते थे, लेकिन उनकी आँखों से बच्चों की तरह आँसू बहते थे। सुंदरकांड उनका सबसे प्रिय भाग था।

राम

जब कैंची में रामायण का पाठ होता था, तो वह उसे सुनने के लिए अपनी खिड़की थोड़ी सी खोल देता था।

सुंदरकांड हनुमान जी के कारनामों से संबंधित है, जो एक असाधारण रूप से आकर्षक, बुद्धिमान, शक्तिशाली और प्रेममय वानर थे, जिनका एकमात्र उद्देश्य भगवान राम की सेवा करना था। महाराजजी रामायण और हनुमान चालीसा में वर्णित हनुमान जी के कारनामों को सुनने और दोहराने से कभी नहीं थकते थे।

महाराजजी रामायण से इस प्रकार के उद्धरण दिया करते थे, "मैं हनुमान जी को प्रणाम करता हूँ, जिनकी स्तुति केवल राम ही कर सकते हैं। राम की कथाएँ इतनी सुंदर हैं कि संशय के पक्षी भी उड़ जाते हैं।"

राम

उन्हें सुबह-सुबह पश्चिमी गायकों द्वारा गाई जाने वाली हनुमान चालीसा सुनना बहुत अच्छा लगता था। वे इससे बहुत प्रसन्न होते थे और बीच-बीच में मजाक करके सबको हंसा देते थे।

राम

आरंभ से ही उन्हें हनुमान चालीसा से अत्यंत प्रेम था। शुरुआती दिनों में जब भी कोई बड़ी भीड़ इकट्ठा होती, वे सबको बैठने और हनुमान चालीसा का पाठ करने को कहते। जब सब लोग पाठ में मग्न हो जाते, तो वे उठकर कहीं और चले जाते।

जब महाराजजी ऐसी कहानियां सुनाते थे, तब उनकी उपस्थिति में होना इन कहानियों को एक अद्भुत जीवंत सत्य में बदल देता था।

आम तौर पर जब हम हनुमान चालीसा पढ़ते थे, तो हमें कुछ खास प्रभावित नहीं करता था। कभी-कभी महाराजजी कहते थे, "क्या इसमें लिखा है कि हनुमानजी हमेशा जीवित रहेंगे... कि वे सर्व-सामयिक थे? कैसे?" महाराजजी बस इतना ही कहते और सबको चिंतन में डाल देते। महाराजजी पढ़ने में एक नई ऊर्जा भर देते थे।

राम

एक बार जब हम दादाजी के घर में महाराजजी के साथ बैठे थे, तब एक भक्त रामायण का पाठ कर रहा था। महाराजजी की आँखों से आँसू बहने लगे और वे अत्यंत आनंदमय समाधि में लीन हो गए। हम सब उस क्षण की दिव्यता से अभिभूत हो गए। पाठ समाप्त होते ही दादाजी अचानक उठे और महाराजजी को दूसरे कमरे में ले गए और दरवाजा बंद कर लिया।

महाराजजी ने न केवल हनुमान जी की कथा का सम्मान किया, बल्कि वर्षों से भारत के कई स्थानों पर भक्तों को हनुमान जी के सम्मान में मंदिर बनाने के लिए प्रोत्साहित किया। इनमें से कुछ मंदिर छोटे हैं और भक्तों के घरों में स्थित हैं, जबकि अन्य बड़े सार्वजनिक मंदिर हैं जहाँ प्रतिदिन सैकड़ों लोग दर्शन करने आते हैं। यह निश्चित रूप से कहना मुश्किल है कि महाराजजी की प्रेरणा से कितने मंदिर बनाए गए, भले ही उन्होंने सीधे तौर पर ऐसा न किया हो। अनुष्ठानों की जटिलताओं से भलीभांति परिचित महाराजजी के लिए यह विचित्र प्रतीत होता है कि अपने जीवन के अंतिम वर्षों में वे मंदिरों से इतने जुड़े रहे। हालांकि, मंदिरों से जुड़ी हर बात, निर्माण से लेकर, सूक्ष्म शिक्षाओं से परिपूर्ण थी। प्रत्येक मंदिर में भूमि अधिग्रहण जैसे पहलुओं को लेकर किसी न किसी प्रकार का नाटकीय घटनाक्रम शामिल था। और इन कठिनाइयों ने कई भक्तों को ऐसी प्रक्रियाओं में उलझा दिया, जिनसे प्रत्येक मामले में आत्मा में उनकी अंतिम आस्था और भी मजबूत हुई।

नैनीताल का विशाल मंदिर उस स्थान पर बना है जहाँ पहले घना जंगल था और जंगली जानवर रहते थे। उस जगह के एक हिस्से का इस्तेमाल बहुत छोटे बच्चों (जिनका अंतिम संस्कार नहीं किया जाता) के कब्रिस्तान के रूप में किया जाता था। स्थानीय लोगों का मानना था कि वह स्थान भूतों से प्रेतवाधित है। जब महाराजजी ने उस स्थान का दौरा किया और वहाँ मंदिर बनवाने की इच्छा जताई, तो स्थानीय अधिकारियों ने इसका कड़ा विरोध किया। किसी ने सोचा भी नहीं था कि वहाँ हनुमान मंदिर बन सकता है।

महाराजजी सड़क के किनारे ही डेरा डाले रहते थे। प्रतिदिन अनेक भक्त उनके दर्शन के लिए वहाँ आते थे। धीरे-धीरे उस स्थान की ऊर्जा में परिवर्तन आने लगा। एक बार उन्होंने पास में स्थित एकमात्र ढाँचे, खच्चरों के बाड़े की ओर इशारा करते हुए कहा, “यहाँ एक विशाल मंदिर बनेगा और दुनिया भर से लोग दर्शन के लिए आएँगे।” यह सुनकर सब हँस पड़े क्योंकि यह बात हास्यास्पद लग रही थी। कुछ समय बाद, महाराजजी ने हरि दास बाबा से हनुमान जी की एक छोटी मूर्ति मंगवाई, जिसे उन्होंने स्वयं बनाया था, और उसे विधिवत स्थापित किया गया। यहीं से उस विशाल मंदिर परिसर की शुरुआत हुई जो आज एक ऊँची पहाड़ी की चोटी पर स्थित है और जहाँ दर्शन के लिए दूर-दूर से लोग आते हैं।

राम

कैंची का विशाल मंदिर उस स्थान पर बना है जहाँ उस क्षेत्र के महान संत सोमबारी महाराज एक गुफा में रहते थे। वह गुफा आज भी मंदिर के पीछे मौजूद है और वहाँ आध्यात्मिक निरंतरता का एक मजबूत अहसास होता है।

एक बार महाराजजी, सिद्धि माता और जीवंती माता रात में उस स्थान पर गए जो बाद में कैंची मंदिर बना। माताएं सड़क किनारे बैठी थीं, जबकि महाराजजी नदी पार कर गए और चार-पांच घंटे तक वापस नहीं लौटे। जब वे लौटे, तो उन्होंने कहा, “मुझे यहाँ एक आवाज़ सुनाई दे रही है। हमें यहाँ एक मंदिर बनाना होगा।”

राम

जब महाराजजी से पूछा गया कि उन्होंने किसी विशेष पवित्र स्थान पर आश्रम क्यों नहीं बनवाया, तो उन्होंने उत्तर दिया कि यह उनके जैसे व्यक्ति के लिए उचित नहीं था। यह एक बहुत

पुराना मंदिर स्थल था। वे वहां पहले से स्थापित शांति को भंग नहीं करना चाहते थे।

राम

हमारे शहर में, जिस जगह पर अब मंदिर बना है, वह पहले शौच करने की जगह हुआ करती थी। वह जगह बहुत गंदी थी। महाराजजी आए, उन्होंने शंख बजाकर उस जगह को पवित्र किया और वहीं ठहर गए। लोगों ने इकट्ठा होकर उस जगह की सफाई की और मंदिर का निर्माण किया।

राम

महाराजजी अक्सर लखनऊ में गोमती नदी के किनारे स्थित पुराने हनुमान मंदिर जाया करते थे। यह मंदिर 1960 से पहले महाराजजी के एक भक्त ने उनके अनुरोध पर बनवाया था। महाराजजी वहां बैठकर दर्शन देते थे, और हालांकि मंदिर प्रसिद्ध हो गया, लेकिन इसके उद्घाटन के उपलक्ष्य में कभी पूजा और भंडारा नहीं किया गया। एक बार महाराजजी से इस बारे में पूछा गया, तो महाराजजी ने उत्तर दिया, “नहीं, नहीं। इस मंदिर में नहीं। हम इससे भी बड़ा मंदिर बनवाएंगे।”

एक दिन महाराजजी को किसी के घर ले जाते समय वे एक पुराने पुल के पास से गुज़रे, जिसकी जगह एक नया बड़ा पुल बनाया जा रहा था। महाराजजी ने उस किनारे की ओर इशारा किया जहाँ निर्माण कार्य चल रहा था और कहा, “वहीं हमारा मंदिर बनेगा!” अब कुछ करने का सवाल ही नहीं था। बाद में, कानपुर जाते समय, महाराजजी अचानक चिल्लाए, “लखनऊ में एक शानदार मंदिर का डिज़ाइन तैयार किया गया है।”

दो साल बाद सरकार बदल गई और एक पुराने भक्त लोक निर्माण मंत्री बन गए। वे महाराजजी के पास आए और सुझाव दिया कि पुराना मंदिर बहुत छोटा है। महाराजजी ने कहा, "जैसा आपको ठीक लगे।" कुछ दिनों बाद वे व्यक्ति वर्तमान मंदिर का एक सुंदर मॉडल लेकर आए। महाराजजी ने कहा, "जी हां, इसे बनाइए।"

जब नया पुल बनकर तैयार हुआ, तो पुराने पुल को छोड़ दिया गया। उसी समय, नदी पुराने मंदिर को अपने वश में करने लगी। सरकार ने इसे नष्ट करने का सुझाव दिया, लेकिन महाराजजी ने कहा कि मंदिर को नष्ट नहीं किया जाना चाहिए, प्रकृति को अपना काम करने देना चाहिए।

सरकार ने मुआवजे के तौर पर पैंतीस हजार रुपये में मंदिर खरीद लिया। महाराजजी ने मंत्री से पूछा कि नए मंदिर की लागत कितनी होगी, तो उन्होंने पचासी हजार रुपये बताए। जब उनसे पूछा गया कि शेष राशि कहाँ से आएगी, तो महाराजजी ने कहा, "वह भी जुटा ली जाएगी!" छह महीने बाद सरकार ने अधिकांश राशि दे दी, और ठेकेदार कंपनी के मालिक ने शेष राशि देने की पेशकश की। फिर लोक निर्माण मंत्री द्वारा दी गई भूमि पर मंदिर का निर्माण किया गया। दो साल पहले गोमती नदी में बाढ़ आई और पुराने मंदिर परिसर का पिछला आधा हिस्सा बह गया।

इन मंदिरों की सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा यह है कि इन सभी में हनुमान जी की मूर्तियाँ स्थापित हैं। पत्थर या सीमेंट से निर्मित इन मूर्तियों में प्रार्थना, मंत्रोच्चार और जप के माध्यम से हनुमान जी की आत्मा का संचार किया जाता था, जिससे वे मूर्तियाँ बन जाती थीं और उनके साथ उसी प्रकार व्यवहार किया जाता था जैसे वास्तविक हनुमान जी के साथ किया जाता है।

जैसे-जैसे वर्ष बीतते गए, महाराजजी अपने भ्रमण के दौरान इन मंदिरों में अधिकाधिक समय बिताने लगे, और इससे समुदाय के मन में हनुमान और महाराजजी के बीच का संबंध और भी

मजबूत होता गया। यह संबंध महाराजजी के बारे में सबसे पुरानी कहानियों से जुड़ा था, जो मंदिरों के निर्माण से भी बहुत पहले की हैं। महाराजजी और हनुमान के बीच वास्तव में क्या संबंध है, यह बात भक्तों के मन में निरंतर बनी रहती है। वे लगातार हनुमान जी के बारे में बात करते थे और हममें से कई लोगों को हनुमान जी के विभिन्न नामों से पुकारते थे, जिनमें वे नाम भी शामिल थे जिनके साथ "दास" (सेवक) शब्द जुड़ा होता था; और उन्होंने कई लोगों को सेवा और भक्ति के उस मार्ग पर चलने का उपदेश दिया जो उन्हें हनुमान जी के और भी करीब ले जाता था।

एक व्यक्ति ने महाराजजी से पूछा, “मुझे साधना के लिए क्या करना चाहिए?” महाराजजी ने कहा, “इस बारे में चिंता मत करो, बस हनुमान जी की तरह राम का जाप करते रहो।” यह व्यक्ति एक वृद्ध भक्त था, जो अब अपने आजीविका के काम से सेवानिवृत्त हो चुका था।

हनुमान जी की तरह सेवा करें।

कुछ भक्तों का मानना है कि महाराजजी का हनुमान जी पर विशेष ध्यान देना इस बात से जुड़ा है कि वे भारत के एक पारंपरिक भक्ति संप्रदाय के सदस्य हैं, जिसमें भक्त और ईश्वर का संबंध स्वामी और सेवक के समान होता है—और हनुमान जी उस संबंध का पूर्ण साक्षात उदाहरण हैं। यह संप्रदाय हनुमान जी पर अपनी भक्ति केंद्रित करता है, जो रामायण में वर्णित वानर देवता हैं और पूर्ण एकाग्रता के साथ ईश्वर (राम के रूप में) की सेवा करते हैं। उनकी वीरतापूर्ण सेवा को दर्शाते हुए उनके कारनामे उन्हें ईश्वर के इतने करीब ले आते हैं कि वे "स्वयं राम की सांस" कहलाते हैं।

अन्य भक्त महाराजजी और हनुमान जी के बीच अक्सर दिखाई देने वाली गहरी आत्मीयता को उनके बीच एक ऐसे बंधन के प्रतिबिंब के रूप में देखते हैं जो भक्ति के सामान्य रूपों से कहीं अधिक व्यापक है।

जब महाराजजी नीब करोरी में ठहरे हुए थे, तब ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने हनुमान से सीधे बात की, मानो वे वहीं मौजूद हों।

राम

महाराजजी लखनऊ के अलीगंज में स्थित एक प्राचीन (आठ सौ या हजार वर्ष पुराने) हनुमान मंदिर में जाया करते थे। वे हनुमान जी के पास एक विशाल छायादार पेड़ के नीचे लंबे समय तक बैठते थे।

राम

जिस पहाड़ी पर बाद में हनुमानगढ़ मंदिर बना, वहाँ पहले खतरनाक भूस्खलन होते थे। महाराजजी ने के. को बताया कि हनुमान जी के आने पर यह सब रुक जाएगा; वे इस स्थान की रक्षा करेंगे। मंदिर बनने के बाद से अब तक कोई भूस्खलन नहीं हुआ है।

राम

महाराजजी ने कैंची में श्रीमद् भागवतम् का पाठ करने के लिए एक प्रसिद्ध पंडित को आमंत्रित किया। यह पंडित बड़ी और उत्साही भीड़ के सामने पाठ करने के आदी थे, और उन्होंने महाराजजी से शिकायत की कि इस अवसर पर उन्हें केवल कुछ अशिक्षित ग्रामीणों के सामने ही पाठ करना पड़ रहा है। महाराजजी ने उन्हें विनम्रता से डांटते हुए कहा, “चिंता मत करो।

हनुमानजी सुन रहे हैं।”

राम

पहाड़ियों में लगी जंगल की आग मंदिर के बेहद करीब तक आ गई थी, लेकिन परिसर की सीमा पर ही रुक गई। महाराजजी ने कहा, “बंदरों की सेना ने हमारी रक्षा की। उन्होंने आग बुझाई।”

राम

कैंची में हनुमान मूर्ति की स्थापना के अवसर पर महाराजजी दिन भर लगभग अनुपस्थित रहे। दोपहर बाद उन्होंने कुछ भक्तों से कहा, “चलिए हनुमान जी के दर्शन करते हैं। दूध की बाल्टी ले आइए। हम उन्हें थोड़ा दूध पिलाएंगे।” कमरे के चारों ओर भीड़ जमा होने लगी, लेकिन महाराजजी ने दरवाजा बंद कर दिया और अंदर केवल तीन-चार भक्त ही रह गए।

भक्तों में से एक ने सोचा, "मैं हमेशा से यह देखना चाहता था कि मूर्ति को भोजन कैसे कराया जाता है।"

जब भक्त ने यह सोचा, तो महाराजजी मुड़े और बोले, “सब लोग मुड़कर दीवार की ओर मुंह करके अपनी आंखें बंद कर लो।” सबने ऐसा ही किया, लेकिन वही भक्त देखने के लिए इतना बेताब था कि उसने आंखें खोलने का सोचा। जैसे ही उसने यह सोचा, महाराजजी ने कहा, “और अगर तुमने आंखें खोलीं तो तुम अंधे हो जाओगे।” अचानक कमरे में ऊर्जा का परिवर्तन महसूस हुआ। बंद पलकों के बावजूद उन्हें तेज रोशनी दिखाई दी और पीने की आवाज सुनाई दी। जब उन्हें मुड़ने की अनुमति मिली तो उन्होंने देखा कि बाल्टी खाली थी, फर्श पर दूध का एक छोटा सा गड्ढा था और हनुमान जी के मुंह से थोड़ा दूध टपक रहा था। महाराजजी ने उनसे कहा कि फर्श पर गिरा हुआ दूध इकट्ठा करके हनुमान जी को प्रसाद के रूप में बांट दें।

महाराजजी अक्सर निम्नलिखित कहानी सुनाते थे, जिसके बारे में कुछ भक्तों को संदेह होता था कि यह उनके बारे में ही है:

एक छोटे से गाँव में हनुमान जी का एक छोटा सा मंदिर था, जहाँ स्थानीय लोग दर्शन करने आते थे। वहाँ की परंपरा यह थी कि श्रद्धालु मिठाई लेकर आते और पुजारी को देते। पुजारी मिठाई को उस कमरे या आले में ले जाते जहाँ मूर्ति विराजमान होती है और पर्दा डाल देते हैं। फिर वे उचित मंत्रों का उच्चारण करते हुए मिठाई को मूर्ति को अर्पित करते हैं। इसके बाद पुजारी आमतौर पर कुछ मिठाई अपने पास रख लेते हैं ताकि बाद में आस-पास के गरीब बच्चों को दे सकें। बाकी मिठाई वे प्रसाद के रूप में श्रद्धालु को वापस दे देते हैं, जिसे श्रद्धालु हनुमान जी का आशीर्वाद मानकर ग्रहण करते हैं।

हुआ यूं कि गांव के बूढ़े पुजारी को परिवार में बीमारी के कारण कहीं जाना पड़ा। उन्होंने अपने जाने के दौरान मंदिर की देखभाल के लिए पड़ोस के एक लड़के को, जिसे मंदिर के आसपास रहना बहुत पसंद था, छोड़ दिया। जल्द ही कुछ भक्त मिठाई लेकर आए। लड़के ने भी पुजारी की तरह मिठाई ली और पर्दे के पीछे चला गया। हालांकि वह पहले कभी हनुमान जी के साथ पर्दा बंद होने के समय नहीं रहा था, फिर भी उसने मूर्ति को मिठाई अर्पित की। लेकिन हनुमान जी ने मिठाई नहीं ली। लड़का नाराज़ हो गया और हनुमान जी से मिठाई में से कुछ लेने की ज़िद करने लगा। उसने एक छड़ी उठाई और मूर्ति को पीटने लगा। अचानक थाली से सारी

मिठाई गायब हो गई। लड़का भक्तों के पास लौट आया और खुशी-खुशी बताया कि हनुमान जी ने उनकी भेंट स्वीकार कर ली है। भक्तों को हमेशा भेंट का कुछ हिस्सा वापस मिलने की आदत थी, इसलिए उन्होंने सोचा कि लड़के ने सारी भेंट अपने पास रख ली है। उसे पीटते हुए उन्होंने उसे भगा दिया। जब बूढ़ा पुजारी लौटा और उसे इस घटना के बारे में बताया गया, तो उसने कहा, "मैंने जीवन भर यही आशा की थी कि मैं इतना पवित्र हो जाऊँगा कि हनुमान जी मेरी भेंट स्वीकार कर लें। लेकिन मैं कभी ऐसा नहीं हो पाया। इस बालक में वह पवित्रता थी और वह बहुत भाग्यशाली था।"

राम

कैंची में महाराजजी के अंतिम दिन, वे हनुमान जी के सामने दो मिनट के लिए रुके और हाथ जोड़कर बैठ गए। उन्होंने केवल धोती पहनी हुई थी। वहाँ एकदम सन्नाटा था। एक पुराने भक्त ने बताया कि उन्होंने महाराजजी को ऐसा करते हुए केवल दूसरी बार देखा था। इससे पहले उन्होंने ऐसा मूर्ति की स्थापना के समय किया था।

लेकिन हममें से अधिकांश के लिए, हमने जो संबंध अनुभव किया है, वह इन कहानियों से कहीं अधिक घनिष्ठ है। हमारे लिए, महाराजजी हनुमान हैं। हनुमान जी के गुणों का वर्णन उनके बारे में विभिन्न ग्रंथों में इस प्रकार किया गया है:

मैं पवनदेव के पुत्र, श्री राम के प्रिय भक्त, वानरों के प्रधान, समस्त गुणों के भंडार, ज्ञानियों में श्रेष्ठ, राक्षस वंश के वन को भस्म करने वाली अग्नि के समान, स्वर्ण पर्वत के समान प्रकाशमान शरीर और असीम शक्ति से परिपूर्ण निवास वाले को प्रणाम करता हूँ। (तुलसीदास, श्री रामचरितमानस, अंग्रेजी अनुवाद। गोरखपुर, भारत: गीता प्रेस, 1968, पृष्ठ 595-596)

राम

यह हनुमान कौन है? राम ने इसे संसार में छोड़ा है। यह राम को जानता है और राम इसे जानते हैं। हनुमान कहीं से भी प्रवेश कर सकता है और कहीं से भी निकल सकता है। उसे रोका नहीं जा सकता, जैसे युद्ध में मुक्त हवा। हनुमान अत्याचारी को पहचान सकता है, वह शब्दों से नहीं, कर्मों को देखता है और जाकर उसकी दाढ़ी नोच लेगा। वेश और बातें एक साधारण जंगली जानवर को भ्रमित नहीं कर सकतीं... हनुमान आपके उदास स्वर को आनंदमय नृत्य में बदल देगा। उसका रक्षक बलवान है... पवन का पुत्र। (विलियम बक, रामायण। बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, 1976, पृष्ठ 427)

राम

हनुमान कोई बंदर नहीं, बल्कि बंदर के रूप में प्रकट हुए एक देवता हैं। उनकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। वे वीर और दयालु हैं, स्वयं प्रकाशमान हैं, दीन-हीनों के मित्र हैं, बलवान और बुद्धिमान हैं, और समय और स्थान के ज्ञाता हैं। (तुलसीदास और बक से रूपांतरित)

हनुमान को उनकी अपनी शक्तियों की याद दिलाना जरूरी है, क्योंकि उनमें आत्म-चेतना नहीं होती।

"हे शक्तिशाली हनुमान, सुनो; तुम चुप क्यों हो? पवनदेव के पुत्र, तुम अपने पिता के समान बलवान और बुद्धि, विवेक और आध्यात्मिक ज्ञान के भंडार हो। हे बालक, इस संसार में ऐसा कौन सा कार्य है जो तुम्हारे लिए असंभव हो? तुम श्री राम की सेवा के लिए ही पृथ्वी पर

अवतरित हुए हो।” ये शब्द सुनते ही हनुमान पर्वत के समान विशाल हो गए, उनका शरीर स्वर्णमय और तेजस्वी हो गया, मानो वे पर्वतों के दूसरे राजा हों। (तुलसीदास, पृष्ठ 593)

राम

आपने सीता को दर्शन देने के लिए लघु रूप धारण किया—फिर लंका को जलाने के लिए विशाल और भयानक रूप धारण किया। (हनुमान चालीसा)

राम

“पर मेरे पुत्र, सभी बंदर तुम्हारे जैसे बौने ही होंगे, जबकि राक्षस शक्तिशाली और महान योद्धा होते हैं। इस बात को लेकर मेरे मन में गहरी आशंकाएं हैं,” सीता ने कहा।

यह सुनकर बंदर ने अपना वास्तविक रूप प्रकट किया, जो सोने के पहाड़ के समान विशाल, युद्ध में भयंकर, महान शक्ति से परिपूर्ण और वीरता से भरपूर था। (तुलसीदास, पृष्ठ 608)

राम

वह उपवन में गया, फल खाया और पेड़ों को तोड़ने लगा। बाद में उसने रावण से कहा, “मैंने भूख लगने पर फल खाए और बंदर की तरह डालियाँ तोड़ दीं।”

रावण हँसा और व्यंग्यपूर्वक बोला, “हमें इस बंदर में सबसे बुद्धिमान गुरु मिल गया!” (तुलसीदास से रूपांतरित, पृष्ठ 610-614)

प्रेम के प्रति उनकी भूख कभी तृप्त नहीं होती।

सृष्टि की माता सीता, हनुमान जी के प्रति अपने अथाह प्रेम के कारण उन्हें भोजन कराना चाहती हैं। हनुमान जी भोजन करने लगते हैं। सीता जी लगातार भोजन पकाती और उन्हें परोसती रहती हैं, और हनुमान जी तब तक खाते रहते हैं जब तक कि भंडार खाली नहीं हो जाता। सीता जी कुछ और भोजन उधार लेकर और भोजन पकाती हैं, लेकिन हनुमान जी कहते रहते हैं, “माँ जी, और दीजिए!” अंत में, उनकी सास भोजन से भरी थालियाँ लेकर आती हैं, लेकिन सीता जी द्वारा परोसे जाने पर भी हनुमान जी उसे नहीं खाते। अपनी विवेक शक्ति से वे अंतर जानते हैं और कहते हैं, “नहीं माँ जी, यह आपके हाथों से नहीं पका है।” (एक लोककथा)

राम

भगवान के गुणों को याद करते हुए हनुमान की आँखों में आँसू भर आए। उन्हें भगवान की कथा का अमृत हमेशा से ही प्राप्त था। उनकी एकमात्र इच्छा राम के भक्त बने रहने की थी। भगवान ने बार-बार उन्हें ऊपर उठाने का प्रयास किया, परन्तु वे प्रेम में इतने लीन थे कि उठ ही नहीं पाए। जब राम ने उनसे पूछा कि वे क्या चाहते हैं, तो हनुमान ने उत्तर दिया, “मुझे निरंतर भक्ति प्रदान कीजिए, जो परम आनंद का स्रोत है।”

राम ने उत्तर दिया, “ऐसा ही हो।” (तुलसीदास और हनुमान चालीसा से रूपांतरित)

राम

हनुमान राम से कहते हैं, “बंदर की सबसे बड़ी वीरता तो एक डाल से दूसरी डाल पर उछल-कूद करने में होती है। मैंने जो कुछ भी समुद्र पार किया, स्वर्ण नगर को जलाया, राक्षस सेना का संहार किया और अशोक वन को नष्ट किया, वह सब आपकी शक्ति के कारण ही संभव हो पाया; हे प्रभु, इसमें मेरा कोई योगदान नहीं है।” (तुलसीदास, पृष्ठ 620)

राम

"तब हनुमान ने अपने नुकीले नाखूनों से उसकी छाती चीर दी और मांस को खींचकर बाहर निकाला। और देखो, हर हड्डी पर छोटे-छोटे अक्षरों में बार-बार लिखा था... राम राम राम... और उसके हृदय में राम और सीता विराजमान थे।" (बक और तुलसीदास से रूपांतरित)

राम

"हनुमान, आपकी कृपा की छत्रछाया में आने वालों को सर्वोपरि आनंद प्राप्त होता है, और संसार के कार्य, चाहे कितने भी कठिन क्यों न हों, सरल हो जाते हैं।" (हनुमान चालीसा)

राम

फिर हनुमान ने आंधी की तरह उदासी को दूर भगाया, प्रकाश की तरह साहस प्रदान किया। (बक, पृ. 223)

राम

"हे हनुमान जी, मैं तो निराशा के सागर में डूब रहा था, लेकिन आप मेरे लिए एक नाव बनकर आए हैं।" (तुलसीदास, पृष्ठ 607)

राम

"हे प्यारे बंदर, तुम्हारे दर्शन मात्र से ही मेरे सभी पाप धुल गए हैं।" (तुलसीदास, पृष्ठ 600)

राम

"हे हनुमान।"

"मेरे महाराज।" हनुमान राम के सामने घुटने टेक दिए।

राम ने कहा, "जब तक मनुष्य तुम्हारे बारे में बात करते रहेंगे, तुम पृथ्वी पर जीवित रहोगे। तुम्हारे समान कोई नहीं है। तुम्हारा हृदय सच्चा है; तुम्हारी भुजाएँ बलवान हैं; तुम हर काम करने की शक्ति रखते हो। तुमने मेरी निष्ठापूर्वक सेवा की है और मेरे लिए वे कार्य किए हैं जो असंभव थे।"

"कोई बात नहीं," हनुमान ने कहा, "मैं तुम्हारा दोस्त हूँ, बस इतना ही।" (बक, पृष्ठ 426)

राम

आज भी चीड़ के घने जंगलों में हनुमान निवास करते हैं। राम का नाम जहाँ भी लिया जाता है, वे हमेशा सुनते रहते हैं; वे राम के पुराने कारनामों और उनकी अपनी सच्ची कहानियों को निरंतर सुनते रहते हैं। इसलिए सावधान रहें। वे यहीं हैं। (बक, पृष्ठ 432)

यह सब महाराजजी के कितना समान है... महाराजजी जो खेल-खेल में फल इकट्ठा करते और फेंकते हैं; जिनका असाधारण रूप से लंबी भुजाओं वाला शरीर आकार और रूप बदलता रहता है, एक पल में मच्छर जितना छोटा और दूसरे पल में सोने के पहाड़ जितना विशाल हो जाता है; जो आश्चर्यजनक चपलता और अद्भुत शक्ति के साथ निरंतर एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करते रहते हैं; जो अपने भक्तों के लिए करुणा का विशाल सागर हैं; जो अपनी असाधारण शक्तियों को न तो जानते हैं और न ही स्वीकार करते हैं; लेकिन जो राम के प्रति अपने पूर्ण प्रेम को कभी नहीं भूलते।

भक्तों की दृष्टि से:

एक दिन मैं महाराजजी के साथ कैंची मंदिर के पास एक दीवार पर बैठा था। एक पंडित पास में बैठे लोगों को रामायण सुना रहे थे, तभी अचानक मुझे बहुत बेचैनी होने लगी। महाराजजी ने

मेरा हाथ पकड़ा और मुझे शिव मंदिर ले गए और हम उसके सामने बैठ गए। मैंने महाराजजी की ओर देखा, लेकिन मुझे एक विशाल बंदर दिखाई दिया। मुझे बस इतना ही याद है। बाकी लोगों का कहना है कि उसी क्षण हम दोनों गायब हो गए। कई घंटों बाद महाराजजी मंदिर में वापस आए और चिल्लाने लगे, “दादा कहाँ हैं? दादा कहाँ हैं?” खोज शुरू हुई और मैं नदी के किनारे ऊपर की ओर मिला, होश में आते-आते। मुझे इसके बाद कुछ याद नहीं है।

राम

महाराजजी कहते हैं कि चित्रकूट के सभी पत्थर अनमोल रत्नों के समान हैं। लेकिन एसएम ने कहा, “जब महाराजजी हैं तो पत्थर क्यों इकट्ठा कर रही हो?” इस बातचीत के तुरंत बाद, महाराजजी मंदिर में थे और स्नान करने गए। बाद में एसएम ने उनके हाथ धोने में मदद की। जब वे जाने लगे तो वहाँ रखे छोटे पत्थरों पर उनके गीले पैरों के निशान थे। उन्होंने उन निशानों को इकट्ठा किया और अपनी साड़ी में रख लिया। जब उनकी बेटी आई, तो एसएम ने उसे पत्थर वापस घर ले जाकर रखने को कहा। कुछ दिनों बाद वह घर लौटीं और उस डिब्बे को खोला जिसमें उन्होंने पत्थर रखे थे। हर पत्थर पर हनुमान जी के निशान थे। उनके पति को उनकी बात पर विश्वास नहीं हुआ, इसलिए उन्होंने एक आवर्धक लेंस लिया और सचमुच निशान वहाँ थे। बाद में वह डिब्बा और सारे पत्थर रहस्यमय तरीके से गायब हो गए।

राम

एक दिन महाराजजी अपने कमरे में थे जबकि दादाजी रसोई में थे। महाराजजी ने पुकारा, “दादाजी,” और दादाजी दौड़कर गलियारे में गए और देखा कि महाराजजी अपने दरवाजे के बाहर बिना कंबल के खड़े हैं, उनकी धोती पीछे पूंछ की तरह लटक रही है। उनका शरीर इतना विशाल था कि पूरा गलियारा भर गया था। दादाजी उनके चरणों में गिर पड़े और महाराजजी वापस अपने कमरे में चले गए।

राम

एक बार बहुत से लोग महाराजजी के चारों ओर बैठे थे। वे अत्यंत प्रसन्न प्रतीत हो रहे थे, और एक छोटी बच्ची उनके चरणों में बैठी थी। अचानक वह रोने लगी। लोगों ने उससे पूछा कि वह क्यों रो रही है। उसने कहा, “मैं बता नहीं सकती! मैंने अभी-अभी महाराजजी की छाती में राम और सीता को देखा।” फिर उसने सीता के वस्त्रों और उनके रूप-रंग का वर्णन करना शुरू किया। महाराजजी मौन रहे।

राम

महाराजजी को देखकर कुछ भक्त समाधि में लीन हो जाते थे; फिर दूसरे भक्त उनसे अपने लिए भी समाधि में लीन होने का अनुरोध करते थे। एक बार ऐसा होने पर महाराजजी क्रोधित हो गए, लेकिन बाद में स्नान करते समय उन्होंने अपनी पीठ खुजलाना शुरू कर दिया, और उन भक्तों ने उनकी पीठ पर बाल देखे और उन्हें बंदर की तरह गुर्राते हुए सुना। वे सभी परमानंद से भर गए।

राम

एक खास आदमी जब भी महाराजजी के पास आता, उन्हें देखते ही बेहोश हो जाता। जब उन्हें होश आता, तो वे बस इतना ही कहते, "मुझे तो बस एक विशालकाय बंदर दिखाई दिया।"

राम

एक भक्त ने कहा, "महाराज जी के शरीर में राम की ऊर्जा का संचार हो रहा था।"

राम

एक बार एक महिला ने अपने पति से कहा, “मुझे बगल वाले कमरे में कुछ आवाज़ सुनाई दे रही है।” उनका शयनकक्ष महाराजजी के लिए रखे गए कमरे के पास ही था, लेकिन उस समय वे वहाँ नहीं रह रहे थे। वे यह देखने के लिए अंदर गए कि आवाज़ किस चीज़ की है और उन्हें दीवार पर छत तक ठीक महाराजजी के पदचिह्नों जैसे निशान मिले।

राम

एसएम ने कहा कि उन्होंने एक बार महाराजजी का शरीर देखा था, जिसकी हर कोशिका पर राम लिखा हुआ था।

राम

एक बार महाराजजी हरिद्वार में थे और एक संन्यासी के घर के दरवाजे पर ठहर गए। उस संन्यासी को महाराजजी से घृणा हो गई और उसने उन्हें भगाने की असफल कोशिश की। एक दिन साधु किशमिश, बादाम आदि से बनी कुछ बेहतरीन मिठाइयाँ बना रहे थे। महाराजजी उन्हें देख रहे थे और उन पर टिप्पणी कर रहे थे। साधु ने कहा कि वह उन्हें किसी के साथ साझा नहीं करेंगे और महाराजजी को चले जाने को कहा, लेकिन महाराजजी वहीं डटे रहे। जब मिठाइयाँ तैयार हो गईं, तो साधु गंगा में स्नान करने चले गए और महाराजजी को घर की रखवाली करने के लिए छोड़ दिया। जब वे लौटे तो उन्होंने देखा कि अधिकांश मिठाइयाँ गायब थीं। महाराजजी ने कहा कि वे देखने में स्वादिष्ट लग रही थीं, इसलिए उन्होंने एक मिठाई चखने का सोचा; वे इतनी स्वादिष्ट थीं कि वे उन्हें तब तक खाते रहे जब तक कि वे लगभग खत्म नहीं हो गईं।

राम

अर्थशास्त्र के प्रोफेसर दादा ने बताया कि कैसे उन्होंने घर पर अपने अध्ययन कक्ष में देर रात तक परीक्षा की प्रतियां जांचीं और फिर सो गए। घर पूरी तरह से बंद था और महाराजजी कई सौ मील दूर थे। जब दादा सुबह उठे, तो उन्होंने सबसे ऊपर वाले पेपर पर राम, राम, राम लिखा हुआ पाया। जाहिर तौर पर यह हनुमान जी की शरारत थी।

कुछ भक्तों ने महाराजजी में हनुमान जी के दर्शन ही नहीं किए, बल्कि उनकी वाणी भी सुनी...

रामायण पाठ के दौरान, जब पाठक ने पूछा कि उन्हें कौन सा भाग पढ़ना चाहिए, तो महाराजजी ने कहा, "वह भाग पढ़िए जिसमें मैं विभीषण से बात कर रहा हूँ।" (वास्तव में, हनुमान जी ने ही विभीषण से बात की थी।)

राम

कैंची मंदिर के बारे में चर्चा के दौरान महाराजजी ने कहा, “क्या आपको लगता है कि मैं संपत्तियां जमा कर रहा हूं और जमींदार बन रहा हूं? मुझे किसी भी चीज से कोई लगाव नहीं है। मैं सब कुछ वैसे ही छोड़ सकता हूं जैसे मैंने लंका को छोड़ा था।” (रामायण में हनुमान ने लंका को जलाया था।)

राम

एक बार दादा के घर पर महाराजजी बीमारी का बहाना बनाकर अपने कमरे के दरवाजे बाहर

से बंद कर लिए थे। बाद में उन्हें गली में दौड़ते हुए देखा गया। जब उनसे पूछा गया कि वे बंद दरवाजों से कैसे बाहर निकले, तो उन्होंने कहा, "बंदर मच्छर जितना छोटा हो गया और खिड़की से बाहर उड़ गया।"

राम

"महाराज जी, आप सब कुछ कर सकते हैं। आप हनुमान हैं।"

"मैं हनुमान नहीं हूँ। मैं कुछ नहीं कर सकता... मैं सब कुछ हूँ। मैं किसी के लिए भी कुछ भी कर सकता हूँ।"

मैं जहां भी देखता हूं, मुझे सिर्फ रैम ही नजर आती है, और
इसीलिए मैं हमेशा हर चीज का सम्मान करता हूं।
मैं कुछ नहीं करता। सब कुछ भगवान ही करते हैं।

हनुमान जी, हम पर अपनी कृपा बनाए रखें।
दिव्य गुरु

हे पवनपुत्र, दुखों का निवारण करने वाले!
आशीर्वादों का साकार रूप,
आप हमेशा हमारे दिलों में रहेंगे।
—हनुमान चालीसा

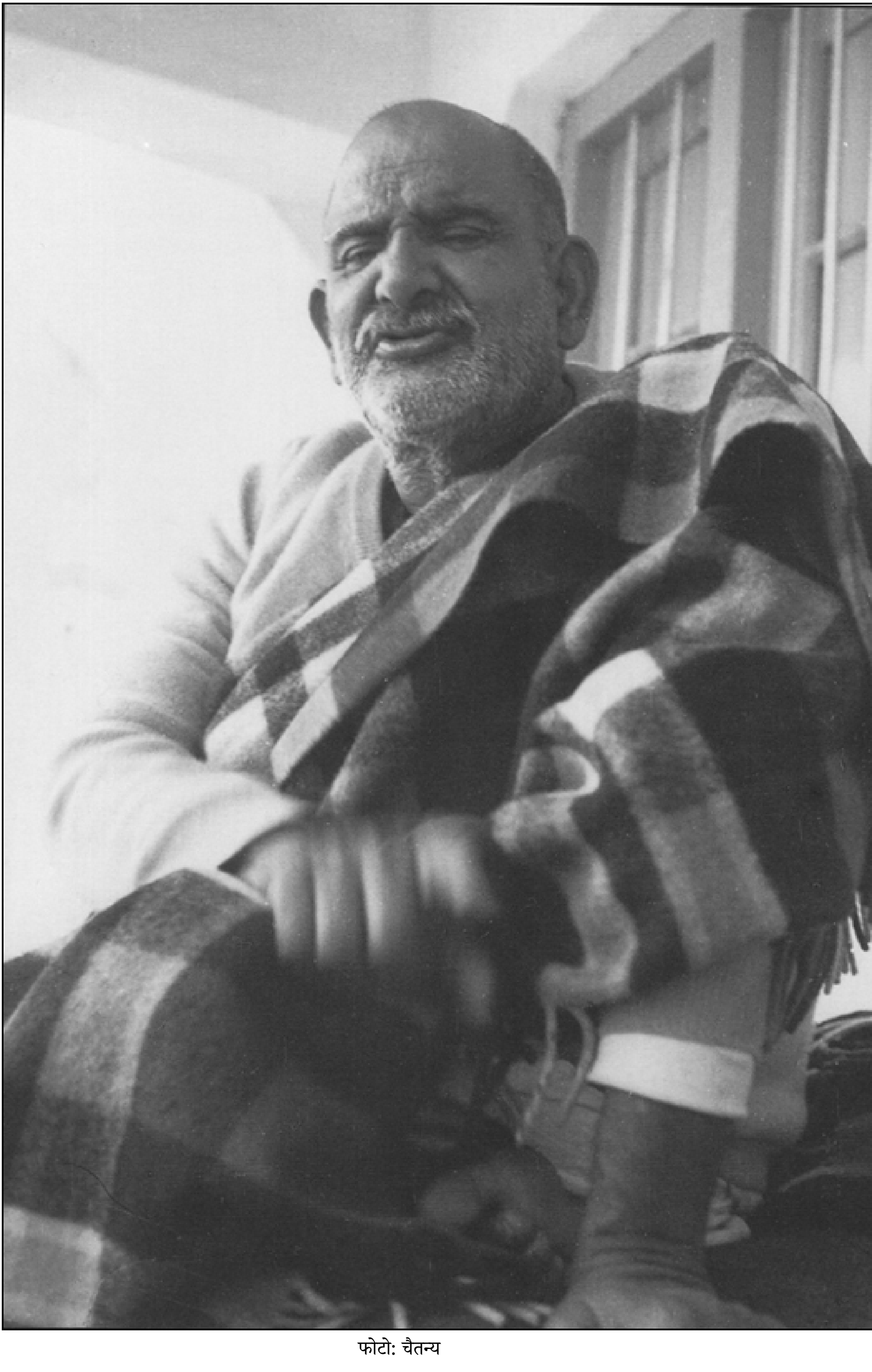
फोटो: चैतन्य

जाओ!

मैंने उनके बारे में अमेरिका में सुना था और उनसे मिलने के लिए भारत की तीर्थयात्रा करने के लिए पैसे बचाए थे। मैं फल लेकर मंदिर पहुँचा, जो किसी ने मुझे प्रसाद के रूप में लाने को कहा था। द्वारपाल ने मुझे अंदर जाने दिया, जहाँ मैंने उन्हें लकड़ी के पलंग पर, एक चादर ओढ़े हुए बैठे देखा। उनके चारों ओर ज़मीन पर बहुत से भारतीय और पश्चिमी लोग बैठे थे। मैं थोड़ा घबराया हुआ था, इसलिए मैं आँगन के किनारे से पलंग तक गया और जब वे दूसरी ओर देख रहे थे, तब मैंने फल रख दिए। मैंने वैसे ही प्रणाम किया जैसे मैंने किसी और को करते देखा था, और जब मैंने अपना सिर उठाया तो वे सीधे मेरी ओर देख रहे थे। एक पल के लिए सब कुछ थम गया। फिर उन्होंने कहा, "जाओ!"

मेरी हिंदी कमजोर थी, पर वो शब्द मुझे पता था! दिल्ली में मेरे चारों ओर जमा हुए भिखारियों को भगाने के लिए मैंने यही शब्द इस्तेमाल किया था। इसका मतलब था, "दफा हो जाओ!" या "दूर चले जाओ!" मैं दंग रह गई और अविश्वास, शर्मिंदगी, गुस्सा और अपराधबोध से भर गई। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि हँसूँ या रोऊँ। मैं अमेरिका से इतनी दूर आई थी और उसने मुझसे सबसे पहले यही कहा, "दफा हो जाओ!" लेकिन फिर मैंने सोचा, "ठीक है। तुम्हें बेहतर पता है।" और उसने मुझे एक फल वापस फेंक दिया और फिर से "जाओ" कहा। लेकिन इस बार ठीक था; इस बार मैंने कुछ और सुना। ये "दफा हो जाओ!" नहीं था, बल्कि "सब ठीक है। मैं तुमसे प्यार करता हूँ। जाओ।"

अब मुझे समझ आ रहा है कि सब कुछ उन्हीं कुछ मिनटों में घट गया। उन्होंने जो भी करना ज़रूरी था, किया; मुझे जो चाहिए था, वो मिल गया। उसके बाद जितने भी पल मैंने उनके साथ बिताए, वो बहुत ही शानदार थे, लेकिन वो तो बस बोनस थे।

महाराजजी द्वारा "जाओ" शब्द के प्रयोग में विविधताएं अनंत थीं - एक गर्जना से लेकर (कभी-कभी अवज्ञाकारी के लिए "आप!" से पहले) एक कोमल "जाओ, मां..." तक, जब वे अपने चरणों में प्रणाम करने वाली एक महिला भक्त को धीरे से थपथपाते थे।

आम तौर पर दिन भर जब भक्त उनके सामने आते, तो वे उन्हें एक फल या मिठाई देते, एक-दो सवाल पूछते और फिर उन्हें विदा करते। दिनभर बीच-बीच में दर्शन देते समय अन्य भक्तों को भी उनके साथ बैठने की अनुमति दी जाती थी। यह दिलचस्प है कि "चले जाओ" जैसा शब्द, जो देखने में अस्वीकृति का भाव दर्शाता है, इतने प्रेम से कहा जाता था कि उसका अर्थ "आशीर्वाद के साथ जाओ", "कृपा के साथ जाओ" या "मेरे प्रेम के साथ जाओ" हो गया।

आश्रम के दूसरे हिस्से में जाना होता था; भोजन या विश्राम के लिए जाना होता था; किसी निर्धारित कर्तव्य या सेवा को पूरा करने के लिए जाना होता था; अगर कोई अच्छा प्रश्न सूझ जाए तो जाना टाला भी जा सकता था, या किसी व्यवधान, जैसे कि नए लोगों के आने पर, उसे अनदेखा भी किया जा सकता था। किसी अपराध के लिए अपमान और निष्कासन का जाना भी होता था (अक्सर अपराधी के दूर चले जाने के बाद हल्की हंसी आती थी)।

यह शब्द अपनी सर्वव्यापी गुणवत्ता में ज़ेन-समान हो गया और जब आश्रम में प्रवेश करने वाले एक भक्त को देखते ही यह शब्द अकारण गर्जना करता था, तो इसका प्रभाव पूर्णतः ज़ेन

जैसा होता था।

जाओ एक पल के लिए भी हो सकता है या हमेशा के लिए भी—पास के शहर नैनीताल में एक रात के लिए या, पश्चिमी लोगों के लिए सबसे डरावना, अमेरिका में महाजाओ (बड़ी यात्रा)। अगर कोई उस जोखिम भरे खेल को खेलने को तैयार हो तो जाओ पर सवाल भी उठाया जा सकता है। क्योंकि एक जाओ पर विवाद हो सकता है और वह सफल भी हो सकता है; लेकिन पवित्र बनारस की यात्रा के लिए एक सप्ताह का जाओ, किसी की आह के जवाब में, भारत के सबसे दक्षिणी छोर पर स्थित रामेश्वरम की तीर्थयात्रा के लिए एक महीने के जाओ में भी बदल सकता है। यह कभी भी केवल "जाओ!" नहीं होता था, बल्कि हमेशा "प्रेम के साथ जाओ" होता था।

हम आश्रम के सामने वाली पहाड़ी पर दूरबीन लेकर बैठे थे और महाराजजी को देख रहे थे, जो आश्रम परिसर के पीछे वाली इमारत की छत पर बैठे थे। हमने देखा कि एक भारतीय व्यक्ति, जो महाराजजी के साथ रहने की कोशिश कर रहा था, सीढ़ियों से चुपके से ऊपर आया, अपना सिर बहुत नीचे झुकाया और छत पर दौड़कर महाराजजी की ओर बढ़ा। इतनी दूरी से भी, हालांकि हम सुन नहीं पा रहे थे, हम उस व्यक्ति और उस लड़के को तुरंत नीचे जाते हुए देख सकते थे। "अरे, वह चला गया!" हम ऊपर गांजा पी रहे थे, दही खा रहे थे और दूरबीन से दर्शन कर रहे थे। जब महाराजजी को पता चला कि उन्हें दूरबीन से देखा जा रहा है, तो उन्होंने दूरबीन से देखा और उन्हें वह पसंद आई।

राम

हम महाराजजी के साथ बैठे होते और वो हम सबको जाने को कहते, और मैं अकेला होता जो उठकर चला जाता। मेरी पूरी ट्रेनिंग यही थी कि गुरु जो कहते, मैं वही करता। फिर मैं अकेला बाहर रह जाता। बाकी सब अंदर हँसते-हँसते उनके साथ बातें करते, मानो उन्होंने कभी 'जाओ' कहा ही न हो। चैतन्य शेखी बघारता था कि उसने कितने 'जाओ' सुने हैं, जैसे युद्ध के निशान हों। लेकिन मुझे 'जाओ' सुनकर वहाँ से न जाने में बहुत मुश्किल होती थी। फिर मैं किसी चीज़ के पीछे छिप जाता और देखता कि क्या वो सच में ऐसा कह रहे हैं। बाद में मुझे समझ आया कि कभी-कभी वो कहते थे और आप समझ जाते थे कि वो सच में ऐसा कह रहे हैं; कभी-कभी कहते थे और बात अलग होती थी।

राम

एक बार महाराजजी हम सबको एक हफ्ते के लिए दिल्ली ले जा रहे थे, कृष्णमूर्ति को सुनने के लिए, जिन्हें महाराजजी "राम-मूर्ति" कहते थे। मैं जाना नहीं चाहता था, इसलिए छिप रहा था, लेकिन जैसे ही मैं एक खंभे के पास पहुँचा, मेरी मुलाकात महाराजजी से हो गई, जो वहाँ अकेले खड़े थे। उन्होंने मेरी तरफ देखा और उनका पूरा शरीर काँपने लगा और वे ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे: "ओह-हो-हो-हो," मानो वे गहरे दुःख से व्याकुल हों और मगरमच्छ के आँसू बहा रहे हों। और वे बार-बार रोते हुए कह रहे थे, "दिल्ली, दिल्ली।" ज़ाहिर है, मैं ज़ोर से हँस पड़ा और आखिरकार दिल्ली चला गया। दिल्ली में रहते हुए कृष्णमूर्ति ने बड़ी श्रद्धा से कहा, "मैं सभी गुरुओं से घृणा करता हूँ!" बिल्कुल सही!

राम

दक्षिण भारत में एक महीने की तीर्थयात्रा के बाद, हम सुबह-सुबह इलाहाबाद लौट आए, महाराजजी के साथ एक और लंबे, शांत समय की उम्मीद में। जब मैं सुबह 6:30 बजे उनके कमरे में पहुँचा, तो उनके पहले शब्द थे, "क्या आपका वीज़ा नवीनीकृत हो गया है?"

"मुझे नहीं पता, महाराजजी। मैंने आवेदन कर दिया है।"

"नहीं, ऐसा नहीं हुआ है। जाओ! दिल्ली जाओ।"

"अब?" मुझे घर में स्वागत किए जाने से पहले ही बाहर निकाल दिए जाने पर थोड़ा आश्चर्य हुआ।

"आज सुबह 9:30 बजे वाली ट्रेन से जाइए।"

इस दुखद घटना के निपटारे के बाद, महाराजजी अत्यंत स्नेहशील हो उठे, अपनी गद्दी पर लोटपोट होने लगे, रामेश्वरम मंदिर से लाए रुद्राक्ष की मालाएँ बाँटने लगे, और मेरी दाढ़ी को प्यार से खींचने और मुझे थपथपाने लगे। हालाँकि मैंने उन्हें मुझे वापस भेजने का फैसला बदलने के लिए मनाने की कोशिश की, फिर भी मैं सुबह 9:30 बजे ट्रेन में वापस आ गया।

दिल्ली में महाराजजी ने मेरे लिए सरकारी दफ्तर के एक छोटे अधिकारी से मदद का इंतजाम कर दिया था। और यहीं से नौकरशाही की लालफीताशाही में उलझने का एक और दौर शुरू हुआ। हालात बद से बदतर होते जा रहे थे। पतझड़ के मौसम में मैंने पहाड़ों में केके के साथ वीजा विस्तार का काम निपटाने की कोशिश की थी। उन्होंने उस समुदाय के वीजा ब्यूरो के प्रमुख से मेरी मुलाकात का इंतजाम किया था। लेकिन वे प्रयास विफल हो गए और अब दिल्ली में काम और भी मुश्किल हो गया। महाराजजी की पीठ पीछे केके के साथ ये सारी चालें महाराजजी ने भी नहीं छोड़ीं। उन्होंने मेरा खूब मजाक उड़ाया कि केके अब मेरा सलाहकार, मेरा गुरु है, और अगर मैंने केके के जरिए वीजा बनवाने की कोशिश न की होती, तो अब सब ठीक हो जाता।

जैसे-जैसे फरवरी का अंत नजदीक आता गया और वीजा की स्थिति निराशाजनक लगने लगी, मुझे अचानक पिछले फरवरी का वह समय याद आ गया जब मैंने भारत की इस यात्रा के दौरान पहली बार महाराजजी को देखा था। उन्होंने पूछा था, "आप कितने दिन रुकना चाहते हैं?"

"हमेशा के लिए।"

"मार्च?"

"आपका मतलब अगले महीने से है?"

"ठीक है, मार्च से एक साल बाद।"

और अब, एक साल बाद मार्च की शुरुआत में, केके और महाराजजी द्वारा मेरी मदद करने के तमाम प्रयासों के बावजूद, मुझे सरकार से "भारत छोड़ो" का नोटिस मिल गया। इसमें कोई शक नहीं था: महाराजजी अपने गंदे काम करवाने के लिए सरकार का इस्तेमाल कर रहे थे। मैं बस हंस सकता था और एक बार फिर आत्मसमर्पण कर सकता था। उन्होंने हर तरह से चाल चली थी।

आम तौर पर मैं पवित्रता या धर्म के सामने रोने लगती हूँ। मुझे ठीक से पता नहीं क्यों, लेकिन ऐसा लगता है कि ऐसी पवित्रता को सहन करना मेरे लिए असहनीय है। मैं अत्यधिक प्रसन्नता में भी रोती हूँ और कभी-कभार बहुत उदास होने पर भी। महाराजजी से विदाई के समय मैं बहुत रोई, और फिर से, मुझे ठीक से पता नहीं क्यों। श्रीमती सोनी को मेरे रोने पर बहुत चिंता हुई और उन्होंने कहा, "रोओ मत। तुम वापस आ पाओगी—है ना महाराजजी?"

महाराजजी ने कहा, "वह एक साल में आ सकता है... या छह महीने में।" लेकिन मैं सचमुच दुख से नहीं रो रही थी; बल्कि खुशी से रो रही थी, क्योंकि महाराजजी ने मुझे बताया था कि लोगों की सेवा करना मेरा धर्म है। मेरा काम स्पष्ट था। और ऐसा लग रहा था जैसे वह मुझे इसे करने के लिए कह रहे हों।

मुझे याद है कि उस दिन महाराजजी ने दो और बातें कही थीं। पहली बात उन्होंने कही, "मैं सदा तुम्हारे साथ जुड़ा रहूंगा।" और दूसरी बात थी, "जाओ।" (आर.डी.)

> व्यक्तिगत कर्मों के कारण, लोगों को संत से दूर भेजा जाना आवश्यक है। यह कैसे किया जाता है, यह भिन्न-भिन्न हो सकता है। जब संगति का समय समाप्त हो जाता है, तो वियोग अनिवार्य हो जाता है।

एक महीने के भीतर ही मैं अमेरिका वापस लौट गया, और मुझे ज़रा भी अफ़सोस नहीं था। मैं जाने को लेकर बहुत खुश था। महाराज जी ऐसी ऊर्जा प्रदान करते थे कि आपको जाने का ज़रा भी दुख नहीं होता था, आप जाने के लिए बेहद उत्साहित होते थे।

> मैं लोगों को दूर भेज देता हूँ क्योंकि लगाव दोनों तरफ से होता है।
>
> मैं अपने किसी भी व्यक्ति को मुझसे भागने नहीं दूंगा।

महान भगदड़

कैंची में महाराजजी का अंतिम दिन दर्शन, कीर्तन और प्रार्थना में बीता। भारतीय और पश्चिमी दोनों भक्त वहाँ एकत्रित थे। महाराजजी मंदिर और अन्य स्थानों पर सभी का हालचाल पूछ रहे थे। उन्होंने दो बार अपने एक भारतीय भक्त को समाधि में लीन किया और फिर उनके सिर पर अपना कंबल डालकर उन्हें समाधि से बाहर निकाला। एक बार उन्होंने वहाँ उपस्थित लोगों से कहा, “ये आपके गुरु हैं। ये युवा हैं और मैं वृद्ध। ये जिएंगे और मैं मरूंगा!” सब लोग हँस पड़े। फिर उन्होंने पश्चिमी भक्तों से हनुमान जी के लिए गीत गाने को कहा। उनकी आँखों में आँसू थे। भारतीय महिलाओं ने उनके सामने आरती की और सभी ने माथे पर तिलक लगवाया।

फिर वे स्नान और भोजन करने गए और संकेत दिया कि वे चार-पाँच दिनों के लिए जा रहे हैं। अपने कमरे से बाहर आकर वे मंदिर गए और हनुमान जी की मूर्ति के सामने दो-तीन मिनट तक मौन प्रणाम करते हुए हाथ जोड़कर रुके। फिर वे रुके और मंदिर में मौजूद सभी मूर्तियों को बारी-बारी से प्रणाम किया। मंदिर परिसर से बाहर पुल पार करते समय उनकी मुलाकात एक बुजुर्ग भक्त से हुई जो फोटोग्राफर थे। महाराजजी ने उन्हें एक पुरानी तस्वीर दी और उसे कॉपी करके सबको बांटने को कहा। उन्होंने निर्देश दिया कि प्रतिदिन भोजन कराना बंद कर दिया जाए और माताओं को नैनीताल ले जाया जाए। फिर उन्होंने धीरे से कहा, “आज मैं केंद्रीय जेल से हमेशा के लिए रिहा हो गया हूँ।” जब वे थाने ले जाने वाली गाड़ी के पास पहुँचे, तो उनके कंधों से कंबल फिसलकर ज़मीन पर गिर गया। एक भक्त ने उसे वापस ओढ़ाने की कोशिश की, लेकिन महाराजजी ने कहा, “छोड़ो। किसी भी चीज़ से आसक्त नहीं होना चाहिए।” बाकी लोगों ने उसे मोड़कर गाड़ी में रख दिया।

जैसे ही वे गाड़ी में बैठे, पास के भोवाली गाँव से एक बूढ़ी औरत आ पहुँची। महाराजजी ने कहा, “माँ, मैं आपका इंतज़ार कर रहा था।” उन्होंने उनके सिर पर हाथ फेरा और कहा, “मैं जा रहा हूँ।” वे हंसमुख और विनोदी स्वभाव के थे।

कार का चालक भी एक पुराना और भरोसेमंद भक्त था। उसने बताया कि रेलवे स्टेशन जाते समय उसे एहसास हुआ कि महाराजजी के पैर बहुत बड़े हो गए हैं। उसने कहा, "मैं डर गया था।"

महाराजजी उनसे बार-बार कह रहे थे, “भाग्य क्या होता है? आगे क्या होगा? कल का तो हमें पता भी नहीं।” वे ट्रेन के लिए स्टेशन जल्दी पहुँच गए, इसलिए दो घंटे तक डिब्बे में बैठे रहे। महाराजजी ने एक सुंदर इंद्रधनुष की ओर इशारा करते हुए कहा, “इस प्राकृतिक सुंदरता को देखो। ईश्वर की रचना कितनी सुंदर है, मनुष्य कभी भी इतनी सुंदर चीज नहीं बना सकता।”

महाराजजी और उनके तथा रवि नामक एक युवा भक्त के लिए आगरा के टिकट खरीदे जा चुके थे। ट्रेन में महाराजजी पूरी रात सोए नहीं और भक्त को जगाते हुए कहते रहे, “मुझे नींद नहीं आ रही, मुझसे बात करो।” रवि ने उनसे वह दूध पीने को कहा जो माताओं ने थर्मस में भेजा था, लेकिन दूध खराब हो चुका था। महाराजजी ने कहा, “इसे फेंक दो, थर्मस भी फेंक दो।” रवि ऐसा नहीं करना चाहता था, लेकिन महाराजजी ने स्वयं ऐसा करते हुए कहा, “इसे फेंक दो, मुझे अब इसकी आवश्यकता नहीं है।” उन्होंने पूरी रात अनेक बातों और अनेक लोगों के बारे में चर्चा की। उन्होंने कहा, “मैं पृथ्वी पर केवल धर्म का प्रचार करने के लिए आया हूँ।”

आगरा पहुँचते ही महाराजजी ट्रेन से कूद गए, जबकि रवि सामान लेकर उनके पीछे-पीछे चल रहा था। प्लेटफार्म पर चलने के बजाय, महाराजजी आसानी से कूद गए, छह पटरियाँ पार करते हुए सीधे मुख्य प्लेटफार्म पर पहुँच गए। रवि टिकट काउंटर पर उनसे मिला, जहाँ महाराजजी ने टिकट के लिए उन्हें रोका था। फिर महाराजजी ने कई रिक्शा चालकों से मोलभाव किया: एक ने तीन रुपये (लगभग तीस सेंट) मांगे, जिसे महाराजजी ने बहुत ज़्यादा बताया। आखिरकार एक किराया तय हुआ और वे चल पड़े, केवल महाराजजी को ही रास्ता पता था। रास्ते में, महाराजजी ने एक घर की ओर इशारा करते हुए कहा, "उनका बेटा अमेरिका चला गया है और परिवार बहुत दुखी है। आजकल बेटे अपने पिता की सेवा नहीं करते।" घर पहुँचकर, उन्होंने रवि से कहा कि वह रिक्शा चालक को गंगाजल से भरी दूध की बाल्टी दे दे, जिसे महाराजजी हमेशा अपने साथ रखते थे। उन्होंने फिर कहा, "किसी भी चीज़ से आसक्ति मत रखो।"

एक घंटे को छोड़कर, जब महाराजजी हृदय रोग विशेषज्ञ से मिलने गए थे (उन्होंने सीने में दर्द की शिकायत की थी), वे उस शाम 6:00 बजे से 9:00 बजे तक एस के घर पर ही रहे। विशेषज्ञ ने बताया कि महाराजजी का हृदय ठीक है और उन्हें केवल आराम की आवश्यकता है। रात 9:00 बजे वे उस ट्रेन को पकड़ने के लिए स्टेशन के लिए रवाना हुए जो उन्हें वापस काठगोदाम में पहाड़ों की तलहटी तक ले जाएगी। उनके साथ युवा रवि और एक अन्य भक्त डी भी थे। कुछ समय बाद उन्होंने रवि को अगले डिब्बे में जाकर बैठने को कहा। रवि वहाँ गया, लेकिन डिब्बे में बैठे लोगों ने उसे चोर समझकर चेन खींची और ट्रेन रुकवा दी। रवि को पकड़कर ट्रेन के ही एक पुलिस वैन में बिठा दिया गया। रवि ने पुलिस को अगले स्टेशन पर महाराजजी से पूछने के लिए राजी किया कि क्या रवि उनके साथ है। महाराजजी रवि से बहुत स्नेह रखते थे और उन्होंने कहा, "हम मथुरा में उतरेंगे और मैं डीआईजी (उप महानिरीक्षक) को फोन करके मामला सुलझा लूंगा।" आगरा से कुछ ही दूरी पर स्थित मथुरा में वे ट्रेन से उतरे। कुछ लोगों ने उन्हें प्रणाम किया। फिर वे स्टेशन के बाहर बने शौचालय के सहारे सीढ़ियों पर बैठ गए। डी टैक्सी लेने चला गया, जबकि रवि महाराजजी के साथ इंतजार करता रहा।

महाराजजी सीढ़ियों पर लेट गए और कांपने लगे। उनकी आंखें बंद थीं और शरीर ठंडा और पसीने से भीगा हुआ था। डी ने उन्हें कुछ गोलियां खिलाईं और महाराजजी ने कहा, "लाइट बंद कर दो।" उन्होंने पानी मांगा और पास के वृंदावन ले जाने को कहा। उन्हें स्ट्रेचर पर लिटाकर टैक्सी में ले जाया गया और पिछली सीट पर लिटा दिया गया। वृंदावन जाते समय महाराजजी ज्यादातर समय बेहोश से लग रहे थे, हालांकि बीच-बीच में वे कुछ ऐसी बातें बुदबुदा रहे थे जो समझ में नहीं आ रही थीं। उन्हें अस्पताल के आपातकालीन कक्ष में ले जाया गया। अस्पताल में डॉक्टर ने उन्हें इंजेक्शन दिए और उनके चेहरे पर ऑक्सीजन मास्क लगा दिया। अस्पताल के कर्मचारियों ने बताया कि वे मधुमेह के कारण कोमा में हैं, लेकिन उनकी नाड़ी ठीक है। महाराजजी होश में आए और अपने चेहरे से ऑक्सीजन मास्क और बांह से रक्तचाप मापने वाली पट्टी हटाते हुए बोले, "बेकार।" महाराजजी ने गंगाजल मांगा। चूंकि वहां गंगाजल नहीं था, इसलिए उन्हें साधारण पानी दिया गया। फिर उन्होंने कई बार "जय जगदीश हरे" दोहराया, हर बार धीमी आवाज में। उनका चेहरा एकदम शांत हो गया, दर्द के सारे निशान गायब हो गए। उनकी मृत्यु हो चुकी थी। अस्पताल में किसी ने भी उन्हें नहीं पहचाना। अस्पताल के कर्मचारी कमरे से चले गए।

रवि और डी ने महाराजजी को बाहर निकाला और शव को टैक्सी में रखकर हनुमान मंदिर ले गए। यह 11 सितंबर की सुबह लगभग 1:15 बजे का समय था।

एचसी ने बताया कि सितंबर 1973 में, महाराजजी की महासमाधि से कुछ समय पहले, उन्हें महाराजजी के दर्शन करने की तीव्र इच्छा हुई। वे और उनकी पत्नी महाराजजी के जाने से ठीक दो दिन पहले कैंची गए। उन्होंने इस संयोग के बारे में कहा, "यह कोई अजीब बात नहीं थी—कोई चमत्कार नहीं था।" लेकिन उन्होंने कहा कि जब वे वहाँ पहुँचे, तो उन्हें बहुत गहराई से सोचने का मौका मिला। यह अनुभव "असाधारण रूप से कुछ अलग" था।

इस मुलाकात के दौरान, महाराजजी ने उनसे कहा, “जो चाहो पूछ लो। फिर मैं जा रहा हूँ।” इस तरह उन्होंने अपने जाने का संकेत दे दिया। एचसी ने बताया कि उनके मन में जो भी विचार थे, वे सब गायब हो गए। उन्होंने कुछ नहीं पूछा और न ही उन्हें संकेत समझ आया।

राम

ओह, महाराजजी ने हम सबको बताया था कि वे इस दुनिया को छोड़कर जा रहे हैं। एक बार उन्होंने हमसे कहा कि जब वे जाएंगे, तो हम सबको हँसते हुए छोड़ जाएंगे! फिर उन्होंने कहा कि जब वे सिद्धि माँ को छोड़कर जाएंगे, तो उन्हें रोते हुए छोड़ जाएंगे। यह कहते ही सिद्धि माँ बहुत रोने लगीं। लेकिन महाराजजी ने कहा कि उन्हें चिंता नहीं करनी चाहिए—वे किसी को भी उन्हें नुकसान नहीं पहुँचाने देंगे, वे उनके प्रेम से और भी तेजस्वी हो जाएंगी।

राम

एचसी के एक मित्र ने बताया कि महाराजजी ने उन्हें भी महासमाधि के आने का स्पष्ट संकेत दिया था। महाराजजी ने उस व्यक्ति से कहा, "यदि ईश्वर मुझे वापस बुला लें तो मैं क्या कर सकता हूँ?"

राम

डी को ऐसा प्रतीत होता है कि पिछले दो वर्षों से महाराजजी लगभग निरंतर गहरी समाधि में रहते थे और संसार से पूरी तरह विमुख हो जाते थे। लोगों से बात करना और व्यवहार करना उनके लिए स्वतःस्फूर्त रूप से चलता रहता था, मानो वे इस संसार में न हों। वे पेशाब करने की शारीरिक आवश्यकता को भी भूल जाते थे और पूरा दिन बिना पेशाब किए ही गुजार देते थे। फिर अचानक उन्हें याद आता और वे दौड़ते, कभी-कभी दौड़ते हुए ही पेशाब कर देते। उनकी धोती और कंबल ठीक से बंधे नहीं होते थे। पहले वे बहुत साफ-सुथरे और कसे हुए होते थे।

राम

अपने जाने से पहले शनिवार को उन्होंने मुझसे कहा, “यह भूतिया विमान है। सबको मरना ही है। लोग अपने स्वार्थ के लिए रोते हैं। मरने वाला भी अपने परिवार के लिए रोता है। ये सब कुछ नहीं, ये सब मूर्खता है।”

राम

श्रीमती एस महाराजजी की हृदय स्थिति को लेकर बहुत चिंतित थीं, इसलिए बी ने महाराजजी को अकेले में बुलाकर उनसे इस बारे में पूछने के लिए कार के कार्बोरेटर में पानी भर दिया। बी ने कहा, “महाराजजी, कार में पानी भर गया है और इसे ठीक करने के लिए आपको कोई चमत्कार करना होगा—या मैं आपसे एक प्रश्न पूछता हूँ और यदि आप उसका सीधा उत्तर

देंगे, तो शायद कार चालू हो जाए। क्या आप सचमुच बीमार हैं?"

"नहीं, मैं नहीं हूँ।"

तब बी ने कहा, "मुझ पर एक एहसान कीजिए। अगर आप हैं, तो क्या आप मुझे बताएंगे?" महाराजजी ने बी के सिर पर हाथ रखा।

महाराजजी के देह त्यागने से ठीक एक महीने पहले, उन्होंने एक समूह से कहा, "कल रात मेरा दिल धड़कना बंद हो गया।" उन्होंने यह बात दो बार कही, लेकिन किसी ने हँस दिया, जिससे बी को गुस्सा आ गया और उन्होंने इस मामले को आगे नहीं बढ़ाया। फिर महाराजजी ने तीसरी बार यही बात कही, लेकिन महाराजजी के आसपास इतनी हलचल थी कि बी इस बारे में बात नहीं कर सके। फिर बी को यूरोप जाना पड़ा। वे महाराजजी के देह त्यागने से कुछ दिन पहले लौटे। उन्होंने दर्शन के लिए जाने की योजना बनाई, तभी उन्हें याद आया कि उन्होंने एक दूसरे व्यक्ति के लिए कुछ करने का वादा किया था, और उन्होंने मन ही मन सोचा कि अगर महाराजजी हजारों लोगों की सेवा कर सकते हैं, तो वे इस एक व्यक्ति की सेवा तो कर ही सकते हैं। वे दर्शन के बजाय उस दूसरे व्यक्ति की सेवा करने चले गए, और इसलिए महासमाधि से पहले वे महाराजजी के दर्शन नहीं कर पाए।

राम

उस आखिरी दिन, महाराजजी ने सबको अपने पैर धोने और बचे हुए पानी में से जितना चाहें उतना पीने की इजाज़त दी। वे बहुत प्रसन्न हुए। फिर उन्होंने कहा, "मैं आज नहीं जा रहा।" लेकिन आधे घंटे आराम करने के बाद उन्होंने कहा, "नहीं, मैं जा रहा हूँ। गाड़ी लाओ।" फिर टी ने कहा कि उसे महाराजजी की नब्ज़ देखनी है, और महाराजजी ने कहा, "क्या तुम भी डॉक्टर बन रहे हो?"

टी ने जांच की और पाया कि उसमें कोई नाड़ी नहीं थी।

उसने महाराज जी से कहा, "महाराज जी, अगर आप चाल चलते रहेंगे तो...।"

महाराजजी ने उत्तर दिया, "ठीक है, पंद्रह सेकंड, इससे ज़्यादा नहीं।" इस बार नाड़ी बिल्कुल सामान्य थी। उस आखिरी दिन वे बहुत प्रसन्न और आनंदित थे, जो अन्य दिनों के बिल्कुल विपरीत था, जब वे किसी से जान-पहचान किए बिना ही चले जाते थे।

टी और डी आपस में बात कर रहे थे और कह रहे थे, "वह बहुत खुश है। यह विरोधाभासी है।"

महाराजजी ने कहा, "जब तुम अपने घर जाते हो, तो तुम्हें खुशी मिलती है।"

राम

सन् 1971 या 1972 में एक दिन महाराजजी को एक डायरी भेंट की गई। उस दिन से वे प्रतिदिन दो पृष्ठों पर हाथ से "राम" लिखते थे। उन्होंने डायरी को अपने कमरे में रखने का अनुरोध किया। तब से उन्हें हर सुबह एक घंटा अकेले दिया जाता था, जब वे डायरी में लिखते थे। यात्रा के दौरान डायरी उनके साथ जाती थी। कैंची में अपने अंतिम दिन, 9 सितंबर को उन्होंने डायरी पूरी की, फिर अगले पृष्ठ पर 10 सितंबर की तारीख डाली और उस पर "राम" लिखा। अंत में उन्होंने एक खाली पृष्ठ पर 11 सितंबर लिखा और उस पर "राम" नहीं लिखा। फिर उन्होंने डायरी एसएम को दी और उनसे कहा, "अब यह आपकी है। आप इसमें लिखिए।"

राम

बी ने महाराजजी के जप की एक टेप बनाई थी, लेकिन महाराजजी ने कहा, "तुम इसे दो साल तक किसी को मत सुनाना।" यह उनकी मृत्यु से ठीक दो साल पहले की बात है।

राम

महाराजजी के कैंची छोड़ने से कुछ दिन पहले उन्होंने एस.एम. से कहा, "मंदिर आश्रम के अंदर ही होना चाहिए।"

उन्होंने कहा, “आपको एक और मंदिर की ज़रूरत नहीं है। यहाँ पहले से ही पाँच मंदिर हैं।” वह बस हँस पड़े। अब समाधि मंदिर उस प्रांगण में स्थित है जहाँ पश्चिमी लोग महाराजजी के लिए कीर्तन गाते थे।

राम

8 सितंबर की सुबह महाराजजी ने मुझे बुलाया और हमने पौने घंटे तक अलग-अलग विषयों पर निजी बातचीत की। उसके बाद मैंने उन्हें फिर शाम चार बजे उनके कमरे में दो-तीन अन्य लोगों के साथ देखा। वे हमसे कह रहे थे, “जो भी इस दुनिया में आते हैं, उन्हें जाना ही होता है। कोई भी यहाँ नहीं रुकता। उन्हें जाना ही पड़ता है। यह जानते हुए भी, मृत्यु के समय लोग क्यों “हू हू हू?” (उन्होंने रोने का नाटक किया) चिल्लाते हैं? वे क्यों रोते हैं? उन्हें खुशी-खुशी जाना चाहिए। उन्हें हंसते हुए जाना चाहिए। उन्हें रोना नहीं चाहिए।” कुछ सामान्य बातचीत के बाद उन्होंने कहा, “अब मैं जा रहा हूँ। मैं यहाँ नहीं रुकूँगा और अब किसी को दर्शन नहीं दूँगा।”

एक भक्त ने पूछा, "महाराज जी, आप कहाँ जाएँगे जहाँ हम लोगों को आपके दर्शन नहीं मिल पाएँगे?"

“अरे, बहुत दूर! बहुत दूर!” महाराजजी ने उत्तर दिया।

“कहाँ?” भक्त ने फिर पूछा।

“ओह, वहाँ... नर्मदा नदी के पास,” महाराजजी ने कहा। (नर्मदा नदी अमरकंटक से निकलती है, जिसे पारंपरिक रूप से शिव के कंठ से निकाला जाता है।) इसके कुछ ही देर बाद बस चालक उन सभी लोगों को ले जाने के लिए आया जो कहीं और रहते थे। एक आदमी अभी-अभी आया था और उसने निजी दर्शन की अनुमति मांगी, लेकिन महाराजजी ने कहा, “बाबा नीम करोली का निधन हो गया है! अब तुम किससे बात करोगे?”

उस आदमी ने हंसते हुए कहा, "ठीक है, अगर आप मुझे जाने का आदेश देते हैं तो मैं चला जाऊंगा, लेकिन मैं सुबह आठ बजे वापस आऊंगा और तब आपसे बात करूंगा!"

महाराजजी ने कहा, “ठीक है। तुम आओ। अगर मैं जीवित रहा तो तुमसे बात करूंगा।”

बाहर आंगन में पश्चिमी लोग गा रहे थे और एक साथ पारंपरिक अभिवादन, "श्री श्री श्री एक हजार आठ नीम करोली बाबा संता महाराज की जय!" का उच्चारण करने लगे थे। अंदर, महाराजजी ने टिप्पणी की, "बाबा नीम करोली का निधन हो गया है! अब उनकी आवाज़ें वहाँ तक पहुँचनी होंगी," उन्होंने आकाश की ओर इशारा करते हुए कहा।

राम

महाराजजी ने मुझसे कहा, “दादा, मैं भाग जाऊंगा। एक संत के लिए आसक्ति क्या होती है?”

राम

उनके देह त्यागने से कुछ ही रात पहले आश्रम में बहुत चहल-पहल थी। वे सबका 'जाओ' कर रहे थे। मैं हनुमान जी के पास थी, थोड़ी देर भजन गा रही थी। जब मैंने चारों ओर देखा, तो मंदिर से सब लोग जा चुके थे। शायद सबका 'जाओ' हो चुका था, या वे आश्रम के पीछे चले गए थे, लेकिन मंदिर बिल्कुल खाली था। मैंने देखा तो महाराजजी वहाँ बैठे थे; उनके अलावा कोई और नहीं था। मैं उनके पास गई और प्रणाम किया, और उन्होंने मेरा 'जाओ' किया। लेकिन मुझे कभी इतना मधुर 'जाओ' नहीं मिला था। यह दुनिया का सबसे मधुर 'जाओ' था। उन्होंने मुझे 'हमारी बेटी' कहकर पुकारा। और उनकी निगाहें प्रेम से भरे हुए सरोवरों जैसी थीं।

"मेरी बेटी…" मैं बड़ी मुश्किल से खड़ी हो पाई। उठने में मुझे कुछ मिनट लग गए। उन्होंने दोबारा 'जाओ' नहीं कहा, बस मुझे पूरी सहानुभूति भरी निगाहों से देखा। मुझे लगा कि पिछले कुछ दिनों में उन्होंने अपने कर्मों का बहुत बोझ उठाया था। उनके चेहरे पर गहरा दुख साफ झलक रहा था।

पिछले कुछ दिन अजीब थे। एक भारतीय व्यक्ति पूजा करने आता था और राम का जाप करते-करते बेहोश हो जाता था। एक दोपहर महाराजजी उस व्यक्ति के कमरे में थे। वहाँ इतनी भीड़ थी कि मैं ठीक से देख नहीं पा रहा था कि क्या हो रहा है, लेकिन मैं उस व्यक्ति को दर्द से चीखते हुए सुन सकता था: "नाथ! नाथ (भगवान! भगवान)!" मुझे नहीं पता था कि क्या हुआ था। शायद उसे कुछ आभास हो गया था कि आगे क्या होने वाला है। महाराजजी बस वहीं बैठे रहे जबकि वह व्यक्ति चीख रहा था। आपको पता था कि कुछ हो रहा है, लेकिन ज़ाहिर है आप कभी यह स्वीकार नहीं करेंगे कि असल में क्या हो सकता है।

राम

द्वारका साह ने मुझसे पूछा कि क्या मैं पिछले दर्शन के लिए कैंची गया था, और चूंकि मैं नहीं गया था, उन्होंने मुझे उस दिन का अपना निजी अनुभव बताया। महाराजजी के विश्राम के लिए "कार्यालय" में जाने के बाद, द्वारका को बहुत नींद आ रही थी, इसलिए वह दरवाजे के बाहर सो गया। महाराजजी के अचानक दरवाजे से बाहर आने पर वह जाग उठा। महाराजजी ने उसे पुकारा, "द्वारका! उठो!" महाराजजी ने उसका हाथ पकड़ा, और एक अन्य भक्त, आर, ने महाराजजी का दूसरा हाथ पकड़ा। तीनों साथ-साथ हनुमानजी के मंदिर गए, जहाँ महाराजजी दो मिनट तक मौन, हाथ जोड़कर प्रणाम करते रहे। इस दौरान उनका कंबल गिर गया, और द्वारका ने उसे उठाकर महाराजजी को फिर से लपेट दिया। फिर महाराजजी लक्ष्मी-नारायण के सामने गए, और फिर शिव के सामने, प्रत्येक मंदिर के सामने लंबे समय तक मौन खड़े रहे। फिर वे मंदिर परिसर से तेजी से बाहर निकलने लगे, और जब वे पुल पार कर रहे थे, तब उनका कंबल फिर से गिर गया। इस बार उन्होंने कंबल को अपने ऊपर लपेटने नहीं दिया। वह एक इंतज़ार कर रही कार में बैठा और रवि को अपने साथ लेकर द्वारका को पीछे छोड़ गया।

राम

जब हम विदा हुए, तो महाराजजी ने मुझसे कहा, "अगर मैं तुमसे इस रूप में नहीं मिल पाया, तो मैं तुमसे किसी और रूप में मिलूंगा।"

राम

ग्रीष्म ऋतु में दिल्ली से एक आयुर्वेदिक चिकित्सक महाराजजी से मिलने और कैंची में दो सप्ताह बिताने आए थे। उनका सामान पूरी तरह से खुलने से पहले ही महाराजजी ने उन्हें बिना कोई कारण बताए घर भेज दिया। महाराजजी ने उनकी गाड़ी में सेब के पाँच डिब्बे रखवाए और कहा, “तुरंत जाइए।” चिकित्सक असमंजस में पड़ गए और क्रोधित भी हुए। महाराजजी ने यह भी कहा, “यह आखिरी बार है जब मैं आपसे मिल रहा हूँ।” घर लौटने पर चिकित्सक को उस सप्ताह के दौरान सात हज़ार रुपये कमाने का एक अप्रत्याशित अवसर मिला, जिस सप्ताह वे बाहर रहने वाले थे। लेकिन उन्हें अपनी मृत्यु का भय सता रहा था, क्योंकि महाराजजी ने कहा था कि वे उनसे दोबारा नहीं मिलेंगे, इसलिए उन्होंने अपनी वसीयत लिख ली और अपने सभी मामलों को निपटा लिया। फिर सितंबर में, जब उन्होंने महाराजजी के निधन की खबर सुनी, तो उन्होंने कहा, “अच्छा हुआ।” बाद में, जब वे दिल्ली के मंदिर गए, तो हनुमान की मूर्ति के स्थान पर महाराजजी को देखकर वे बेहोश हो गए। उनके साथ ऐसा दो बार हुआ।

राम

आखिरी सामूहिक दर्शन में वे टक्क पर बैठे हुए थे, उठने की कोशिश में आगे-पीछे हिल रहे थे, और हम सब सोचते, "अरे नहीं, उठो मत।" फिर वे वापस बैठ जाते और हम सब सोचते, "अच्छा हुआ।" जब वे फिर से जाने लगते, तो हम सोचते, "अरे नहीं! जाओ मत!" जब वे वापस बैठ जाते, तो हवा में ही महसूस हो जाता: "अच्छा हुआ, वे थोड़ी देर रुकेंगे!" दर्शन काफी लंबा चला। जब वे आखिरकार गए, तो उनके चलने के तरीके में कुछ हिचकिचाहट थी। और मुझे याद है कि उस दर्शन के बाद हम सब बहुत थक गए थे।

राम

उस दर्शन के बाद द्रौपदी के कैमरे का फोकस आसमान की ओर, मंदिरों के शिखर की ओर चला गया, जो उस समय हमारे मन में बसी छवि को बयां करता है। मन करता था मानो हाथ ऊपर उठा लें। यह बेहद आनंददायक था, फिर भी पूरी तरह थका देने वाला था। उसके बाद एकदम सन्नाटा छा गया। मैं दोपहर में बहुत कम सोती थी, लेकिन इस बार हम सब सो गए। जब हम उठे तो पता चला कि महाराजजी जा चुके थे। मुझे लगता है कि जानकी ने कहा था कि जाने से पहले उन्होंने मूर्तियों को प्रणाम किया था।
वृंदावन में महाराजजी के निधन के बाद, उनके पार्थिव शरीर को आश्रम के बरामदे में बर्फ के एक बड़े टुकड़े पर रखा गया। शाम को, एक गाड़ी के ऊपर पालकी में उनके पार्थिव शरीर को सड़कों पर जुलूस के रूप में निकाला गया। हजारों लोगों ने इस जुलूस को देखा, जिसमें पीतल का बैंड और रोशनी की व्यवस्था थी। रात लगभग 9:00 बजे, मंदिर के प्रांगण में, महाराजजी के पार्थिव शरीर को अंतिम संस्कार की चिता पर रखा गया।

वृंदाबन अखबार से अनुवादित, 12 सितंबर, 1973:
प्रसिद्ध और चमत्कार करने वाले संत, नीम करोली के बाबा के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार उनके निवास स्थान, श्री हनुमान मंदिर के सामने स्थित मैदान में सभी आवश्यक धार्मिक अनुष्ठानों के साथ संपन्न किया गया।

आगरा से नैनीताल जाते समय अचानक उनकी तबीयत खराब हो गई और उसके बाद दिल का दौरा पड़ने से उनकी मृत्यु हो गई।

अंतिम संस्कार से पहले, बाबा के पार्थिव शरीर को एक सजी हुई रथ में शहर में जुलूस के रूप में ले जाया गया। अंतिम संस्कार के स्थान को लेकर जो दुविधा थी, उसका हल पागल बाबा (श्री लीला नंद ठाकुर) ने निकाला। उन्होंने कहा कि वृंदावन पवित्र स्थानों का राजा है। उन्होंने आगे कहा कि इससे बेहतर कोई स्थान हो ही नहीं सकता। कैंची आश्रम से आई वृद्धाश्रम ने जोर देकर कहा कि अंतिम संस्कार कैंची या हरिद्वार में ही किया जाए। चिता सुबह तीन बजे तक जलती रही। तब तक बड़ी संख्या में श्रद्धालु अंतिम श्रद्धांजलि देने के लिए वहाँ पहुँच चुके थे। आश्रम में गहरा शोक का माहौल था और श्रद्धालु आते ही रहे।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष डॉ. एस. डी. शर्मा सुबह 6:00 बजे वृंदावन पहुंचे और काफी देर तक श्मशान घाट के पास बैठे रहे। वे सन् 1957 से बाबा के भक्त हैं। उन्होंने आश्रमवासियों को बाबा के जीवन और कार्यों से संबंधित साहित्य एकत्र करने की सलाह दी है। एक समिति का गठन भी किया गया है। सामूहिक भोज के लिए 22 सितंबर की तिथि निर्धारित की गई है। अस्थियों को यमुना में विसर्जित नहीं किया गया है। उन्हें उनकी समाधियों में ही विसर्जित किया जाएगा। उनकी अस्थियों का कुछ भाग विभिन्न तीर्थ स्थलों पर विसर्जन के लिए सुरक्षित रखा गया है।

बाबा की उम्र को लेकर विवाद है। लोगों का कहना है कि उनकी उम्र 250 से 300 साल के बीच हो सकती है।

वृंदावन के निवासी हमेशा उनके विरोधी थे। वे हमेशा उन्हें "चमत्कारी बाबा" कहकर पुकारते थे।

जैसे ही उनके अमेरिकी प्रशंसकों को उनकी मृत्यु की खबर मिली, उस देश से कई फोन कॉल आए।

भारत के बड़े-बड़े अधिकारी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए वृंदाबन आ रहे हैं।

राम

उन्होंने हमें एक तरह से सुन्न कर दिया था। हम रात करीब 8:00 बजे वृंदावन पहुँचे और वे लोग वृंदावन की परिक्रमा करके लौट रहे थे। तभी मैंने उनका शव गाड़ी के ऊपर देखा। फिर उन्हें चिता पर रखने से पहले सबको अंतिम दर्शन के लिए नीचे उतारा गया। हम सब उनके पैर छूने गए। कुछ ऐसा था जो बिल्कुल अलग सा लग रहा था। ऐसा लग ही नहीं रहा था कि कुछ बदला है—उनके शरीर के साथ जो कुछ भी हुआ था, वह अवास्तविक सा लग रहा था।

मुझे लगता है कि उन्होंने हम पर एक तरह का सुन्नपन छा दिया था। आप बेहद दुखी होते और रोते, लेकिन आपके भीतर का एक हिस्सा इस बात को स्वीकार नहीं कर पाता था। लेकिन समय बीतने के साथ-साथ आपको एहसास होने लगता कि महाराजजी भले ही हमारे साथ हैं, लेकिन उनका शरीर अब हमारे बीच नहीं है। उस समय तो उनके शरीर के चले जाने का विचार भी अवास्तविक लगता था।

राम

सड़कों पर जुलूस के लिए, महाराजजी के पार्थिव शरीर को फूलों से ढककर 1955 की प्लाईमाउथ कार के लगेज रैक पर रखा गया था। जैसे ही कार संकरी गलियों से गुजरी, रास्ते में घरों की खिड़कियों से लोगों ने सिक्के फेंके। बच्चे कार के पीछे दौड़ते हुए सिक्कों को पकड़ रहे

थे या सड़क से उठा रहे थे। एक बैंड जोर से बज रहा था। हम उस अफरा-तफरी के बीच सुन्न पड़ गए थे। लेकिन जैसे ही कार हमारे पास से गुजरी, हमने पीछे की दाहिनी खिड़की पर तीन स्टिकर देखे: एक मिकी माउस का, एक डोनाल्ड डक का और एक गूफी का। उन्हें देखकर उस पल का पूरा अर्थ ही बदल गया। हमें याद आया कि हमारा दोस्त वेवी ग्रेवी हमेशा कहता था कि मृत्यु डोनाल्ड डक है। ऐसा लगा जैसे यह महाराजजी का हमारे लिए गुप्त संदेश था।

राम

एक वृद्ध भक्त ने पूरी रात उस अग्नि के पास बैठकर बिताई जिसमें महाराजजी का शरीर जल रहा था, और वे ज़ोर-ज़ोर से “श्री राम, जय राम” का जाप करते रहे। उन्होंने बताया कि उन्होंने महाराजजी को अग्नि के ऊपर बैठे देखा और उनके दोनों ओर राम और शिव विराजमान थे। वे उनके सिर पर घी डाल रहे थे ताकि वे और अच्छे से जल सकें, जबकि ऊपर सभी देवता फूल बरसा रहे थे। सभी बहुत प्रसन्न थे!

राम

एक मां ने देखा कि महाराजजी आग में बैठे हुए उनकी ओर देख रहे थे और अपनी खास शैली में कोहनी पर झुककर इशारा कर रहे थे।

राम

मैंने पहले भी अपने प्रियजनों की मृत्यु देखी है, लेकिन यह बिल्कुल अलग था। महाराजजी की उपस्थिति बहुत अधिक प्रबल थी। हमने उस शाम और अगली रात भी वृंदावन की परिक्रमा की, लेकिन हम किसी तरह अधर में लटके रहे। मैं न खा पा रही थी, न सो पा रही थी। यह बहुत ही अजीब अनुभव था।

मैं वहीं खड़ा होकर उसके वापस आने का इंतजार कर रहा था, उसे सड़क पर चलते हुए या अपनी कुर्सी पर बैठे हुए देखने का इंतजार कर रहा था।

राम

एस ने कहा कि यह महाराजजी की लीला थी कि उनके निधन के समय उनके आसपास मौजूद कोई भी व्यक्ति यह महसूस नहीं कर सका कि यदि उन्होंने सच्चे हृदय से भक्ति भाव से उनसे कहा होता, "उठिए, महाराजजी, आप मरे नहीं हैं," तो वे ऐसा कर देते।

भारत छोड़कर जा चुके हम लोगों तक महाराजजी की मृत्यु की खबर असाधारण तेजी से पहुंची और उनकी लीला के अन्य हिस्सों की तरह ही इस पर भी अलग-अलग प्रतिक्रियाएं आईं।

1973 की गर्मियों में मैं न्यू हैम्पशायर में अपने पिता के फार्म पर रह रहा था, और सितंबर में जब टेलीग्राम आया तब मैं वहीं था। जब मैं गाँव से खरीदारी करके लौटा तो मेरे पिता और सौतेली माँ, जो काफी चिंतित दिख रहे थे, मुझसे मिले। पिताजी ने कहा, "यह टेलीग्राम अभी-अभी भारत से आया है, मुझे समझ नहीं आया, लेकिन मैंने इसे ऑपरेटर द्वारा दिए गए हर शब्द को लिख लिया है।"

“11 सितंबर को दोपहर 1:15 बजे बाबा जी ने वृंदावन में अपना घर छोड़ दिया...”

टेलीग्राम में आगे और भी विवरण थे। मेरे पिता ने पूछा, “इसका क्या मतलब है?”

मैंने कहा, “इसका मतलब है कि महाराजजी का निधन हो गया।”

उन्होंने तुरंत मुझे सांत्वना देने या कम से कम सहानुभूति जताने की कोशिश की, लेकिन

उनके शब्द अजीब तरह से बेमानी लग रहे थे, क्योंकि मुझे कुछ भी महसूस नहीं हो रहा था—न दुख, न खुशी। किसी तरह के नुकसान का एहसास नहीं था। शायद मैं बस सुन्न हो गया था। वैवाहिक समस्याओं से जूझ रहे एक दंपति मेरा इंतजार कर रहे थे, इसलिए मैं उनके पास गया और उनके साथ बैठ गया और उनके प्रेम और घृणा के उलझे हुए धागे को सुलझाने में उनकी मदद की। चर्चा के बीच-बीच में मेरा मन भटक जाता और मैं सोचता, "महाराज जी अपने शरीर में नहीं हैं। यह कितना अजीब है," या "पता नहीं अब क्या होगा?" लेकिन मैंने ऐसे विचारों को किनारे कर दिया और अपना ध्यान वापस अपने काम पर केंद्रित किया, क्योंकि चाहे कुछ भी हो जाए, दूसरों की सेवा रोकना व्यर्थ था।

उस पूरे दिन और उसके बाद कई बार मुझे महान रमण महर्षि के शब्द याद आए। वे कैंसर से पीड़ित थे और अतीत में उन्होंने दूसरों को ठीक करने की शक्ति दिखाई थी, और अब उनके भक्त उनसे स्वयं को ठीक करने की विनती कर रहे थे। वे लगातार इनकार करते रहे, और भक्त रोते हुए बोले, "हमें मत छोड़ो, हमें मत छोड़ो," जिस पर उन्होंने उत्तर दिया, "मूर्ख मत बनो। मैं कहाँ जाऊँगा?"

आखिर महाराजजी कहाँ जा सकते थे? वे मेरे हृदय में बसे थे। मैं पल-पल उनके साथ जी रही थी, भले ही उनकी शारीरिक उपस्थिति न हो—तो क्या इससे कोई फर्क पड़ता था? मुझे यकीन नहीं था।

जब वह दंपत्ति चले गए, तो मैंने संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में अन्य भक्तों को फोन करना शुरू किया और उनसे कहा कि वे अन्य लोगों को फोन करें। यह तय हुआ कि तीन-चार सौ मील के दायरे में रहने वाले सभी लोग न्यू हैम्पशायर में मुझसे मिलेंगे। अगले दिन दोपहर तक हम लगभग बीस लोग इकट्ठा हो गए थे। यह एक अनोखी मुलाकात थी। हम सभी इस खबर से कुछ हद तक स्तब्ध थे और कई लोग रो रहे थे, लेकिन साथ ही हम सब एक साथ होकर खुश थे और महाराजजी की उपस्थिति को अपने साथ बहुत मजबूती से महसूस कर रहे थे। हमने एक बड़ा भोजन बनाया, जिसे हमने अग्नि के चारों ओर बैठकर खाया। लेकिन भोजन से पहले हम मेरे कमरे में पूजा की मेज के सामने बैठकर ध्यान और आरती करने गए।

हम सब प्राचीन संस्कृत प्रार्थना गा रहे थे और बारी-बारी से महाराजजी की तस्वीर के सामने मोमबत्ती की लौ लहराकर प्रकाश अर्पित कर रहे थे। मेरी बारी आने के बाद मैं समूह के पीछे जाकर देखने लगा। मोमबत्ती की रोशनी में मैंने अपने गुरु भाई-बहनों के चेहरे देखे और उनके प्रेम भाव और हृदय की पवित्रता को महसूस किया। और अंत में मैं रो पड़ा—दुख से नहीं, बल्कि महाराजजी के उस शुद्ध और परिपूर्ण प्रेम की उपस्थिति से, जिसे मैंने हृदयों के इस समूह में महसूस किया। (आर.डी.)

राम

खबर मिलते ही मेरे मन में कई तरह की भावनाएं उमड़ आईं। उनमें से एक, अजीब बात है, यह भी थी, "ओह, बेचारे महाराजजी।" मेरी सबसे पहली प्रतिक्रिया दुख की थी, जो इस एहसास से तुरंत दब गई कि कुछ भी नहीं बदला है। ("किस बात का दुख?") फिर मेरे मन में बाकी सारी भावनाएं उमड़ आईं, जैसे, "यह सब क्या है? अगर उनका शरीर नहीं है तो मेरा क्यों? मैं अब भी यह खेल क्यों खेल रही हूँ, जो पूरी तरह से उन्हीं के इर्द-गिर्द घूमता है। अगर वे चले गए हैं, तो मैं

अब और नहीं खेलना चाहती।"

राम

जब महाराजजी ने देह त्यागा, तब मैं माउंट शास्ता पर, जंगल में कहीं अकेला था। वहाँ एक और व्यक्ति था जिससे मेरी मुलाकात दर्शन के दौरान हुई थी। महाराजजी के देह त्यागने की खबर तेजी से फैल गई, जिससे हम सभी को पता चल गया। वह व्यक्ति शहर में फोन करने गया था और उसे खबर मिली, फिर भी वह मुझे बताने आया, जबकि मैं जंगल में बहुत दूर था। मैंने उस समय अमेरिका में मौजूद कई अन्य लोगों से भी बात की है, और उनके भी ऐसे ही अनुभव रहे हैं; वे जहाँ भी थे, उन्हें लगभग तुरंत ही खबर मिल गई थी।

राम

उस गर्मी में मैंने अमेरिका में वापस आने के बाद खुद को फिर से ढालने की कोशिश करते हुए यात्रा की। 1 सितंबर को मैं ब्रिटिश कोलंबिया से सैन फ्रांसिस्को आया, कैलिफोर्निया में अपने सूफी परिवार से मिलने के लिए, जिनसे मैं पिछले वर्षों में मिला था। एक-दो दिन के भीतर ही मुझे हल्की-सी बीमारी महसूस होने लगी और मुझे लगा कि कहीं मुझे वही हेपेटाइटिस तो नहीं हो गया है जिसके कारण मुझे भारत से वापस लौटना पड़ा था। लेकिन न तो बुखार था, न पीलिया का कोई लक्षण, वास्तव में कुछ भी नहीं था।

मुझे बहुत बुरा लग रहा था। चूंकि यह शाऊल का घर था, जो एक हकीम (चिकित्सक) थे, इसलिए मुझे बहुत प्यार और देखभाल मिली और मुझे बिस्तर पर लिटा दिया गया। फिर लगभग एक हफ्ते बाद, मेरी "बीमारी" उतनी ही रहस्यमय तरीके से गायब हो गई जितनी रहस्यमय तरीके से आई थी। दो दिन बाद, मेरी एक करीबी गुरुबहन ने फोन किया। उन्होंने कहा, "मुझे यह बताते हुए बहुत दुख हो रहा है कि महाराज जी ने अपना शरीर त्याग दिया है।"

उस समय मुझे केवल निराशा और हंसी का एहसास हुआ—वह फिर से भाग गया। "वह कमीना!" बस इतना ही मैं कह सका।

जैसे ही मैंने फोन रखा, साउल सामने के दरवाजे से अंदर आया। मैंने उसे बताया, "महाराज जी ने अपना शरीर त्याग दिया है।"

“ईश्वर की जय हो!” वह चिल्लाया और मुझे गले लगा लिया।

राम

यह बताना मुश्किल है कि इस खबर ने मुझ पर कैसा असर डाला। यह कुछ वैसा ही था जैसा भारत में ठगी होने पर महसूस होता है: परेशान, गुस्सा या दुखी होने के बजाय, राहत महसूस होती है क्योंकि इससे आप जो हुआ है उसे स्वीकार कर पाते हैं। बाद में और भी भावनाएँ उमड़ीं।

शरीर छोड़ने से पहले, मुझे एक बहुत ही तीव्र अनुभूति हुई, जो एक बार वृंदावन में हुई थी जब महाराजजी सबको विदा कर रहे थे। सबको "जाओ" कहने से ठीक पहले, उन्होंने समझाया कि हम सब बस एक मिट्टी के घड़े की पूजा कर रहे हैं। उन्होंने पूछा, "जब यह घड़ा टूट जाएगा तो क्या होगा?" वे सबको अलग-अलग स्थानों पर भेज रहे थे, लोग रो रहे थे, और मुझे लगा कि महाराजजी बस शरीर त्यागना चाहते हैं, कि उनका शरीर का बंधन टूट चुका है। मुझे आभास हो गया था कि ऐसा उस दिन होने वाला है, इसलिए जब ऐसा हुआ तो मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। यह इतनी तीव्र अनुभूति थी कि इस पर कोई बाहरी प्रतिक्रिया देना संभव नहीं था।

महाराजजी के निधन के तुरंत बाद उनके पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार इतनी शीघ्रता से हुआ कि कुछ ही भक्त समय पर वहाँ पहुँच पाए। इसलिए उनमें से कई ने ग्यारह दिन बाद वृंदावन में होने वाले अंतिम संस्कार भंडारे में शामिल होने की योजना बनाई। लगभग तीस पश्चिमी नागरिकों ने इस समारोह और बाद में कैंची आश्रम में अस्थियों का कुछ अंश विसर्जित करने के लिए भारत आने का निर्णय लिया।

जब हम अमेरिका से वृंदावन पहुँचे, तब तक वहाँ सैकड़ों श्रद्धालु पहले से ही एकत्रित थे। सभी भक्तों के प्रेम और खुलेपन की विशालता विस्मयकारी थी। पर्वतीय और मैदानी भक्तों के बीच के सभी छोटे-मोटे भेद भुला दिए गए, जैसे पूरब और पश्चिम के भेद मिट गए थे। हमारे बीच जो ईर्ष्या और पूर्वाग्रह थे, जिन्हें महाराजजी ने हर मोड़ पर उत्पन्न और बढ़ाया था, हमें बार-बार अपने विशाल दर्पण में हमारी छोटी-छोटी कमियाँ दिखाते हुए, वे सब क्षण भर के लिए मिट गए थे। हम सब एक समान हानि का सामना कर रहे थे, और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि हमने महसूस किया कि हम सभी को पृथ्वी पर ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। (आर.डी.)

राम

एक आश्चर्यजनक घटना जो घटी वह अंत्येष्टि भंडारा में हुई, जो मृत्यु के लगभग ग्यारह दिन बाद होने वाला अंतिम वैदिक समारोह है, जिसमें परंपरागत रूप से आत्मा सभी काललोकों (अस्तित्व के स्तरों) से गुजर चुकी होती है और मुक्त हो जाती है।

उन्होंने पूरे आंगन को तंबुओं से ढक दिया था और एक छोर पर एक छोटा चबूतरा बनाया था जिस पर वे पवित्र अग्नि प्रज्वलित करने वाले थे। जैसे ही वे अग्नि प्रज्वलित कर रहे थे, पूरब से नीले आकाश से एक बड़ा काला बादल आया। और वह बहुत तेज़ी से आया। जैसे-जैसे वह पास आ रहा था, हवा तेज़ होती जा रही थी और तंबू फड़फड़ाने लगे। मुझे याद है उस समय मैंने सोचा था, “महाराज जी, अगर यह आपकी ओर से कोई संकेत है, तो यह काफी नहीं है,” यह सोचते हुए कि अगर वे किसी और रूप में भी आने वाले हैं, तो भी मैं पूर्ण तल्लीनता, पूर्ण दर्शन चाहता हूँ।

बादल करीब आते जा रहे थे और हवा तेज़ होती जा रही थी, और अचानक हम एक भयंकर आंधी के बीच आ गए! टेंट के पर्दे फट रहे थे, खंभे टूटकर बिखर रहे थे, और पवित्र अग्नि हवा में ऊंची उठ रही थी। यह इतना रोमांचक और आनंदमय था कि लोग खुशी से उछल-कूद रहे थे, एक-दूसरे को गले लगा रहे थे और रो रहे थे। इसे तुरंत महाराजजी का आशीर्वाद मान लिया गया। फिर, जब आंधी थम गई और कार्यक्रम आगे बढ़ने लगा, तो मैं इतनी उत्साहित थी कि पीछे के कमरों में से एक में दौड़ पड़ी। मुझे नहीं पता मैं वहां क्यों गई, लेकिन जैसे ही मैं अंदर गई, मैंने मौली स्कॉट को जगा दिया। वह अभी-अभी आई थी, उसने महाराजजी को कभी जीवित नहीं देखा था। मैं उस आंधी के उत्साह से भरी हुई अंदर घुस गई और उसे जगा दिया। उसने मुझे बाद में बताया कि उस समय जब वह उठी तो उसके मन में पूरा गीत, धुन और बोल थे। “मृत्यु जैसी कोई चीज नहीं है। मैं तुम्हें अपने चारों ओर महसूस करता हूँ। हर साँस में, मैं कभी तुम्हारे बिना नहीं रहूँगा। मेरे हृदय में, मेरे मन में, फूल में, बच्चे में, बारिश में, हवा में (आदि—प्रत्येक पंक्ति अलग है), तुम फिर से जन्म लेते हो। तुम फिर से जन्म लेते हो।” यही वह गीत है जो उस तूफान

से निकला।

महाराजजी हमसे मृत्यु के बारे में इतनी बार बात कर चुके थे कि हमारे पास उनके अपने शब्द ही थे जिनका उपयोग हम कर सकते थे।

> **जब तक वह समय नहीं आता, तब तक कोई मर नहीं सकता। शरीर नश्वर है। ईश्वर के प्रेम के सिवा सब कुछ क्षणभंगुर है।**

महाराजजी कहा करते थे कि शरीर का दाह संस्कार करना चाहिए क्योंकि इससे आत्मा की शरीर में वापस आने की लालसा कम हो जाती है। अंत में, अंतिम वस्तु भी त्याग दी जाती है।

एक बार महाराजजी ने एक भक्त से पूछा, “यह शरीर क्या है? यह किससे बना है? मरने के बाद क्या होता है?” फिर उन्होंने स्वयं अपने प्रश्नों का उत्तर दिया: “शरीर पाँच तत्वों से बना है। शरीर मर जाता है, आत्मा नहीं। आत्मा, जो वास्तविक मनुष्य है, कभी नहीं मरती।”

> **तुममें इतना अहंकार क्यों है? एक दिन तुम्हें इस दुनिया को छोड़कर धरती में विलीन होना पड़ेगा।**
>
> —महाराजी कबीर के शब्दों को उद्धृत करते हुए

महाराजजी अपनी मृत्यु के संदर्भ में अक्सर कहते थे, "जब समय आएगा।" लेकिन कभी-कभी वे कहते थे, "क्या मैं मरने वाला हूँ? कभी नहीं! मैं मरता नहीं हूँ।"

इसके अलावा, ऐसी कई कहानियां भी प्रचलित थीं जिनमें बताया गया था कि महाराजजी ने अतीत में अपने भक्तों की मृत्यु के बारे में किस तरह भविष्यवाणी की थी या उस पर कैसी प्रतिक्रिया दी थी।

महाराजजी ने कहा कि अल्मोड़ा की एक महिला की मृत्यु हो जाएगी, लेकिन उसके डॉक्टर, जो स्वयं भी एक भक्त थे, ने जोर देकर कहा कि वह स्वस्थ है। महाराजजी और डॉक्टर उसके घर भोजन करने गए। भोजन के दौरान वह रसोई में गई, उसका दम घुट गया और उसकी मृत्यु हो गई। महाराजजी बहुत रोए।

एक बार महाराजजी और श्री तिवारी हनुमानगढ़ की प्राचीर पर बातचीत कर रहे थे। महाराजजी ने ऊपर की ओर देखा, एक पल के लिए अपनी आँखें बंद कीं और तिवारी को बताया कि मैदानी इलाके की एक बूढ़ी भक्त महिला का अभी-अभी निधन हो गया है। फिर वे खिलखिलाकर हँसे। तिवारी, जो महाराजजी को कई वर्षों से जानते थे, अचंभित रह गए और बोले, “अरे कसाई! किसी इंसान की मौत पर कैसे हँस सकते हो?” महाराजजी ने आश्चर्य से उनकी ओर देखा और कहा, “क्या तुम चाहते हो कि मैं कठपुतली होने का नाटक करूँ?”

एक बार महाराजजी ने कहा था कि हम जन्म-जन्मांतर तक एक लंबी यात्रा पर हैं। प्रत्येक जन्म में हम जिन लोगों से मिलते हैं, उनसे मिलना पूर्वनिर्धारित होता है।

किसी व्यक्ति के साथ आपका रिश्ता कितने समय तक चलेगा, यह पहले से ही तय होता है, इसलिए साथ रहने की कोशिश में उलझना या बिछड़ने पर दुखी होना सही नहीं है। यह समझ लें कि एक दिन आपको अलग होना ही पड़ेगा, और तब आप उस दर्द से बच सकेंगे।

राम

महाराजजी कुछ भक्तों के साथ बैठे थे, तभी उन्होंने अचानक पूछा, "कौन आया है?"

"कोई नहीं, महाराजजी।"

"हां, कोई आया है।"

कुछ देर बाद, उनके एक भक्त का सेवक वहाँ पहुँचा। इससे पहले कि वह व्यक्ति कुछ कह पाता, महाराजजी ने कहा, "मुझे पता है कि वह बीमार है, लेकिन मैं नहीं आऊँगा।" सेवक चकित रह गया क्योंकि वह व्यक्ति कुछ ही मिनट पहले बीमार पड़ा था और उसने महाराजजी को बुलाने के लिए सेवक को भेजा था। सभी ने महाराजजी को जाने के लिए प्रोत्साहित किया, लेकिन उन्होंने हठपूर्वक इनकार कर दिया। अंत में उन्होंने कहा, "लो, इसे यह केला दे दो। यह ठीक हो जाएगा।" सेवक केला लेकर घर भागा, क्योंकि सभी जानते थे कि महाराजजी अक्सर एक फल में कितनी शक्ति निहित करते थे। केले को मसलकर उस व्यक्ति को खिलाया गया। जैसे ही उसने आखिरी टुकड़ा खाया, उसकी मृत्यु हो गई।

राम

एक महिला महाराजजी को अपने बेहोश पति के पास ले गई और उनसे अपने पति के सिर पर हाथ रखने का अनुरोध किया। महाराजजी झिझके और उन्होंने महिला से पूछा कि वह क्या चाहती है।

"आपका आशीर्वाद!" उसने उत्तर दिया।

"आप चाहती हैं कि मैं आशीर्वाद दूं?" उन्होंने समय लेने के लिए यह प्रश्न तीन बार दोहराया। "माता चाहती हैं कि मैं आशीर्वाद दूं। मुझे क्या करना चाहिए?" उन्होंने पास खड़े एक भक्त से पूछा। भक्त ने उन्हें आशीर्वाद देने के लिए प्रोत्साहित किया। "ठीक है, मैं आशीर्वाद देता हूं।" महाराजजी अपनी कुर्सी से उठ खड़े हुए। उसी क्षण, बत्तियां चली गईं और पूरा घर अंधेरा हो गया। महिला लालटेन लाने के लिए दौड़ पड़ी। महाराजजी ने भक्त की ओर मुड़कर कहा, "जब भगवान ने इस घर में अंधेरा कर दिया है, तो मैं प्रकाश कैसे दे सकता हूं?" फिर वे घर से भाग गए। महिला ने उन्हें पकड़ लिया। उन्होंने कहा, "मैं फिर आऊंगा। मैं फिर आऊंगा।" और वे चले गए। उस रात उस व्यक्ति की मृत्यु हो गई। महाराजजी ने आशीर्वाद देने की व्यवस्था करने में इससे पहले कभी इतना समय नहीं लिया था। उस व्यक्ति की मृत्यु निश्चित थी और महिला महाराजजी को आशीर्वाद देने के लिए मजबूर कर रही थी ताकि वह जीवित रह सके।

राम

एक बूढ़ा वनकर्मी रोते हुए महाराजजी के पास आया और बोला, "मेरा बेटा मर गया, आपने क्या किया?" महाराजजी ने कहा कि बेटे को कैंसर था और यह ईश्वर की इच्छा थी। "लेकिन आप उसे बचा सकते थे," उस व्यक्ति ने कहा।

"भगवान की इच्छा जो होती है वही होती है," महाराजजी ने कहा। वह व्यक्ति चला गया और महाराजजी ने कहा, "जब कोई गलत काम करता है, तो उसका फल अवश्य मिलता है—चाहे पिता को भुगतना पड़े या उसके बच्चों को—लेकिन किसी न किसी को तो भुगतना ही पड़ता है।"

महाराजजी द्वारा मृत्यु के कर्म में हस्तक्षेप करने से इनकार करना स्पष्ट रूप से अपवादों से रहित

नहीं था।

मैं रात को महाराजजी के साथ नैनीताल से कुछ ही दूरी पर, भूमीधर मंदिर के पास सड़क किनारे बैठा था। तभी सड़क पर एक अजीब सा दिखने वाला आदमी फटे-पुराने कपड़ों और राख से ढका हुआ आया। वह महाराजजी को गालियां देने लगा, तो मुझे लगा कि वह नशे में होगा। वह महाराजजी पर अपने भक्तों को ज़रूरत से ज़्यादा सुरक्षा देने का आरोप लगाता रहा। “इस बार तो हद ही हो गई! छह दिन में मैं उसे मार डालूंगा।” महाराजजी बहुत उत्तेजित लग रहे थे और उन्होंने मुझे मंदिर जाकर उस अजनबी के लिए खाना लाने को कहा। मैं दौड़कर गया और जब मैं वापस आ रहा था, तो वह आदमी सड़क पार करके हवा में उड़ गया और गायब हो गया। महाराजजी चिल्ला रहे थे, “देखो वह कहां गया, देखो वह कहां गया!” लेकिन वह मुझे कहीं दिखाई नहीं दिया। तब महाराजजी ने मुझे बताया कि वह अजनबी मृत्यु था। छह दिन बाद महाराजजी के सबसे करीबी भक्तों में से एक की मृत्यु हो गई।

और फिर भी उन्होंने स्वयं उसी रूप में मरने का चुनाव किया, जिस रूप में वे जिए थे, एक ऐसे रूप में जो एक बार फिर इस बात को दोहराता है—कुछ भी खास नहीं।

उन्होंने सब कुछ प्रकृति के अनुसार किया। बच्चा रहता है, युवक चलता-फिरता है, बूढ़ा रहता है। उन्होंने प्रकृति के नियमों का पालन किया। अगर वे चाहते तो कर सकते थे, लेकिन मुझे नहीं लगता कि उन्होंने अपने लिए प्रकृति को बदला। जब वे बीमार होते थे तो दवाइयों के बारे में पूछते थे; जब थक जाते थे तो आराम करते थे। बुढ़ापे में उनकी मृत्यु हो गई।

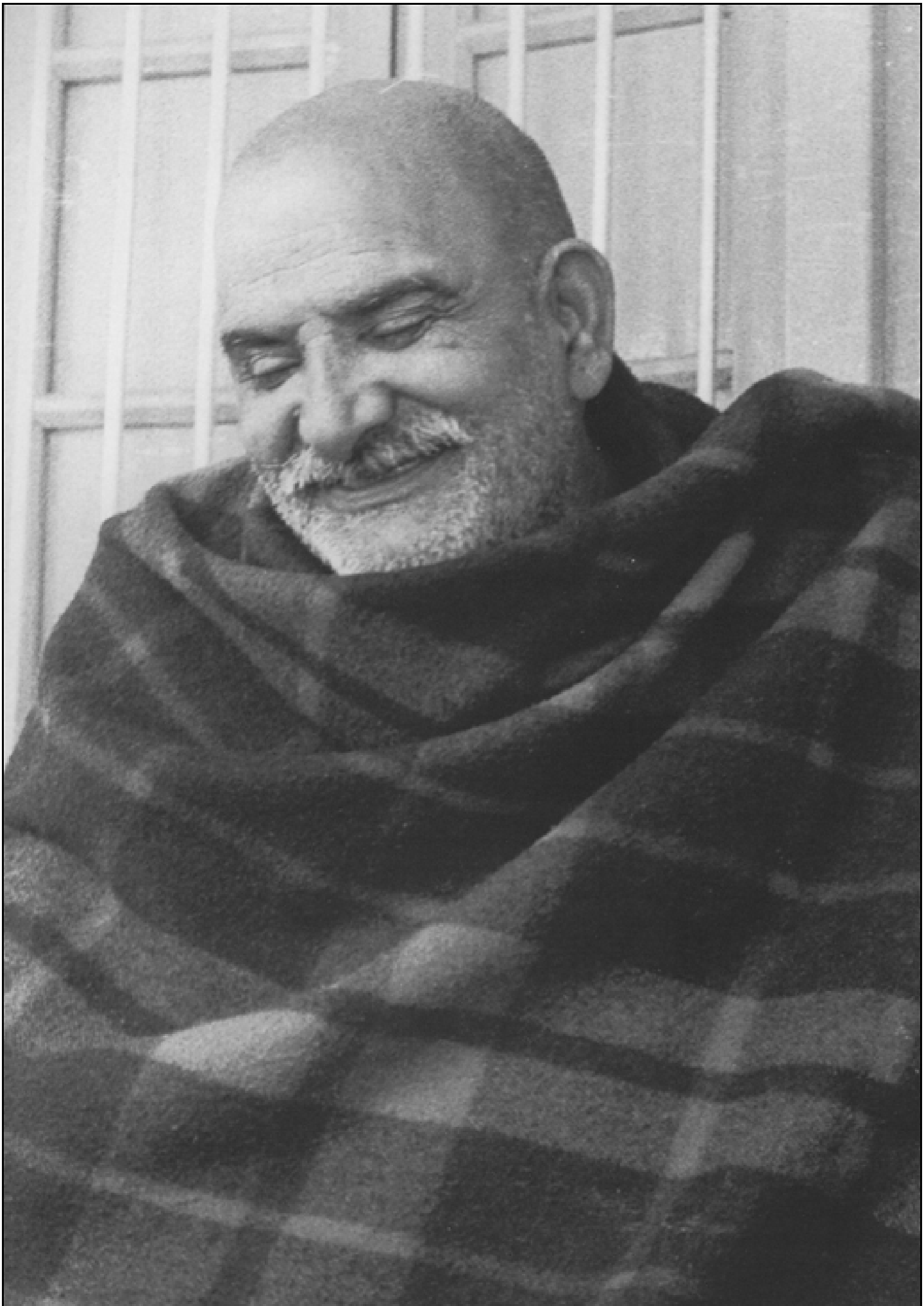

इसके बाद

महाराजजी मद्रास स्थित शिरडी साई बाबा मंदिर गए। वे वहाँ चुपचाप बैठ गए। एक महिला अपने बच्चे के साथ शिरडी साई बाबा की तस्वीर के सामने रो रही थी, जिनका देह त्याग कई वर्ष पहले हो चुका था। महाराजजी ने कहा, "जानती हो वह क्या कर रही है? वह उनसे अपने बच्चे को ठीक करने की प्रार्थना कर रही है, और वे ऐसा करेंगे क्योंकि गुरु कभी अपने भक्तों को नहीं छोड़ते। गुरु अविनाशी, अमर और वृद्धावस्था एवं मृत्यु से अछूते होते हैं।"

हम भक्त जो महाराजजी को जानते थे और उनकी लीला से परिचित थे, 11 सितंबर को वास्तव में क्या हुआ था, इसके बारे में पूरी तरह से निश्चित नहीं हैं। हम जानते हैं कि एक शरीर को जलाया गया था, लेकिन हम यह निश्चित नहीं हैं कि वह महाराजजी का कौन सा शरीर था। शायद उन्होंने अपने ही एक विचार को ठोस रूप दिया था, ताकि उसे जलाया जा सके। उन्होंने हमें सिखाया था कि उनके बारे में अपनी इंद्रियों और मन पर भरोसा न करें, और हमने यह सबक अच्छी तरह से सीख लिया है। अब हम दाह संस्कार किए गए शरीर की वास्तविकता को भी स्वीकार करने में संकोच करते हैं। इसलिए हममें से कई लोगों को तब आश्चर्य नहीं होता जब ऐसी कहानियां सामने आने लगती हैं जो बताती हैं कि सब कुछ वैसा नहीं है जैसा दिखता है।

महाराजजी की महासमाधि के कुछ सप्ताह बाद, एक अजनबी लखनऊ के हनुमान मंदिर में आया। उसने पुजारी से अपने गले में पहनी माला के बारे में पूछा, और पुजारी ने उत्तर दिया कि ये तुलसी की मालाएँ हैं जो महाराजजी ने उसे दी थीं। अजनबी ने कहा कि वह महाराजजी को जानता था और उन्हें एक महान आत्मा मानता था। उसने आश्रम का भ्रमण करने का अनुरोध किया, और महाराजजी के लिए तैयार किए गए शयनकक्ष में प्रवेश करते ही, उसने पलंग पर रखे एक कलश की ओर इशारा किया और उसके बारे में पूछा। पुजारी समझ गया कि वह व्यक्ति महाराजजी की महासमाधि के बारे में नहीं जानता था। उसने उसे बताया कि कलश में महाराजजी के अंतिम संस्कार की राख है। वह व्यक्ति स्तब्ध रह गया और उसने कहा कि यह असंभव है, क्योंकि उसने कुछ दिन पहले ही अमरकंटक में महाराजजी को देखा था। उसने कहा कि महाराजजी ने केवल कमर पर एक बोरी बाँधी हुई थी और कोई अन्य वस्त्र नहीं पहने थे। महाराजजी ने उसे बताया था कि उन्होंने अपना कंबल कैंची में छोड़ दिया था और तब से वे महंगे धोती नहीं पहनेंगे। उन्होंने कहा था कि आश्रम जेल हैं और वे साधुओं के मन में आसक्ति को फिर से घर कर देते हैं, जबकि साधुओं को आसक्ति से मन को शुद्ध करना चाहिए था। महाराजजी ने कहा था कि वे आश्रमों से भाग गए हैं और कभी वापस नहीं लौटेंगे। अब से वे जंगल में रहेंगे और बिना किसी बाधा के भजन गाने और प्रार्थना करने के लिए समय निकालेंगे।

पुजारी उस व्यक्ति के खुलासे से स्तब्ध रह गया। कुछ ही क्षण बाद उसने अजनबी से पूछताछ करने के लिए मुड़ा और पाया कि वह व्यक्ति गायब हो गया था।

राम

महाराजजी ने दो-तीन साल पहले मुझसे कहा था कि वे मेरे लिए तीन चीजें लाएंगे। वे नहीं लाए, और मैंने उन्हें कभी याद भी नहीं दिलाया क्योंकि वे अपने स्वभाव के अनुसार ही चलते हैं। मैंने उनसे कभी कुछ नहीं माँगा। उन्होंने मेरे लिए जो कुछ भी किया, वह उन्होंने स्वयं अपने मुँह

से कहा था। वे मुझे जो तीन चीजें देना चाहते थे, वे थीं: पशुपतिनाथ से रुद्राक्ष की माला, नर्मदा नदी से लाया गया शिवलिंग और एक विशेष शंख।

महाराजजी के निधन के बाद, एक साधु आए और उन्होंने ये मुझे दिए। उन्होंने कहा, “ये आपके लिए भेजे जा रहे हैं।” यह युवा साधु तीन बार आए। आखिरी बार उन्होंने स्पष्ट कर दिया: “सब कुछ बाबा नीम करोली के आदेशानुसार हो रहा है!” इन तीन मुलाकातों के अलावा, मैंने उन्हें कभी नहीं देखा, और वे केवल इसी घर में आते थे।

मैंने कभी साधु के बारे में खोजबीन या पूछताछ नहीं की। अगर हम पूछताछ करते हैं, तो इसका मतलब है कि हम जिज्ञासु हैं और कुछ चाहते हैं, जो हमारा कर्तव्य नहीं है। महाराजजी जो कर रहे हैं, वही कर रहे हैं। साधु मेरे पास आए और महाराजजी के मुख से निकले वचनों को पूरा किया। मेरा मानना है कि वे वही हैं। उस दिन से मुझे यह दृढ़ विश्वास है कि वे मेरे साथ हैं।

आपके और मेरे मन में कुछ विचार आते हैं, और कोई तीसरा व्यक्ति उन्हें पूरा कर देता है। यह कैसे संभव है? वह शक्ति काम कर रही है। साधु की उम्र मुश्किल से इक्कीस या बाईस साल लग रही थी। वे आखिरी बार दस दिन पहले सुबह आए थे। एक भयंकर आग बेकाबू होकर फैल रही थी और मैं जल्दी से रास्ते से नीचे जा रहा था, तभी वे आते हुए दिखाई दिए। वे मेरे दफ्तर में बैठ गए और मैंने चाय मंगाई। मैंने उन्हें आग के बारे में बताया और घर से धुआँ दिखाई देने के बावजूद उन्होंने मुझे जाने नहीं दिया।

मैंने साधु से कहा कि महाराजजी ऐसा ही व्यवहार करते थे। उन्होंने सिर झुकाया और मुस्कुराए। मुझे लगा कि शायद वे महाराजजी ही हैं और इसीलिए मुस्कुरा रहे हैं। मैंने उनसे कहा कि मुझे आग के पास जाना है, लेकिन उन्होंने मुझे अनुमति नहीं दी। तब उन्होंने कहा, “मैंने पवनसुता (हनुमान का एक नाम) को वहाँ भेजा है। वे आग को बुझा देंगे। हनुमानजी वहाँ हैं। चिंता मत करो।” लगभग पच्चीस मिनट बाद आग बुझ गई। उन्होंने कहा, “तुम चाहो तो जा सकते हो, लेकिन आग बुझ चुकी है।” मैं आग के पास गया और वे दूसरे रास्ते से चले गए। आग बुझ चुकी थी।

उस दिन से पहले वे कुंभ मेले से पहले आए थे, जिसके बाद उन्होंने मुझसे कहा था कि मुझे दर्शन मिलेंगे। उन्होंने हनुमानजी के लाल वस्त्र पहने थे—एक धोती और एक छोटा कंबल। मैंने उनसे कहा कि यदि महाराजजी मुझे दर्शन देंगे, तो उन्हें मुझे बताना होगा कि वे ही हैं। मैंने कहा कि महाराजजी ने मुझसे कभी कुछ नहीं छिपाया। अंत में मैंने अपनी बात स्पष्ट कर दी और साधु ने कहा, “सब कुछ उनके आदेश पर हो रहा है।” यदि वे ही हैं, तो उन्हें स्पष्ट कर देना चाहिए।

राम

एक परिवार की यह आदत थी कि वे खीर बनाकर महाराजजी की तस्वीर के सामने एक छोटे से कमरे में रखते थे। कई साल पहले, एक बार उनकी भतीजी ने देखा कि खीर तस्वीर पर, महाराजजी के मुंह से टपक रही थी। अब, उनके देह त्यागने के कुछ समय बाद, फिर से खीर बनाई गई और तस्वीर के सामने रख दी गई। बाद में परिवार ने पाया कि खीर का तीन-चौथाई हिस्सा गायब था और चम्मच का इस्तेमाल किया गया था। कमरा इस तरह स्थित है कि उनकी जानकारी के बिना कोई भी उसमें नहीं जा सकता था।

राम

राजस्थान के मसिरीभाड़ से एक युवक रोता हुआ आया और पूछताछ करने पर उसने बताया कि उसे अभी-अभी पता चला है कि महाराजजी ने दो साल पहले देह त्याग दी थी। लेकिन उसे समझ नहीं आ रहा था कि यह दो साल पहले कैसे हो सकता है, क्योंकि केवल तीन महीने पहले ही महाराजजी ने उसकी बेटी का विवाह तय किया था और विवाह में आए थे।

राम

दादा प्रतिदिन महाराजजी की चादर पर विशेष पुष्प अर्पित करके उनकी पूजा करते हैं। कई बार, पूजा की तैयारी और कमरा खाली होने के बाद, दादा लौटकर चादर पर पैरों के निशान और कुछ अव्यवस्था पाते हैं। महाराजजी आ चुके होते हैं और प्रेम की भेंट स्वीकार कर चुके होते हैं।

राम

एक भक्त ने राम जयंती के अवसर पर रामायण पढ़ते समय महाराजजी की उपस्थिति का अनुभव किया। अगले दिन जब उसने पुस्तक खोली, तो उसमें राम का नाम ठीक उसी स्थान पर लिखा हुआ था जहाँ शिव अपनी पत्नी उमा से कहते हैं, "भगवान के नाम के सिवा सब कुछ माया है।"

राम

अगस्त 1977 में, बारिश के कारण भूस्खलन से सड़क बह जाने के कारण मैं नैनीताल से कैंची तक पैदल गया था। जब मैं वहाँ पहुँचा, तो सिद्धि माँ ने मुझे एक बाबा के बारे में बताया जो पंद्रह मिनट पहले ही वहाँ से निकले थे। उन्होंने कहा कि वे व्यवहार, वाणी और भाव में महाराजजी के समान थे। वे लगभग साठ वर्ष के और बहुत लंबे, छह फुट से भी अधिक लंबे लग रहे थे। मैं कुछ समय कैंची में रुका और मुझे विश्वास था कि किसी तरह मुझे नैनीताल वापस जाने के लिए सवारी मिल जाएगी। महाराजजी मुझे कैंची तक लाए थे और उन्होंने मेरी वापसी का ख्याल रखा। द्वार पर मुझे एक सफेद गाड़ी में सवारी मिल गई। सड़क पर दो मील से भी कम दूरी पर मैंने एक लंबे साधु को देखा। मैंने गाड़ी रोकी और बाबा के पैर छुए, बिना कुछ कहे। बाबा ने कहा, "हम मंदिर में नहीं मिले, इसलिए हम यहाँ मिले हैं।" मैंने बाबा से नैनीताल आने का आग्रह किया, और मैदानी इलाकों में बहुत काम होने के बावजूद, वे आ गए। उस शाम मेरे घर पर बाबा ने एक छोटे लड़के से पूछा कि क्या वह उन्हें पहचानता है, लेकिन उन्होंने जवाब का इंतज़ार नहीं किया और बात करते रहे। साधु से मिलने वाले हर व्यक्ति ने कहा कि वे महाराजजी की तरह ही बात करते और हँसते थे। साधु के जाते समय उन्होंने मुझसे कहा कि मैं उनका पीछा करने की कोशिश न करूँ, क्योंकि मैं ऐसा नहीं कर पाऊँगा।

राम

एक रात आश्रम के तीन कर्मचारी महाराजजी के बारे में देर रात तक बातें करते रहे। आधी रात के करीब वे सो गए। के हनुमान मंदिर के बरामदे में सोया, महाराजजी के कमरे के सामने चौकीदार और रसोइया रसोई के बाहर सोया।

रात के 1:00 बजे के कुछ समय बाद, महाराजजी के कमरे के अंदर से रोने की आवाज़ (एक पुरुष की आवाज़) सुनकर चौकीदार की नींद खुल गई। कमरा बाहर से बंद था। वह बहुत डर गया और मदद के लिए के पास भागा। के गहरी नींद में था और जब उसके चेहरे पर ठंडा पानी डाला गया, तब जाकर उसकी नींद खुली। के ने बताया कि जागने पर उसे ऐसा लगा जैसे

उसमें पचास आदमियों की ताकत आ गई हो। उन्होंने उसे रोने की आवाज़ों के बारे में बताया और जब वे उसे बता रहे थे, तब वह पूरी तरह शांत था। उसने कहा कि जब वह बंद कमरे के बाहर खड़ा होकर आवाज़ें सुन रहा था, तब उसे ज़रा भी डर नहीं लगा - उसे अपने पूरे मन से पता था कि सब ठीक है। उसे लगा कि उस कमरे के अंदर हनुमान जी हैं (जो के लिए महाराजजी का पर्याय हैं)। इसलिए उन्होंने अंदर देखने के लिए दरवाज़ा नहीं खोला।
अब महाराजजी कई भक्तों को दर्शन के रूप में दिखाई देते हैं।

गुजरात में एक काफी धनी व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी सारी संपत्ति अपनी बेटियों को दे दी, वृंदावन आए, हनुमान जी की मूर्ति देखी और कहा, "मैं अब कभी यहाँ से नहीं जाऊँगा।" वे आश्रम में रसोइया बन गए। वे अत्यंत ईमानदार और सरल स्वभाव के व्यक्ति थे, सुबह से लेकर देर रात तक सफाई और खाना पकाने का काम करते थे। उन्होंने महाराजजी को कभी नहीं देखा था, लेकिन उनके प्रति गहरी श्रद्धा रखते थे और उन्होंने एक पश्चिमी व्यक्ति को बताया कि उन्होंने कई बार आश्रम में महाराजजी को (दिव्य रूप में) देखा था।

एक बार देर रात हो चुकी थी और वह रसोई में काम कर रहा था। जब उसका काम खत्म हो गया, तो उसे समाधि से पहले थोड़ी देर बैठने का मन हुआ। जब वह बैठा था, तो उसे किसी ने कंधे पर थपथपाया। मुड़कर देखने पर उसने देखा कि महाराजजी उसके पीछे खड़े हैं, कंबल ओढ़े हुए हैं, लेकिन तेज सफेद रोशनी से जगमगा रहे हैं। वह महाराजजी के चरणों में गिर पड़ा, और महाराजजी ने उसे छुआ और उसे रुला दिया। उसने बताया कि दो और मौकों पर महाराजजी इसी तरह उसके पास आए थे। यह कहानी सुनाते हुए वह रो रहा था और आश्रम परिसर में उस जगह पर गया जहाँ उसने महाराजजी को देखा था। “वह यहीं थे! मैंने उन्हें यहीं देखा था।”

राम

महाराजजी की महासमाधि के बाद एक भक्त आश्रम में रह रही थीं। सुबह करीब 3 बजे उनकी नींद खुली और वे अपने कमरे से बाहर निकलीं तो देखा कि महाराजजी की समाधि के भीतरी कक्ष के प्रवेश द्वार पर विशाल रूप में महाराजजी विराजमान थे। इतना विशाल रूप! उन्हें देखकर वे परमानंद की अवस्था में आ गईं और कुमकुम (लाल पाउडर) लेने के लिए तुरंत अपने कमरे में गईं ताकि उन्हें तिलक लगा सकें। जब वे वापस लौटीं तो महाराजजी वहां से गायब हो चुके थे, लेकिन वे अभी भी इतनी परमानंद की अवस्था में थीं कि मंदिर गईं और समाधि भवन की दीवार पर "ओम राम" लिख दिया। यह वही साधारण कुमकुम था जिसका इस्तेमाल वे हर रोज समाधि पर लिखने के लिए करते हैं और फिर उसे धो देते हैं। लेकिन इस बार वह नहीं धुला और आज भी वहां अंकित है। आप उसे देख सकते हैं, और उन्हें इस दर्शन के हुए कई साल हो गए हैं। जब भी मैं वृंदावन से लौटता हूं, वे मुझसे पूछती हैं कि क्या वह अभी भी वहां है। यह हमेशा से ऐसा ही रहा है।

राम

इंद्र की माताजी का निधन महाराजजी के देह त्यागने के लगभग एक वर्ष बाद हुआ था। उन्होंने कैंची में पूरा दोपहर बिताया और उस फूल के बारे में बातें कीं जो महाराजजी ने उन्हें बीमारी के समय दिया था, जो ठीक होने पर गायब हो गया था; महाराजजी ने उनके बच्चों के नाम कैसे रखे थे; इत्यादि। दिन में पहले वे बार-बार पूछ रही थीं, “क्या आपको लगता है कि

कोई महाराजजी के विशाल रूप को देखकर जीवित रह सकता है?” उस शाम वे अन्य माताओं के साथ महाराजजी के कमरे में बैठी थीं और अचानक प्रणाम करते हुए पलंग की ओर झुक गईं—और उनका निधन हो गया। उनकी उंगलियां अभी भी माला जप रही थीं।

राम

महाराजजी की महासमाधि के बाद, इलाहाबाद की एक महिला उनके दर्शन करना चाहती थी। वह हरिद्वार में अपने पति के साथ बिस्तर पर थी, तभी अचानक वह उठ बैठी और लड़खड़ाती हुई बातें करने लगी। "वह आ गए हैं, वह यहाँ हैं।" वह बहुत डर गई और फिर उसने कहा कि महाराजजी हँसे और पूछा, "तुम इतनी क्यों डर रही हो? क्या तुम्हें मेरे पैर छूने और मेरे शरीर की मालिश करने की इच्छा नहीं हुई, जैसे तुम पहले करती थीं?"

राम

1976 में मंदिर में आए एक श्रद्धालु महाराजजी के कमरे में जाना चाहते थे, लेकिन मंदिर के रखवालों ने उन्हें अंदर नहीं जाने दिया। वे चाबी ढूंढने लगे, तभी उन्हें महाराजजी की आवाज़ सुनाई दी, “ये क्या बकवास कर रहे हो? ये तरीका ठीक नहीं है। फलां व्यक्ति यहाँ हैं। वे ही दरवाजा खोलेंगे।” तभी वे व्यक्ति आए और श्रद्धालु को अंदर जाने दिया।

राम

एक स्थानीय बाबा, महाराजजी के मंदिर के निर्माण में मदद करते समय, यह सोचने लगे कि इसका निर्माण कैसे होगा। तभी उन्हें एक दिव्य दर्शन हुआ जिसमें महाराजजी पत्थर पर पत्थर रखते हुए कह रहे थे, "मैं मंदिर का निर्माण करूंगा।"

राम

महाराजजी के निधन के बाद, एक व्यक्ति और उसका परिवार मंदिर के पास से गुजर रहे थे, तभी उनकी कार खराब हो गई। उन्होंने रात बिताने के लिए किसी से आश्रय मांगा। ठीक उसी समय, मंदिर में समाधि मंदिर के लिए धन जुटाने को लेकर काफी चिंता थी। उस रात भर वह व्यक्ति रोता रहा और सोचता रहा कि उसे इस मंदिर के लिए कुछ करना ही होगा। अगली सुबह उसने मूर्ति के लिए आवश्यक सारा धन दान कर दिया।

राम

मेरे पति को लगता है कि महाराजजी उनसे हर समय बात करते हैं। एक बार उन्होंने मेरे पति से ज़मीन खरीदकर घर बनाने को कहा; दूसरी बार उन्होंने बताया कि मंदिर के स्थानीय बाबा के पास चावल नहीं हैं। मेरे पति तुरंत सामान लेकर गए और पाया कि सचमुच बाबा के घर में खाने-पीने का सामान नहीं था।

अन्य भक्तों के लिए महाराजजी सपनों में आते हैं।

मई के महीने में एक दोपहर करीब दो बजे, महाराजजी की महासमाधि के लगभग एक साल बाद, मैं आश्रम में अपने कमरे में गहरी नींद में सो रहा था। सपने में महाराजजी मेरे पास आए और मेरे चेहरे पर पाँच थप्पड़ मारे और चिल्लाकर मुझसे कहा कि तुरंत उठो और आश्रम के पेड़ों को पानी दो क्योंकि वे प्यास से मर रहे थे। मैं तुरंत जाग गया और मेरा गाल लाल और दर्द से भरा हुआ था, मानो किसी ने अभी-अभी थप्पड़ मारा हो!

राम

महाराजजी ने मेरी पत्नी को सपने में दर्शन दिए। उन्होंने बताया कि वे अब अमेरिका में रह रहे हैं और फरादाबाद की एक फैक्ट्री में काम कर रहे हैं, जहाँ मेरा भाई बीमार है।

राम

महाराजजी के निधन के बाद एक बार मैंने सपना देखा, जिसमें वे मुझे आकाश में और ऊपर ले जा रहे थे। मुझे डर लगने लगा और मैंने कहा, "महाराजजी, अब मैं वापस जाना चाहती हूँ।"

उन्होंने कहा, "नहीं।" लेकिन मैं बहुत डरी हुई थी। फिर उन्होंने कहा, "ठीक है, तो तुम वापस जाओ।" और जैसे ही उन्होंने यह कहा, मैं जाग गई।

राम

एक रात मैंने सपना देखा कि मैं फिर से महाराजजी के साथ बैठी हूँ। सभी माताएँ आस-पास थीं, और मैं उनके चरणों में बैठकर रो रही थी। अगले दिन मैं प्रेम के कारण दिनभर रोती रही। भौतिक दर्शन, दर्शन या स्वप्न के अभाव में भी, अधिकांश भक्त महाराजजी की उपस्थिति और सुरक्षा का अनुभव करते रहते हैं। लेकिन इसमें आश्चर्य की क्या बात है? आखिर महाराजजी ने हमें बार-बार आश्वासन दिया है कि वे सदा हमारे साथ जुड़े रहेंगे और हमें उनके भौतिक शरीर के साथ रहने की आवश्यकता नहीं है।

एक दोपहर मैं महाराजजी के सामने मंदिर के प्रांगण में बैठा था। वे भक्तों से घिरे हुए थे, जो उनके चरणों की मालिश कर रहे थे, हंस रहे थे, इधर-उधर की बातें कर रहे थे और फल-मिठाई बाँट रहे थे। जैसे ही मैंने देखा, अचानक सारा दृश्य थम सा गया, मानो मैं कोई चित्र देख रहा हूँ। मुझे इन सबसे एक दूरी महसूस हुई। मेरे मन में विचार आया, “महाराजजी के साथ मेरा संबंध समय और स्थान से परे है। मुझे शारीरिक रूप से उनके चरणों में उपस्थित होने की आवश्यकता नहीं है। अगर मैं उन्हें फिर कभी न देखूँ तो भी कोई फर्क नहीं पड़ेगा। वे मेरे हृदय में हैं।” इस विचार मात्र से ही मुझे अपराधबोध हुआ, लेकिन उसी क्षण सब कुछ फिर से जीवंत हो उठा और मैंने देखा कि महाराजजी मुड़े और अपने बगल में खड़े एक वृद्ध भारतीय भक्त से कुछ फुसफुसाए। वह व्यक्ति तुरंत प्रांगण पार करके मेरे पास आया और मेरे चरणों को छुआ। फिर उसने मुझसे कहा, “महाराजजी ने मुझे यहाँ आकर आपके चरणों को छूने के लिए कहा। महाराजजी ने कहा, ‘राम दास और मैं एक-दूसरे को भली-भांति समझते हैं। उनका हृदय खुला है।’” उसी क्षण मुझे पता चला कि महाराजजी ने मुझे अपने रूप से आसक्ति से मुक्त कर दिया है। उस समय से लेकर अब तक के तेईस वर्षों में, महाराजजी और मैं कभी अलग नहीं हुए। (आर.डी.)

राम

इलाहाबाद पहुँचकर महाराजजी ने माँ से कहा, “मुझे जाना होगा। मुझे बहुत काम है।” माँ ने पूछा, “आपको क्या काम करना है?”

मुझे बहुत काम करना है, लेकिन मैं जल्द ही आऊंगा।

चार महीने बीत गए और वह वापस नहीं लौटे। माताएँ आपस में बात कर रही थीं कि महाराजजी सच नहीं बोलते। जब उन्होंने महाराजजी को दोबारा देखा, तो माताओं ने उनसे कहा, "बाबा, आप झूठ बोलते हैं।"

“क्यों, माँ?”

"आपने कहा था कि आप आएंगे, और लगभग पांच महीने बीत चुके हैं।"

“मैं कभी झूठ नहीं बोलता। मैं कहाँ जा सकता हूँ? मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। यकीन मानो माँ, मैं कहाँ जा सकता हूँ?”

तुम मुझे छोड़ सकते हो। मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा। एक बार जब मैं तुम्हें पकड़ लेता हूँ, तो मैं तुम्हें जाने नहीं देता।

एमएस और मैं उन कहानियों पर चर्चा कर रहे थे कि महाराजजी अमरकंटक में एक युवा के रूप में पुनर्जीवित होकर जीवित और स्वस्थ हैं। उन्होंने कहा कि वास्तव में महत्वपूर्ण यह जानना है कि महाराजजी हर पल हमारा मार्गदर्शन कर रहे हैं। “मैं सचमुच यही कह रहा हूँ। मुझे पता है कि इस तरह बोलना मीठी कविता जैसा लगता है, लेकिन वे हर समय हमारे साथ हैं। मैं यह दिल से कह रहा हूँ।”

राम

जब वे शरीर में थे, तब वे मुझे अक्सर सपनों में आते थे। अब भी वे सपनों में आते हैं, लेकिन जब तक उन्हें मुझे कुछ सिखाना न हो, तब तक वे इतने स्पष्ट नहीं होते। सुबह जब मैं आंखें बंद करके बैठती हूं, तो मुझे ऐसा लगता है कि वे मेरे सामने हैं। ऐसा पहले भी होता था और अब भी होता है। मुझे इस बात से कोई खास मतलब नहीं है कि उनका शरीर है या नहीं। वे हर जगह हैं। जब आप उनका ध्यान करते हैं और उनके बारे में सोचते हैं, तो वे जरूर आते हैं। वे हमेशा से यहां रहे हैं और हमेशा रहेंगे। उन्हें ढूंढने के लिए कहीं विशेष जाने की जरूरत नहीं है। सभी स्थान समान रूप से अच्छे हैं।

राम

जब पहली बार मैं उनके साथ बैठी, तो उनके साथ कुछ ही पल बिताने के बाद वे मेरे दिल में बस गए। वे हमेशा मेरे दिल में रहते हैं। मेरे पास उनकी ज़्यादा तस्वीरें नहीं हैं। मैं उनके बारे में ज़्यादा बात नहीं करती। वे अब भी मेरे साथ हैं—शब्दों में नहीं, बल्कि एक एहसास में।

राम

कई महीनों तक मैं महाराजजी के देह त्यागने की बात भूल जाता हूँ, और फिर अचानक मुझे उनकी उपस्थिति का एक अत्यंत शक्तिशाली अनुभव होता है। लेकिन अब मैं उन्हें अपने मन में रखने की कोशिश नहीं करता, जो कभी मेरी एक आदत हुआ करती थी। फिर भी कभी-कभी अनायास ही, या कहीं से मिली प्रेरणा से, उनकी उपस्थिति का एक वास्तविक अनुभव उत्पन्न हो जाता है। और इस तरह, मेरे लिए, यह कृपा का ही एक पहलू प्रतीत होता है।

राम

हाल ही में महाराजजी मेरे पास पिता समान आ रहे हैं, और यही वह चीज है जिसकी मुझे इस समय अपने जीवन में सबसे ज्यादा जरूरत है। वे एक बड़े से टेडी बियर की तरह आते हैं, जो मुझे अपनी बाहों में भर लेते हैं और मुझे बहुत ही प्यार से गले लगाते हैं—सहलाते और आलिंगन करते हैं—ऐसा प्यार जो मैंने अपने जीवन में पहले कभी नहीं जाना।

राम

फिर भी वह अपना काम कर रहे हैं। हमें कुछ करने की ज़रूरत नहीं है। हमारी समस्याओं का समाधान वही कर रहे हैं। शारीरिक रूप से हम उन्हें देख नहीं सकते, लेकिन अगर हम ध्यान और

चिंतन करें, तो वे हमेशा हमारे साथ हैं। मेरे मामले में, मैं जानता हूँ कि सब कुछ वही कर रहे हैं। आज भी अगर मुझे कोई समस्या होती है, तो मैं उनका ध्यान करता हूँ और वे उसे हल कर देते हैं।

राम

कुछ दिन पहले मैं भोवाली से नैनीताल जाने वाली बस में सफर कर रहा था। खिड़की के पास बैठे-बैठे मुझे महाराजजी की गर्माहट महसूस हुई, मानो वे मेरे बगल में ही बैठे हों। मैं एक तरह की समाधि जैसी अवस्था में पहुँच गया और उनसे बातें करने लगा। बस के अचानक रुकने पर ही मुझे एहसास हुआ कि मैं समाधि जैसी अवस्था में था।

राम

मेरी पत्नी पंजाब से हैं और वहाँ पारिवारिक ज्योतिषियों पर बहुत विश्वास किया जाता है। हमारे ज्योतिषी ने कहा था कि उनका 59वाँ वर्ष बहुत कठिन होगा। कुछ सप्ताह पहले से ही यह शुरू हो गया था और उनकी तबीयत ठीक नहीं थी और वे चिंतित थीं। तीन साल पहले एक यज्ञ में महाराजजी द्वारा दिए गए राख और फूलों के एक पैकेट को खोलते समय (उन्होंने स्वयं राख एकत्रित की थी), उन्होंने उसे खोला और अंदर एक मोती की अंगूठी पाई जो उन्होंने पहले कभी नहीं देखी थी। (ऐसा माना जाता है कि यदि आपकी कुंडली में चंद्र दोष हो, तो मोती सहायक होता है।) महाराजजी तो हैं ही, तो चिंता क्यों करें? वे सब कुछ संभाल लेंगे।

राम

मंदिर में दर्शन मात्र से ही मैं उनकी उपस्थिति में पुनः आ गया। बाद में, जब हम इस बारे में चर्चा कर रहे थे, तो एक माता ने मुझे बताया कि महाराजजी ने कहा था, "जब कोई संत अपना शरीर त्याग देता है, तो मंदिर ही उसका शरीर बन जाता है।"

इस साल जब मैं वृंदावन में उनके कमरे में वापस दाखिल हुआ, दहलीज पार करते ही मुझे ऐसा लगा मानो पिछले चार सालों में मैंने जो कुछ भी किया था, वह सब व्यर्थ और अर्थहीन था। यह ठीक वैसा ही अनुभव था जैसा महाराजजी की एक दृष्टि पड़ने पर होता है—वह आपको ठीक यहीं, इसी क्षण में ले आती है।

राम

इस सर्दी में भारत की अपनी वापसी यात्रा के दौरान, जब मैं वृंदावन आश्रम के पिछले हिस्से में प्रवेश कर रहा था, तो मुझे यह अहसास हुआ कि पिछले पाँच वर्षों में मैंने जो कुछ भी किया था, यहाँ तक कि अधार्मिक माने जाने वाले कार्य भी, वे सब बिल्कुल नगण्य थे। मैंने शास्त्रों में यह पढ़ा तो था ही, लेकिन यह मेरा अनुभव था—या यूँ कहूँ कि यह मेरा पुनः अनुभव था—कि जब आप अपना हृदय पूरी तरह से ईश्वर को समर्पित कर देते हैं, तो सब कुछ क्षमा हो जाता है; वह बिल्कुल कुछ भी नहीं रह जाता। और यही मैंने वहाँ जाकर महसूस किया। मैं महाराजजी के कमरे में काफी देर तक बैठा रहा। ऐसा लगा मानो महाराजजी की शक्ति कंबल से निकलकर मेरे हृदय में समा रही हो, मानो मैं सचमुच उसमें स्नान कर रहा हूँ, उसकी शीतलता का आनंद ले रहा हूँ।

राम

उसे समझना असंभव है। शारीरिक रूप से वह यहाँ मौजूद नहीं है, लेकिन वह सब कुछ सुन

रहा है।

राम

यह बहुत परेशान करने वाला है। मैं बाबा जी के बारे में बात करना शुरू करता हूँ और फिर ऐसा लगता है जैसे वे यहीं मौजूद हों। क्या किया जा सकता है?

महाराज जी, हवा की तरह, किसी के नहीं होते। जिन लोगों ने उन्हें उनके साकार रूप में कभी नहीं देखा, वे भी उन्हें दर्शनों और सपनों में देखने, उनकी उपस्थिति का अनुभव करने और उनके द्वारा बुलाए जाने का अहसास करने की बात कहते हैं। स्पष्ट है कि लोगों को प्रभावित करने की उनकी क्षमता केवल शारीरिक संपर्क तक सीमित नहीं है।

जब लोग मेरे बारे में सोचते हैं, तो मैं उनके साथ होता हूँ।

महाराजजी के देह त्यागने के बाद भक्तों का क्या हाल रहा, इसे शब्दों में व्यक्त करना असंभव है। हम सभी अपने जीवन में आगे बढ़ चुके हैं। हममें से कुछ लोग उनके स्वरूप, कहानियों, तस्वीरों, अनुष्ठानों, नामों और एक-दूसरे की यादों से जुड़े हुए हैं। वहीं कुछ लोगों ने उनके स्वरूप को त्याग दिया है, यह जानते हुए कि महाराजजी से जुड़े रहना आवश्यक नहीं है, क्योंकि वे हमसे इतनी गहराई से जुड़े हुए हैं कि हम चाहकर भी उन्हें भूल नहीं सकते। उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति को, जो उनके अस्तित्व को स्वीकार करता है, हृदय में गहरी आस्था की विरासत दी है। उन्होंने हमारे भीतर के उस गहरे स्थान को प्रतिबिंबित करके उस आस्था को पुनर्जीवित किया, जिसे हमने शायद ही कभी छुआ था। यह प्रकाश का एक ऐसा स्थान है, जिसमें हम वास्तव में उस तेजस्वी, अद्भुत, प्रेममय आत्मा को साझा करते हैं। और ऐसे प्रकाश को देखने मात्र से ही सब कुछ बदल गया है।

महाराजजी से मिलने से पहले मैं वही सब काम कर रहा था जो मैं अब करता हूँ, लेकिन एक अलग ही स्तर पर। उन्होंने ही मुझे उस स्तर पर पहुँचाया।

राम

मैंने बेहतरीन मनोरंजन देख लिया है। इसलिए मुझे इस दुनिया की चीजों से कोई आनंद नहीं मिलता—महंगे खाने, सिनेमाघर, रोमांच। मेरी उनमें कोई रुचि नहीं है। एक दोस्त ने मुझे नैनीताल का सिनेमाघर देखने के लिए बुलाया। मैंने कहा, “क्यों? मैंने यहाँ का सबसे बड़ा सिनेमाघर देख लिया है। नैनीताल का वो सिनेमाघर मुझे बोर कर देगा। सबसे बड़ा मनोरंजन तो महाराजजी हैं।”

हमें कुछ ही स्पष्ट और सरल दिशा-निर्देश देकर, कुछ ही अभ्यास बताकर, उन्होंने हमें सतही भावनाओं में उलझने से बचाया है। उदाहरण के लिए, हम धार्मिकता की आड़ में नहीं छिप सकते, क्योंकि वे एक दुष्ट थे—और न ही हम दुष्टता की आड़ में छिप सकते हैं, क्योंकि उनका हर कार्य धार्मिक था। हमारा अहंकार किसी भी रूप में नहीं छिप सकता, क्योंकि महाराजजी हनुमान जी की तरह हमेशा मौजूद रहते हैं, “अत्याचारी को पहचानकर उसकी दाढ़ी नोचने” के लिए।

कभी-कभी मुझे अचानक से उनकी याद आ जाती है। मैंने घर में महाराजजी की कुछ छोटी-छोटी तस्वीरें रखी हुई हैं। कभी-कभी, जब मैं जल्दी-जल्दी काम निपटा रही होती हूँ—जैसे कि मैं देर से उठती हूँ और मुझे काम पर जाना होता है, इसलिए मैं घर में इधर-उधर भागती रहती हूँ—तो कभी-कभी अचानक से वो मुझे पकड़ लेते हैं। या तो मुझे तस्वीर दिखती है और मैं सोचती हूँ, “अरे वाह! चिंता मत करो, मुझे अभी भी याद है,” या फिर मुझे तस्वीर नहीं दिखती लेकिन

अचानक से कुछ ख्याल आता है, जैसे, “आप क्या कर रहे हैं? क्या हो रहा है? क्या आप अभी भी वहीं हैं? आप कहाँ हैं? क्या हो रहा है?”

जब मैं छोटा बच्चा था, तब से मेरा सपना रेसर बनने का था—कार, मोटरसाइकिल, या कुछ भी। महाराजजी के निधन के बाद, मैंने मोटरसाइकिल रेसिंग शुरू कर दी। मैं अपनी सारी ऊर्जा तेज़ गति से गाड़ी चलाने में लगाता था, लेकिन उस पूरे समय मैं यह बात भूल नहीं पाता था! चाहे मैं कितनी भी तेज़ गति से जाऊं, मोटरसाइकिल पर या हवाई जहाज़ में, उससे आगे प्रकाश की गति होती है, और अगर आप उस गति से जाते हैं तो आपका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है। मैं उस गति तक कभी नहीं पहुँच सकता था। और वही महाराजजी की गति है। वे प्रकाश की गति के समान हैं।

अब कहानियां सुनाई जा चुकी हैं, स्वरूप प्रकट हुआ और लुप्त हो गया। और हम यहां हैं, आप, मैं और महाराजजी, हममें से प्रत्येक उतना ही वास्तविक है जितना हमारा मन और हृदय हमें होने की अनुमति देता है।

इस समय, जब मैं ये शब्द लिख रहा हूँ, मैं यहीं हूँ।

इस समय, जब आप ये शब्द पढ़ रहे हैं, आप यहीं हैं।

इस "यहाँ" में जिसे हम साझा करते हैं, समय और स्थान से परे,

महाराजजी हमेशा हैं।

मैं हवा की तरह हूँ
कोई मुझे रोक नहीं सकता
मैं सबका हूँ
कोई भी मेरा मालिक नहीं बन सकता।
पूरी दुनिया ही मेरा घर है
ये सभी मेरे परिवार के सदस्य हैं।
मैं हर दिल में बसता हूँ
मैं तुम्हें कभी नहीं छोड़ूंगा।

—नीम करोली बाबा, जिन्हें “महाराजजी” के नाम से जाना जाता है, के शब्दों से, जय गोपाल द्वारा रूपांतरित।

महाराजजी का उत्तर भारत

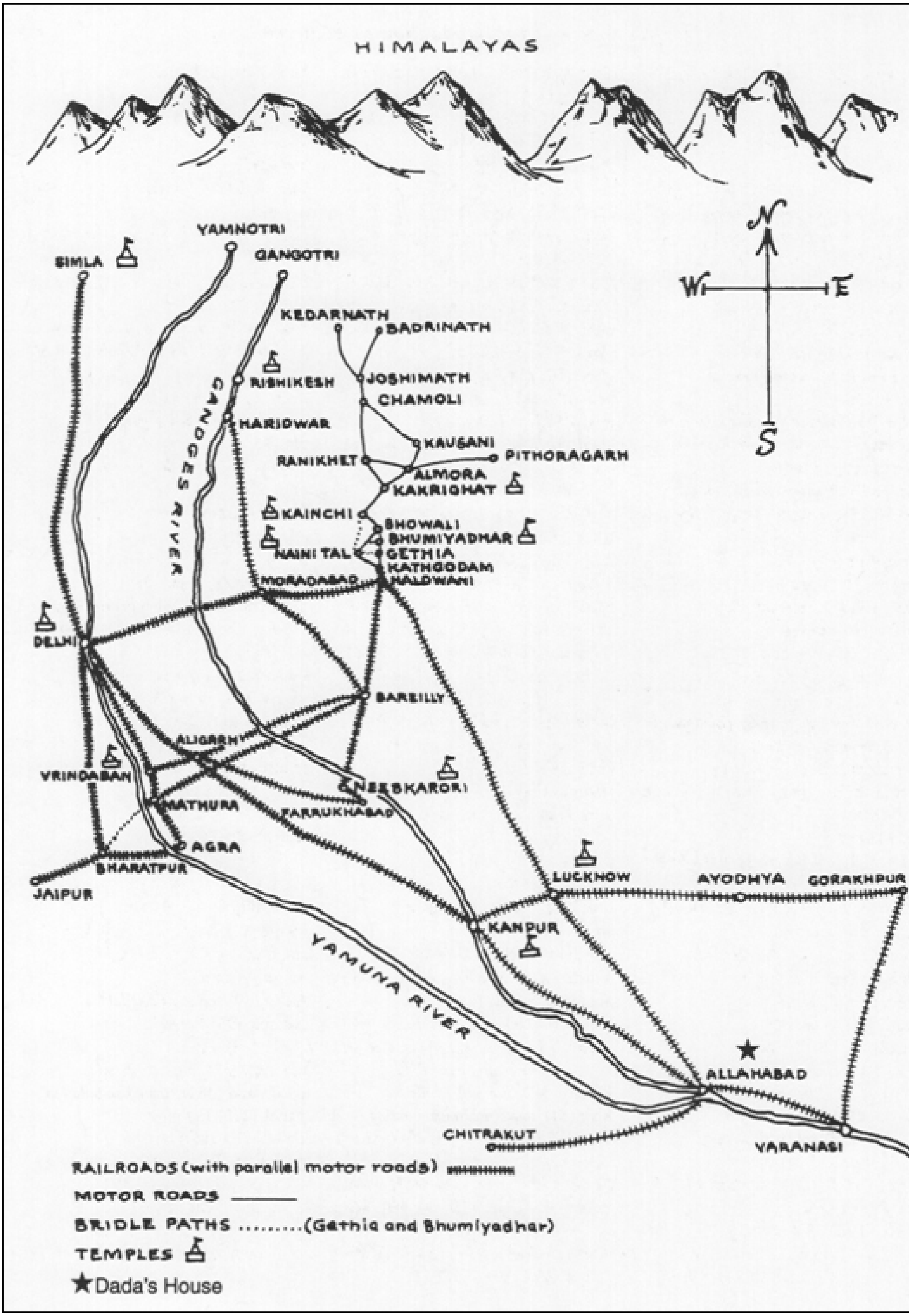

शब्दकोष

अधर्म: आध्यात्मिकता से रहित जीवन शैली

अद्वैत वाद: अद्वैतवाद

आज्ञा: तीसरी आंख

आकाश: स्वर्गीय आकाश

अमृत: अमृत

अन्नपूर्णा: अनाज की देवी

आना: छोटे भारतीय सिक्के

आरती: प्रकाश की पूजा समारोह

अशांति: शांतिपूर्ण नहीं

आशीर्वाद

आश्रम: मठ

आत्मा, आत्मन: भीतर का ईश्वर

आयुर्वेद: जड़ी-बूटी चिकित्सा का डॉक्टर

बाबा: किसी बुजुर्ग या पवित्र व्यक्ति के लिए उपाधि

बदमाश: धूर्त, उपद्रवी

बरका: आशीर्वाद

बार्डोस: अस्तित्व के तल

पान का पत्ता: पाचन क्रिया के लिए चबाया जाता है

भगवान: ईश्वर

भाग्य: नियति

भजन: भक्ति गीत

भक्त: भक्त

भक्ति: समर्पण

भंडारा: दावत

भाव: आध्यात्मिक भावना

ब्रह्म: निराकार (ब्रह्म ईश्वर का सृजनात्मक पहलू है)

ब्रह्मचर्य: ब्रह्मचर्य

ब्राह्मण: जाति व्यवस्था में पुरोहित वर्ग

चाय: चाय

चक्र: शरीर में स्थित मानसिक ऊर्जा का केंद्र

चपाती: बिना खमीर वाली वसायुक्त रोटी

चरस: हशीश

चौकीदार: द्वारपाल

चिलम: हशीश पीने का पाइप

चिम्प्टर: चिमटा
करोड़: दस मिलियन
डकैत: डाकू, चोर
दाल: मसूर
दांडी: पालकी
दरबार: राजा का दरबार
दर्शन; आध्यात्मिक सभा
दास, दास: सेवक
दासी: दास (नौकरानी) का स्त्रीलिंग रूप
देव: देवता
देवी पूजा: दिव्य माँ की उपासना
धर्म: जीवन जीने का आध्यात्मिक तरीका
धर्मशाला: छात्रावास, विशेषकर तीर्थयात्रियों के लिए
धोती: शरीर के निचले हिस्से को ढकने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला कपड़ा
धुनी: अलाव
ध्यान: मेडिटेशन
दीक्षा: दीक्षा
दुंदा प्रणाम: पूर्ण लंबाई साष्टांग प्रणाम
दुर्गा: दिव्य माँ का एक रूप
एकादशी: चंद्र पर्व का दिन
फकीर: साधु
गांजा: मारिजुआना
घी: शुद्ध मक्खन
गृहस्थ: घर का मालिक
गुड़: कच्ची भूरी चीनी
गुरु: एक मुक्त व्यक्ति जो ईश्वर तक पहुँचने का द्वार होता है।
गुरुबहन: गुरु बहन
हज: तीर्थयात्रा, विशेषकर मक्का की।
हकीम: उपचारक, चिकित्सक
हलवा: गेहूं, घी और एक मिठाई से बना अनाज का व्यंजन
हनुमान: ईश्वर के आदर्श सेवक
हनुमानजी: हनुमान को संबोधित करने का एक परिचित रूप
हठ योग: ईश्वर के साथ एकात्मता प्राप्त करने की शारीरिक विधि
हवन: घर में की जाने वाली एक छोटी अग्नि पूजा।
जाओ: जाओ
जलेबीज़: तली हुई चीनी की चाशनी

जेट्टा: सिर पर इकट्ठे किए गए लंबे, उलझे हुए बाल
झोला: कंधे पर रखने वाला थैला
जुथ: अशुद्ध, गंदा
कलियुग: अंधकार युग
कामिनी: स्त्री
कंचन: सोना, धन
कंचनकामिनी: सोना और महिलाएं
कन्ना: भोजन
कर्म: पूर्व कर्मों के परिणाम
कर्म योग: पूर्व कर्मों के फल का उपयोग करके ईश्वर को प्राप्त करना।
खिचड़ी: चावल और दाल
खीर: मीठा चावल/दूध का हलवा
कीर्तन: भक्ति गीतों का सामूहिक गायन
कृष्ण: विष्णु का अवतार
कुंभक: प्राणायाम का उपयोग कर योगिक विधि
कुंभ मेला: प्रत्येक बारह वर्ष में आयोजित होने वाला एक महान आध्यात्मिक मेला
कुमकुम: तिलक बनाने के लिए इस्तेमाल होने वाला रंगीन पाउडर
कुंडलिनी: रीढ़ की ऊर्जा
कुटी: झोपड़ी
क्या: क्या
लड्डू: हनुमान जी को प्रिय मिठाई
लाख: एक लाख रुपये
लक्ष्मी: सौभाग्य की देवी
लक्ष्मी-नारायण: नारायण विष्णु का एक रूप हैं, लक्ष्मी उनकी पत्नी हैं।
लंगोटी: कमर का कपड़ा
लस्सी: मथा हुआ दही का पेय
लीला: खेलो
लिंगम: लिंग प्रतीक
लोकी: स्क्वैश
लोटा: पानी का बर्तन
माँ: माता
महा-जाओ: महान जाओ
महाराजजी: महान राजा
महासमाधि: एक आत्मज्ञानी व्यक्ति के अंतिम अवतार की पूर्णता
महात्मा: महान आत्मा
माला: प्रार्थना की माला

मालपुआ: मीठी तली हुई रोटी
मंदिर: मंदिर
मंत्र: पवित्र शब्दों के दोहराव की योग विधि
मौन: मौन
माया: भ्रम
मेला: मेला, सभा
मुद्रा: योग की वह विधि जिसमें शारीरिक बनावट या हावभाव का उपयोग किया जाता है।
मूर्ति: पवित्र प्रतिमा
नागा बाबा: नग्न साधु
नहीं: no
नाथ: भगवान
ओम: ब्रह्मांडीय शब्दांश
पकोड़े: पकौड़े
पानी: जल
पराठे: तली हुई रोटी
परिक्रमा:
पत्तल: पत्ती की प्लेट
पेरा: एक मिठाई
फलाहारी: सब्जियों और फलों का आहार
प्राण: मानसिक ऊर्जा
प्रणाम, प्रणाममेद: प्रणाम
प्राणायाम: श्वास नियंत्रण से संबंधित एक योगिक तकनीक
प्रसाद: पवित्र किया हुआ भोजन
पूजा: प्रार्थना अनुष्ठान
पक्का पुजारी: प्रथम श्रेणी पुजारी
पंडित: धार्मिक विद्वान
पूरियां: तली हुई वसायुक्त रोटी
राधा: कृष्ण की प्रियतमा और भक्त
रक्षाबंधन: सुरक्षात्मक रिबन
राम: विष्णु का अवतार
रामबंस: कैक्टस
राम लीला: राम के जीवन का उत्सव
राम मंत्र: राम नाम का बार-बार जाप करना
रसम: दक्षिण भारतीय व्यंजन
ऋषि: संत
रोटी, रोटियाँ: ब्रेड (चपाती के समान)

रुद्राक्ष: प्रार्थना की माला बनाने में प्रयुक्त बीज
साधना: आध्यात्मिक अभ्यास
साधु: त्यागी
समाधि: गहरी आध्यात्मिक अवस्था
सांभर: दक्षिण भारतीय व्यंजन
संस्कार: पिछले जन्मों के कर्मफल
संगम: तीन पवित्र नदियों का संगम
संन्यास: त्याग
संन्यासी: त्यागी
सत गुरु: सर्वोच्च गुरु
सती: पत्नी, संगिनी
सत्संग: आध्यात्मिक साधकों का समुदाय
शक्ति: मानसिक ऊर्जा
शालिग्राम: अनुष्ठानों में प्रयुक्त पत्थर
शांति मिलती-है: शांति मिलती है
शेराबी: शराबी, नशेड़ी
शिव: ईश्वर का विनाशकारी रूप
शिवरात्रि: शिव का सम्मान करने वाला पवित्र दिन
शिवलिंगम: शिव का लिंग प्रतीक
सिद्ध लोक: सर्वोच्च दिव्य प्राणियों का निवास स्थान
सिद्ध महात्मा: सर्वोच्च संत
सिद्धि: मानसिक शक्ति
सीता: राम की पत्नी, दिव्य माता
सीताराम: सीता और राम के नामों से युक्त मंत्र
तपस्या: तपस्या
ठाकुर: हिंदू धर्म का एक निम्न वर्ग
तिलक: माथे पर लगाया जाने वाला धार्मिक चिह्न
टोंगा: घोड़े की गाड़ी
टकेट: लकड़ी का बिस्तर
तुलसी: पवित्र तुलसी का पौधा
त्याग: बलिदान
उल्फी: बोरी जैसा वस्त्र
उमा: शिव की पत्नी
उप-गुरु: अपने सतगुरु के अलावा अन्य आध्यात्मिक मार्गदर्शक
वेद व्यास: एक महान भारतीय संत
विभूति: पवित्र राख

वालास: विक्रेता, मालिक
यज्ञ: एक प्रमुख अग्नि अनुष्ठान
यात्रा: तीर्थयात्रा
योगासन: योगिक मुद्राएँ
योगी: वह व्यक्ति जो ईश्वर के साथ मिलन की तलाश करता है
युग: समय अवधि, काल

जिन पृष्ठों पर फोटो के आगे फोटो क्रेडिट नहीं दर्शाया गया है, उनके लिए अलग से फोटो क्रेडिट दिया गया है।

पृष्ठ, फोटोग्राफर या स्रोत
फ्रंटिस, बलराम दास
136, बलराम दास
162, बलराम दास
178, रॉय बोनी
198, रॉय बोनी
214, बलराम दास
282, बलराम दास
292, बलराम दास
364, चैतन्य
412, पी.एल. लाल साह
415, बलराम दास
416, बलराम दास
418, बलराम दास
422, बलराम दास

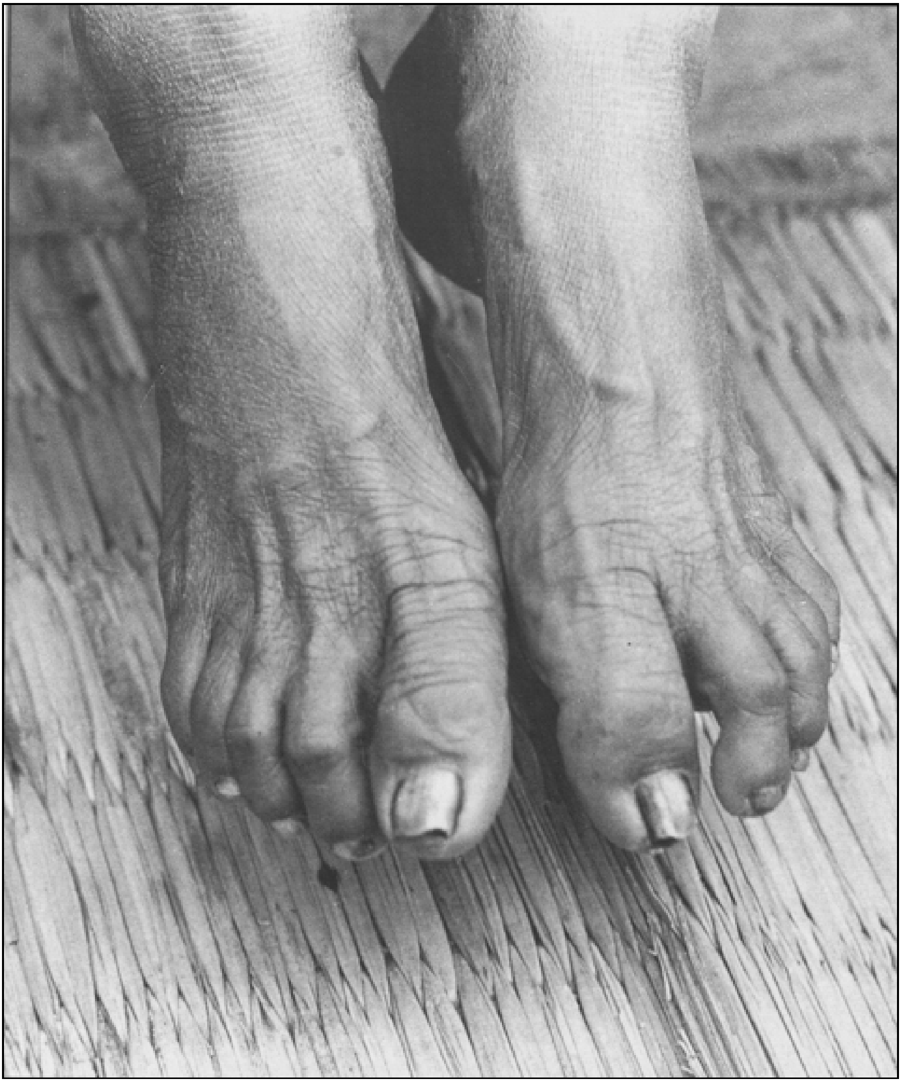

फोटो: बलराम दास

बाबा नीम करोली महाराज

ॐ जय जगदीश हरि

स्वामी जया जगदीश हरि

भक्त जनाना के संकट

दीना जनाना के संकट

क्षणा मेई दुरा करे

ॐ जय जगदीश हरि

ॐ, ब्रह्मांड के स्वामी की महिमा हो!

जो पल भर में मुसीबतों को दूर कर देता है

भक्तों का और गरीबों के कष्टों का

ॐ, ब्रह्मांड के स्वामी की महिमा हो!

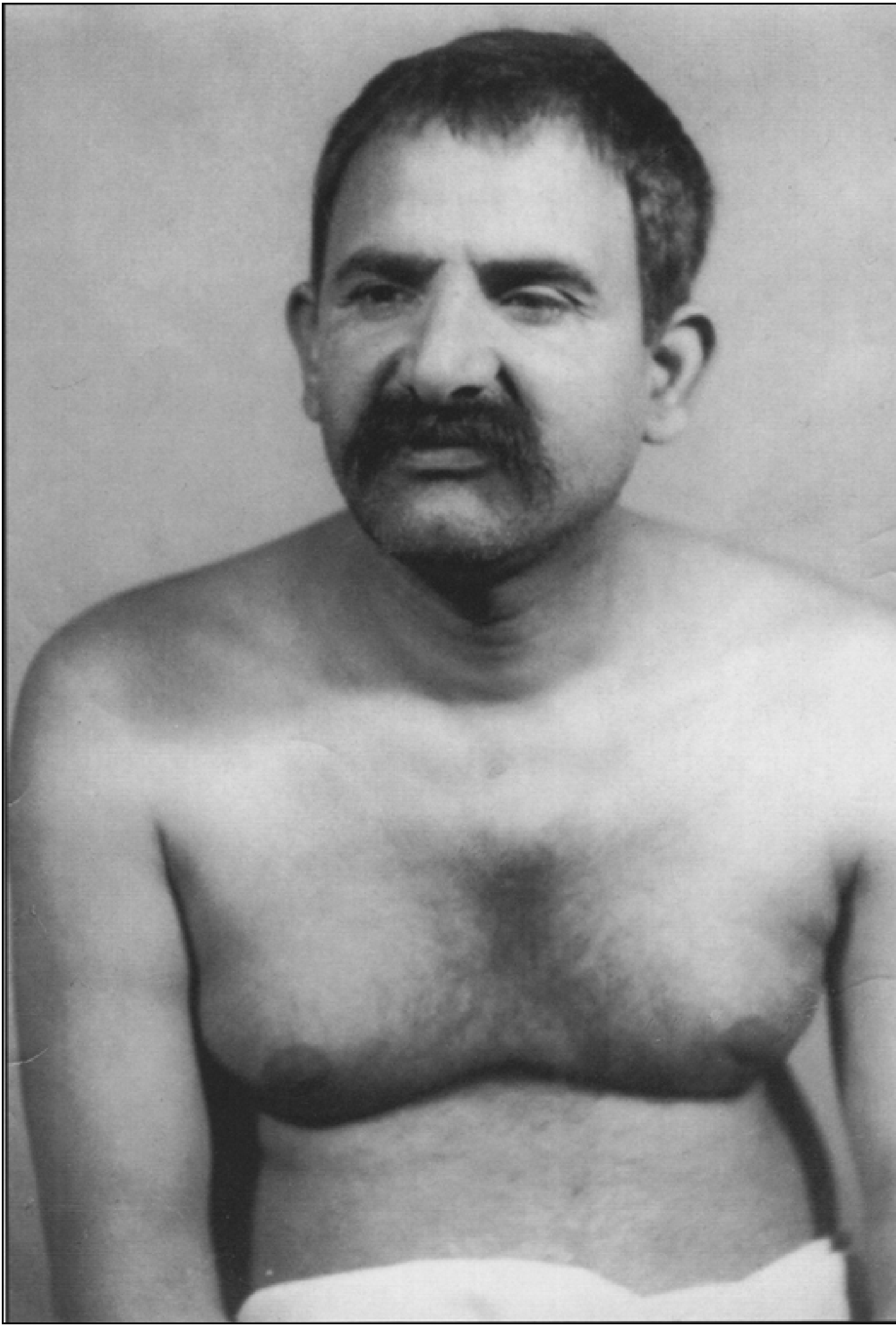

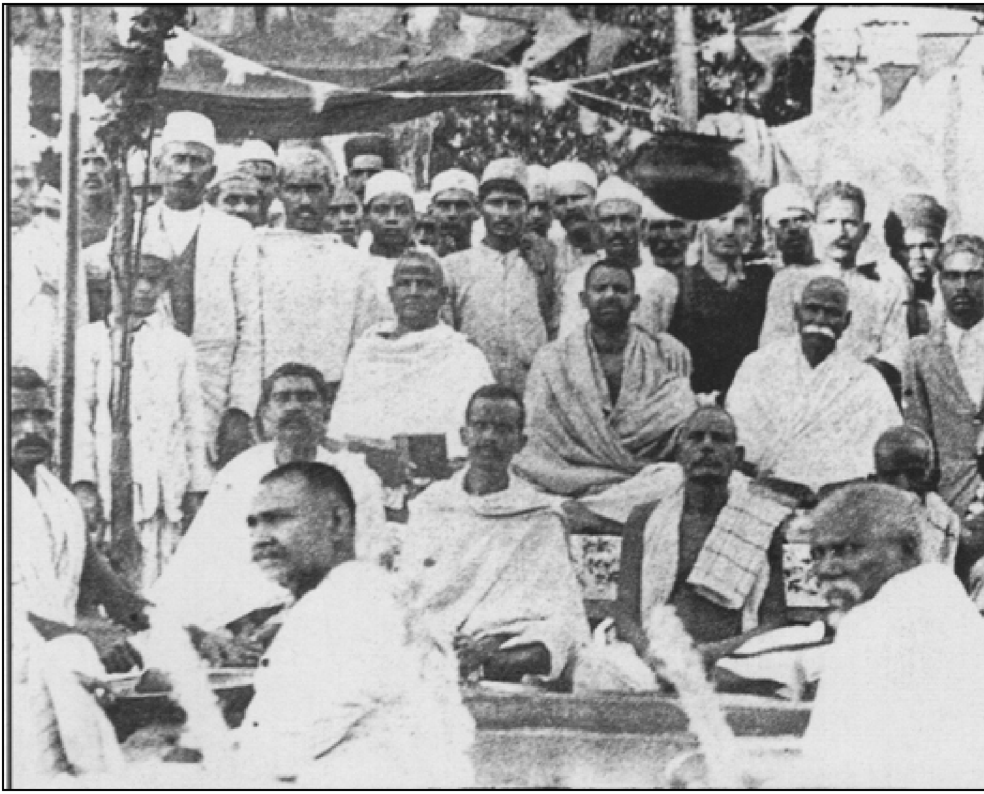

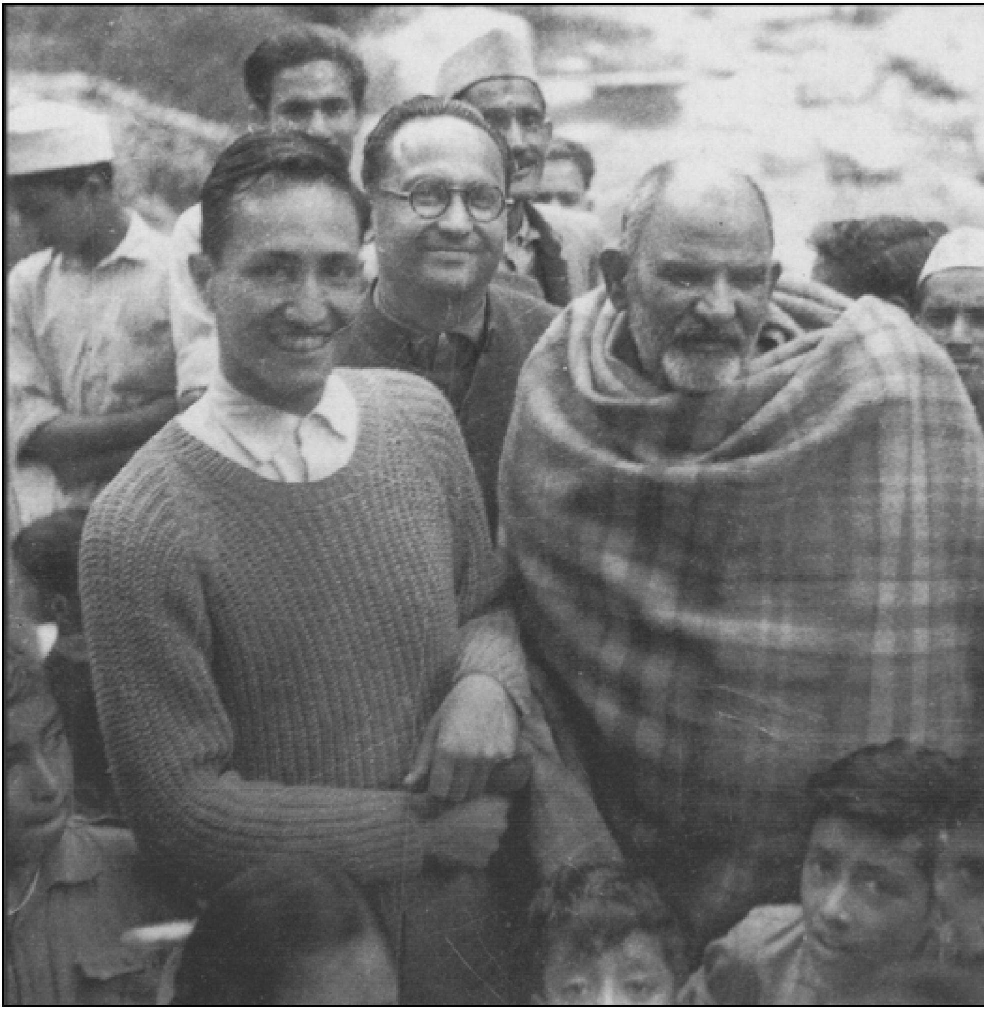

फोटो: प्यारी लाल साह

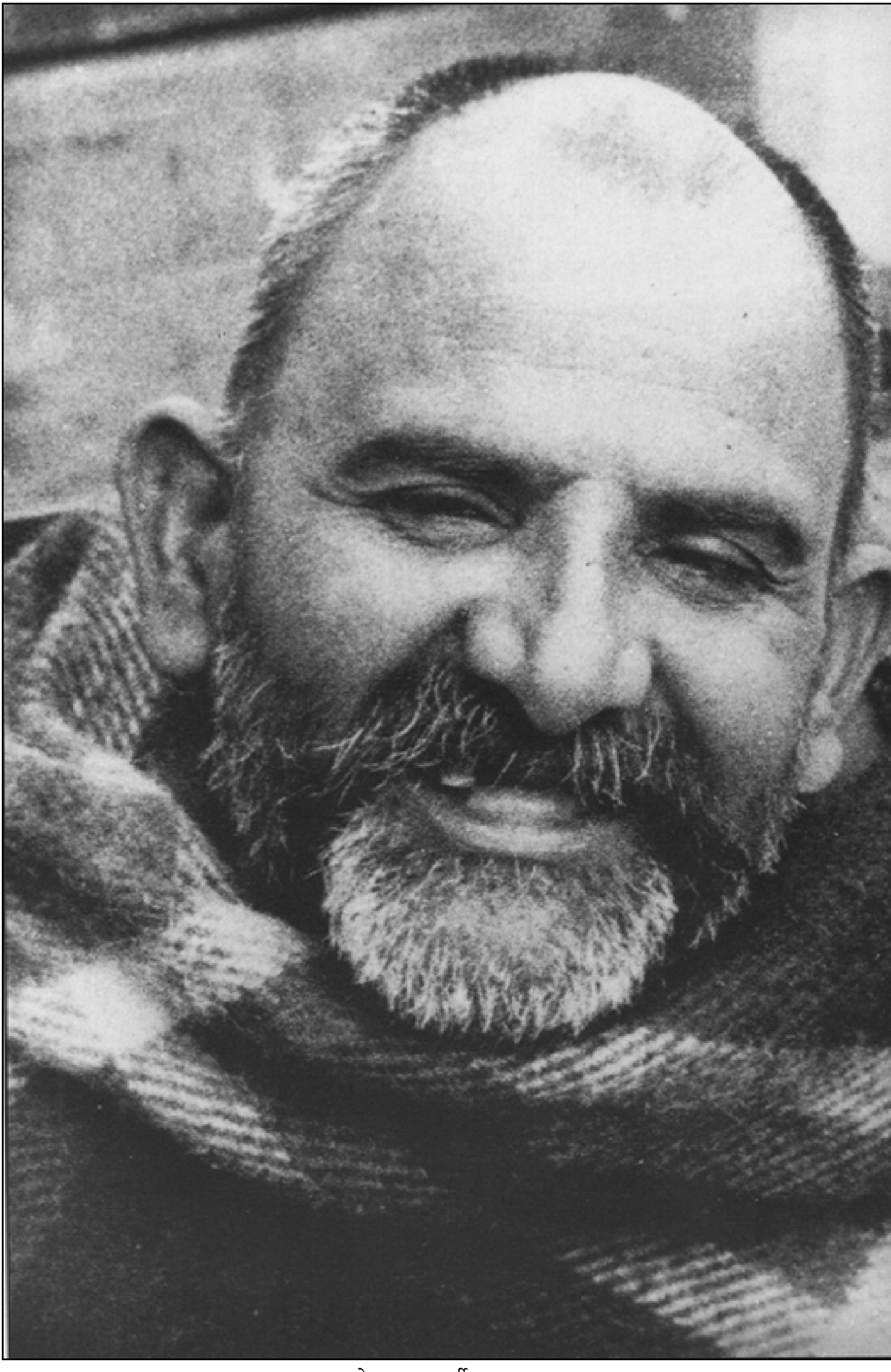

स्रोत: दादा मुखर्जी

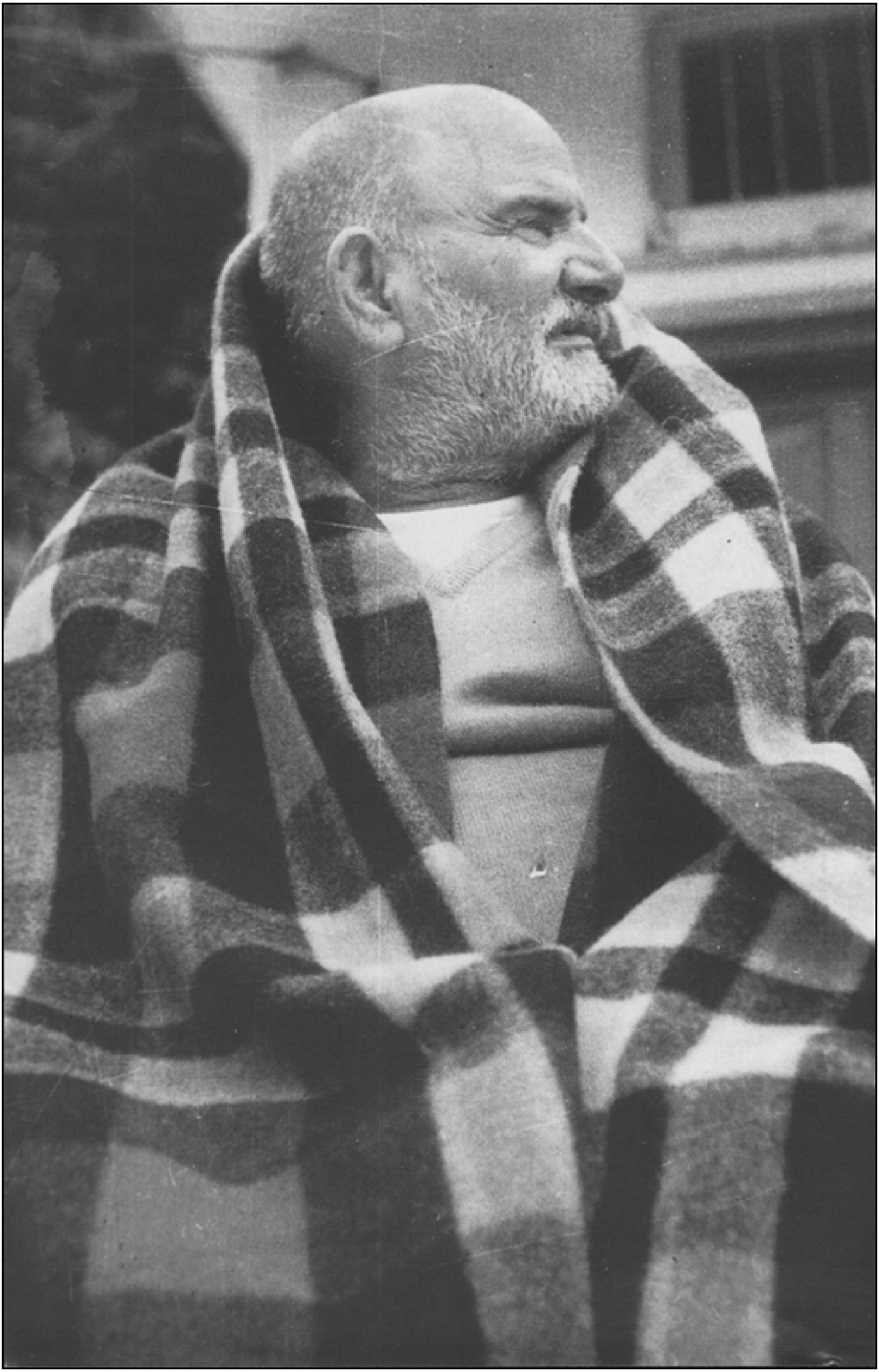

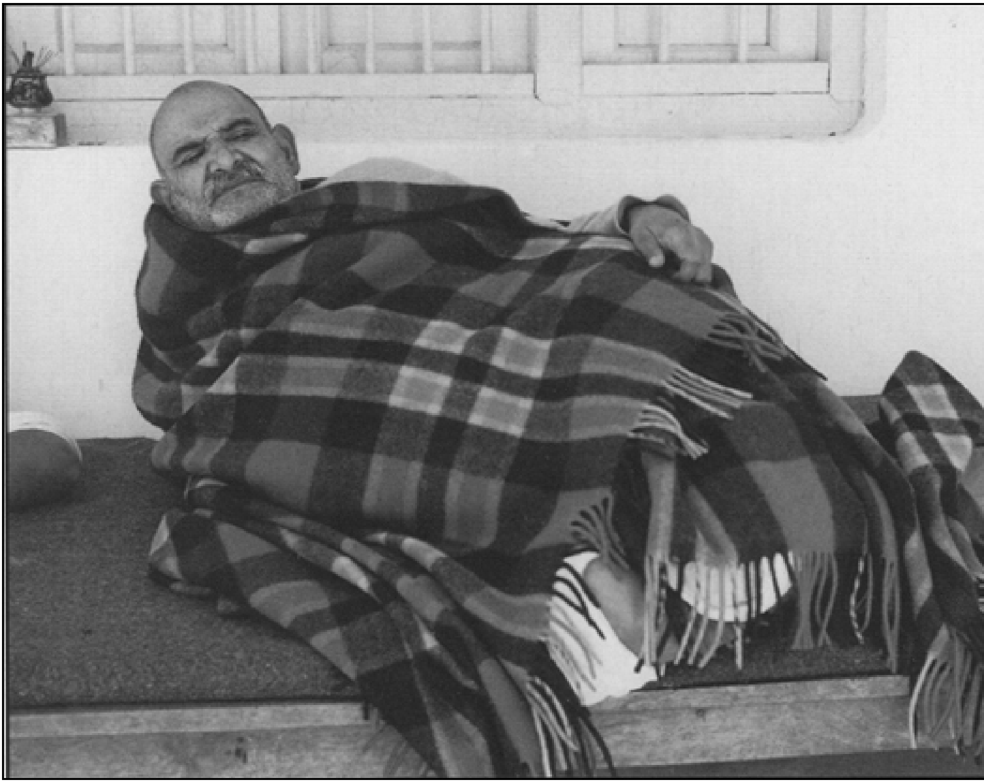

फोटो: रामेश्वर दास

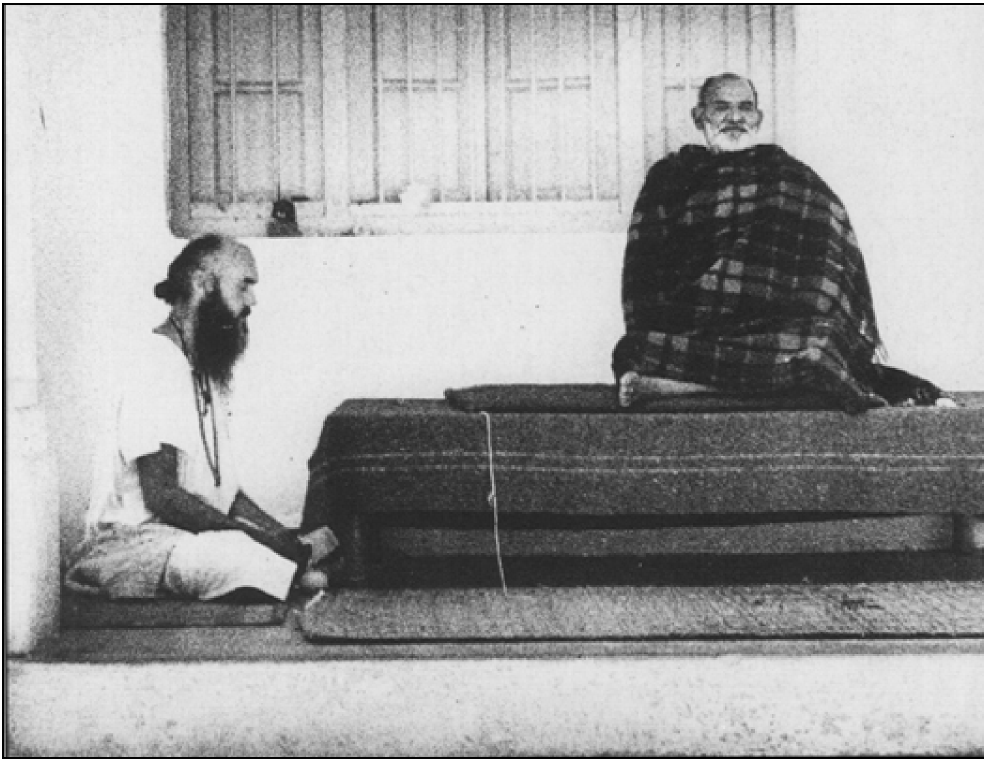

फोटो: बलराम दास

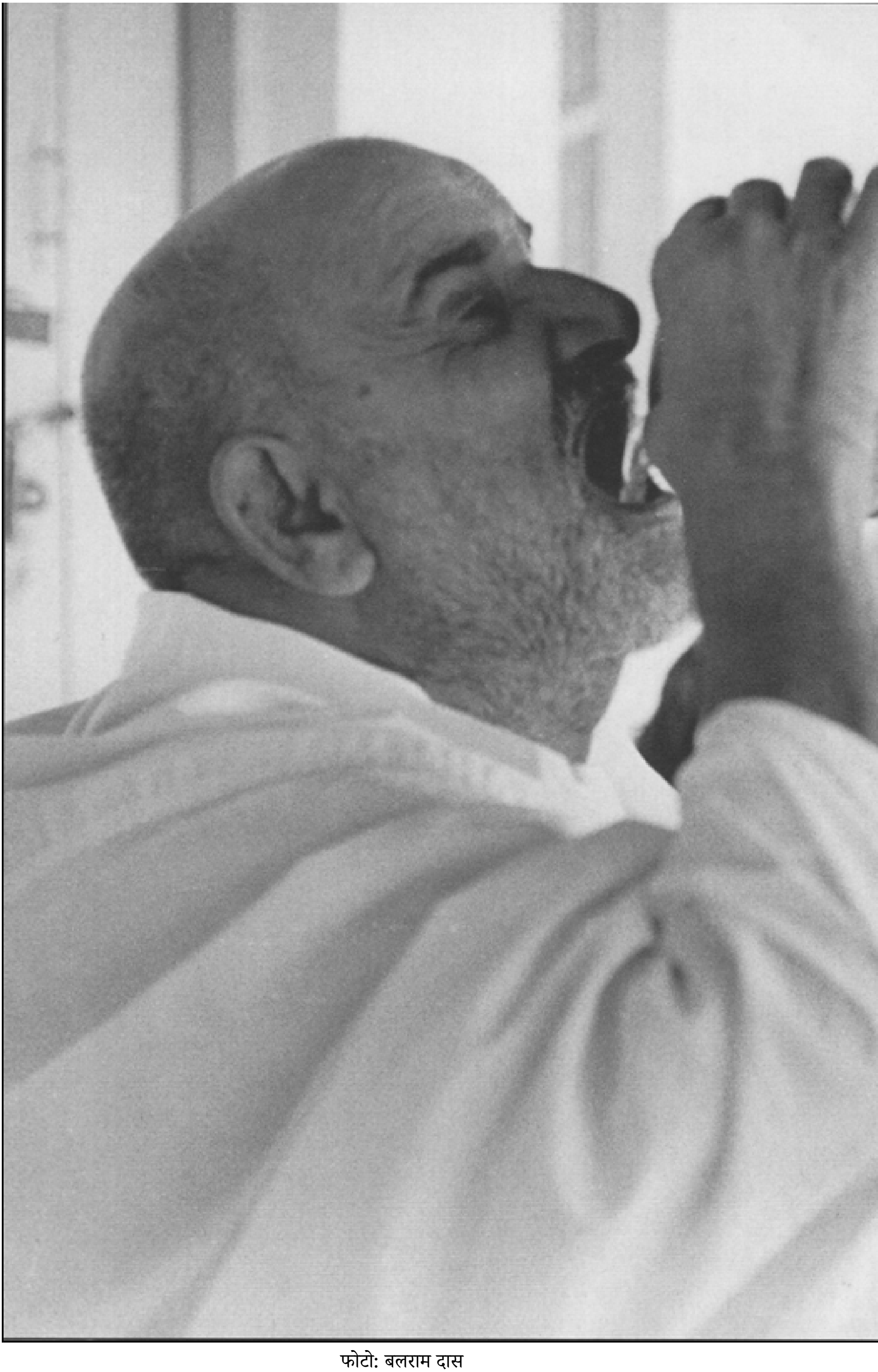

फोटो: बलराम दास

JAY BIRD

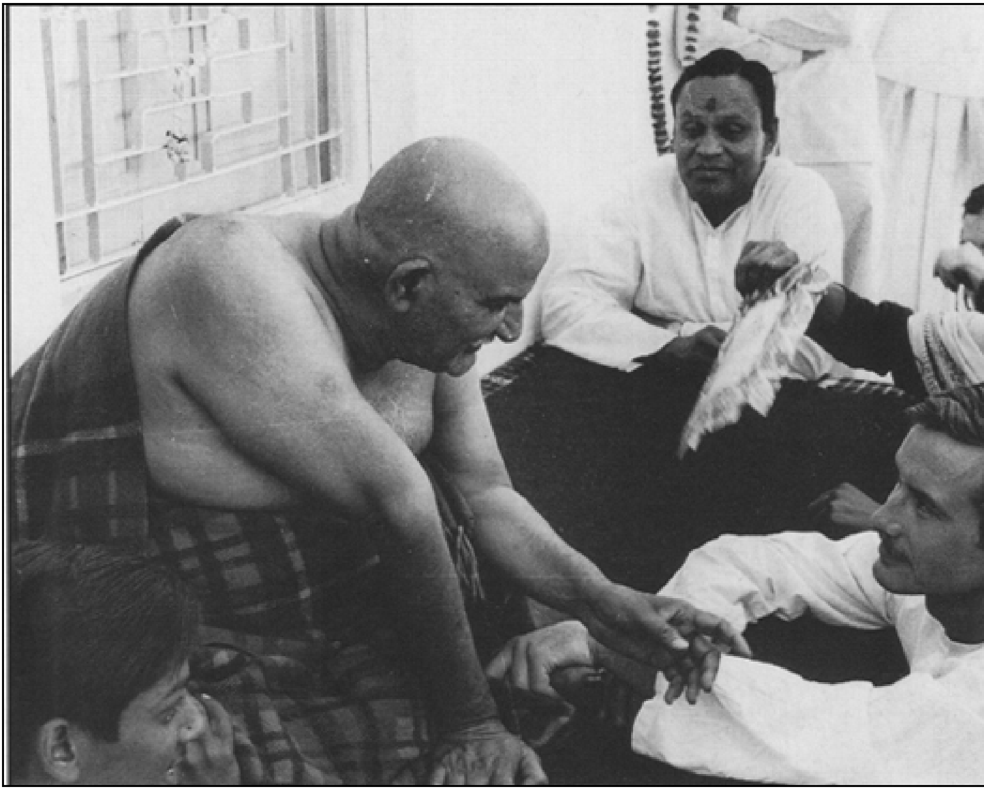

फोटो: चैतन्य

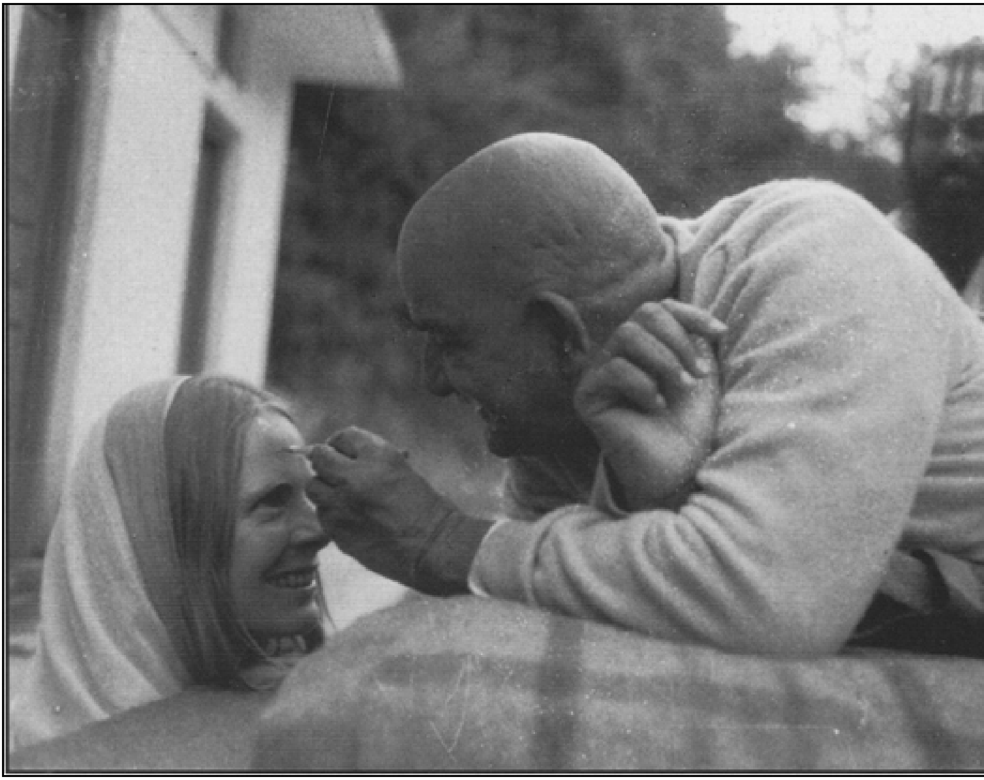

फोटो: बलराम दास

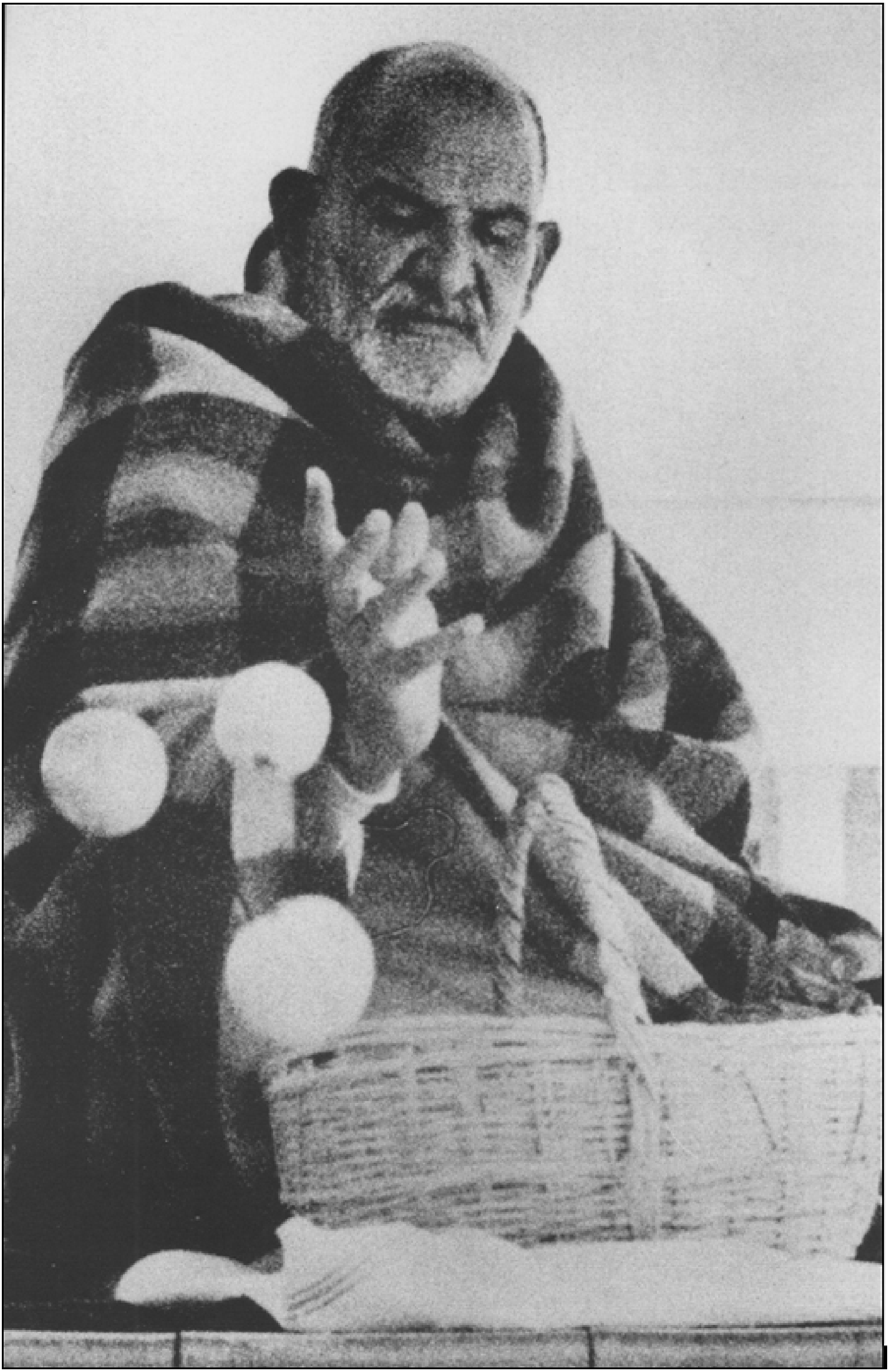

फोटो: बलराम दास

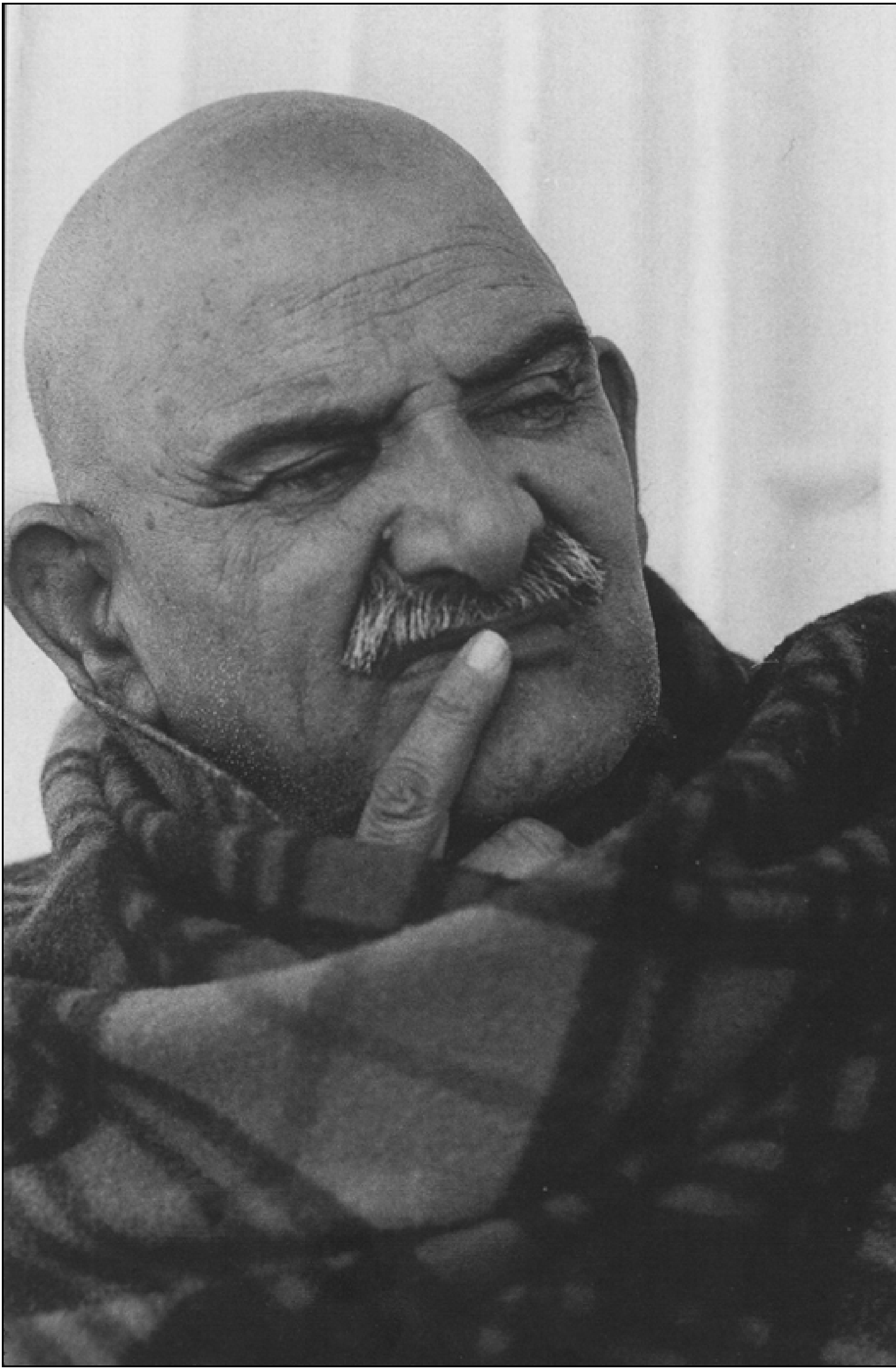

फोटो: नाथन वोल्कोविट्ज़

फोटो: बलराम दास

फोटो: बलराम दास

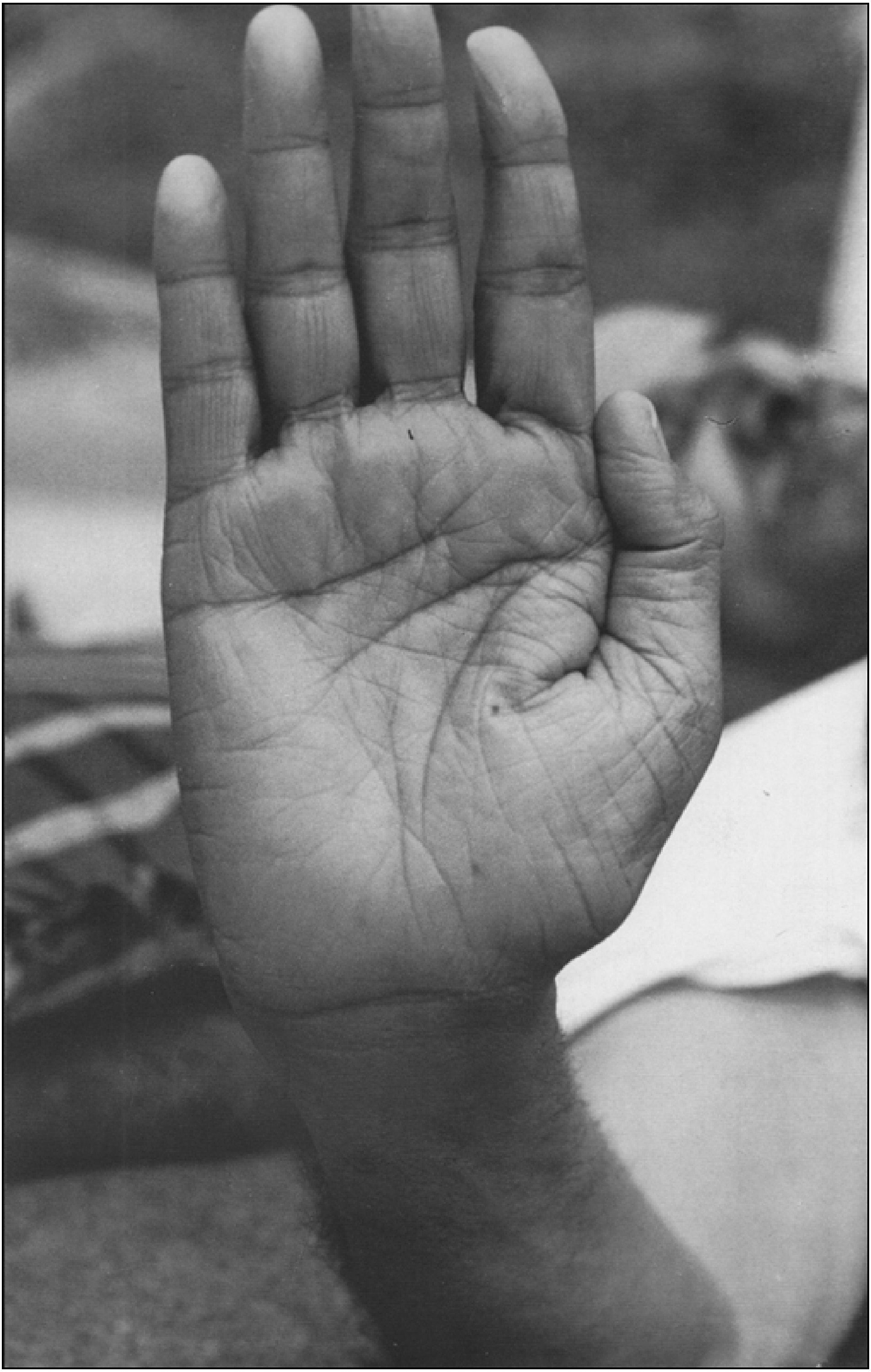

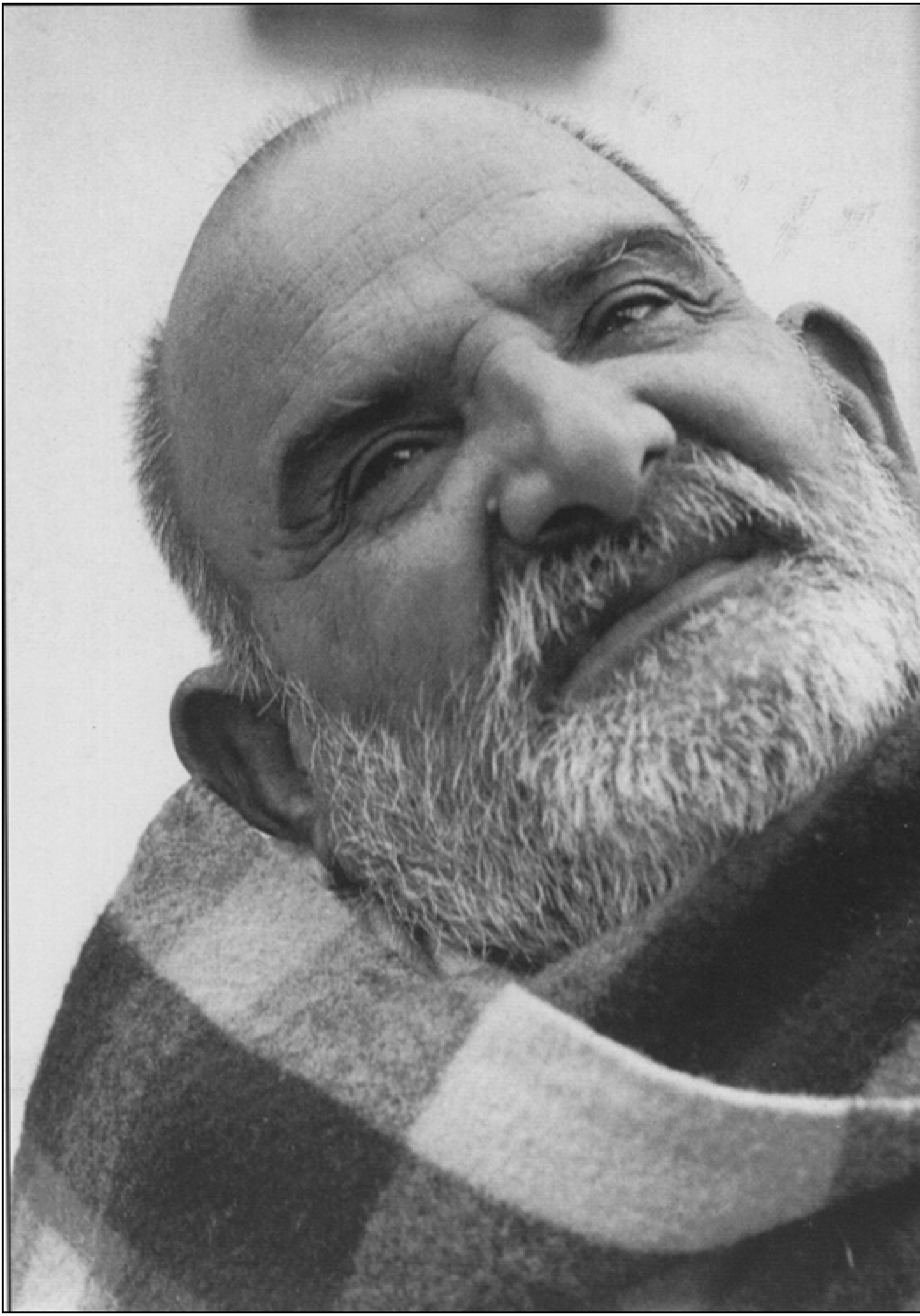

फोटो: बलराम दास

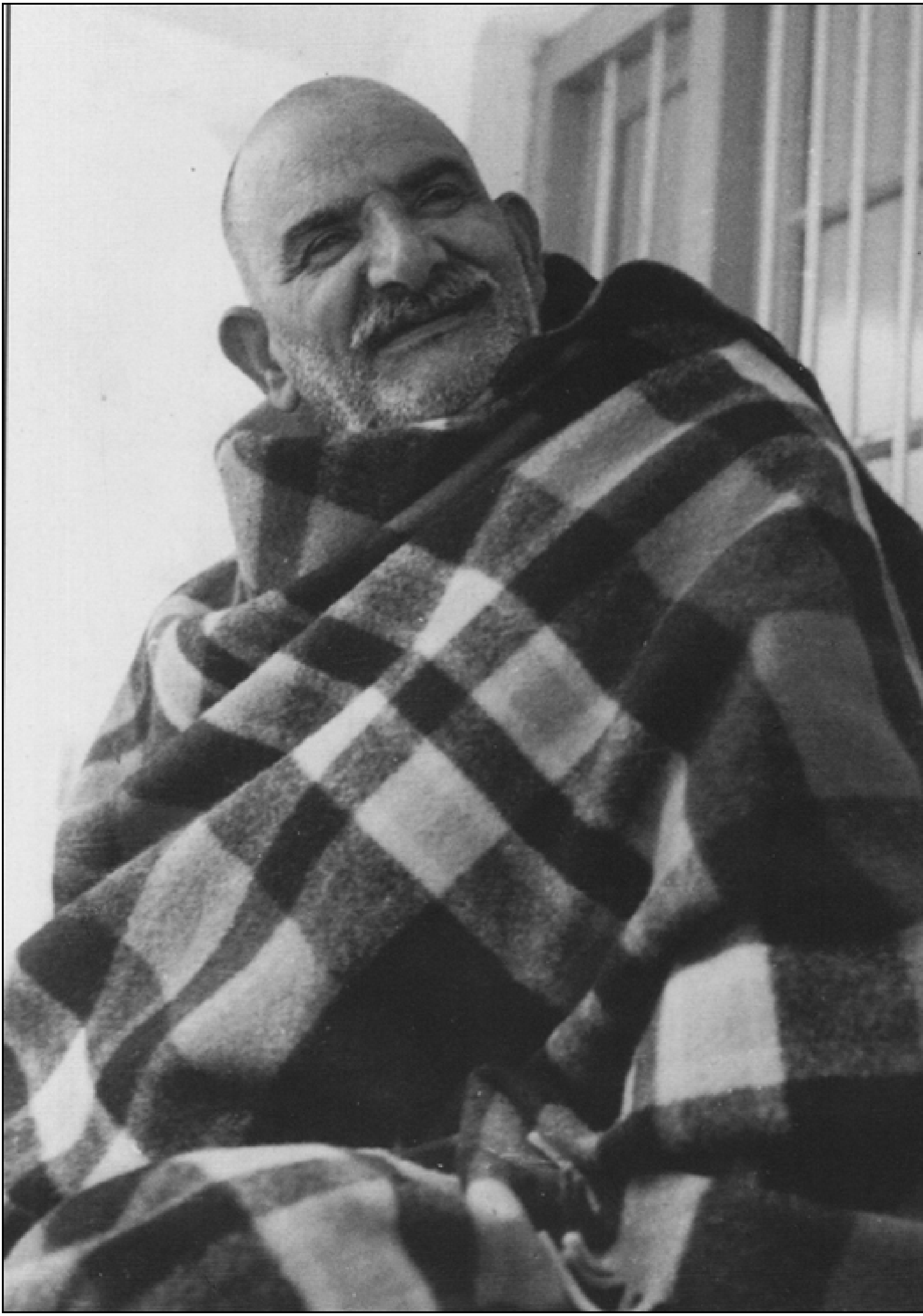

फोटो: चैतन्य